# आर्थिक और औद्योगिक जीवन

## अुसकी समस्यायें और हल

भाग – १

गांधीजी

संग्राहक और संपादक

व्ही० वी० खेर

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद–१४

# प्रकाशकका निवेदन

आर्थिक और औद्योगिक जीवनसे सम्बन्धित प्रश्नों पर गांधीजीकी रचनाओंका श्री व्ही० बी० खेर द्वारा सम्पादित यह संकलन प्रकाशित करते हुअे हमें बहुत खुशी होती है। दुनियामें और अपनी पंचवर्षीय योजनाओंके द्वारा सरकारने जो औद्योगिक और आर्थिक नीति अपनायी है अुसके कारण खासकर हमारे देशमें आजकल अिस विषयका बहुत महत्त्व है। अिसलिअे अिस संग्रहका प्रकाशन बहुत समयोचित है और हम आशा करते हैं कि अिस पुस्तकसे अुन लोगोंकी अेक बड़ी आवश्यकताकी पूर्ति होगी, जो अिस सम्बन्धमें राष्ट्र-पिताके विचारों और आदर्शोंको जानना चाहते हैं और अुनके अनुसार योजना करना चाहते हैं।

वैसे अिस विषय पर हमारे द्वारा प्रकाशित यह पहली पुस्तक नहीं है। गांधी-साहित्यके पाठक जानते हैं कि अिस विशाल और महत्त्वपूर्ण विषय पर और अिसके विभिन्न पहलुओं पर हम अभी तक काफी पुस्तकें प्रकाशित कर चुके हैं — जैसे, सेंट परसेंट स्वदेशी, खादी : क्यों और कैसे, हमारे गांवोंका पुनर्निर्माण, अहिंसक समाजवादकी ओर आदि। अिस संग्रहकी विशेषता यह है कि यह अिस प्रश्नके सारे पहलुओंको अेक सुनियोजित क्रमके अनुसार अेक ही पुस्तकमें अुपलब्ध कर देता है और अुसका सम्पादन अत्यंत योग्यतापूर्वक अैसे ढंगसे किया गया है कि सामान्यत: आधुनिक दुनियाके और खासकर भारतके सामाजिक-आर्थिक और औद्योगिक सवाल पर गांधीजीके विचार हमारे सामने बिलकुल स्पष्ट हो जाते हैं।

पुस्तकके परिश्रमी संपादकने अिस विषय पर गांधीजीके विचारोंको अेक-साथ और सुसम्पूर्ण रूपमें पेश करनेके लिअे जो सामग्री अिकट्ठी की वह बहुत ज्यादा थी, अिसलिअे यह ज्यादा अच्छा समझा गया कि अुसका ठीक ढंगसे विभाजन कर लिया जाय और अुसे खंडोंमें प्रकाशित किया जाय। विद्वान सम्पादकने यह कार्य बहुत अच्छी तरह कर दिया है।

सारी सामग्री अठारह विभागोंमें बांट दी गयी है और चुने हुअे अंश प्रत्येक विभागमें अेक निश्चित क्रमके अनुसार रखे गये हैं। अिसके सिवा, विद्वान सम्पादकने अेक लम्बी भूमिका लिखकर अिन सब विभागोंकी सारी सामग्रीका सार

और गांधीजीके विचारोंकी अेक स्पष्ट तसवीर दे दी है। ये अठारह विभाग अुनकी अुपयुक्तताके अनुसार तीन खंडोंमें बांट दिये गये हैं, जिनकी पृष्ठसंख्या कुल मिलाकर करीब ८००* हो गयी है।

पहले खंडमें गांधीजीकी आर्थिक और औद्योगिक विचारधाराके बुनियादी सिद्धान्तोंका विवरण है। अिस पहले खण्डमें सम्पूर्ण संग्रहके पहले चार विभाग आ जाते हैं।

गांधीजीके अनुसार, स्वदेशी अपने पड़ोसीके प्रति मनुष्यका कर्तव्य बतानेवाला सिद्धान्त है। अिस दृष्टिसे देखा जाय तो यह सिद्धान्त मनुष्यके आर्थिक धर्मका निरूपण करता है। आर्थिक और औद्योगिक संघटनका सही ढांचा, आर्थिक सत्ता और अुत्पादनका विकेन्द्रीकरण, खादी और ग्रामोद्योग आदि विषयों पर गांधीजीके विचारोंका स्रोत यही बुनियादी सिद्धान्त था। गांधीजीके दर्शनके अिस व्यापक पहलू और खादी तथा ग्रामोद्योग आदि अुसकी निष्पत्तियोंका संग्रह संपादकने दूसरे खण्डमें किया है। अिस दूसरे खण्डमें अगले सात विभागोंका समावेश हुआ है।

अिस समस्याका सारा विवेचन पश्चिमी अुद्योगवादकी पृष्ठभूमिमें किया गया है। आजकल हम सब यह स्वीकार करने लगे हैं कि यह पश्चिमी अुद्योगवाद आर्थिक जीवन और आर्थिक संघटनका अेक बहुत ज्यादा केन्द्रीकरणकी दिशामें ले जानेवाला सिद्धान्त है। और अिसमें कारणभूत हैं आधुनिक विज्ञान, यंत्र-विज्ञान, साम्राज्यवादी व्यापार और व्यवसाय तथा राजनीति। ब्रिटिश शासनमें आर्थिक और औद्योगिक संघटनकी अिस प्रणालीका — जो अपनी अनोखी समस्याओंको जन्म देती है — हमने काफी अनुभव लिया है। गांधीजीने अिन सब समस्याओंको भी छुआ है और सत्य तथा अहिंसाके अपने जीवन-दर्शनके अेक हिस्सेके तौर पर सत्याग्रहके अपने अनुपम शस्त्रका प्रयोग अुन पर किया है। अुनके विचारोंका यह हिस्सा अिस पुस्तकके तीसरे खण्डमें संगृहीत हुआ है, जिसमें बाकी सात विभाग हैं।

अिन तीनों खंडोंमें से प्रत्येकके साथ अुसकी अपनी सूची जोड़ दी गयी है। प्रत्येक खण्डमें पृष्ठोंकी गिनती अलग-अलग हुअी है।

संग्रहका यह सारा काम संपादकने शुद्ध प्रेमकी भावनासे किया है और अिसमें अुनके कुछ कीमती वर्ष खर्च हुअे हैं। अुन्होंने अिस विषय पर गांधीजीके

---

* नये परिवर्धित संस्करणमें पृष्ठसंख्या करीब ९०० हो गयी है। यह हिन्दी अनुवाद सितंबर १९५९ में छपे नये संस्करणका ही है।

विचारोंका वैज्ञानिक अध्ययन करनेका निश्चय किया और अिसके लिअे आवश्यक अनुसंधान-कार्यकी अेक योजना बनायी। अुसका परिणाम अब अिस पुस्तकके रूपमें भेंट किया जा रहा है। श्री शंकरलाल बैंकरने पुस्तकके लिअे प्रस्तावना लिखनेकी मेहरबानी की है, जिसके लिअे मैं अुनका कृतज्ञ हूं। मैं श्री व्ही० वी० खेरको भी धन्यवाद देता हूं कि अुन्होंने अपने सुदीर्घ अध्ययनका यह फल प्रकाशनके लिअे नवजीवन ट्रस्टको सौंपा। हम यह पुस्तक अिस आशासे प्रकाशित कर रहे हैं कि हमारे राष्ट्रीय पुनर्निर्माणकी आजकी स्थितिमें हमारे लिअे और अेक हद तक दुनियाके लिअे भी — जो, अनजाने ही सही, शान्तिकी अर्थ-व्यवस्थाकी खोजमें है — यह अुपयोगी सिद्ध होगी।*

१५-१-'५७

---

* प्रथम अंग्रेजी संस्करणका निवेदन।
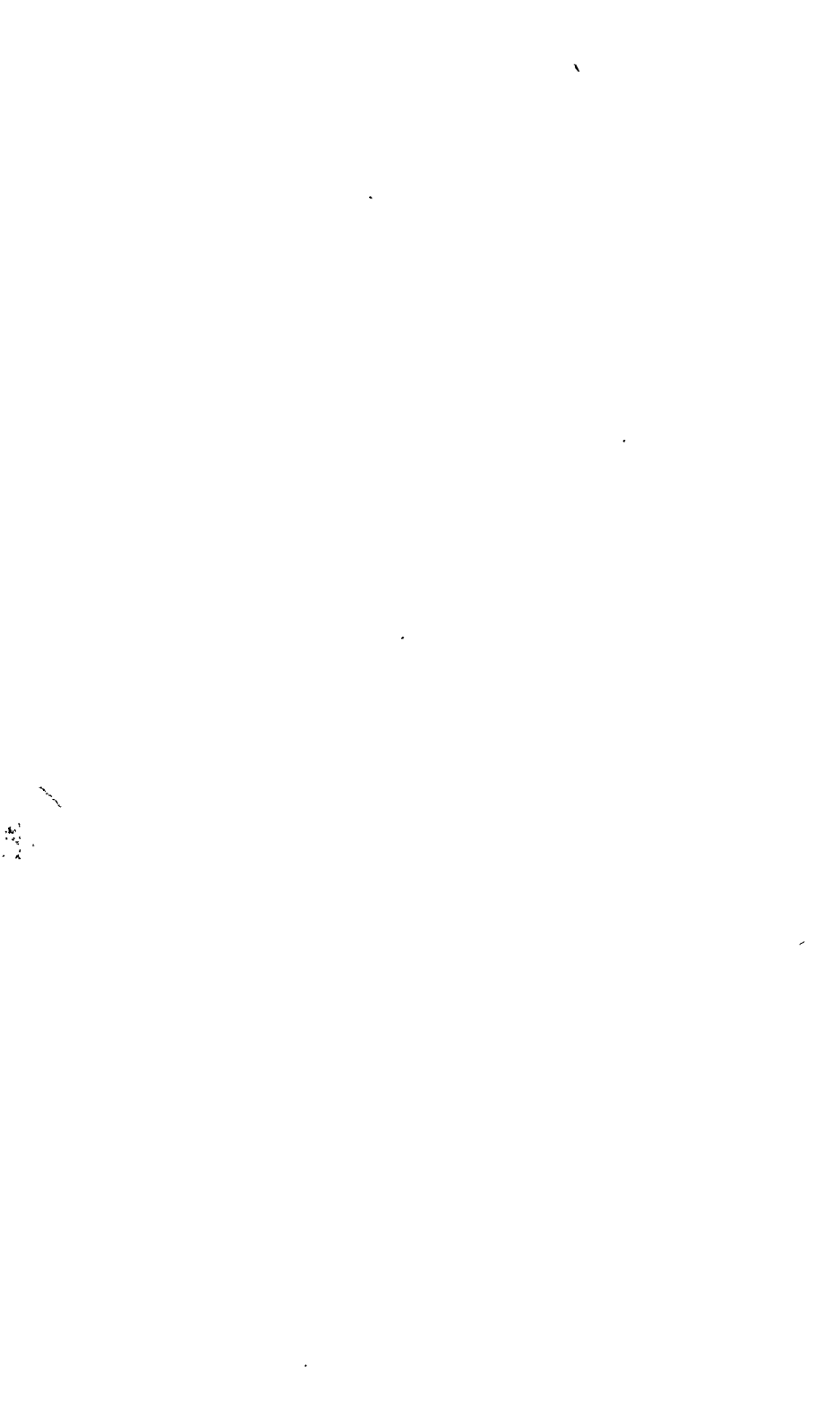
# आभार-प्रदर्शन

'आर्थिक और औद्योगिक जीवन — अुसकी समस्यायें और हल' का यह पहला भाग गांधीजीकी कल्पनाके अहिंसक समाजवादके लक्ष्य और अुसके मार्गका वर्णन करता है। दूसरे भागमें गांधीजीकी आर्थिक शिक्षाओंका वर्णन है। तीसरे भागमें खेती और अुद्योगसे सम्बन्धित समस्याओं पर अुनके विचार पेश किये गये हैं। अुनकी अिन रचनाओंमें हमें गांधीजीके तत्सम्बन्धी सिद्धान्तोंका और अिन सिद्धान्तोंको व्यवहारमें कैसे अुतारा जा सकता है तथा हमें जिन समस्याओंका सामना करना पड़ रहा है अुन्हें हल करनेमें अुनका प्रयोग कैसे किया जा सकता है, अिस प्रश्नका अुत्तर भी मिलेगा। संक्षेपमें, वे हमें अपने आर्थिक आदर्शोंकी झांकी भी कराते हैं और अुन्हें मूर्तिमान करनेके अुपाय भी बताते हैं।

गांधीजीके अपने लेखोंके सिवा, अुनके भाषणों या मुलाकातियोंके साथकी अुनकी बातचीतके दूसरे लोगों द्वारा दिये गये विवरणोंका भी समावेश अिस पुस्तकमें किया गया है। अिन लेखोंके मूल शीर्षक हमेशा अुस-अुस लेखके मुख्य वक्तव्यको प्रगट नहीं करते थे। वे प्रायः अमुक तात्कालिक प्रश्नकी ही सूचना करते थे। अतः कअी जगह मैंने मूल शीर्षक बदल दिये हैं।

मैं श्री शंकरलालभाअी बैंकरका, जिन्होंने अिस पुस्तकके संकलनमें मेरा मार्गदर्शन किया है, बहुत कृतज्ञ हूं। गांधीजीकी राजनीतिक लड़ाअियोंमें, चरखा-प्रचारमें और अुनके द्वारा मजदूरोंके हितके लिअे किये गये काममें वे गांधीजीके अत्यंत पुराने और निकटतम साथियोंमें से हैं। वे 'यंग अिंडिया' पत्रके पहले प्रकाशक थे। वे अहमदाबादके कपड़ा-मजदूर संघके संस्थापक-सदस्योंमें से हैं और आज भी अुसके पीछे रही हुअी सच्ची शक्ति वे ही हैं। गांधीजीने अुन्हें अखिल भारत चरखा-संघका पहला मंत्री चुना था। अिन पदों पर काम करते हुअे अुन्हें गांधीजीके विचारोंको समझने और आत्मसात् करनेका अद्वितीय अवसर मिला। अिस पुस्तकके लिअे प्रस्तावना लिखकर अुन्होंने मुझे बहुत अुपकृत किया है।

नवजीवन ट्रस्टके व्यवस्थापक श्री जीवणजीभाअी देसाअीने मुझे 'यंग अिंडिया' और 'हरिजन' की फाअिलोंका अुपयोग करनेकी सुविधा दी; अुसके

लिअे मैं अुनका अृणी हूं। मेरी पत्नी अिन्दिराने भूमिकाकी नकल करनेमें मुझे जो सहायता दी, अुसके लिअे मैं अुसे भी धन्यवाद देता हूं।

जी० अे० नटेसन अेण्ड कं० ने मुझे 'स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी' (चौथा संस्करण) से अिच्छानुसार अुसके अंश अुद्धृत करनेकी अनुमति दी। अुनकी यह सहायता मैं सधन्यवाद स्वीकार करता हूं। मैं श्री डी० जी० तेंदुलकरको अुनकी पुस्तक 'महात्मा' खंड १, २, ३ और ४ से अुसके अंश अुद्धृत करनेकी अनुमतिके लिअे, श्री अेस० राधाकृष्णन और अुनके प्रकाशकों, जॉर्ज, अेलेन अेण्ड अनविनको 'महात्मा गांधी — अेसेज़ अेण्ड रिफ्लेक्शन्स ऑन हिज़ लाअिफ अेण्ड वर्क' में से अुसके अंश अुद्धृत करनेकी अनुमतिके लिअे और मि० विन्सेन्ट शीन तथा अुनके प्रकाशकों, केसेल अेण्ड कं० लि० को 'लीड काअिन्डली लाअिट' में से अुसके अंश अुद्धृत करनेकी अनुमतिके लिअे धन्यवाद देता हूं। मैं 'मॉडर्न रिव्यू' का अुसके अक्तूबर १९३५ के अंकसे अेक अंश अुद्धृत करनेकी अनुमतिके लिअे और 'अमृतबाजार पत्रिका' का अुसके २ अगस्त, १९३४ के अंकसे अेक अंश अुद्धृत करनेकी अनुमतिके लिअे आभारी हूं।

बम्बअी, २७ जून १९५६ **व्ही० बी० खेर**

# प्रस्तावना

किसी महापुरुषकी महत्ताका सही माप परवर्ती पीढ़ियों पर अुसके जीवन और अुसके विचारोंके प्रभावमें दिखता है। हम गांधीजीको अिस कसौटी पर परखें तो हमें यही कहना होगा कि वे युग-पुरुष थे; अपने युगके निर्माता थे। समयके साथ अुनके विचारोंके प्रभावका विस्तार ही हुआ है। भारतमें और दूसरे देशोंमें भी अधिकाधिक लोग अिन विचारोंकी ओर आकृष्ट हो रहे हैं। हमारी राष्ट्रीय और वैदेशिक नीतिका प्रेरणा-स्रोत अुनकी शिक्षायें ही हैं। लेकिन यह भी सच है कि हम अभी भी सर्वोदय समाजकी या सच्चे कल्याण-राज्यकी अुनकी कल्पनासे बहुत दूर हैं। अितिहास बतायेगा कि किस तरह हमें अपना यह अुद्देश्य प्राप्त करनेके पहले प्रेरणा और मार्गदर्शनकी खोजमें, बार बार अिस महान शिक्षकके ही पास आना पड़ेगा। अुन्होंने अनेक समस्याओं पर गहराअीसे विचार किया था और अुनमें से कअी पर प्रत्यक्ष प्रयोग भी किये थे। जिन परिणामों पर वे पहुंचे अुन्हें अुन्होंने अपने जीवनमें सावधानीके साथ अुतारा था और अपनी विविध प्रवृत्तियोंके द्वारा प्रभावकारक ढंगसे दुनियाके सामने अुन्हें पेश किया था। जाहिर है कि मनुष्यके बुनियादी सवालों पर अुनके ये विचार हमारे लिअे बहुत महत्त्व रखते हैं और अुनका अध्ययन सबके लिअे अवश्य लाभकारी सिद्ध होगा।

गांधीजी मूलतः कर्म-परायण व्यक्ति थे। सार्वजनिक कार्यके क्षेत्रमें अुन्होंने प्रवेश किया तबसे अपने जीवनका प्रत्येक क्षण अुन्होंने दरिद्र-नारायणकी सेवामें लगाया। समाजके अिस दलित वर्गके साथ संपूर्ण तादात्म्य साधकर तथा घनिष्ठ संपर्क और अनवरत प्रयत्नके द्वारा अुन्होंने अुन लोगोंकी चेतनाको जगाया तथा अुन्हें न्याय और जीवनकी सुख-सुविधाओंकी प्राप्तिके लिअे कोशिश करनेकी ताकत और हिम्मत दी। वे जीवनकी वास्तविकताओंसे प्रेरणा ग्रहण करते थे, लोगोंकी शक्ति और अुनकी कमजोरियोंका, धर्मके प्रति अुनकी स्वाभाविक रुचिका और सृष्टिके शाश्वत नियमोंमें अुनकी निष्ठाका विचार करते थे और अिस तरह अुन्हें आचार-धर्मके स्वाभाविक नियम प्राप्त हुअे थे। वे जीवनको अुसके समग्र रूपमें देखते थे, खंडोंमें नहीं; और अिसलिअे अुन्होंने हमें जीवनके सारे विविध पहलुओं पर नेतृत्व

प्रदान किया है। अपने आश्रमके अन्तेवासियोंके लिअे अुन्होंने जो नियम निर्धारित किये थे, अुनमें हमें अुनके बुनियादी आदर्शोंका मर्म मिलता है।

अुनके आर्थिक और राजनीतिक विषयों पर लिखे गये लेखोंके अध्ययनसे हमें अुनके अुन सामान्य विचारोंका पता चल जाता है, जो जीवनके विविध प्रश्नों पर अुनके मतामतोंके मूलमें निहित हैं। परिस्थितियोंके अनुसार वे अुन पर कहीं कम और कहीं अधिक जोर देते दिखेंगे, लेकिन अुनके अिन आधारभूत विचारोंका स्रोत अेक ही है — पीड़ित मानवताके प्रति अुनका गहरा और सक्रिय प्रेम तथा सत्य और अहिंसाके बुनियादी सिद्धान्तोंमें अुनकी यह अविचल निष्ठा कि अपने अुद्देश्योंकी प्राप्तिके लिअे अेकमात्र विहित साधन ये ही हैं।

गांधीजी जन्मजात आशावादी थे। और अुनका मानव-प्रेम पापीका भी बहिष्कार नहीं करता था। कारण, वे मानते थे कि कोअी भी मनुष्य स्वभावसे दुष्ट नहीं होता; वह सिर्फ अपनी परिस्थितियोंका या वातावरणका शिकार होता है। अुन्होंने लोगोंको मनुष्यमें रही हुअी बुराअी और मनुष्यमें भेद करना सिखाया। अिसीलिअे अुन्होंने जहां अेक ओर लोगोंको विदेशी सरकारसे अुसके अत्याचारोंके खिलाफ लड़नेके लिअे अुत्साहित किया, वहां दूसरी ओर शासनाधिकारियोंके प्रति आदर और सद्‌भाव रखना भी सिखाया। राजाओं, जमींदारों और अमीरोंके प्रति भी अुनका अैसा ही रुख था। वे अुनके दुरभिमान तथा सत्ता और अधिकारके प्रदर्शनकी कड़ी टीका करते थे, लेकिन अुनके साथ मित्रताका नाता जोड़नेमें अुन्हें कोअी संकोच नहीं होता था।

लोग अुन्हें मुख्यत: राजनीतिक नेता, आध्यात्मिक विचारक और रचनात्मक समाज-सुधारकके रूपमें ही पहचानते हैं। यह बात बहुत कम लोग जानते हैं कि अुद्योगों और मजदूरोंसे सम्बन्धित समस्याओंसे भी अुनका गहरा सम्बन्ध रहा था। अिस क्षेत्रमें गांधीजीके योगदानका विदेशोंमें लोगोंको बहुत ही कम ज्ञान है। यह पुस्तक अिस अज्ञानको दूर करनेमें बहुत अुपयोगी सिद्ध होगी।

संपादकने अिस पुस्तकके तीन खंडोंमें सामाजिक-आर्थिक और औद्योगिक सवालों पर गांधीजीके विचारोंका संकलन करके जनताकी और खासकर गांधीजीकी शिक्षाओंके अध्येताओंकी बहुत कीमती सेवा की है। अुन्होंने पुस्तककी रचना अिस विषयसे सम्बन्धित गांधीजीके लेखोंके विवेकपूर्ण अध्ययनके बाद की है और वह अुन सब लोगोंके लिअे बहुत अुपयोगी मार्गदर्शिकाका काम देगी,

जैसा कि संपादकने अपनी भूमिकामें कहा है, "गांधीजीके विचारोंके साथ अज्ञानके कारण प्रायः बहुत अन्याय किया जाता है।" यहां गांधीजीके अिन लेखोंको व्यवस्थित रूपमें अिस तरह पेश करनेका प्रयत्न किया गया है, जिससे कि अिस विषयके विविध पहलुओं पर अुनके विचार स्पष्ट रूपसे सामने आ जायें और पाठक अुन्हें आसानीसे समझ सकें। गांधीजी अत्यंत गतिशील पुरुष थे। अुनके जीवनमें हम निरन्तर विकास करते रहनेका गुण देखते हैं। अुनके विचारोंमें समय समय पर परिवर्तन हुआ दिखता है, यद्यपि जीवनके बुनियादी सिद्धान्तोंमें अुनकी निष्ठामें न तो कभी कोअी परिवर्तन हुआ और न अुसमें कमी कमी आयी। अिस संकलनमें लेखोंको जिस क्रमसे सजाया गया है अुसके कारण अपने जीवन-कालमें विविध प्रवृत्तियोंके दरमियान गांधीजीके विचारोंमें होनेवाले अिस विकासको पाठक आसानीसे देख सकेंगे।

श्री खेरने अत्यंत परिश्रमपूर्वक पाठकोंके लिअे गांधीजीके विचारोंका यह व्यवस्थित संकलन सुलभ कर दिया, अिस बात पर मैं अुन्हें बधाअी देता हूं। अनेक वर्षोंके लेखों और भाषणोंके रूपमें फैली हुअी विपुल सामग्रीमें से अुन्होंने आवश्यक अंशोंका विवेकपूर्वक चुनाव किया और फिर अुन्हें पद्धतिपूर्वक अिस तरह सजाया है कि पाठकोंको अुन्हें समझनेमें बहुत सहायता मिलती है। अिसके सिवा, श्री खेरके अिस परिश्रमके फलस्वरूप हमें अपने जीवनके अनेक महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर गांधीजीके विचारोंका अुनके अपने ही शब्दोंमें अेक अैसा कीमती संकलन मिल गया है, जिसका हम अपनी आव-श्यकताके अनुसार जब चाहें तब आसानीसे अुपयोग कर सकते हैं। अुन सब लोगोंके लिअे, जो गांधीजीके विचारों और अुनकी शिक्षाओंका अध्ययन करना चाहते हैं और खास कर अुन सामाजिक कार्यकर्ताओंके लिअे जो सर्व-हित-कारी न्यायपूर्ण समाजकी स्थापनामें अनुराग रखते हैं, मैं अिस पुस्तककी सिफारिश करता हूं।

अहमदाबाद, २३-३-'५६ शंकरलाल जी० बैंकर

# अनुक्रमणिका

दूसरा विभाग: शरीर-श्रम

## तीसरा विभाग : आर्थिक समानता



## चौथा विभाग : संरक्षकता

# भूमिका

"अेक अन्य कारणसे भी, महात्मा गांधी — व्यक्तिशः मुझे अिस बातका पूरा विश्वास है — अेक महान अैतिहासिक विभूतिके रूपमें पूजे जायेंगे। वह कारण यह है: वे दो अत्यंत विभिन्न युगोंकी ठीक संधिरेखा पर खड़े हुअे हैं। अेक ओर तो वे भारतकी सन्त-सम्बन्धी परम्परागत धारणाको मूर्तिमान करते हैं और दूसरी ओर अुनमें हमें जननेताका भी अत्यंत आधुनिक और अुत्कृष्ट नमूना मिलता है। अिस हद तक अुनकी अैतिहासिक स्थितिकी तुलना जान दि बैप्टिस्टसे की जा सकती है। बहुत संभव है कि मनुष्य भविष्यमें जैसा बननेवाला है, अुसकी अुस भावी स्थितिमें पुराने किस्मके अेकांगी संतका घटनाओंके निर्माणमें या अितिहासकी रचनामें विशेष स्थान नहीं होगा। भावी मनुष्य संपूर्ण मनुष्य होगा, जिसमें आत्मतत्त्व और जड़ तत्त्वका संतुलन होगा। लेकिन अिस नये मनुष्यके लिअे अभीष्ट परिस्थितियोंका निर्माण दोनों युगोंके संधिस्थल पर आसीन गांधी जितना कर रहे हैं, अुतना कोअी अन्य नहीं।"*

— काअुण्ट हरमान केसरलिंग

गांधीजी अेक जटिल और अनबूझ पहेली थे। वे सन्त भी थे और जननेता भी थे। किसी अेक व्यक्तिमें संत और जननेताका यह सम्मिश्रण अविश्वसनीय मालूम होता है, लेकिन गांधीजी तो अद्भुत थे और यह अविश्वसनीय सम्मिश्रण वे सचमुच सिद्ध कर सके थे! विविध धर्मोंके लम्बे अितिहासमें सामान्यतः यही माना जाता रहा है कि आध्यात्मिक मूल्य साधुओं और संन्यासियोंकी ही चिंताका विषय हैं, और लोगोंको अुनकी खास परवाह नहीं करनी है। लोगोंका परम्परागत विश्वास यही रहा है कि धर्मका क्षेत्र अलग है और व्यवहारका अलग है, दोनोंमें कोअी पारस्परिक सम्बन्ध नहीं है। गांधीजी शायद पहले अैतिहासिक व्यक्ति थे जिन्होंने जीवनके अिन दो महत्त्वपूर्ण क्षेत्रोंके अिस कृत्रिम विभाजनको चुनौती दी। अुन्होंने सामान्य दुनियादारीके जीवनमें आध्यात्मिक मूल्योंका संचार किया और अुनकी

---

* अेस० राधाकृष्णन् द्वारा सम्पादित 'महात्मा गांधी — अेसेज़ अेण्ड रिफ्लेक्शन्स ऑन हिज़ लाअिफ अेण्ड वर्क' (जार्ज, अेलेन अेण्ड अनविन), पृ० १६९।

स्थापनाका प्रयत्न किया। लोकमान्य तिलक जैसे महान विद्वान और चोटीके नेता भी धर्म और व्यवहारको अलग-अलग माननेवाली अुसी पुरानी दृष्टिके समर्थक थे। अिससे सिद्ध होता है कि परम्परागत विश्वासोंकी जड़ कितनी मजबूत होती है और वे कितनी मुश्किलसे मिटते हैं। जाहिर है समाजमें यह बुराअी बहुत गहरी पैठी हुअी है। . . . लोकमान्य तिलकके अिस कथन पर कि "राजनीति दुनियादारीके व्यवहारमें निपुण दुनियादार लोगोंका विषय है, साधुओंका नहीं" लोकमान्यकी आलोचना करते हुअे गांधीजीने लिखा था:

> "लोकमान्यके प्रति पूर्ण आदरका भाव रखते हुअे, मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि यह विचार कि दुनिया साधुओंके लिअे नहीं है बौद्धिक आलस्यका द्योतक है। सब धर्मोकी सारभूत शिक्षा यही रही है कि पुरुषार्थका विकास करो और पुरुषार्थका अेकमात्र अर्थ है— साधु बननेके लिअे, शब्दके पूरे अर्थमें सज्जन बननेके लिअे, तीव्र प्रयत्न। और अन्तमें जब मैंने वह वाक्य लिखा जिसमें यह कहा गया था कि लोकमान्यकी मान्यताके अनुसार तो राजनीतिमें जो भी किया जाय सब अुचित ही है, अुस समय मेरे मनमें अुनके द्वारा अकसर व्यवहृत यह अुक्ति थी—'शठं प्रति शाठ्यम्'। मैं मानता हूं कि यह अुक्ति अेक अनिष्ट नियमका विधान करती है। और मैं तो यह आशा करता हूं कि अपनी विचक्षण बुद्धिके बल पर लोकमान्य स्वयं ही अेक दार्शनिक प्रबंध लिखकर अिस नियमकी असत्यता सिद्ध कर दिखायेंगे और अिस तरह अपने देशवासियोंको चकित तथा प्रसन्न कर देंगे। जो भी हो, 'शठं प्रति शाठ्यम्' के नियमके खिलाफ मैं अपना तिहाअी सदीका परखा हुआ अनुभव रखता हूं और कहता हूं कि सच्चा नियम 'शठं प्रति शाठ्यम्' नहीं, 'शठं प्रत्यपि सत्यम्' है।"*

---

* यंग अिंडिया, २८-१-'२०: 'शठं प्रति शाठ्यम्'का अर्थ है— शठके प्रति शठताका ही व्यवहार होना चाहिये। अिसके खिलाफ गांधीजी 'शठं प्रत्यपि सत्यम्' यानी शठके प्रति भी सत्यके ही व्यवहारकी हिमायत करते हैं।

धम्मपदकी नीचे दी जा रही गाथाओंमें भगवान बुद्धने भी यही विचार प्रगट किया है:

> न हि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचनं।
> अवेरेन च सम्मन्ति अेस धम्मो सनन्तनो॥
> अक्कोधेन जिने कोधं असाधुं साधुना जिने।
> जिने कदरियं दानेन सच्चेनालिकवादिनं॥

**व्यावहारिक आदर्शवादी :** अूपर दिये गये अुद्धरणसे पाठकके मन पर अैसी छाप नहीं पड़नी चाहिये कि गांधीजी स्वप्नसेवी थे या कि आदर्शकी कल्पनाओंमें विहार किया करते थे। अैसा मान लेना बिलकुल गलत होगा। गांधीजी स्वप्नसेवी कदापि नहीं थे। अुनका दावा था कि वे व्यावहारिक आदर्शवादी हैं। *

**गांधीजीके विचारोंके बारेमें अज्ञान :** गांधीजीके विचारोंके साथ अज्ञानके कारण प्राय: बहुत अन्याय किया जाता है। विविध विषयों पर गांधीजीके मतामतोंके बारेमें अधिकांश लोगोंकी धारणायें बहुत अस्पष्ट हैं। यह अज्ञान सामान्य लोगों तक ही सीमित हो, सो बात नहीं; वह विद्वान माने जाने-वालोंमें भी पाया जाता है। अिस स्थितिका कारण गांधीजीकी शिक्षाओंके वैज्ञानिक अध्ययनका अभाव है।

**गांधीजीके विचारोंके अध्ययनकी सही पद्धति :** गांधीजीकी शिक्षाओंके वैज्ञानिक अध्ययनकी सही पद्धति यह होगी कि अुनके वचनों या लेखोंको समयानुक्रमके अनुसार अिकट्ठा किया जाय और अुन्हें अुन परिस्थितियोंके साथ जोड़ा जाय जिसमें वे कहे गये अथवा लिखे गये थे। अिस तरह हम हरअेक वचनको अुसके अुचित संदर्भमें देख सकेंगे। अिस पद्धतिका अनुगमन किया जाय, तो हम जान सकेंगे कि किसी विषय पर अुनके विचारोंमें समयके साथ कैसा और कितना परिवर्तन हुआ है। अनेक अुदा-हरणोंमें हम देखेंगे कि अुनके विचारोंमें कोअी विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। दूसरी ओर हम यह भी देखेंगे कि अमुक शब्दोंके आशयमें तो अुन्होंने थोड़ा-बहुत फर्क किया है, किन्तु अुनके बुनियादी विश्वास ज्योंके त्यों कायम रहे हैं।

गांधीजी जैसे किसी भी महापुरुषकी शिक्षाओंमें हमें अेक विशेषता और भी दीखती है। अुनका अेक हिस्सा तो अैसा होता है जो सारी मानव-जातिसे सम्बन्ध रखता है और स्थायी होता है और दूसरा हिस्सा अुस समय-विशेषकी परिस्थितियोंसे संबंधित होता है और अस्थायी होता है। हमें चाहिये कि हम अुनकी शिक्षाओंके अिन स्थायी और अस्थायी हिस्सोंको अलग-अलग रखें, ताकि अुनके तुलनात्मक महत्त्वकी कीमत हम सही सही आंक सकें। गांधीजीकी शिक्षाओंके अिन दो पहलुओंके फर्क पर हम बादमें और ज्यादा विचार करेंगे, खासकर अुनके आर्थिक विचारोंके सिलसिलेमें जो कि भारतकी बीसवीं सदीकी परिस्थितियोंसे विशेष तौर पर सम्बन्धित थे।

---

* यंग अिंडिया, ११-८-'२०

## गांधीजीके आदर्शवादकी विशिष्टता

**अुनके आदर्शवादके मुख्य स्रोत :** यहां हम गांधीजीके आदर्शवादकी विशिष्टताका विश्लेषण करेंगे। अुनके धार्मिक विचारोंमें अथवा सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रोंसे सम्बन्धित अुनके आदर्शवादमें सर्वत्र हम कुछ सामान्य सिद्धान्त पाते हैं। संक्षेपमें ये सिद्धान्त अिस प्रकार हैं।

आदर्श अपने अंतिम रूपमें तो यूक्लिडके विन्दुकी तरह — जिसे कोअी मनुष्य अंकित ही नहीं कर सकता — अेक कल्पनाकी वस्तु है। अर्थात् यूक्लिडके अुस विन्दुकी तरह अुसे भी मूर्त रूपमें पाया नहीं जा सकता। यही विचार किसी अंग्रेजी कविकी अिस पंक्तिमें प्रगट हुआ है :

> "A man's reach should exceed his grasp,
> Else what is heaven for?"*

आदर्शका निश्चय करनेके वाद हमारा कर्तव्य है कि हम अुसे अपनी शक्तिके अनुसार आचरणमें अुतारें। आदर्श अप्राप्य होता है, अिसलिअे अैसा नहीं होना चाहिये कि हम अुसे पानेकी कोशिश ही नहीं करें। रास्ता कठिनाअियोंसे घिरा हुआ हो तो भी हमें अपने मनुष्यत्वकी रक्षाके लिअे अुस पर चलनेकी कोशिश तो करनी ही चाहिये। यही पुरुषार्थ है। आनन्द प्राप्तिमें नहीं, प्रयत्नमें है। "आशा और अुत्साहके साथ यात्रा करते रहना लक्ष्य पर पहुंच जानेसे कहीं ज्यादा अच्छा है।" हमें अपने साधनोंकी और अुनके अधिकाधिक अुपयोगकी चिन्ता करनी है। लक्ष्यकी ओर हमारी प्रगति ठीक अुतनी होगी जितनी हमारे साधनोंकी शुद्धि होगी। यह रास्ता लम्वा मालूम होता है, परन्तु वस्तुतः वह सवसे छोटा सिद्ध होता है।

अपनी अनन्तताके कारण आदर्श, ज्यों ज्यों हम अुसकी ओर वढ़ते हैं त्यों त्यों, हमसे दूर हटता हुआ मालूम होता है। लेकिन हमें यह याद रखना चाहिये कि रात ठीक अरुणोदयके पूर्व सवसे ज्यादा अंधेरी होती है। यदि हम सही प्रयत्न करें, तो हम अपने आदर्शकी दिशामें काफी दूर तक वढ़ सकेंगे और यह प्रगति ही वास्तविक प्रगति होगी।

**मनुष्यके स्वभावकी मर्यादायें :** जव गांधीजी हमें आदर्शसे चिपटे रहनेकी सलाह देते हैं, तव क्या वे मनुष्यके स्वभावकी मर्यादाओंका पूरा खयाल करते हैं? या वे मनुष्यके स्वभावके विषयमें अपनी कल्पित और झूठी आशाओंको

---

* मनुष्यके हाथकी पहुंच अुसकी मुट्ठीकी पकड़से कहीं ज्यादा वड़ी होनी ही चाहिये। अन्यथा स्वर्गका क्या अुपयोग है?

। पकड़े रहते हैं। अिस सवाल पर अुनका मन्तव्य अुनके ही शब्दोंमें अिस कार है:

"यह बात सच है कि बहुत बार लोगोंने मेरे साथ दगाबाजी की है। बहुतोंने मुझे धोखा दिया है और कितने ही कच्चे साबित हुअे हैं। लेकिन अुनके संसर्ग पर मुझे पछतावा नहीं है। क्योंकि जिस तरह मैं सहयोग करना जानता था, अुसी तरह असहयोग करना भी जानता था। अिस दुनियामें रहने और बरतनेका सबसे ज्यादा अमली और गौरवपूर्ण तरीका यही है कि लोग जो मुंहसे कहें अुस पर विश्वास करें — जब तक कि अुसके खिलाफ पक्के कारण आपके पास न हों।"*

**व्यक्ति और प्रणालीमें भेद:** मनुष्यके स्वभावमें गांधीजीको सच्चा विश्वास ा। अत्यंत कसौटीकी घड़ियोंमें भी अुनका यह विश्वास कभी विचलित हीं हुआ। मनुष्यकी बुनियादी अच्छाअीमें अुनकी पूरी निष्ठा थी और अिस- ञे वे किसी भी मनुष्यको अुद्धारके परे नहीं मानते थे। अुनका कहना था कि न्याय करनेवाला अकसर किसी दूषित प्रणालीका पुर्जा या परिस्थितियोंका ाकार-मात्र होता है। अिसलिअे हमें मनुष्य और प्रणालीमें भेद करना चाहिये। न्यायीको शत्रु मानना अुचित नहीं है। अुसे न सिर्फ समझा-बुझाकर बल्कि रूरत हो तो अहिंसक असहयोगके द्वारा सही रास्ते पर लाया जा सकता । अन्यायीके हृदयमें अपना दोष देखने और अुसे पश्चात्तापके आंसुओं द्वारा ो डालनेकी बुद्धि जगानेके अिस प्रयत्नमें यह जरूर संभव है कि हमें खुद ाफी कष्ट सहना पड़े। लेकिन यदि हम कष्ट सहनेके लिअे तैयार हों, ो निश्चय है कि अहिंसक असहयोग व्यर्थ नहीं जायेगा। अिसलिअे जरूरत पित प्रणालीका नाश करनेकी है, व्यक्तिका नाश करनेकी नहीं। अैसा िया जाय तो विपक्षी हमारा शत्रु नहीं बनता और अिस बातकी काफी ़जाअिश रहती है कि हम न केवल अुसका हृदय जीत लें, बल्कि वह ामान्य लक्ष्यकी प्राप्तिके लिअे हमारे साथ काम करनेके लिअे भी राजी ो जाय।

**मनुष्यके स्वभावमें श्रद्धा:** गांधीजीने श्री जयप्रकाश नारायणको, जिन्होंने ांधीजीके सामने भारतीय आजादीकी अपनी तसवीर विचारार्थ पेश की थी, ो जवाब दिया था अुसमें मनुष्यकी बुनियादी अच्छाअी और अहिंसक ाधनोंकी अमोघ क्षमतामें अुनकी अमिट श्रद्धा बहुत अच्छी तरह प्रगट ुअी है। गांधीजीने लिखा था:

---

* हिन्दी नवजीवन, १-१-'२५

"शायद श्री जयप्रकाशको यह विश्वास नहीं है कि राजा लोग स्वेच्छासे अपनी निरंकुशताका त्याग कर देंगे। मुझे यह विश्वास है। अेक तो अिसलिअे कि वे भी हमारी ही तरह भले आदमी हैं, और दूसरे अिसलिअे कि मेरा शुद्ध अहिंसाकी अमोघ शक्तिमें सम्पूर्ण विश्वास है।" *

मनुष्यके स्वभावमें हमारी श्रद्धा अुत्पन्न हो अुसके पहले हमारी श्रद्धा अपने-आपमें और अपने ध्येयमें होनी चाहिये। गांधीजीको अपने-आपमें और अपने ध्येयमें पूरी श्रद्धा थी, अिसमें किसे संदेह हो सकता है? परवर्ती घटनाओंने सिद्ध कर दिया है कि अुनकी यह श्रद्धा कितनी सही थी। हमने अपनी आंखोंके सामने ही यह देखा कि राजाओंने स्वेच्छापूर्वक अपनी सत्ता जनताके चुने हुअे प्रतिनिधियोंको सौंप दी। अेक विदेशी प्रवासीने अुनसे अपनी भेंटके दरमियान जब अुनसे पूछा कि वे क्या अैसा मानते हैं कि अुनके अहिंसक आन्दोलनके फलस्वरूप अंग्रेज भारतको शान्तिपूर्वक छोड़कर चले जायेंगे, तो अुन्होंने दृढ़तापूर्वक अुत्तर दिया कि हां, मैं अैसा मानता हूं। प्रश्नकर्ताने फिर पूछा, "आपके अिस विश्वासका आधार क्या है?" गांधीजीने जवाब दिया, "अीश्वर और अुसके न्यायमें मेरी निष्ठा ही मेरे अिस विश्वासका आधार है।" × गांधीजीने अपने जीवन-कालमें ही हथियारको छुअे बिना भारतकी आजादी प्राप्त कर ली। अंग्रेज शासक भारतीयोंके हाथमें शासन-सत्ता शान्तिपूर्वक सौंपकर भारतसे विदा हो गये। ये तो केवल दो ही अुदाहरण हैं। लेकिन गांधीजीका जीवन अैसे असंख्य अुदाहरणोंसे भरा पड़ा है, जिनमें हिसाबी वृत्तिके दुनियादार आदमीको अुनका व्यवहार मूर्खताकी हद तक दुस्साहसपूर्ण मालूम होगा। लेकिन सत्य यह है कि क्वचित् ही कोअी प्रसंग अैसा हो जिसमें गांधीजीको अपने प्रयत्नमें सफलता न मिली हो। जो भी आदमी भारतके हालके अितिहासके पृष्ठ अुलटेगा अुसे अिस कथनकी सचाअीके चाहे जितने प्रमाण मिल जायेंगे।

गांधीजी अहिंसामें मानते थे, लेकिन वे अिस तथ्यको स्वीकार करके चलते थे कि मनुष्य अपूर्ण है। यदि कोअी कमजोर आदमी हमारे साथ कदम मिलाकर न चल सकता हो और पीछे रह जाता हो, तो यह जरूरी हो जाता है कि अुसकी कमजोरीका खयाल किया जाय। लेकिन सिद्धान्तों पर कोअी समझौता कैसे हो सकता है? सिद्धान्तों पर तो चट्टानकी तरह दृढ़ ही रहना होगा। अिसके सिवा, बुराअीके साथ भी कोअी समझौता नहीं हो सकता। लेकिन मनुष्यकी कमजोरियोंका खयाल करके किंचित् विवेक अवश्य

* हरिजनसेवक, २०–४–'४०

× हरिजन, १३–२–'३७

रखना चाहिये। सिद्धान्तोंके बारेमें किसी तरहकी शिथिलताकी सलाह नहीं दी जा सकती और न अुसे प्रोत्साहन ही दिया जा सकता है, किन्तु साथ ही हमें यह भी देखना होगा कि किसी भी छोटी बातको सिद्धान्तका दर्जा न दे दिया जाय। समझौतेके लिअे गांधीजी जिन शर्तोंका होना आवश्यक मानते थे, अुन पर निम्नलिखित अुद्धरणसे काफी प्रकाश पड़ता है:

> "सच तो यह है कि जीवन अैसे समझौतोंसे ही बना हुआ होता है। चूंकि अहिंसा अत्यंत विशुद्ध और निःस्वार्थ प्रेम ही है, अिसलिअे अुसमें अकसर अैसे समझौते आवश्यक भी होते हैं। अलबत्ता, अुसकी कुछ शर्तें हैं जिनका पालन अवश्य होना चाहिये। हम जो कुछ भी कर रहे हों अुसमें कोअी स्वार्थ, भय या असत्य नहीं होना चाहिये और अुसमें हमारा लक्ष्य अहिंसाकी ओर अधिकाधिक बढ़नेका ही होना चाहिये। यह समझौता स्वाभाविक यानी स्वेच्छा-प्रेरित होना चाहिये, बाहरसे लादा हुआ नहीं।"*

**गांधीजीका राजनीतिक आदर्शवाद :** हम गांधीजीकी स्वराज्यकी कल्पनाका विश्लेषण करें अुसके पहले अुनके राजनीतिक आदर्शवादका मुख्य स्रोत समझ लेना अुपयोगी होगा। गांधीजीके राजनीतिक गुरु गोपाल कृष्ण गोखलेने भारत-सेवक-समाजके संविधानकी प्रस्तावनामें, जो कि अुन्होंने १९०५ में लिखी थी, सार्वजनिक जीवनमें आध्यात्मिक मूल्योंको दाखिल करनेकी आवश्यकता प्रगट की थी। अुन्होंने अिस बात पर जोर दिया था कि देशकी सेवा अुसी निष्ठासे की जानी चाहिये जिस निष्ठासे धर्मकी सेवा की जाती है। गोखलेकी यह परम्परा अुनके शिष्यने जारी रखी। गांधीजी राजनीतिमें क्यों पड़े — अिस प्रश्नका अुत्तर गांधीजीके अपने शब्दोंमें अिस प्रकार है:

> "अैसे सर्वव्यापी सत्यनारायणका साक्षात्कार करनेके लिअे मनुष्यके मनमें छोटेसे छोटे प्राणीके प्रति अपने ही जैसा प्रेम होना चाहिये। और जो मनुष्य अिसकी आकांक्षा रखता है वह जीवनके किसी क्षेत्रसे बाहर नहीं रह सकता। अिसी कारणसे मेरे सत्यप्रेमने मुझे राजनीतिक क्षेत्रमें घसीट लिया है; और मैं बिना किसी संकोचके किन्तु पूरी नम्रताके साथ कह सकता हूं कि जो लोग यह कहते हैं कि धर्मका राजनीतिके साथ कोअी संबंध नहीं है वे नहीं जानते कि धर्मका क्या अर्थ है।"×

---

* हरिजन, १७–१०–'३६

× आत्मकथा (अंग्रेजी), पृ० ६१५; १९४८।

**धर्म और राजनीति :** धर्म और राजनीतिको अेक-दूसरेसे अलग नहीं किया जा सकता। अुनमें अटूट सम्बन्ध है। धर्मके बिना राजनीति निर्जीव हो जायगी। धर्मके अभावमें राजनीति खोखली और निरर्थक होगी :

> "मुझे अिस नाशवान अैहिक राज्यकी कोअी अभिलाषा नहीं है। मैं तो अीश्वरीय राज्यको पानेका प्रयत्न कर रहा हूं। वह है मोक्ष। मेरे लिअे तो मुक्तिका मार्ग है अपने देशकी और अुसके द्वारा मनुष्य-जातिकी सेवा करनेके लिअे सतत परिश्रम करना। मैं संसारके भूत-मात्रसे अपना तादात्म्य कर लेना चाहता हूं। मैं गीताकी भाषामें — 'समः शत्रौ च मित्रे च' हो जाना चाहता हूं। अिस प्रकार मेरी देशभक्ति और कुछ नहीं अपनी चिर मुक्ति और शांतिके देशकी मंजिलका अेक विश्राम-स्थान है। अिससे यह मालूम हो जाता है कि मेरे नजदीक धर्मशून्य राजनीति कोअी चीज नहीं। राजनीति धर्मकी अनुचरी है। धर्महीन राजनीतिको अेक फांसी ही समझिये। वह आत्माका नाश कर देती है।*

अेक विदेशी अीसाअी नेताने, जो दिसम्बर १९३८ में गांधीजीसे चर्चा करनेके लिअे यहां आया था, अुनसे पूछा था कि भारतके लिअे आपने जो काम किया है अुसमें आपका मुख्य प्रेरक हेतु क्या था? वह राजनीतिक था या सामाजिक या धार्मिक? गांधीजीने जवाब दिया — "विशुद्ध धार्मिक।" यही प्रश्न अुनसे स्व० श्री मांटेग्यूने किया था, जब वे अेक राजनीतिक प्रतिनिधि-मंडलके साथ अुनसे मिले थे। अुन्होंने आश्चर्य व्यक्त करते हुअे पूछा, "आप तो समाज-सुधारक हैं; आप राजनीतिकी अिस भीड़-भाड़में कैसे आ पहुंचे?" गांधीजीने जवाब दिया कि अुनका राजनीतिमें आ पड़ना अुनके समाज-सुधार कार्यका ही विस्तार है। अुन्होंने कहा कि जब तक मैं सारी मानव-जातिके साथ अेकात्मता सिद्ध न करूं तब तक मैं धार्मिक जीवन नहीं बिता सकता और मानव-जातिके साथ अेकात्मता स्थापित करनेके लिअे यह जरूरी है कि मैं राजनीतिमें भाग लूं। आज मनुष्यकी सारी प्रवृत्तियां मिलकर अविभाज्य हो गअी हैं। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक कार्योंको अेक-दूसरेसे बिलकुल अलग नहीं किया जा सकता। मैं मानव-सेवासे भिन्न किसी धर्मको नहीं जानता। मानव-सेवा ही दूसरी सारी प्रवृत्तियोंको नैतिक आधार प्रदान करती है। मानव-सेवाका लक्ष्य न रहने पर ये सारी प्रवृत्तियां निराधार हो जायेंगी और जीवन अर्थहीन शोरगुलका रूप ले लेगा।×

---

* हिन्दी नवजीवन, ६–४–'२४

× हरिजन, २४–१२–'३८

**धर्मका अर्थ :** यहां धर्म शब्दका अुपयोग शाश्वत मूल्योंके अर्थमें किया गया है, विविध धर्मोंकी रूढ़ मान्यताओंके अर्थमें नहीं। धार्मिक मामलोंमें गांधीजीकी दृष्टिकी अुदारता और मनकी परमत-सहिष्णुताकी बात सुप्रसिद्ध है। वे अीश्वरको सत्यके रूपमें ही पहिचानते थे। धर्मका अर्थ है मनुष्यके द्वारा अतिमानुषी नियामिका शक्ति या अीश्वरका स्वीकार। अीश्वरसे गांधीजीका क्या तात्पर्य था ?

> "अगर मानव-वाणीके लिअे अीश्वरका संपूर्ण वर्णन करना संभव हो, तो मैं अिस निश्चय पर पहुंचा हूं कि अीश्वर सत्य है— सत्य शब्द ही अुसका सर्वोत्तम वाचक है। परंतु दो वर्ष पूर्व मैं अेक कदम और आगे बढ़ा, मैंने कहा कि न केवल अीश्वर सत्यरूप है, बल्कि सत्य ही अीश्वर है। अीश्वर सत्य है और सत्य ही अीश्वर है, अिन दोनों वचनोंके सूक्ष्म भेदको आप समझ लेंगे। अिस नतीजे पर मैं सत्यकी पचास वर्षकी दीर्घ, अनवरत और कठिन खोजके बाद पहुंचा हूं। अिसके बाद मुझे पता चला कि सत्य तक पहुंचनेका निकटतम मार्ग प्रेम है। परंतु मैंने यह भी पाया कि कमसे कम अंग्रेजी भाषामें 'लव' (प्रेम) शब्दके अनेक अर्थ हैं और विकारके अर्थमें मानव-प्रेम तो अेक मलिन चीज है जो मनुष्यका पतन करती है। मैंने यह भी देखा कि अहिंसाके अर्थमें प्रेमके पुजारियोंकी संख्या दुनियामें अिनीगिनी ही है। परंतु सत्यके बारेमें दो अर्थ नहीं हैं और नास्तिकों तकने सत्यकी आवश्यकता या शक्ति स्वीकार की है। परन्तु सत्यको ढूंढ़ निकालनेकी अपनी लगनमें नास्तिकोंने अीश्वरके अस्तित्वसे भी अिनकार करनेमें संकोच नहीं किया है और अपने दृष्टिकोणसे अुन्होंने ठीक ही किया है। अिस तरह सोचते हुअे मेरी समझमें आया कि अीश्वर सत्यरूप है यह कहनेके बजाय मुझे यह कहना चाहिये कि सत्य ही अीश्वर है।"*

अीश्वरकी अपनी कल्पना अुन्होंने अुपर्युक्त शब्दोंमें समझायी है। अुनकी धार्मिक भावनाकी मौलिकता और प्रगल्भता अिस अुद्धरणके प्रत्येक शब्दसे टपकती है।

## स्वराज्य

**अुनकी कल्पनाका स्वराज्य :** गांधीजी ब्रिटिश साम्राज्यके अेक राजभक्त नागरिकसे अेक राजद्रोही — और अैसा राजद्रोही जो अिस बातका प्रचार करता था कि ब्रिटिश शासन ही भारतके राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक नाशके लिअे अुत्तरदायी है — कैसे बन गये, अिस बातकी कहानी

* सत्य ही अीश्वर है, पृ० १३; १९५९।

अिस देशका हालका अितिहास जाननेवाले जानते ही हैं। जिस स्वराज्यको लाने और जिसका निर्माण करनेके लिअे अुन्होंने अपना सारा जीवन लगाया वह नकारात्मक नहीं था। स्वराज्यकी अुनकी कल्पना महज यह नहीं थी कि सत्ता विदेशियोंके हाथसे भारतीयोंके हाथमें आ जाय। यह तो अुनके कल्पनाके स्वराज्यकी मात्र पहली मंजिल थी। सब लोग जानते हैं कि १५ अगस्त, १९४७ को जब ब्रिटिश सम्राटके आखिरी प्रतिनिधिने शासनकी बागडोर भारतकी राष्ट्रीय सरकारको सौंपी अुस समय सारा राष्ट्र तो आजादीका अुत्सव मना रहा था और खुशीसे नाच रहा था, पर वर्धाका संत दु:खी मनसे किन्तु अत्यंत वीरतापूर्वक अपनी सारी शक्ति देशभरमें फैली हुअी साम्प्रदायिक द्वेषाग्निको बुझानेमें लगा रहा था।

**स्वराज्यका अर्थ :** स्वराज्य समाजकी अुस स्थितिका नाम है, जिसमें जनता अपना शासन स्वयं करना सीख लेती है। अिस स्वराज्यका अनुभव हरअेक व्यक्तिको होना चाहिये :

> "स्वराज्यका असली मतलब आत्म-संयम है। आत्म-संयम वही रख सकता है, जो सदाचारके नियमोंका पालन करता है, किसीको धोखा नहीं देता, सत्यका त्याग नहीं करता और अपने माता-पिता, पत्नी, बच्चों, नौकरों और पड़ोसियोंके प्रति अपना फर्ज अदा करता है। अैसा आदमी भले कहीं भी रहे, स्वराज्यका सुख भोगता है। जो राज्य बड़ी संख्यामें अिस तरहके भले नागरिकोंके होनेका गर्व कर सकता है, वह स्वराज्यका अुपभोग करता है।" *

**गांधीजीके स्वराज्यकी नींवका पत्थर — व्यक्ति :** गांधीजीके स्वराज्य-रूपी भवनकी नींवका पत्थर व्यक्ति है। अुसे चाहिये कि वह अपनेको अच्छा नागरिक बननेकी तालीम दे और अुसके लिअे आवश्यक योग्यताओंका अपनेमें विकास करे, तभी वह स्वराज्यका लाभ अुठा सकता है। समाज व्यक्तियोंका समूह है। समाज शासनके लिअे और कानूनका पालन करवानेके लिअे राज्यकी स्थापना करता है। जिस राज्यमें अच्छे नागरिक बड़ी संख्यामें मौजूद हों वही स्वराज्य भोगनेका दावा कर सकता है। स्वराज्य तभी कायम रखा जा सकता है जब कि राज्यमें अैसे देशभक्त नागरिकोंकी बहुसंख्या मौजूद हो, जो अपने हितकी तथा और दूसरी सारी चीजोंकी तुलनामें देशके हितको ही सर्वोपरि महत्त्व प्रदान करते हों। × अैसी स्थिति न हो तो राजनीतिक स्वतंत्रताके होते हुअे भी अुन लोगोंको स्वतंत्र नहीं कहा जा सकता।

---

* गांधीजी, अे पैराफ्रेज़ ऑफ रस्किन्स 'अन्टु दिस लास्ट' के 'कंक्लुज़न' नामक अध्यायसे, पृ० ६५।

× यंग अिंडिया, २८-७-'२१

राजनीतिक स्वतंत्रताका महत्त्व कम है, अैसी बात नहीं है। गांधीजी अिस बातको खूब समझते थे कि राजनीतिक आजादी तो होनी ही चाहिये। किसी अेक देशका दूसरे देश पर राज्य करना गलत है और विदेशी शासन अेक असह्य बुराअी है। अिसलिअे वे भारतके लिअे राजनीतिक आजादी अवश्य चाहते थे। लेकिन वे यह भी समझते थे कि अंग्रेजोंके भारत छोड़ देने मात्रसे जादूकी तरह यहां सुखकी वर्षा नहीं होने लगेगी। यूरोपकी हालतने अुन्हें सावधान कर दिया था। अुन्होंने समझ लिया था कि केवल राजनीतिक आजादी मिल जानेसे अैसी परिस्थितियां पैदा नहीं हो जातीं जिनमें जनता अपना शासन आप करने लगे। राजनीतिक आजादी मिलनेके बाद भी वह चंद लोगोंके द्वारा पीसी जाती रहती है। अिसलिअे अुन्होंने लिखा था :

> "केवल राजनीतिक सत्ताके अेक हाथसे निकल कर दूसरे हाथमें चले जानेसे मेरी महत्त्वाकांक्षाको संतोष न होगा, हालांकि मैं भारतके राष्ट्रीय जीवनके लिअे सत्ताका अिस प्रकार हस्तान्तरित होना परम आवश्यक मानता हूं। यूरोपके लोग निस्संदेह राजनीतिक सत्ता तो रखते हैं, पर स्वराज्य नहीं। अेशिया और अफ्रीकाके लोगोंको वे अपने आंशिक लाभके लिअे लूटते हैं और अुनके शासक-वर्ग अुन्हें प्रजा-सत्ताके पवित्र नाम पर लूटते हैं। तो यदि जड़को देखें तो रोग वही दिखाअी देता है जो कि भारतवर्षको है। अिसलिअे अिलाज भी वही काम दे सकेगा।" *

अिससे प्रगट हो जाता है कि सरकार जनताकी ही हो, अिस बातको वे काफी नहीं मानते थे; वे चाहते थे कि वह जनताकी तो होनी ही चाहिये, लेकिन जनताके लिअे और जनताके द्वारा चलायी जानेवाली भी होनी चाहिये।

**स्वराज्यमें विशिष्ट वर्ग और सामान्य जनता :** स्वराज्यमें सामान्य जनताके हितोंको चंद लोगों या वर्गोंके हितों पर तरजीह मिलना चाहिये। स्वराज्य पर निहित स्वार्थवालोंका अेकाधिकार हो या वे लोग ही अुसका सारा लाभ अुठायें, अैसा नहीं होना चाहिये। स्वराज्यकी योजनामें सामान्य जनताका हित ही सर्वोपरि होना चाहिये। "अैसा प्रत्येक हित, जो बेजबान करोड़ोंके हितके विरुद्ध हो, या तो बदला जाना चाहिये या यदि वह बदला न जा सकता हो तो अुसमें कमी की जानी चाहिये।"× अिसका यह अर्थ

---

* हिन्दी नवजीवन, ३–९–'२५

× यंग अिंडिया, १७–९–'३१

नहीं कि शेष वर्गोंको — मध्यम वर्ग, पूंजीपतियों, जमींदारों आदिको — मिटा दिया जाय। " अुद्देश्य अितना ही है कि अिन सब वर्गोंको गरीबोंके हितको मुख्य मानकर अुसकी सेवा करनी चाहिये।"*

**सरकार जनताके द्वारा चलायी जाय:** अब हम अिस सवाल पर आते हैं कि 'सरकार जनताके द्वारा चलायी जाय' — अिस बातका सही आशय क्या है। गांधीजीका अुत्तर अिस प्रकार है:

> "स्वराज्यसे मेरा अभिप्राय है लोक-सम्मतिके अनुसार होनेवाला भारतवर्षका शासन। लोक-सम्मतिका निश्चय देशके बालिगोंकी बड़ीसे बड़ी तादादके मतके जरिये हो, वे चाहे स्त्री हों या पुरुष, अिसी देशके हों या अिस देशमें आकर बस गये हों। वे लोग अैसे हों जिन्होंने अपने शारीरिक श्रमके द्वारा राज्यकी सेवा की हो और जिन्होंने मतदाताओंकी सूचीमें अपना नाम लिखवाया हो। . . . मैं यह सिद्ध करनेकी आशा रखता हूं कि सच्चा स्वराज्य थोड़े लोगोंके द्वारा सत्ता छीन लेनेसे नहीं, बल्कि जब सत्ताका दुरुपयोग होता हो तब सब लोगोंके द्वारा अुसके प्रतिकार करनेकी क्षमताको प्राप्त करके हासिल किया जा सकता है। दूसरे शब्दोंमें, स्वराज्य जनतामें अिस बातका ज्ञान पैदा कराके प्राप्त किया जा सकता है कि सत्ता पर कब्जा करने और अुसका नियमन करनेकी क्षमता अुनमें है।" ×

**नागरिकोंकी सजगता:** जहां नागरिक अपनी आजादीकी रक्षाके विषयमें सजग होंगे, वहां लोगोंकी सारी आवश्यकतायें पूरी करनेका काम राज्य नहीं करेगा और न वह जनतासे सत्ताको हथियानेकी अनधिकार चेष्टा ही करेगा। सत्ता पर स्वामित्व जनताका ही है और होना चाहिये। स्वराज्यका अर्थ यह है कि जनता सरकारके नियंत्रणसे — सरकार विदेशी हो या स्वदेशी — मुक्त होनेके लिअे लगातार प्रयत्न करती रहेगी। जिस स्वराज्यमें लोग अपने जीवनके छोटे छोटे कामोंके लिअे भी सरकारका मुंह ताका करें वह स्वराज्य किसी कामका नहीं होगा। ÷

**कमसे कम शासन करनेवाली सरकार ही अुत्तम सरकार है:** जहां राजनीतिक सत्ता जाग्रत, शिक्षित और अनुशासनकी तालीम पायी हुअी अैसी जनताके हाथमें होती है जिसने सत्ताका नियमन और नियंत्रण सीख लिया है, वहां फिर अिस बातका डर नहीं रह जाता कि राज्य निरंकुश बन जायगा।

---

* यंग अिंडिया, १६–४–'३१

× हिन्दी नवजीवन, २९–१–'२५

या वह अपनी जड़ें अितनी मजबूत कर लेगा कि वर्गहीन समाजकी अुस स्थितिकी ओर, जिसमें राज्यका विलय हो जाता है, जनताकी प्रगतिमें वह बाधा अुपस्थित कर सके। निम्नलिखित शब्द बताते हैं कि गांधीजी अुस जाग्रत लोकतंत्रके हिमायती थे, जिसमें सामान्य मनुष्यको अुसकी पूरी प्रतिष्ठा प्राप्त होगी :

"मेरी दृष्टिमें राजनीतिक सत्ता कोअी साध्य नहीं है, परन्तु जीवनके प्रत्येक विभागमें लोगोंके लिअे अपनी हालत सुधार सकनेका अेक साधन है। राजनीतिक सत्ताका अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवनका नियमन करनेकी शक्ति। अगर राष्ट्रीय जीवन अितना पूर्ण हो जाता है कि वह स्वयं आत्म-नियमन कर ले, तो किसी प्रतिनिधिकी आवश्यकता नहीं रह जाती। अुस समय ज्ञानपूर्ण अराजकताकी स्थिति हो जाती है। अैसी स्थितिमें हरअेक अपना राजा होता है। वह अिस ढंगसे अपने पर शासन करता है कि अपने पड़ोसियोंके लिअे कभी बाधा नहीं बनता। अिसलिअे आदर्श व्यवस्थामें कोअी राजनीतिक सत्ता नहीं होती, क्योंकि कोअी राज्य नहीं होता। परन्तु जीवनमें आदर्शकी पूरी सिद्धि कभी नहीं होती। अिसीलिअे थोरोने कहा है कि जो सबसे कम शासन करे वही अुत्तम सरकार है।" *

"अिसका मतलब यह है कि जब राजनीतिक सत्ता जनताके हाथमें होती है, तब जनताकी आजादीमें राज्यका हस्तक्षेप कमसे कम हो जाता है। दूसरे शब्दोंमें, जो राष्ट्र अपना कामकाज राज्यके ज्यादा हस्तक्षेपके बिना ही अच्छी तरह और सफलतापूर्वक चला लेता है, वही सही अर्थमें लोकतांत्रिक है। जहां यह शर्त पूरी नहीं होती हो, वहां शासनका स्वरूप नाममें लोकतांत्रिक भले हो, वस्तुतः वह लोकतांत्रिक नहीं होता।" ×

**सच्चा लोकतंत्र :** गांधीजीकी कल्पनाका सच्चा लोकतंत्र अनगिनत ग्राम-पंचायतोंका बना हुआ गणराज्य होगा। शासनकी अिकाअीके रूपमें गांधीजी गांवका आग्रह क्यों करते हैं? अिस प्रश्नका अुत्तर अुनके अपने ही शब्दोंमें अिस प्रकार है :

"आजादी नीचेसे शुरू होनी चाहिये। हरअेक गांवमें जमहूरी सल्तनत या पंचायत राज होगा। अुसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। अिसका मतलब यह है कि हरअेक गांवको अपने पांव पर

* सर्वोदय, पृ० ८२; १९५८।

× हरिजन, ११-१-'३६

खड़ा होना होगा — अपनी जरूरतें खुद पूरी कर लेनी होंगी, ताकि वह अपना सारा कारोबार खुद चला सके। यहां तक कि वह सारी दुनियाके खिलाफ अपनी हिफाजत खुद कर सके। अुसे तालीम देकर अिस हद तक तैयार करना होगा कि वह वाहरी हमलेके मुकाबलेमें अपनी रक्षा करते हुअे मर-मिटनेके लायक वन जाय। अिस तरह आखिर हमारी वुनियाद व्यक्ति पर होगी। अिसका यह मतलव नहीं कि पड़ोसियों पर या दुनिया पर भरोसा न रखा जाय; या अुनकी राजी-खुशीसे दी हुअी मदद न ली जाय। खयाल यह है कि सव आजाद होंगे और सव अेक-दूसरे पर अपना असर डाल सकेंगे। जिस समाजका हरअेक आदमी यह जानता है कि अुसे क्या चाहिये और अिससे भी वढ़कर जिसमें यह माना जाता है कि वरावरीकी मेहनत करके भी दूसरोंको जो चीज नहीं मिलती है वह खुद भी किसीको नहीं लेनी चाहिये, वह समाज जरूर ही वहुत अूंचे दर्जेकी सभ्यतावाला होना चाहिये।"

**स्वार्थत्यागकी आवश्यकता :** "अैसा समाज अनगिनत गांवोंका वना होगा। अुसका फैलाव अेकके अूपर अेकके ढंगका नहीं, वल्कि लहरोंकी तरह अेकके वाद अेककी शकलमें होगा। जीवन मीनारकी शकलमें नहीं होगा, जहां अूपरकी तंग चोटीको नीचेके चौड़े पाये पर खड़ा रहना पड़ता है। वहां तो जीवन समुद्रकी लहरोंकी तरह अेकके वाद अेक घेरेकी शकलमें होगा, जिसका केन्द्र व्यक्ति होगा। व्यक्ति गांवके लिअे और गांव ग्राम-समूहके लिअे मर-मिटनेको हमेशा तैयार रहेगा। अिस तरह अंतमें सारा समाज अैसे व्यक्तियोंका वन जायगा, जो अहंकारमें आकर कभी किसी पर हमला नहीं करेंगे, वल्कि सदा विनीत रहेंगे और अुस समुद्रके गौरवके हिस्सेदार वनेंगे, जिसके वे अविभाज्य अंग हैं।" *

**आदर्श गांव :** "आदर्श भारतीय गांवकी रचना अिस तरह की जायगी कि वहां संपूर्ण स्वच्छता रखी जा सके। अुसके घरोंमें पर्याप्त हवा और प्रकाशकी व्यवस्था होगी और अुनके निर्माणमें अैसी चीजोंका अुपयोग होगा जो अुस गांवके आसपासके पांच मीलके क्षेत्रमें मिल जायें। अिन घरोंमें आंगन होंगे जहां घर-मालिक घरके अुपयोगके लिअे आवश्यक प्रमाणमें साग-सब्जी पैदा कर सकेगा और वहां वह अपने गाय-वैल आदिको भी रखेगा। गांवकी गलियां और रास्ते धूल और कचरेसे मुक्त होंगे। अुसमें अुसकी जरूरतके अनुसार काफी कुअें होंगे

और ये कुअें सबके लिअे खुले होंगे। अुसमें वहां बसनेवाले सब लोगोंके पूजास्थान होंगे, सब लोगोंका अेक सामान्य सभास्थान होगा, गांवके पशुओंके लिअे गोचर-भूमि होगी, सहकारी डेरी होगी और प्राथमिक तथा अुच्च पाठशालायें होंगी। अिन पाठशालाओंमें दी जानेवाली शिक्षाका केन्द्रबिन्दु औद्योगिक शिक्षण होगा। गांवमें ग्रामवासियोंके आपसी झगड़ोंका निपटारा करनेके लिअे ग्राम-पंचायत होगी। गांव अपना अनाज, साग-भाजी, फल-फूल और अपनी खादी खुद पैदा करेगा।"*

**पंचायतराजमें समानता**: अैसे पंचायतराजमें देशके बड़ेसे बड़े और छोटेसे छोटे आदमीके बीचमें भी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक — यानी हर तरहकी समानता होगी। शरीर-श्रमकी कीमत की जायगी और अुसे प्रतिष्ठा प्राप्त होगी। नागरिक अपनी जीविका प्रामाणिक परिश्रमके द्वारा कमायेंगे। अफीम और शराब जैसे नशीले द्रव्यों पर पूरी रोक रहेगी। स्वदेशी जीवनका अेक अनिवार्य नियम बन जायगा। स्त्रियां अपनी पराधीनताकी स्थितिसे मुक्त होंगी और अुन्हें समाजमें सम्मानका स्थान प्राप्त होगा। और नागरिक अहिंसाके द्वारा सत्यकी रक्षा करनेके लिअे तथा अिस प्रयत्नमें आवश्यकता होने पर अपने प्राणोंकी बाजी लगानेके लिअे तैयार रहेंगे। ये वे आधार-स्तम्भ हैं जिन पर कि गांवोंके गणराज्यका भवन खड़ा होगा।

क्या अैसा गणराज्य सेना रखेगा? क्या सेना रखना नैतिक आजादीके साथ सुसंगत माना जा सकता है? नैतिक आजादीकी गांधीजीकी कल्पनामें शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित सेनाओंके लिअे कोअी स्थान नहीं है। अुनकी नैतिक आजादीकी व्याख्या यह है:

"रामराज्यकी मेरी कल्पनामें ब्रिटिश फौजी हुकूमतकी जगह राष्ट्रीय फौजी हुकूमतको बैठा देनेकी कोअी गुंजाअिश नहीं। जिस मुल्कमें फौजी हुकूमत होती है, फिर वह फौज मुल्ककी अपनी ही क्यों न हो, वह मुल्क नैतिक दृष्टिसे कभी आजाद नहीं हो सकता और अिसलिअे अुसके सबसे कमजोर कहे जानेवाले बाशिन्दे कभी पूरी तरहसे नैतिक अुन्नति नहीं कर सकते।"×

**भावी भारतकी सेना**: यह याद रखना चाहिये कि गांधीजी देशको बलपूर्वक अधिकृत करनेके काममें लायी जानेवाली सेनाके खिलाफ हैं, फिर वह सेना देशी ही क्यों न हो। लेकिन वे स्वयंसेवकोंकी अैसी सेना मंजूर करनेके लिअे तैयार हैं, जिसका अुपयोग देशमें जान-मालकी सुरक्षा बनाये

---

* डी० जी० तेन्दुलकर, महात्मा, खंड ४, पृ० १४४।

× हरिजनसेवक, ५–५–'४६

रखनेके लिअे किया जाय। नीचे दिये जा रहे अुद्धरणसे यह बात स्पष्ट हो जायगी :

"जल-सेनाके विषयमें मैं नहीं कह सकता, लेकिन स्थल-सेनाके विषयमें मैं कह सकता हूं कि भावी भारतकी स्थल-सेना किरायेके अैसे सैनिकोंकी नहीं होगी, जिनका अुपयोग भारतको गुलामीमें रखनेके लिअे या दूसरे राष्ट्रोंसे अुनकी आजादी छीननेके लिअे किया जाता है। बल्कि वह बहुत हद तक कम कर दी जायगी, अधिकांशत: स्वयं-सेवकोंसे बनी हुअी होगी और अुसका अुपयोग देशमें सुरक्षाकी व्यवस्था बनाये रखनेके लिअे ही होगा।" *

सन् १९४६ में केबिनेट मिशन भारत आया, अुसके ठीक पहले गांधीजीने देशको चेतावनी दी थी कि यदि स्वतंत्रताकी प्राप्तिके बाद भारतने सैनिक दृष्टिसे शक्तिशाली बननेकी कोशिश की, तो आजकी दुनियामें वह बहुत हुआ तो पांचवें दर्जेका सैनिक राष्ट्र बन सकेगा और वह दुनियाको कोअी संदेश देने योग्य भी नहीं रह जायगा। लेकिन यदि वह अपनी अहिंसाकी ही नीति पर कायम रहे और अुसे अधिकाधिक परिशुद्ध करता जाये, तो वह अपनी कीमती आजादीका अुपयोग दुनियाको अुस बोझसे मुक्त करनेमें कर सकेगा जिससे आज वह दबी जा रही है और दूसरे देशोंके सामने अेक अुज्ज्वल अुदाहरण भी पेश कर सकेगा। ×

## गांधीवादी आदर्श और समाजवादी तथा साम्यवादी आदर्शमें फर्क

**समाजवाद ओशोपनिषद्में अन्तर्हित है :** गांधीवादी आदर्श समाज-वादी तथा साम्यवादी आदर्शोंसे किन बातोंमें भिन्न है? दोनोंके बीचमें रहे हुअे फर्कको समझनेके लिअे हमें पहले यह जानना चाहिये कि समाजवादके सम्बन्धमें गांधीजीके विचार क्या हैं। गांधीजीका दावा था कि पश्चिमसे समाजवाद भारतमें आया, अुसके बहुत पहलेसे ही वे समाजवादी रहे हैं। समाजवादियोंके सिद्धान्तको वे दक्षिण अफ्रीकामें रहते हुअे ही अपना चुके थे। लेकिन अुनका समाजवाद किसी पुस्तकसे नहीं लिया गया था, वह अुनके अनुभव और अवलोकनकी अुपज था और अिस तरह अुन्हें स्वाभाविक तौर पर प्राप्त हुआ था। वह अहिंसामें अुनके अविचल विश्वाससे पैदा हुआ था। पश्चिमी समाजवादियोंसे अपना भेद स्पष्ट करते हुअे गांधीजी लिखते हैं :

---

* यंग अिंडिया, ९-३-'२२

"समाजवादका जन्म अुस वक्त नहीं हुआ था जब यह पता लगा कि पूंजीपति पूंजीका दुरुपयोग करते हैं। जैसा कि मैंने कहा है, समाजवाद ही नहीं, साम्यवाद भी ओशोपनिषद्के पहले मंत्रमें स्पष्ट है। सच बात तो यह है कि जब कुछ सुधारकोंका विचार-परिवर्तनकी पद्धतिमें विश्वास नहीं रहा, तब जिसे वैज्ञानिक समाजवाद कहते हैं अुसका जन्म हुआ। मैं अुसी समस्याको हल करनेमें लगा हुआ हूं, जो वैज्ञानिक समाजवादियोंके सामने है। लेकिन यह सही है कि मेरी दृष्टि सदासे अेकमात्र शुद्ध अहिंसाकी रही है।" *

**अुद्देश्यकी अेकता :** साम्यवादियोंकी तरह गांधीजीका भी अुद्देश्य अैसे वर्गविहीन समाजकी स्थापनाका ही है, जिसमें राजशक्ति क्रमश: क्षीण होकर प्राय: निःशेष हो गयी होगी। लेकिन अिस अुद्देश्य तक पहुंचनेके अुनके रास्तोंमें बुनियादी फर्क है। अिसलिअे यात्राके आरंभमें ही वे अेक-दूसरेसे अलग हो जाते हैं। पश्चिमी समाजवाद और साम्यवादके खिलाफ गांधीजीके विरोधको हम समझ लें।

**साधन :** वे कहते हैं : "हिंसाके द्वारा कोअी स्थायी सुधार किया जा सकता है, अिस बातको मैं अस्वीकार करता हूं। समाजवादियों और अुसी श्रेणीके दूसरे लोगोंसे मेरा विरोध अिसी बातमें है।" ×

"रूसका समाजवाद, यानी जनता पर जबरदस्ती लादा जानेवाला साम्यवाद, भारतको रुचेगा नहीं; भारतकी प्रकृतिके साथ अुसका मेल नहीं बैठ सकता। मैं अहिंसक साम्यवादमें विश्वास करता हूं। यदि साम्यवाद बिना किसी हिंसाके आये तो हम अुसका स्वागत करेंगे।" +

गांधीजी समाजवादियोंके आत्मत्याग और अुनकी बलिदानकी भावनाका बहुत आदर करते थे, लेकिन अुनकी और अपनी कार्य-पद्धतिमें रहे हुअे तीव्र विभेदको अुन्होंने कभी छिपाया नहीं। समाजवादी हिंसामें और हिंसाके सारे फलितार्थोंमें खुलकर विश्वास करते हैं, जब कि गांधीजी पूरी तरह अहिंसामें मानते हैं। ÷ वे कहते थे, "भारतको स्वराज्य अवश्य मिलना चाहिये, लेकिन यह स्वराज्य अुसे शुद्ध साधनोंके द्वारा प्राप्त करना चाहिये। क्योंकि सच्चा स्वराज्य हिंसाके द्वारा प्राप्त किया ही नहीं जा सकता।" † भारत हिंसाके

* हरिजन, २०–२–'३७

× हरिजन, १–६–'४७

\+ हरिजन, १३–२–'३७

÷ हरिजन, ४–८–'४६

† गांधीजी, अे पैराफेज़ ऑफ रस्किन्स 'अन्टु दिस लास्ट' के 'कंक्लुज़न' नामक अध्यायसे।

द्वारा अपनी आजादी प्राप्त कर सकता है, अिस बातका अुन्हें यकीन दिलाया जाता तो भी वे अुस आजादीको लेनेसे अिनकार कर देते। कारण, वह सच्ची आजादी होती ही नहीं।* हिंसा और लड़ाअीसे भारतको अंग्रेजोंके शासनकी जगह कोअी दूसरा शासन मिल सकता है, पर जनताकी दृष्टिसे जिसे स्व-शासनका नाम दिया जा सके अैसा स्वशासन कदापि नहीं मिल सकता।† अुनका दृढ़ विश्वास था कि हिंसाकी बुनियाद पर किसी स्थायी वस्तुका निर्माण नहीं हो सकता।‡ शरीरकी तरह शारीरिक शक्ति भी क्षणस्थायी ही है।

जब स्वराज्य हिंसाके द्वारा प्राप्त किया जाता है, तब सत्ता अुन अिने-गिने लोगोंके हाथमें चली जाती है जिन्होंने अुस क्रांतिका नेतृत्व किया हो। हिंसाके अुपयोगका यह अेक अनिवार्य परिणाम है। "जो तलवार अुठायेगा अुसका विनाश भी तलवारके द्वारा ही होगा।" — औसाका यह वाक्य अत्यंत अर्थपूर्ण है। अेक अिटलीका ही अुदाहरण लीजिये। अिटलीके स्वातंत्र्य-युद्धके पश्चात् वहां क्या हुआ?

"अिटलीमें अिटालियन राज करते हैं अिसलिअे अिटलीकी प्रजा सुखी है, अैसा अगर आप मानते हों, तो मैं आपसे कहूंगा कि आप अंधेरेमें भटकते हैं। मैजिनीने साफ साफ बताया है कि अिटली आजाद नहीं हुआ है। विक्टर अिमेन्युअलने अिटलीका अेक अर्थ किया, मैजिनीने दूसरा। अिमेन्युअल, कावूर और गैरीबाल्डीके विचारसे अिटलीका अर्थ था अिमेन्युअल या अिटलीका राजा और अुसके हुजूरी। मैजिनीके विचारसे अिटलीका अर्थ था अिटलीके लोग — अुसके किसान। अिमेन्युअल वगैरा तो अुनके (प्रजाके) नौकर थे। मैजिनीका अिटली अब भी गुलाम है। दो राजाओंके बीच शतरंजकी बाजी लगी थी। अिटलीकी प्रजा तो सिर्फ प्यादा थी और है। अिटलीके मजदूर अब भी दुखी हैं। अिटलीके मजदूरोंकी दाद-फरियाद नहीं सुनी जाती, अिसलिअे वे लोग खून करते हैं, विरोध करते हैं, सिर फोड़ते हैं और वहां बलवा होनेका डर आज भी बना हुआ है। आस्ट्रियाके जानेसे अिटलीको क्या लाभ हुआ? जिन सुधारोंके लिअे जंग मचा वे सुधार हुअे नहीं, प्रजाकी हालत सुधरी नहीं।

"हिन्दुस्तानकी अैसी दशा करनेका तो आपका अिरादा नहीं ही होगा। मैं मानता हूं कि आपका विचार हिन्दुस्तानके करोड़ों लोगोंको सुखी करनेका होगा, यह नहीं होगा कि आप या मैं राजसत्ता ले

---

* हरिजन, १३–२–'३७

† यंग अिण्डिया, २१–५–'२५

लूं। अगर अैसा है तो हमें अेक ही विचार करना चाहिये। वह यह कि प्रजा स्वतंत्र कैसे हो?"*

**साम्यवादियोंका सिद्धान्त:** साम्यवादी दलील करते हैं कि वे लोग व्यवहारवादी हैं, काल्पनिक आदर्शवादी विचारोंका अुनके लिअे कोअी अुपयोग नहीं है। वे समाजवादी क्रांतिके द्वारा मनुष्यके वर्तमान स्वभावके बदलनेकी अिच्छा और आशा रखते हैं। मनुष्य अपनी विवेक-बुद्धिके बजाय अपनी आदतोंसे अधिक परिचालित होता है। और अिसलिअे अुसकी वर्तमान आदतोंको बदलनेके लिअे शक्तिका अुपयोग करना जरूरी है। समय पाकर लोगोंको नये मूल्योंका पालन करनेकी, अुनके अनुसार चलनेकी आदत पड़ जायगी। पूंजीवादी समाजमें लोग दूसरोंके शोषण और अपने स्वार्थोंकी सिद्धिकी वृत्ति रखते हैं; अुसके बजाय अुस समय वे समाजके लाभके लिअे काम करनेकी वृत्ति अपनायेंगे। अिस स्थितिके निर्माणकी दिशामें पहला कदम यह है कि समाजका सर्वहारा वर्ग अर्थात् मजदूर वर्ग हिंसाके द्वारा राज्य पर अधिकार कर ले। साम्यवादियोंकी मान्यताके अनुसार पूंजीवादी राज्यकी जगह मजदूर वर्गके राज्यकी स्थापना हिंसक विद्रोहके बिना नहीं हो सकती। मजदूर वर्गके राज्यकी स्थापना पहली मंजिल है, अुसके बाद रास्ता आसान हो जाता है। फिर, अुसका अुपयोग समाजको शोषणकी बुराअीसे मुक्त करनेके लिअे होना चाहिये। पूंजीवादी शोषण जब तक बिलकुल खतम न हो जाय, तब तक हिंसाका अुपयोग करते रह सकते हैं। मजदूर वर्गका राज्य सदा कायम रखनेकी बात नहीं है; अुसकी कल्पना पहली मंजिलके तौर पर की गयी है। आखिरी मंजिल राज्यके विलयकी होगी। अैसी आशा की जाती है कि शोषणकी बुराअीके निर्मूलन और लोगोंके मनमें नये मूल्योंकी प्रतिष्ठापनाके परिणाम-स्वरूप राज्यके विलयकी वह आखिरी मंजिल आ जायगी।

**तानाशाही — अत्याचारका साधन:** गांधीजी साम्यवादियोंके अिस सिद्धांतका खंडन करते हैं। वे अुनकी अिस मान्यताको अस्वीकार करते हैं कि हिंसा हमें राजनीतिक अराजकताकी दिशामें ले जा सकती है। अुन्हें तानाशाहीमें, वह मजदूर वर्गकी हो या किसी और वर्गकी, बिलकुल भी विश्वास नहीं है। अैसा राज्य तानाशाहके हाथमें अन्यायका ही साधन बन रहेगा। अिसलिअे गांधीजी तानाशाहको अथवा राज्यको अैसे अपरिमित अधिकार देनेके पक्षमें नहीं हैं। दूसरे शब्दोंमें, वे किसी भी तरहकी सर्वसत्ता-धारी शासन-व्यवस्थाकी वेदी पर जनताका बलिदान नहीं करना चाहते। वे यह तो मानते हैं कि मनुष्य ज्यादातर अपनी पड़ी हुअी आदतोंसे परिचालित

* हिन्द स्वराज्य, प्र० १५; १९५९।

होता है, किन्तु साथ ही वे यह भी महसूस करते हैं कि मनुष्य अपनी बुद्धि और संकल्प-शक्तिका अैसा विकास कर सकता है कि शोषणकी बुराअीको अहिंसाके द्वारा ही बहुत दूर तक कम करना संभव हो जाय। यह प्रक्रिया शायद धीमी सिद्ध हो, किन्तु अंतिम सफलता निश्चित है — अुतनी ही निश्चित जितनीकी कहानीके खरगोशकी। और अन्तमें गांधीजीका स्वराज्य देशवासियोंके किसी अेक या अेकाधिक वर्गोंके लिअे नहीं है, वह सबके लिअे है। शर्त अितनी ही है कि सब वर्गोंको सामान्य जनताके हितोंको सर्वोपरि स्वीकार करना होगा।

अब हम साम्यवादियोंकी विविध मान्यताओंके विषयमें गांधीजीके विचार अुन्हींके शब्दोंमें सुनें :

## साम्यवादी सिद्धांत पर गांधीजीके विचार

### (अ) साधनोंकी शुद्धिका महत्त्व :

१. "समाजवाद अेक सुन्दर शब्द है और जहां तक मुझे मालूम है, समाजवादमें समाजके सब सदस्य बराबर होते हैं — न कोअी नीचा होता है, न कोअी अूंचा। किसी व्यक्तिके शरीरमें सिर सबसे अूपर होनेके कारण अूंचा नहीं होता और न पैरके तलवे जमीनको छूनेके कारण नीचे होते हैं। जैसे व्यक्तिके शरीरके सब अंग बराबर होते हैं, वैसे ही समाजरूपी शरीरके सारे अंग भी बराबर होते हैं। यही समाजवाद है।

"यह समाजवाद स्फटिककी तरह शुद्ध है। अिसलिअे अुसे सिद्ध करनेके साधन भी शुद्ध ही होने चाहिये। अशुद्ध साधनोंसे प्राप्त होनेवाला साध्य भी अशुद्ध ही होता है। अिसलिअे राजाका सिर काट डालनेसे राजा और प्रजा बराबर नहीं हो जायेंगे। और न मालिकका सिर काटनेसे मालिक और मजदूर बराबर हो जायेंगे। हम असत्यसे सत्यको प्राप्त नहीं कर सकते। सत्यमय आचरण द्वारा ही सत्यको प्राप्त किया जा सकता है। क्या अहिंसा और सत्य दो चीजें हैं? हरगिज नहीं। अहिंसा सत्यमें और सत्य अहिंसामें छिपा हुआ है। अिसलिअे मैंने कहा है कि वे अेक ही सिक्केके दो पहलू हैं। वे अेक-दूसरेसे अभिन्न हैं। सिक्केको किसी भी तरफसे पढ़ लीजिये। केवल पढ़नेमें ही फर्क है — अेक तरफ अहिंसा है, दूसरी तरफ सत्य। दोनोंका मूल्य अेक ही है। सम्पूर्ण शुद्धताके बिना यह दिव्य स्थिति

"अिसलिये सत्य-परायण, अहिंसक और शुद्ध-हृदय समाजवादी ही भारत और संसारमें समाजवादी समाज स्थापित कर सकेंगे। जहां तक मैं जानता हूं, संसारमें कोअी भी देश अैसा नहीं है जो शुद्ध समाजवादी हो। अुपरोक्त साधनोंके विना अैसे समाजवादका अस्तित्वमें आना असंभव है।"*

२. "अपने अुद्देश्यकी हम अत्यंत स्पष्ट व्याख्या कर लें और अुसे अच्छी तरह समझ लें, फिर भी यदि हम अुसे प्राप्त करनेके साधनोंको जानते न हों या जानते हुअे भी अुनका अुपयोग न करते हों, तो हम अुसकी ओर नहीं बढ़ सकते। अिसलिअे मैंने अपना प्रयत्न मुख्यतः साधनों पर व अुनके क्रमिक अुपयोग पर ही केन्द्रित किया है। मैं जानता हूं कि यदि हम अपने साधनोंकी ठीक परवाह करें, तो अुद्देश्यकी प्राप्ति सुनिश्चित है। मैं यह भी महसूस करता हूं कि अुद्देश्यकी दिशामें हमारी प्रगति ठीक अुसी अनुपातमें होगी जितने कि हमारे साधन शुद्ध होंगे। . . . हम जानते हैं कि राजा, जमींदार और वे सभी जो अपने अस्तित्वके लिअे जनताके शोषण पर निर्भर करते हैं हमारा अविश्वास करना या हमसे डरना छोड़ देंगे, यदि हम अुन्हें अपने साधनोंकी पवित्रताका विश्वास दिला दें। हम किसीके साथ जोर-जबरदस्ती नहीं करना चाहते। हम तो अुनका हृदय-परिवर्तन करना चाहते हैं। यह कार्य-पद्धति शायद लम्बी मालूम हो, और संभव है बहुत ज्यादा लम्बी मालूम हो, लेकिन मेरा निश्चित विश्वास है कि वही सबसे छोटी है।"†

३. "हम कार्य-पद्धति या साधनोंकी शुद्धता पर जोर देते हैं। साधनोंको मैं अुद्देश्यके जितना ही बल्कि अुससे भी ज्यादा महत्त्व देता हूं। कारण, साधनों पर तो हमारा कुछ काबू होता है; किन्तु यदि साधनों परसे हमारा काबू अुठ जाय, तो अुद्देश्य पर बिलकुल ही नहीं होता।"‡

४. "अब छिपकर गुप्त रूपसे काम करनेका सवाल लें। मेरा हमेशा यह दृढ़ मत रहा है — और आज भी वह अुतना ही दृढ़ है — कि गुप्त रूपसे काम करनेकी पद्धतियोंका संपूर्ण बहिष्कार होना चाहिये। अिस सिद्धान्तमें मैं कोअी अपवाद नहीं कर सकता। गुप्तताके कारण हमें बहुत कठिनाअी अुठानी पड़ी है और यदि दृढ़ताके साथ

* हरिजन, १३–७–'४७

† डी० जी० तेन्दुलकर, महात्मा, खं० ३, पृ० ३७६।

‡ वही, पृ० ३८४।

अुसका विरोध करके हमने अुसे बंद नहीं किया, तो हमारा आन्दोलन नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा। अैसी विशेष परिस्थितियोंकी कल्पना की जा सकती है, जिनमें गुप्त कार्य-पद्धतियां लाभप्रद मालूम हों और अुनकी जरूरत जान पड़े। लेकिन मैं जनताके हितके लिअे, जिसे हम निडर होना सिखाना चाहते हैं, अुस लाभका त्याग कर दूंगा। मैं अुन्हें अैसा सोचनेका अवसर देकर कि विशेष परिस्थितियोंमें वे गुप्त कार्य-पद्धतियोंका आश्रय ले सकते हैं अुनके मनमें भ्रम पैदा नहीं करूंगा। गुप्तता सविनय प्रतिरोधकी भावनाके विकासमें बाधक है।" *

५. "मैं छिपकर किये जानेवाले किसी कामकी सराहना नहीं करता। मैं जानता हूं कि देशके करोड़ों स्त्री-पुरुष छिपकर काम नहीं कर सकते। कुछ मुट्ठीभर लोग यह सोच सकते हैं कि पोशीदा हलचलोंके जरिये वे करोड़ोंके लिअे स्वराज्य ला सकेंगे। लेकिन क्या वह बच्चोंको चम्मचसे दूध पिलाने जैसी बात न होगी? आम जनता तो खुली चुनौती और खुले कामोंका रास्ता ही अपना सकती है। असली स्वराज्यकी झांकी तो स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों सभीको होनी चाहिये। अैसे मकसदके लिअे मेहनत करना ही सच्ची क्रांति होगी। हिन्दुस्तान दुनियाकी सभी शोषित जातियोंके लिअे अेक नमूना बन गया है, क्योंकि हिन्दुस्तानकी लड़ाअी खुली है और बिना हथियारोंके लड़ी जा रही है। अिस लड़ाअीमें आजादीको हड़प कर बैठे हुओंको चोट पहुंचायें बिना सभीसे कुरबानी चाही जाती है। अगर यह लड़ाअी खुली और निहत्थी न होती, तो करोड़ों हिन्दुस्तानियोंमें आजकी जागृति न आअी होती। जब जब अिस सीधे रास्तेको छोड़ा गया, तब तब थोड़ी देरके लिअे विकासशील क्रांतिमें रुकावट पड़ी है।" †

६. "मुझे स्वीकार करना चाहिये कि बोलशेविज्म शब्दका अर्थ मैं अभी तक पूरा पूरा नहीं समझा हूं। मैं अितना ही जानता हूं कि अुसका अुद्देश्य निजी सम्पत्तिकी संस्थाको मिटाना है। यह तो अपरिग्रहके नैतिक आदर्शको अर्थके क्षेत्रमें प्रयुक्त करना हुआ; और यदि लोग अिस आदर्शको स्वेच्छासे स्वीकार कर लें या अुन्हें शांति-पूर्वक समझाया जाय और अुसके फलस्वरूप वे अुसे स्वीकार कर लें, तो अिससे अच्छा कुछ हो ही नहीं सकता। लेकिन बोलशेविज्मके बारेमें मुझे जो कुछ जाननेको मिला है अुससे अैसा प्रतीत होता है कि वह न केवल हिंसाके प्रयोगका बहिष्कार नहीं करता, बल्कि निजी

* डी० जी० तेन्दुलकर, महात्मा, खं० ३, पृ० ३७७।

सम्पत्तिके अपहरणके लिअे और अुसे राज्यके स्वामित्वके अधीन बनाये रखनेके लिअे हिंसाके प्रयोगकी खुली छूट देता है। और यदि अैसा है तो मुझे यह कहनेमें कोअी संकोच नहीं कि बोलशेविक शासन अपने मौजूदा रूपमें ज्यादा दिन तक नहीं टिक सकता। कारण, मेरा दृढ़ विश्वास है कि हिंसाकी नींव पर किसी भी स्थायी रचनाका निर्माण नहीं हो सकता।"*

**(आ) तानाशाही और राज्य-नियंत्रित समाजवादकी बुराअियां:**

७. "मैं अुदार अथवा किसी तरहकी तानाशाहीको मंजूर नहीं कर सकता। अुसमें धनियोंका लोप नहीं होगा और न गरीबोंकी हिफाजत होगी। निश्चय ही कुछ धनी मारे जायेंगे और गरीब मोहताज असहाय हो जायेंगे। अेक वर्गके रूपमें धनिक रह जायेंगे और 'अुदार' विशेषणके बावजूद गरीबोंका वर्ग भी बना रहेगा। असली दवा अहिंसात्मक लोकतंत्र है जिसे दूसरे रूपमें सबका सच्चा शिक्षण कह सकते हैं। धनियोंको गरीबोंकी सेवाके और गरीबोंको स्वावलंबनके सिद्धान्तकी शिक्षा दी जानी चाहिये।"†

८. "मेरे समाजवादका अर्थ है 'सर्वोदय'। मैं गूंगे, बहरे और अंधोंको मिटाकर अुठना नहीं चाहता। अुनके समाजवादमें अिन लोगोंके लिअे कोअी जगह नहीं है। भौतिक अुन्नति ही अुनका अेकमात्र मकसद है। मसलन्, अमेरिकाका मकसद है कि अुसके हर शहरीके पास अेक मोटर हो। मेरा यह मकसद नहीं। मैं अपने व्यक्तित्वके पूर्ण विकासके लिअे आजादी चाहता हूं। अगर मैं चाहूं तो आसमानमें टिमटिमाते तारों तक पहुंचनेकी निसैनी बनानेकी आजादी मुझे मिलनी चाहिये। अिसका मतलब यह नहीं कि मैं अैसी कोअी बात करूंगा ही। दूसरी तरहके समाजवादमें व्यक्तिगत आजादी नहीं है। अुसमें आपका कुछ नहीं होता, आपका अपना शरीर भी आपका नहीं होता।"‡

**(अि) आदतके बजाय विवेक-बुद्धिके अनुसार जीवन जीना:**

९. "यह स्वीकार करते हुअे भी कि मनुष्य वास्तवमें आदतोंके बल पर जीवित रहता है, मेरा विचार है कि अुसका अपनी संकल्प-शक्तिको आचरणमें अुतारकर जीना अधिक अच्छा है। मैं यह भी विश्वास रखता हूं कि मनुष्यमें अपनी संकल्प-शक्तिको अिस हद तक

---

* यंग अिंडिया, १५–११–'२८

† हरिजनसेवक, ८–६–'४०

‡ हरिजनसेवक, ४–८–'४६

विकसित करनेकी क्षमता है, जो शोषणको घटाकर कमसे कम कर दे। मैं राज्यकी सत्ताकी वृद्धिको बड़ेसे बड़े भयकी दृष्टिसे देखता हूं। क्योंकि जाहिरा तौर पर तो वह शोषणको कमसे कम करके लाभ पहुंचाती है; परन्तु व्यक्तित्वको नष्ट करके, जो सब प्रकारकी अुन्नतिकी जड़ है, वह मानव-जातिको बड़ीसे बड़ी हानि पहुंचाती है।"*

१०. "अिस वाद तक पहुंचनेके लिअे हम अेक-दूसरेकी तरफ ताकते न बैठें। जब तक सारे लोग समाजवादी न बन जायं, तब तक हम कोअी हलचल न करें, अपने जीवनमें कोअी फेरफार न करके हम भाषण देते रहें, पार्टियां बनाते रहें और बाज पक्षीकी तरह जहां शिकार मिल जाय वहां अुस पर टूट पड़ें — यह समाजवाद हरगिज नहीं है। समाजवाद जैसी शानदार चीज झड़प मारनेसे हमसे दूर ही जानेवाली है।

"समाजवादकी शुरुआत पहले समाजवादीसे होती है। अगर अेक भी अैसा समाजवादी हो, तो अुस पर सिफर बढ़ाये जा सकते हैं। पहले सिफरसे अुसकी कीमत दसगुनी बढ़ती जायगी। लेकिन अगर पहला सिफर ही हो, दूसरे शब्दोंमें अगर कोअी आरंभ ही न करे, तो अुसके आगे कितने ही सिफर क्यों न बढ़ाये जायं अुनकी कीमत सिफर ही रहेगी। सिफरोंको लिखनेमें मेहनत और कागजकी बरबादी ही होगी।"‡

११. "यह प्रश्न हो सकता है कि अिस प्रकार मनुष्य-स्वभावमें परिवर्तन होनेका अुल्लेख अितिहासमें कहीं देखा गया है? व्यक्तियोंमें तो अैसा हुआ ही है। लेकिन बड़े पैमाने पर समाजमें परिवर्तन हुआ है, यह शायद सिद्ध न किया जा सके। अिसका अर्थ अितना ही है कि व्यापक अहिंसाका प्रयोग आज तक नहीं किया गया। हम लोगोंके हृदयमें अिस झूठी मान्यताने घर कर लिया है कि अहिंसा व्यक्तिगत रूपसे ही विकसित की जा सकती है और वह व्यक्ति तक ही मर्यादित है। दरअसल बात अैसी नहीं है। अहिंसा सामाजिक धर्म है। सामाजिक धर्मके तौर पर अुसे विकसित किया जा सकता है, यह मनवानेका मेरा प्रयत्न और प्रयोग चल रहा है।"†

### (औ) गांधीजीका मार्ग — शिक्षा और सत्याग्रह :

१२. "स्वराज्यकी तीर्थयात्रा बड़ी कठिन और बड़ी कष्टप्रद चढ़ाअी है। अुसके मानी हैं देहातियोंकी सेवा करनेके ही अुद्देश्यसे

* दि मॉडर्न रिव्यू, अक्तूबर १९३५।

† हरिजन, १३–७–'४७

देहातमें प्रवेश करना — दूसरे शब्दोंमें अिसका अर्थ है राष्ट्रीय शिक्षा — जनताकी शिक्षा। अिसका अर्थ है जनताके अन्दर राष्ट्रीय चैतन्य और जागृति अुत्पन्न करना। वह कोअी जादूके आमकी तरह अचानक नहीं टपक पड़ेगा। वह तो वटवृक्षकी तरह प्रायः बे-मालूम — अज्ञात रूपसे बढ़ेगा। खूनी क्रांति कभी चमत्कार नहीं दिखा सकती।" *

१३. "लेकिन यह याद रखना चाहिये कि अिस तरहके सुधार तुरन्त नहीं किये जा सकते। अगर ये सुधार अहिंसात्मक तरीकोंसे करने हैं, तो जमींदारों और गैर-जमींदारों दोनोंको सुरक्षित बनाना लाजिमी हो जाता है। जमींदारोंको यह विश्वास दिलाना होगा कि अुनके साथ कभी जोर-जबरदस्ती नहीं की जायगी, और गैर-जमींदारोंको यह सिखाना और समझाना होगा कि अुनसे अुनकी मरजीके खिलाफ जबरन् कोअी काम नहीं ले सकता, और कष्ट-सहन या अहिंसाकी कलाको सीखकर वे अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर सकते हैं। अगर अिस लक्ष्यको हमें प्राप्त करना है, तो अूपर मैंने जिस शिक्षाका जिक्र किया है अुसका आरम्भ अभीसे हो जाना चाहिये। अिसके लिअे पहली जरूरत अैसा वातावरण तैयार करनेकी है, जिसमें पारस्परिक आदर और सद्भावका सुमेल हो। अुस अवस्थामें वर्गों और आम जनताके बीच किसी प्रकारका अहिंसात्मक संघर्ष हो ही नहीं सकता।" ‡

१४. "अहिंसक कार्यकर्ताका अुद्देश्य हमेशा हृदय-परिवर्तन करना होना चाहिये। लेकिन अुसे अनन्त काल तक प्रतीक्षा करते रहनेकी आवश्यकता नहीं है। अिसलिअे जब अुसे अैसा महसूस हो कि प्रतीक्षाकी सीमा आ गअी है, तब वह खतरा लेता है और सक्रिय सत्याग्रहकी योजना बनाता है, जिसका रूप सविनय आज्ञाभंगका या अैसी ही किसी दूसरी चीजका हो सकता है। अुसका धीरज कभी भी अिस हद तक खतम नहीं होता कि वह अपने विश्वासका त्याग कर दे।" †

१५. "कोअी आदमी सक्रिय रूपसे अहिंसक हो और फिर भी सामाजिक अन्यायके खिलाफ — भले वह कहीं भी घटित हुआ हो — खड़ा न हो, अैसा नहीं हो सकता; वह अुसका विरोध अवश्य करेगा। दुर्भाग्यवश, जहां तक मैं जानता हूं, पश्चिमी समाजवादी समाजवादी सिद्धान्तोंको मूर्त रूप देनेके लिअे हिंसाकी आवश्यकतामें विश्वास करते हैं;

---

* हिन्दी नवजीवन, २१–५–'२५

‡ हरिजनसेवक, २०–४–'४०

† यंग अिंडिया, ६–२–'३०

## शरीर-श्रम

**हमारे जीवनका बुनियादी नियम :** गांधीजीके कल्पनाके पंचायत राजमें हरअेक नागरिकसे यह आशा की जायगी कि वह शरीर-श्रमके द्वारा अीमानदारीसे अपनी जीविका कमाये। रस्किनकी 'अन्टु दिस लास्ट' पुस्तक पढ़नेके बाद गांधीजीने शरीर-श्रमके सिद्धान्तका आदर करना शुरू कर दिया था। और टाल्स्टायकी रचनाओंसे परिचित होने पर अुसने अुनके लिअे अेक बुनियादी कानूनका रूप ले लिया। प्रत्येक पुरुष और स्त्रीको अपने हाथोंसे परिश्रम करके और काम करके ही अपनी जीविका कमाना चाहिये, अिस सिद्धान्तका प्रतिपादन पहली बार टी० अेम० बोन्दरेव्ह नामक अेक रूसी लेखकने किया था। टाल्स्टायने अुसे अपनाया और अुसे व्यापक प्रसिद्धि दी। अिस सिद्धान्तके पीछे विचार यह है कि "प्रत्येक स्वस्थ व्यक्तिको अुतना शारीरिक परिश्रम अवश्य करना चाहिये, जितना भोजनकी प्राप्तिके लिअे आवश्यक है और अपनी बौद्धिक क्षमताओंका अुपयोग अुसे अपनी जीविकाके अुपार्जन अथवा धन-संग्रहके लिअे नहीं, बल्कि सिर्फ मनुष्य-समाजकी सेवाके लिअे ही करना चाहिये।"* यह हमारे जीवनका बुनियादी नियम है।

**रस्किनकी पुस्तक 'अन्टु दिस लास्ट' की शिक्षायें :** रोटीके लिअे किये जानेवाले अिस शरीर-श्रमके कअी रूप हो सकते हैं। अिस विषयमें गांधीजीका मार्गदर्शन 'अन्टु दिस लास्ट' की शिक्षाओंने किया था और अुन शिक्षाओंको गांधीजीने अिस प्रकार समझा था :

"(अ) सबकी भलाअीमें हमारी भलाअी निहित है।

(ब) वकील और नाअी दोनोंके कामकी कीमत अेकसी होनी चाहिये, क्योंकि आजीविकाका अधिकार सबको अेक समान है।

(स) सादा मेहनत-मजदूरीका, किसानका जीवन ही सच्चा जीवन है।"×

**आदर्श अुद्योग — खेती :** सच कहा जाय तो रोटीके लिअे किये जानेवाले शरीर-श्रमका सही रूप केवल खेती ही है। परंतु चूंकि हरअेक आदमीका खेती करना संभव नहीं है, अिसलिअे खेतीके बदले वह कात सकता है, बुन सकता है, बढ़अीका काम कर सकता है या लुहारका काम कर सकता है। लेकिन आदर्श अुद्योग तो खेती ही है। अिसके सिवा, हरअेकको अपना भंगी भी खुद ही होना चाहिये, यानी अपना मैला स्वयं साफ करना चाहिये। दूसरे शब्दोंमें, मानवीय

---

* हरिजन, १४–११–'४८

× आत्मकथा, भाग चार, प्र० १८; १९५७।

जीवनकी अनिवार्य आवश्यकताओंकी पूर्ति जिन चीजोंसे होती है, अुनका निर्माण या अनिवार्य अुद्योगोंमें किया जानेवाला परिश्रम रोटीका श्रम माना जा सकता है।

**जरूरी शर्तें :** शरीर-श्रममें अपने-आपमें कोअी खूबी नहीं है। कामको कष्ट मानकर लाचारीसे अरुचिपूर्वक भी किया जा सकता है। यह तो गुलामीकी ही हालत होगी। अिसलिअे रोटीके लिअे किये जानेवाले अिस शरीर-श्रमकी पहली शर्त यह है कि वह स्वेच्छापूर्वक किया जाना चाहिये। अधिकांश लोगोंको काममें आनन्द नहीं आता और महज कामके लिअे काम वे नहीं करते। अगर अपनी रोटी कमानेके लिअे काम करनेकी अुन्हें जरूरत न हो, तो अुन्हें काम करनेकी प्रेरणा ही नहीं होती। गांधीजीकी तरह हमें परिस्थितियोंकी लाचारीके कारण नहीं, बल्कि स्वेच्छापूर्वक श्रमिक बनना चाहिये।

गांधीजी कहते हैं कि "लाचारीसे मालिककी आज्ञा मानना गुलामीकी स्थिति है, जब कि स्वेच्छापूर्वक अपने पिताकी आज्ञाके पालनमें पुत्रत्वकी शोभा है। अिसी तरह शरीर-श्रमके नियमके लाचारीपूर्ण पालनसे गरीबी, बीमारी और असंतोष पैदा होते हैं। वह गुलामीकी ही स्थिति है। किन्तु अुसका पालन स्वेच्छापूर्वक किया जाय तो वह संतोष और स्वास्थ्यको जन्म देता है।" *

रोटीके लिअे श्रमकी दूसरी विशेषता यह है कि वह बुद्धिपूर्वक किया हुआ होना चाहिये। बुद्धि और परिश्रममें कोअी विच्छेद नहीं है। अिस सिद्धान्तकी अवज्ञाके कारण ही भारतीय गांवोंकी भयंकर अुपेक्षा हुअी है।

> "श्रमके साथ जो 'बुद्धिपूर्वक किया हुआ' विशेषण लगाया है, वह यह बतलानेके लिअे लगाया है कि समाज-सेवामें श्रम तभी खप सकता है जब अुसके पीछे सेवाका कोअी निश्चित हेतु हो; नहीं तो यह कहा जा सकता है कि हरअेक मजदूर समाजकी सेवा करता है। अेक प्रकारसे तो वह समाजकी सेवा करता ही है, पर जिस सेवाकी यहां बात हो रही है वह बहुत अूंचे प्रकारकी सेवा है। जो मनुष्य सबके हितके लिअे सेवा करता है वह समाजकी सेवा करता है और जितनेसे अुसका पेट भर जाय अुतनी मजदूरी पानेका अुसे हक है। अिसलिअे अिस प्रकारका 'ब्रेड-लेबर' समाज-सेवासे भिन्न नहीं है।" †

यह तो स्पष्ट ही है कि शरीर-श्रमके अिस सिद्धान्तका समाज-सेवासे कोअी विरोध नहीं है। "सोच-समझकर किया हुआ रोटीका परिश्रम किसी भी समय समाज-सेवाका अुच्चतम रूप है।" ‡ अुससे देशकी संपत्ति बढ़ती है।

* हरिजन, २९–६–'३५

† हरिजनसेवक, १४–६–'३५

‡ हरिजन, १–६–'३५

रोटी-श्रमकी तीसरी विशेषता यह है कि वह सबके कल्याणकी भावनासे किया जाता है। जो भी श्रम किया जाता है वह फलासक्तिके बिना सेवा और त्यागकी भावनासे ही किया जाता है। अिस सिद्धान्तके पालनसे समाजकी रचनामें अेक निःशब्द क्रान्ति ही हो जाती है। मौजूदा जीवन-संघर्षकी जगह पारस्परिक सेवाका संघर्ष ले लेता है। जंगलके कानूनकी जगह सेवाका कानून चलने लगता है। अिसमें सन्देह नहीं कि जो लोग त्यागकी भावनासे काम करते हैं वे अपने अुस श्रमसे ही अपनी रोटी भी कमाते हैं। लेकिन अुनका मुख्य लक्ष्य अपनी जीविका कमाना नहीं होता, वह अुनके श्रमका अेक प्रासंगिक फल-मात्र होता है। "त्यागमय जीवन कलाकी पराकाष्ठा है और वह सच्चे आनन्दसे परिपूर्ण होता है।" * सदाचरणकी भांति सेवा भी अपना पुरस्कार आप ही है।

**भारतीय समाजमें श्रमके प्रति अवज्ञाका भाव :** दुःखकी बात है कि हाथकी मजदूरी करनेवाले लोगोंको हिन्दू समाजमें नीचा दर्जा दिया गया है और अुच्चतर जातियां अुन्हें अपना समकक्ष नहीं मानतीं। हमारे देशमें आज भी यह स्थिति है कि पैसेवाले और तथाकथित अुच्च वर्गोंके लोग शरीर-श्रमको नीचा समझते हैं; यहां तक कि अुसके प्रति घृणाका भाव रखते है। अिसलिअे गांधीजी श्रमके गौरव पर जोर देना जरूरी मानते थे। "ओमानदारीके साथ अपनी रोजी कमानेकी अिच्छा रखनेवालेके लिअे कोअी भी काम नीच नहीं है। सवाल यही है कि आदमी खुद ओश्वरके दिये हाथ-पैर हिलानेको तैयार है या नहीं?" ‡ "शरीर-श्रमके साथ अकारण ही जो लज्जाका भाव जुड़ गया है अुसे यदि दूर किया जा सके, तो औसत बुद्धिवाले सारे युवा पुरुषों और स्त्रियोंके लिअे हमारे पास काफीसे ज्यादा काम है।" †
गांधीजीकी अहिंसा अिस बातको असह्य मानती थी कि किसी स्वस्थ आदमीको, जिसने अपनी रोटीके लिअे ओमानदारीसे श्रम न किया हो, मुफ्त खिलाया जाये।

**बौद्धिक और शारीरिक परिश्रममें कोअी विरोध-भाव नहीं :** हमारे देशमें अेक आम खयाल है कि बौद्धिक और शारीरिक परिश्रम अेक-दूसरेके विरोधी हैं। लेकिन बौद्धिक विकासके अर्थके बारेमें यदि हमारी समझ साफ हो, तो हमें दिखना चाहिये कि अिन दोनोंमें अैसा कोअी विरोध नहीं है। "बौद्धिक विकासको प्रायः विश्वसे सम्बन्धित अमुक तथ्योंकी जानकारी मान लिया जाता है।" ×

* फ्रॉम यरवडा मन्दिर, प्र० १४ व १५।

‡ हरिजनसेवक, १९–१२–'३६

† हरिजन, १–३–'३५

× हरिजन, २८–११–'४८

लेकिन अैसी जानकारीको सही अर्थमें ज्ञान नहीं कहा जा सकता। बौद्धिक प्रगतिका परिणाम विवेक-शक्तिका विकास होना चाहिये।

"यह मानना कि किताबोंसे ही, मेज-कुर्सी पर बैठनेसे ही ज्ञान मिलता है, बुद्धिका विकास होता है, घोर अज्ञान है, भारी वहम है। अिसमें से हमें तो निकल ही जाना चाहिये। जीवनमें वाचनके लिअे स्थान जरूर है, मगर वह अपनी जगह पर ही शोभा देता है। शरीर-श्रमको हानि पहुंचाकर अुसे बढ़ाया जाय, तो अुसके खिलाफ विद्रोह करना फर्ज हो जाता है। . . . बुद्धिशक्तिको सच्चा वेग देनेके लिअे भी शरीर-श्रमकी यानी किसी भी अुपयोगी शारीरिक धंधेमें शरीरको लगानेकी जरूरत है।" *

नीचे दिये जा रहे अुद्धरणमें भी यही बात कही गयी है कि शरीर-श्रम बुद्धि द्वारा अुत्पन्न वस्तुका मूल्य या गुणस्तर बढ़ाता है:

"दिमागी काम भी अपना महत्त्व रखता है और जीवनमें अुसकी खास जगह है। लेकिन मैं तो शरीर-श्रमकी जरूरत पर जोर देता हूं। मेरा यह दावा है कि अुस फर्जसे किसी भी अिन्सानको छुटकारा नहीं मिलना चाहिये। अिससे अिन्सानके दिमागी कामकी अुन्नति ही होगी।" ×

बौद्धिक श्रम और शरीर-श्रम, दोनों अपने-अपने क्षेत्रोंमें अेकसाथ रह सकते हैं। अुनमें से कोअी भी दूसरेका स्थान नहीं ले सकता:

"मैं बौद्धिक श्रमके मूल्यकी अवगणना नहीं करता। लेकिन बौद्धिक श्रम कितनी ही मात्रामें क्यों न किया जाय, अुससे शरीर-श्रमकी थोड़ी भी पूर्ति नहीं होती, जो कि हममें से हरअेक सबकी भलाअीके लिअे करनेको पैदा हुआ है। बौद्धिक श्रम शरीर-श्रमसे निश्चित रूपमें श्रेष्ठ हो सकता है, अकसर होता है, लेकिन वह शरीर-श्रमका स्थान कभी नहीं लेता और न कभी ले सकता है; जैसे बौद्धिक भोजन हम जो अन्न खाते हैं अुसकी अपेक्षा ज्यादा अुत्तम है, परन्तु वह अन्नका स्थान कभी नहीं ले सकता। सचमुच, पृथ्वीकी अुपजके अभावमें बुद्धिकी अुपज होना असंभव है।" ‡

बौद्धिक परिश्रम आत्माके लिअे है और वह अपना पुरस्कार स्वयं ही है। अतः आदर्श राज्यमें डॉक्टर, वकील और अिसी तरहके दूसरे बौद्धिक अुद्योग करनेवालोंसे यह आशा की जाती है कि वे समाजके कल्याणके लिअे ही काम करेंगे, स्वार्थके लिअे नहीं।

* हरिजनसेवक, २८–११–'४८

× हरिजनसेवक, २३–२–'४७

‡ यंग अिंडिया, १५–१०–'२५

श्रम और संस्कृतिको अेक-दूसरेसे अलग नहीं किया जा सकता। श्रम न हो तो संस्कृतिका फूल मुरझा जाता है। पुस्तकोंके निरुद्देश्य अध्ययन मात्रसे बुद्धिका विकास सिद्ध नहीं किया जा सकता। लेकिन अुद्देश्यपूर्वक किया गया थोड़ा-सा अध्ययन भी फलदायी होता है।

शारीरिक श्रमसे बुद्धिके विकास पर कोअी बुरा प्रभाव नहीं पड़ता और न अुससे नीरस अेकविधता (monotony) ही अुत्पन्न होती है। अूपर यह बताया जा चुका है कि शरीर-श्रम बुद्धिसे अुत्पन्न वस्तुओंकी गुण-वृद्धि करता है। और जहां तक अेकविधताका सवाल है शरीर-श्रमके पक्षमें कमसे कम अितना तो कहा ही जा सकता है कि वह मुश्किलसे कटनेवाले अुन घंटोंसे ज्यादा अूबानेवाला नहीं होता जब हम बिलकुल खाली बैठे होते हैं। कोअी भी काम, वह कितना भी मामूली क्यों न हो, यदि अुसे सर्जनके आनन्दसे वियुक्त न कर दिया जाय, तो नीरस हो ही नहीं सकता। जहां शरीर-श्रम महज कुछ पैसे कमानेके लिअे किया जा रहा हो वहां जरूर यह सम्भव है कि वह नीरस मालूम हो। लेकिन यदि वह लाचारीसे नहीं बल्कि बुद्धिपूर्वक किया जाय, तो वह नीरस नहीं होता। अगर काम करनेवालेको अपने कामकी वैज्ञानिक जानकारी हो — यह मालूम हो कि वह क्यों किया जाता है और कैसे किया जाता है और अिस तरह अुसकी जिज्ञासाको पोषण मिलता है, तो अपना काम अुसे अवश्य रुचिकर मालूम होगा। कोअी भी श्रम क्यों न हो, यदि वह बुद्धिपूर्वक, अुत्साहपूर्वक और भगवद्बुद्धिसे या किसी आदर्शके लिअे किया जाय, तो अुसमें सर्जनका आनन्द अवश्य मिलता है और करनेवाला अुसमें ताजगी महसूस करता है।

**शरीर-श्रमके दूरगामी परिणाम :** शरीर-श्रमके परिणाम बहुत दूरगामी होते हैं। अिस सिद्धान्तका सार्वत्रिक आचरण होने लगे तो दुनियामें समानताकी स्थापना हो जाये, भुखमरी सदाके लिअे नष्ट हो जाये और हम कितने ही पापोंसे मुक्त हो जायं। अनुचित अुदारतासे अुत्पन्न होनेवाला आलस्य, निठल्लापन, दम्भ और अपराध आदि भूतकालकी वस्तु बन जायें। अनुचित अुदारता देशकी भौतिक या आध्यात्मिक सम्पत्तिमें किसी प्रकारकी वृद्धि नहीं करती। अुससे दाताको पुण्य-कार्य कर सकनेका झूठा सन्तोष मिलता है। श्रम सब लोगोंको अेकता और समानताके सूत्रमें बांधनेवाला अेक अतिशय शक्तिशाली साधन है। यदि समाजका हरअेक व्यक्ति रोटीके लिअे श्रमके कर्तव्यका पालन करने लगे, तो अूंच-नीचके भेद मिट जायें तथा पूंजी और श्रम या अमीरों और गरीबोंके बीचका संघर्ष शान्त हो जाय। "अमीर तब भी रहेंगे, लेकिन अुस स्थितिमें वे अपनेको अपनी सम्पत्तिका ट्रस्टी मानेंगे और अुसका अुपयोग मुख्यतः सार्वजनिक हितके लिअे करेंगे।" *

---

* फ्रॉम यरवडा मन्दिर, प्र० ९।

## आर्थिक समानता

**आर्थिक समानताका आशय:** आर्थिक समानताका लक्ष्य है पूरे दिनके प्रामाणिक परिश्रमके लिअे मजदूरीकी समानता — भले वह परिश्रम वकीलका हो, डॉक्टरका हो, शिक्षकका हो या भंगीका हो। समानताकी अिस स्थितिको पहुंचनेके लिअे बहुत बढ़ी-चढ़ी तालीमकी जरूरत है।* अिसलिअे गांधीजीकी कल्पनाकी आर्थिक समानताका यह अर्थ नहीं है कि हरअेकके पास अेक-जितना पैसा या अुपभोग्य वस्तुओंकी अेक-जितनी मात्रा होगी। अनुभव बताता है कि व्यक्ति-व्यक्तिकी आवश्यकताओंमें भेद अवश्य होता है। पशुओंकी आवश्यकताओंमें होनेवाले भेदकी तरह मनुष्योंकी आवश्यकताओंमें रहनेवाले अिस भेदको सही-सही आंकना संभव नहीं। अमीरों और गरीबोंके भेदको कम करना जरूर संभव है। अिन दोनों वर्गोंमें आज जो असमानता पायी जाती है, वह हमारे लिअे कलंक-रूप है। यह जरूरी है कि जिन चंद अमीरोंके हाथमें आज देशकी अधिकांश संपत्ति केन्द्रीभूत है अुनकी संपत्तिका स्तर कुछ नीचे लाया जाय और शेष करोड़ों बेजबान गरीबोंका स्तर कुछ अूपर अुठाया जाय। अिसके सिवा, अैसी व्यवस्था होना चाहिये कि हरअेक व्यक्तिको संतुलित आहार प्राप्त हो, रहनेके लिअे स्वास्थ्यप्रद घर मिले, शरीर ढकनेके लिअे काफी कपड़ा मिले और अपने बच्चोंको पढ़ाने और डॉक्टरी राहत पानेकी सुविधायें मिलें। संक्षेपमें, समान वितरणका सच्चा आशय यह है कि हरअेक आदमीके पास अपनी स्वाभाविक और अनिवार्य आवश्यकतायें पूरी करनेके साधन अवश्य होने चाहिये। अिसलिअे आर्थिक समानताका सच्चा अर्थ है: हरअेकको अुसकी आवश्यकताके अनुसार। सब लोगोंकी अनिवार्य आवश्यकतायें पूरी हो जायें, अुसके बाद अिन आवश्यकताओंसे अूपर हरअेक चीज निषिद्ध मानी जानी चाहिये, अैसी बात नहीं है। मजदूरों और किसानोंमें जो ज्यादा बुद्धिमान होगा वह और लोगोंकी अपेक्षा ज्यादा पैसा कमायेगा। गांधीजी अैसी जड़ समानताका निर्माण नहीं करना चाहते थे, जिसमें किसी भी व्यक्तिके लिअे अपनी योग्यताका पूरा पूरा अुपयोग सम्भव नहीं रह जाता या नहीं रहने दिया जाता, क्योंकि अैसा समाज अपने अन्तिम विनाशका बीज अपने ही भीतर लेकर चलता है।

> "कअी लोग अैसा सोचते हैं कि अूंच-नीचके दरजे मिटा दिये जायं, तो अराजकता और स्वेच्छाचारिताका रास्ता खुल जायगा। यह धारणा सही नहीं है। होना तो यह चाहिये कि अिन सारे भेदभावोंके मिट जानेसे संपूर्ण अनुशासनकी स्थिति पैदा हो। यह अनुशासन संपूर्ण अिसलिअे होगा कि अुस हालतमें सब लोग जिस

* हरिजन, १०-८-'४७

समाजके वे सदस्य हैं अुसके नियमोंका पालन अिच्छापूर्वक स्वयं ही करेंगे।"*

गांधीजी चाहते थे कि अमीर अपनी संपत्ति अपने पास यह मानकर रखें कि वह गरीबोंकी धरोहर है अथवा वे गरीबोंके लिअे अुसका त्याग ही कर दें। आर्थिक समानताकी स्थिति अमीरोंसे अुनकी संपत्तिका बलपूर्वक अपहरण करके नहीं लायी जा सकती। हिंसाके द्वारा असमानताओंके अुच्छेदके प्रयत्न कहीं भी सफल नहीं हुअे हैं— रूसमें भी नहीं। हिंसक कार्यसे समाजको कोअी लाभ नहीं हो सकता, क्योंकि अुसका नतीजा तो यही होगा कि समाज अेक अैसे आदमीकी योग्यताओंसे वंचित हो जायेगा, जो जानता है कि सम्पत्तिका अुत्पादन या अुसकी वृद्धि किस तरह की जाती है।

**अहिंसक पद्धतिकी श्रेष्ठता :** अहिंसक पद्धति हिंसक पद्धतिसे कहीं श्रेष्ठ है। द्वेषके खिलाफ प्रेमकी शक्तियोंका संयोजन करके अहिंसाके द्वारा आर्थिक समानताकी स्थापना की जा सकती है। "अुसकी दिशामें पहला कदम यह है कि जिस व्यक्तिने अिस आदर्शको स्वीकार कर लिया हो, वह अपने वैयक्तिक जीवनमें आवश्यक सुधार कर डाले।"† सारे समाजका परिवर्तन होने तक रुकना जरूरी नहीं है। कोअी भी व्यक्ति अपनेसे अेकदम अिस शुभ कार्यका आरम्भ कर सकता है। सामुदायिक प्रयत्न किया जाय, अहिंसाकी शक्तियोंका संयोजन और अुपयोग किया जाय और लोग बुद्धिपूर्वक अैसे किसी भी कार्यमें सहयोग करनेसे अिनकार कर दें जिससे कि अुनकी गुलामीकी जंजीरें मजबूत होती हैं, तो आर्थिक समानताकी यह अभीष्ट स्थिति अवश्य लायी जा सकती है।

## संरक्षकता

"वास्तवमें समान वितरणके अिस सिद्धान्तकी जड़में धनवानोंके अनावश्यक धनकी संरक्षताका या ट्रस्टीशिपका सिद्धान्त होना चाहिये, क्योंकि अिस सिद्धान्तके अनुसार वे अपने पड़ोसियोंसे अेक रुपया भी अधिक नहीं रख सकते। यह कैसे किया जाय? अहिंसा द्वारा? या धनवानोंसे अुनकी संपत्ति छीन कर? अैसा करनेके लिअे हमें स्वभावतः हिंसाका आसरा लेना पड़ेगा। अिस हिंसक कार्रवाअीसे समाजका लाभ नहीं हो सकता। समाज अुलटा घाटेमें रहेगा, क्योंकि अिससे समाज अेक अैसे आदमीके गुणोंसे वंचित रहेगा जो दौलत जमा करना जानता है। अिसलिअे अहिंसक मार्ग प्रत्यक्ष रूपमें श्रेष्ठ है। धनवानके पास

---

* यंग अिंडिया, ३-५-'२८

† हरिजन, २५-८-'४०

अुसका धन रहेगा, परंतु अुसका अुतना ही भाग वह अपने काममें लेगा जितना वह अपनी निजी आवश्यकताओंके लिअे अुचित रूपमें जरूरी समझता है, और वाकीको समाजके अुपयोगके लिअे धरोहर समझेगा। अिस तर्कमें यह मान लिया गया है कि संरक्षक प्रामाणिक होगा।"*

यदि हमारे पूरा प्रयत्न करनेके वाद भी धनवान लोग गरीवोंके हितमें अपने धनके संरक्षक होना स्वीकार न करें तो क्या किया जाय? अैसी स्थितिमें गांधीजी सही और अचूक अिलाजके तौर पर सविनय आज्ञाभंग और अहिंसक असहयोगकी सलाह देते हैं। कारण, धनवान लोग समाजके गरीव वर्गके सहयोगके विना धनका संग्रह कर ही नहीं सकते।

**प्रकृतिका वुनियादी नियम:** यह प्रकृतिका अेक वुनियादी और निरपवाद नियम है कि प्रकृति अुतना ही पैदा करती है जितना हमें अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे रोज-व-रोज चाहिये। यदि हरअेक आदमी अपने लिअे सिर्फ अुतना ही ले जितनेकी अुसे जरूरत है, तो दुनियामें भुखमरीसे कोअी नहीं मर सकता। यदि कोअी जितना अुसे चाहिये अुससे अधिक लेता है, तो वह गोया चोरीका अपराध करता है। जिस चीजकी हमें जरूरत न हो अुसे अपने पास रखना अिस नियमका अुल्लंघन है। अपरिग्रहके अिस आदर्शका पूरा पालन तो तव होगा जव मनुष्य भी पक्षियोंकी तरह आगामी कलका विचार करना और संग्रह करना विलकुल छोड़ दे। यदि वह पहले निष्ठापूर्वक दैवी राज्यको पानेका प्रयत्न करे, तो अुसे और सव अपने-आप मिल जाय।

**अपरिग्रह — अेक मनःस्थिति:** अपरिग्रह आखिर तो अेक मनःस्थिति है। कोअी भी मनुष्य पूरा अपरिग्रही नहीं हो सकता। शरीर भी अेक परिग्रह ही है और वह तो हमारे साथ रहनेवाला है। मनुष्य हमेशा अपूर्ण ही रहनेवाला है, यद्यपि वह अपनेको पूर्ण वनानेकी कोशिश भी हमेशा करता रहेगा और अुसे करना ही चाहिये।

**संरक्षकताके सिद्धान्तकी अुत्पत्ति:** संरक्षकता "अुन लोगोंको दी गयी अेक रियायत है जो पैसा कमाते तो हैं किन्तु जो मानव-जातिके लाभके लिअे अपनी कमाअीका अुपयोग स्वेच्छापूर्वक करनेके लिअे तैयार नहीं हैं।"† यह सिद्धान्त सामान्य वुद्धिकी अुपज है और गांधीजीका निश्चित विश्वास है कि वह अैसी परिस्थितिका अेक व्यावहारिक हल पेश करता है। जो धनवान हैं और धनसंग्रहकी अपनी अिच्छाका जो त्याग नहीं कर सकते, अुन्हें गांधीजीकी सलाह

---

* हरिजन, २५–८–'४०

† मॉडर्न रिव्यू, अक्तूवर १९३५।

है कि वे अपने धनका अुपयोग सेवाके लिअे करें। अिस सिद्धान्तका प्रतिपादन अुन्होंने पहली बार अुन समाजवादियोंको अुत्तर देते हुअे किया था, जो कहते थे कि जमींदारों और राजाओंसे 'अुनकी सत्ता और संपत्ति छीन ली जानी चाहिये।*

**संरक्षकताका अर्थ:** — संरक्षकता क्या है? यदि किसी आदमीके पास जितना अुसे चाहिये अुससे ज्यादा धन या सम्पत्ति हो, तो अुसे अपनी अतिरिक्त धन-सम्पत्तिका संरक्षक बन जाना चाहिये। अुसने यह धन विरासतमें पाया हो या व्यापार अथवा अुद्योगके द्वारा (बेशक, ओमानदारीसे) कमाया हो, अुसे यह समझ लेना चाहिये कि यह सारा धन अुसका नहीं है: "अुसे केवल सभ्यजनोचित जीविकाका ही अधिकार है — अैसी जीविकाका जो दूसरे करोड़ों आदमियोंको अुपलब्ध है, अुनसे ज्यादा अूंची जीविकाका नहीं।"‡ अुसका बाकी धन समाजका है और अुसका अुपयोग समाजके कल्याण लिअे ही होना चाहिये।†

धनवान लोग अपने धनकी रक्षा या तो शस्त्रबलसे कर सकते हैं अथवा अहिंसाके द्वारा।

> "अिस अहिंसाकी दीक्षा लेने और देनेका सबसे अुत्तम मंत्र है: 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' (अपनी दौलतका त्याग करके तू अुसे भोग)। अिसको जरा विस्तारसे समझाकर कहूं तो यह कहूंगा कि करोड़ों खुशीसे कमा, लेकिन समझ ले कि तेरा धन सिर्फ तेरा नहीं, सारी दुनियाका है। अिसलिअे जितनी तेरी सच्ची जरूरतें हों अुतनी पूरी करनेके बाद जो बचे अुसका अुपयोग समाजके लिअे कर।"×

**व्यापारिक समृद्धि और संपूर्ण ओमानदारी अेक-दूसरेसे असंगत नहीं हैं:** अैसा सवाल किया जा सकता है कि क्या शुद्ध साधनोंसे करोड़ों रुपये कमाना सम्भव है। गांधीजी अैसा नहीं मानते थे कि व्यापारिक समृद्धिके साथ सम्पूर्ण ओमानदारी असंगत है। वे अैसे व्यापारियोंको जानते थे जो अपने व्यवहारमें ओमानदारीका पूरा पूरा पालन करते थे। "'करोड़ों रुपये कमाने' की बात यह मानकर कही गयी है कि लोगोंको कानूनन् सम्पत्ति रखनेका अधिकार है और यह कि न तो वह अशुद्ध है और न वह हमारे आस-पास फैली हुअी विषमताका दर्पोद्धत प्रदर्शन है।"+ अिस सिलसिलेमें अुन्होंने

---

* हरिजन, ३–६–'३९

‡ वही

† वही

× हरिजनसेवक, १–२–'४२

\+ हरिजन, २२–२–'४२

अैसे आदमीका अुदाहरण दिया जिसके पास खानका पट्टा है। अुसे अचानक अपनी अिस जमीनमें कोअी अनमोल हीरा मिल जाता है। और वह अेका-अेक करोड़पति बन जाता है। अैसे आदमीके बारेमें यह नहीं कहा जा सकता कि अुसने अशुद्ध साधनोंका अुपयोग किया है। अिस हवालेका स्पष्टीकरण अुनके ही शब्दोंमें अिस प्रकार है:

"निःसंदेह करोड़ों कमानेकी बात मैंने अैसे लोगोंके लिअे ही कही थी। मैं निःसंकोच अिस कथनका समर्थन करता हूं कि आम तौर पर धनवान लोग और अुसी तरह दूसरे भी अधिकांश लोग कमाते समय कमाअीके साधनोंकी शुद्धताका कोअी खास ध्यान नहीं रखते। अहिंसक पद्धतिका प्रयोग करते समय हमारे मनमें यह विश्वास रहना चाहिये कि हरअेक मनुष्य, फिर वह कितना ही पतित क्यों न हो, सुधर सकता है, अगर अुसके साथ चतुरतापूर्वक मनुष्यताका व्यवहार किया जाय? हमें मनुष्यके सद्‌भावोंको जगाना चाहिये और अुसके सुपरिणामकी आशा रखनी चाहिये।"*

**निर्णय कौन कर सकता है?:** अिस बातका निर्णय कौन करेगा कि अमुक धन अीमानदारीसे कमाया गया है या बेअीमानीसे, पवित्र है या अपवित्र। "अिस प्रश्नका निर्णय या तो भगवान ही कर सकता है या अमीरों या गरीबों — दोनोंके द्वारा नियुक्त कोअी अधिकारी व्यक्ति। हर कोअी व्यक्ति अैसा नहीं कर सकता।"‡ यदि हम कहते हों कि सब धन-सम्पत्ति चोरी है, तो हमें स्वयं ही सारी धन-सम्पत्तिका त्याग कर देना चाहिये। हमें अपनेसे पूछना चाहिये कि क्या हम अैसा करनेके लिअे तैयार हैं। यदि हम खुद अिसके लिअे तैयार न हों, तो हमें दूसरोंके बारेमें कोअी मतामत नहीं बनाना चाहिये। हमें अपनेमें अनासक्तिकी भावनाका विकास करना चाहिये और दुनियामें अिस तरह रहना चाहिये कि दुनियाका असर हमारे मन पर न हो।

**त्याग बनाम अपहरण:** क्या कोअी अिस बातका निश्चय कर सकता है कि जिन धनवानोंको अपनी सम्पत्तिका संरक्षक बननेके लिअे राजी किया जा सके, अुनकी सम्पत्तिका कितना हिस्सा अुनका है और कितना अुनका नहीं है? यदि वह धनवान व्यक्ति अपने लिअे अुस सम्पत्तिका २५ % रखनेको राजी हो और ७५ % दान कर देनेके लिअे तैयार हो, तो हमें अुसका प्रस्ताव स्वीकार कर लेना चाहिये, क्योंकि हमें जानना चाहिये कि

---

* हरिजन, २२–२–'४२

‡ हरिजन, १–८–'३६

"स्वेच्छासे दिया हुआ ७५ % तलवारके भयसे दिये हुअे १०० % से कहीं ज्यादा अच्छा है।" *

अैसी दलील की जा सकती है कि जो व्यक्ति आज अपनी सम्पत्ति जोर-जबरदस्तीके कारण सौंपता है वह कल अिस स्थितिको, अुसकी अिच्छा हो या न हो, स्वीकार कर लेगा। लेकिन यह अेक दूरवर्ती संभावना है जिस पर गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया जा सकता। अितना निश्चित है कि यदि आज हिंसाका आश्रय लिया जाय, तो अुसे ज्यादा वड़ी प्रतिहिंसाका मुकाबला करना पड़ेगा। "अहिंसाके नियम पर चलनेसे हमें अेकके बाद अेक कितने ही समझौते करने पड़ेंगे; यहां तक कि हमारा जीवन अिन समझौतोंकी अेक श्रृंखला जैसा हो जायेगा। लेकिन समझौतोंकी श्रृंखला संघर्षोंकी अपार श्रृंखलासे कहीं अच्छी है।" ‡

**संरक्षकोंका कमीशन :** अहिंसक राज्यमें ट्रस्टियोंका कमीशन भी विनियमित रहेगा। संरक्षकको अपनी संपत्तिकी आयसे जो कमीशन मिलेगा वह अुस आयका कोअी निश्चित हिस्सा नहीं होगा। अिसका कारण बताते हुअे गांधीजी कहते हैं :

> "मैं अुन्हें अैसा नहीं कहूंगा कि वे अितना ही कमीशन लें; मैं तो अुनसे जितना अुचित हो अुतना लेनेकी सिफारिश करूंगा। अुदाहरणके लिअे, जिसके पास १०० रु० हों अुससे मैं ५० रु० लेनेको कहूंगा और बाकी ५० रु० मजदूरोंको दे दूंगा। लेकिन जिसके पास १,००,००,००० रु० होंगे अुससे मैं कहूंगा कि वह केवल १ % ही ले। अिस तरह आप देख सकते हैं कि मैं जो कमीशन तय करूंगा वह आयका कोअी निश्चित हिस्सा नहीं होगा, क्योंकि वैसा किया जाय तो अुससे भयंकर अन्यायकी सृष्टि होगी।" †

**कानूनी स्वामित्व :** बदली हुअी स्थितिमें कानूनी स्वामित्व संरक्षकका ही होगा, राज्यका नहीं। अिसलिअे अपना अुत्तराधिकारी चुननेका अधिकार अुस मूल मालिकको ही दिया जाना चाहिये जो पहला संरक्षक बनेगा। लेकिन चूंकि संरक्षकका सामान्य समाजके सिवा कोअी दूसरा अुत्तराधिकारी नहीं होता, अिसलिअे अपना अुत्तराधिकारी चुननेका संरक्षकका अधिकार निर्बन्ध नहीं होगा। वह कानूनी स्वीकृतिके अधीन रहेगा यानी संरक्षकके चुनाव पर जब राज्य अपनी स्वीकृतिकी मुहर लगा देगा तभी वह अन्तिम

---

* हरिजन, १–६–'३५

‡ वही

† यंग अिंडिया, २६–११–'३१

माना जायेगा। "अैसी व्यवस्थासे राज्य और व्यक्ति, दोनों पर अंकुश लगता है।" *

**संरक्षकताके सिद्धान्तकी रूपरेखा:** सन् १९४४ में आगाखां महलसे गांधीजीकी रिहाअीके कुछ समय बाद श्री किशोरलाल मशरूवाला और श्री नरहरि परीखने संरक्षकताके सिद्धान्तोंकी अेक संक्षिप्त रूपरेखा तैयार की थी। गांधीजीने अुसे देखा और सुधारा था; गांधीजीके सुधारोंके बाद अुनका यह मसविदा अिस प्रकार था:

"१. संरक्षकता (ट्रस्टीशिप) अैसा साधन प्रदान करती है, जिससे समाजकी मौजूदा पूंजीवादी व्यवस्था समतावादी व्यवस्थामें बदल जाती है। अिसमें पूंजीवादकी तो गुंजाअिश नहीं है, मगर यह वर्तमान पूंजीपति वर्गको अपना सुधार करनेका मौका देती है। अिसका आधार यह श्रद्धा है कि मानव-स्वभाव अैसा नहीं है, जिसका कभी अुद्धार नहीं हो सके।

२. वह संपत्तिके व्यक्तिगत स्वामित्वका कोअी अधिकार स्वीकार नहीं करती; हां, अुसमें समाज स्वयं अपनी भलाअीके लिअे किसी हद तक अिसकी अिजाजत दे सकता है।

३. अुसमें धनके स्वामित्व और अुपयोगके कानूनी नियमनकी मनाही नहीं है।

४. अिस प्रकार राज्य द्वारा नियंत्रित संरक्षकतामें कोअी व्यक्ति अपनी स्वार्थसिद्धिके लिअे या समाजके हितके विरुद्ध संपत्ति पर अधिकार रखने या अुसका अुपयोग करनेके लिअे स्वतंत्र नहीं होगा।

५. जिस तरह अुचित न्यूनतम जीवन-वेतन स्थिर करनेकी बात कही गअी है, ठीक अुसी तरह यह भी तय कर दिया जाना चाहिये कि वास्तवमें किसी भी व्यक्तिकी ज्यादासे ज्यादा कितनी आमदनी हो। न्यूनतम और अधिकतम आमदनियोंके बीचका फर्क अुचित, न्यायपूर्ण और समय समय पर अिस प्रकार बदलता रहनेवाला होना चाहिये कि अुसका झुकाव अिस फर्कको मिटानेकी तरफ हो।

६. गांधीवादी अर्थ-व्यवस्थामें अुत्पादनका स्वरूप समाजकी जरूरतसे निश्चित होगा, न कि व्यक्तिकी सनक या लालचसे।" ‡

संरक्षकताके सिद्धान्तोंका यह वक्तव्य व्यावहारिक भी है और साथ ही लचीला भी है। वह मौजूदा सम्पत्तिशाली वर्गको कसौटी पर चढ़ाता है

---

* हरिजन, १६–२–'४७

‡ हरिजनसेवक, २५–१०–'५२

और अुसे अपनी वुद्धि और कौशलका समाजके हितमें अुपयोग करनेका मौका देता है। सम्पत्तिकी मालिकीका नियमन किस तरह किया जाय, अिस प्रश्न पर बादमें अुद्योगोंके संघटनके ढांचे पर चर्चा करते समय विचार किया जायगा।

कितने लोग अैसे हैं जो सच्चे संरक्षक वन सकेंगे, यह सवाल अप्रस्तुत है। संभव है कि अिस सिद्धान्तको आचरणमें अुतारना कठिन हो। लेकिन यदि सिद्धान्त सही है तो अिस सवालका विशेप महत्त्व नहीं है कि अुसका आचरण ज्यादा आदमी कर सकेंगे या कोअी अेक ही। जिसे अहिंसामें विश्वास हो अुसे तो अुसका आचरण करना ही चाहिये, फिर वह अपने प्रयत्नमें सफल हो चाहे असफल।

संरक्षकताकी यह कल्पना मौजूदा जीवन-रचनाकी जगह — जिसमें प्राय: प्रत्येक आदमी अपने पड़ोसीकी परवाह न करते हुअे सिर्फ अपने ही लिअे जीता है — नयी न्याययुक्त रचनाका विकास करनेकी निश्चित फल देनेवाली पद्धति पेश करती है। अगर समाजको शान्तिपूर्ण ढंगसे सच्ची प्रगति करनी है, तो धनवानोंको यह समझना ही चाहिये कि अुनकी सम्पत्ति अुन्हें गरीबोंकी तुलनामें कोअी अूंचा दर्जा नहीं देती — गरीब और अमीर दोनों ही भगवानकी संतान हैं और समान हैं।

**यदि धनवान लोग संरक्षक होना स्वीकार नहीं करें:** यदि वे स्वेच्छा-पूर्वक संरक्षक होना स्वीकार नहीं करते, तो निश्चित है कि परिस्थितियां अुन्हें वैसा करनेके लिअे लाचार कर देंगी। हां, वे आपत्तिको ही आमंत्रित करना चाहते हों तो बात दूसरी है। अहिंसक राज्यमें लोकमतका प्रभाव बहुत जबरदस्त होता है। हिंसा जो काम नहीं कर सकती, अहिंसक राज्यमें लोकमत अुसे आसानीसे कर सकता है। सच पूछो तो, मजदूर और किसान ही जो कुछ वे पैदा करते हैं अुसके मालिक हैं। अगर बुद्धिपूर्ण संगठनके फलस्वरूप मिलनेवाली अपनी शक्तिको वे पहिचान लें, तो शोषक वर्गके अत्याचार अेकदम समाप्त हो सकते हैं। अगर लोग अत्याचारपूर्ण व्यवस्थाकी बुराअियोंसे असहयोग करें, तो पोषणके अभावमें वह अपने-आप मर जाय। यही अेक तरीका है जिसके द्वारा वर्ग-संघर्ष टाला जा सकता है।

## अुद्योगवाद

अभी तक हमने गांधीजीकी कल्पनाके अहिंसक राज्यकी रूपरेखा खींची। अिस स्वराज्यका निर्माण शून्यमें नहीं किया जा सकता। हम आज यंत्रोंके अुपयोग पर आधारित अुद्योगीकरणके युगमें रह रहे हैं। अब हम देखें कि अुद्योगवादके प्रति गांधीजीकी प्रतिक्रिया क्या थी।

**विचारोंका क्रमिक विकास :** अुद्योगवाद और यंत्रोंके अुपयोगके विषयमें गांधीजीके विचारोंमें जैसा क्रमिक परिवर्तन हुआ, वैसा किसी और चीजके बारेमें नहीं हुआ। अुनके विचारोंके अिस क्रमिक विकासकी प्रक्रियाको देखनेके लिअे हम अुसके विवेचनका आरम्भ तबसे करेंगे जब कि यंत्रोंसे गांधीजीकी पहचान पहले-पहल हुअी।

**यंत्र — आधुनिक सभ्यताका प्रतीक :** गांधीजीकी सारी शिक्षा बीज-रूपमें अुनकी अेक छोटीसी पुस्तकमें है, जिसे अुन्होंने सन् १९०९ में गुजरातीमें प्रकाशित कराया था। बादमें 'हिन्द स्वराज्य' या 'अिन्डियन होम रूल' के नामसे अुसका अंग्रेजी अनुवाद भी हुआ था। अिस पुस्तकमें 'आधुनिक सभ्यता' की सख्त टीका की गयी है और अुसका मुख्य प्रतीक अुन्होंने यंत्रको माना है।

**गांधीजीके आर्थिक विचारोंकी भूमिका :** गांधीजीके आर्थिक विचारोंका अध्ययन करते हुअे यह याद रखना चाहिये कि वे नये भारतके निर्माणके लिअे सक्रिय रूपसे प्रयत्नशील थे। अिसलिअे अिस सम्बन्धमें अुन्होंने जो कुछ कहा है वह भारतीय परिस्थितियोंके अपने अध्ययनके आधार पर कहा है। यह बात जब हम बादमें अुद्योगवादकी जगह गांधीजी द्वारा सुझायी गयी आर्थिक व्यवस्था और अुनके चरखेके संदेश पर विचार करेंगे तब स्पष्ट होगी। भारतीय परिस्थितियोंका विश्लेषण करके अुनके सुधारके लिअे वे जो अिलाज सुझाते हैं वह तो वे विश्वासपूर्वक सुझाते हैं, किन्तु वे अिस संबंधमें पश्चिमको सलाह देते हुअे संकोच करते हैं और जब वे शिष्टतावश अैसा करते हैं तब अुन्हें यह खयाल रहता है कि वे अपरिचित जमीन पर पांव रख रहे हैं।

**ग्राम-अर्थ-व्यवस्थाके नाशके कारण :** अपनी 'हिन्द स्वराज्य' पुस्तकमें यंत्रों पर अपने विचार प्रकट करते हुअे तत्संबंधी अध्यायमें अुन्होंने रमेशचन्द्र दत्तकी पुस्तक 'अिकानामिक हिस्ट्री ऑफ अिन्डिया' का अुल्लेख बहुत भावनापूर्वक किया है। अिस पुस्तकके अध्ययनसे अुन्हें पता चला कि हाथ-अुद्योगों पर आधारित भारतकी ग्राम-अर्थ-व्यवस्थाका नाश मैंचेस्टरके मिल-अुद्योगने किया है और वही भारतके लोगोंकी गरीबीका कारण है। अिसलिअे वे यंत्रोंको आधुनिक सभ्यताका पर्याय मानने लगे। आधुनिक सभ्यता बुरी है, अिसलिअे नहीं कि वह आधुनिक है; वह बुरी है क्योंकि वह लोगोंकी गरीबी और दुर्गतिके लिअे जिम्मेदार है। अुन्होंने भारतीय जीवन पर रेलों और यंत्रों द्वारा अुत्पन्न वस्तुओंके प्रभाव पर विचार किया और वे अिस निष्कर्ष पर पहुंचे कि ये अनिष्ट हैं। 'हिन्द स्वराज्य' में यंत्र शब्दका अुपयोग जिस अर्थमें हुआ है वह यंत्रके शाब्दिक अर्थसे कहीं ज्यादा है। यंत्र आधुनिक सभ्यताका प्रतीक है और अुसमें शक्तिसे चालित

मिलोंके साथ आनेवाली अुद्योग-व्यवस्थाका अर्थ समाया हुआ है। यंत्रों और औद्योगिक व्यवस्थाके बीचका भेद अुन्हें स्पष्ट नहीं हुआ था। जाहिर है कि अुस समय मशीनोंका अुनका अनुभव सीमित था। अुस समय वे 'लूम' (करघा) और 'व्हील' (चरखा) का भेद भी नहीं जानते थे और 'हिन्द स्वराज्य' में अुन्होंने व्हीलके लिअे लूम शब्दका प्रयोग किया है।* 'हिन्द स्वराज्य' पुस्तकमें अुन्होंने अुसका वर्णन किया है, लेकिन अुस समय तक अुन्होंने न तो करघा देखा था, न चरखा। सन् १९१५ में जब वे भारत लौटे और साबरमती आश्रममें अुन्होंने अपने प्रयोग शुरू किये अुसके बाद ही खादीके विचारको मूर्त स्वरूप मिला।

**राष्ट्रीय जीवनकी पुनर्रचना :** असहयोग आन्दोलनके प्रारंभिक कालमें आर्थिक सवालों पर अुन्होंने काफी ध्यान दिया। अुन्होंने अुस आर्थिक व्यवस्थाका विरोध किया जो यंत्रोंके प्रचलन और विस्तारके लिअे जिम्मेदार थी। अपने तत्कालीन खादी-सम्बन्धी लेखोंमें अुन्होंने अुत्पादन और वितरणकी अुत्तम पद्धतियों द्वारा राष्ट्रीय जीवनकी नयी रचनाकी हिमायत की थी। अुनका कहना था कि मिलोंकी संख्या बढ़ाना ठीक नहीं है, क्योंकि अुससे सम्पत्ति चन्द लोगोंके हाथोंमें केन्द्रित होती है। सन् १९२१ तक वे अपनी सन् १९०८ वाली स्थितिसे हटे नहीं थे।

**सन् २० के बाद विचारोंमें परिवर्तन :** सन् २० से ३० के प्रारंभिक वर्षोंमें यंत्रोंके सम्बन्धमें गांधीजीके विचारोंमें क्रमशः परिवर्तन होना शुरू हुआ। यंत्र आधुनिक सभ्यताकी बुराअीके प्रतीक हैं — अपने अिस प्रारंभिक विचारसे वे हट गये। अुन्होंने अब अपना आरोप अुद्योगवाद — यानी मुनाफा कमानेके अुद्देश्यसे किये जानेवाले केन्द्रीकृत थोक-अुत्पादनकी प्रणाली — तक मर्यादित कर दिया। मानवीय सवालोंको समझनेकी अपनी अंतर्दृष्टि-सम्पन्न क्षमताके द्वारा अुन्होंने देख लिया कि यंत्रों और अुद्योगवादमें तथा अेक प्रकारके यंत्रों और दूसरे प्रकारके यंत्रोंमें फर्क है। अुन्होंने यह भी महसूस किया कि मनुष्यका शरीर और चरखा स्वयं सुन्दर यंत्रोंके ही नमूने हैं। यानी यंत्र अपने-आपमें बुरा नहीं है। अुसका अुचित अुपयोग भी हो सकता है और अनुचित भी; अुसका अुपयोग मनुष्यके शोषणके लिअे भी हो सकता है और कल्याणके लिअे भी। अिसलिअे यद्यपि मनुष्य-समाजमें यंत्रके लिअे स्थान है, लेकिन अिस बातकी सावधानी रखी जानी चाहिये कि अुसे मनुष्यकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करना है, अुसकी सेवा करना है। अुसका मालिक नहीं बन जाना है। कुछ यंत्र अैसे भी हैं जिनका अुपयोग मनुष्यके कल्याणके लिअे, अुसकी मशक्कत कम करनेके लिअे, अुसका बोझ कम करनेके लिअे किया जा

* यंग अिंडिया, २०–९–'२८

सकता है। यह बात गांधीजीको १९२५ और २७ के दरमियान ज्यादा स्पष्ट हुअी। सन् १९०८ में वे यंत्रको अुद्योगवादका प्रतीक मानते थे, लेकिन अब अैसा नहीं रहा। यदि यंत्रका ठीक नियंत्रण किया जाय, तो वह अेक अैसा साधन भी हो सकता है जिसके शुभ परिणाम आयें। यंत्रोंके अमर्याद विस्तारसे लोग बेकार होंगे और गरीबी बढ़ेगी, लेकिन सादे औजार और अैसे यंत्र, जो कारीगरोंका बोझ कम करते हों और मशक्कत बचाते हों, स्वागतके योग्य हैं। अुनके खादीके आर्थिक कार्यक्रमका अुद्देश्य जीवनकी योजनामें यंत्रको अुसका अुपयुक्त स्थान दिलाना ही था। यंत्रोंके प्रति अुनकी दृष्टिमें यह जो परिवर्तन आया अुसका असर अुनके बड़े पैमाने पर माल तैयार करनेवाले यंत्रोंसे संबंधित विचारों पर भी पड़नेवाला था ही।

यंत्रोंका अैसा आयोजन, जिससे धन और सत्ता चन्द लोगोंके हाथोंमें केन्द्रित हो जाय और अुन्हें बाकी करोड़ों लोगोंकी पीठ पर चढ़नेमें मदद मिले, नैतिक और सामाजिक दृष्टिसे गलत है। यंत्रोंके अिस मोहके पीछे जो प्रेरणा है वह परोपकारकी नहीं, लोभकी है। मिल-अुद्योगको देशको हानि पहुंचाकर समृद्ध नहीं होने दिया जा सकता। भारतका जो अेक गृह-अुद्योग लाखों-करोड़ोंको दो-कौर अन्न जुटा देता था, अुसके क्रूर विनाशसे अुन्हें बहुत दुःख हुआ और अुन्होंने अुसका सख्त विरोध किया। अुन्होंने कहा, "व्यक्ति और अुसका कल्याण ही सबसे महत्त्वकी वस्तु है। अुसकी मेहनतको बचाना ही हमारा अुद्देश्य होना चाहिये। और लोभ नहीं बल्कि मनुष्यकी भलाअी ही हमारा प्रेरक हेतु होना चाहिये।"*

**१९२६ से १९३१ का समय:** १९२६ से १९३१ के कालमें अुनकी अुद्योगवादकी टीका और सख्त होती गयी। अिन दिनोंके अपने अेक लेखमें अुन्होंने कहा है कि भयका कारण यंत्र नहीं पर वह औद्योगिक व्यवस्था है, जिसमें मनुष्य यंत्रोंका गुलाम हो जाता है। अिस व्यवस्थामें अिस बातका निर्णय मनुष्यकी आवश्यकतायें नहीं करतीं कि किस चीजका और कितना अुत्पादन करना है, बल्कि यंत्र अिस बातका निर्णय करते हैं कि कितना माल तैयार करना है। अुसमें यही अेक अुद्देश्य होता है कि मालिकको लाभ हो। अुद्योगवाद देशकी शोषण कर सकनेकी क्षमता पर, विदेशी बाजारोंकी अुपलब्धि पर और प्रतियोगिताके अभाव पर निर्भर करता है। अुद्योगवादवाली व्यवस्था स्वार्थ-भावनाको बढ़ाती है और अपने पड़ोसियोंका लिहाज करनेकी वृत्तिको कम करती है।

**यंत्रोंके विरोधमें संशोधन:** गांधीजीके सन् १९२४ के लेखोंमें यंत्रोंके प्रति अुनके रुखमें अेक दूसरा परिवर्तन भी लक्षित होता है। जिन कामोंमें

---

* यंग अिंडिया, १३-११-'२४

भारी यंत्रोंका अुपयोग अनिवार्य हो अुनमें अुनके अुपयोगके लिअे अब वे तैयार थे, बशर्ते कि वे समाजके नियंत्रणमें चलाये जायें और कामकी परिस्थितियां आदर्श और आकर्षक हों। अुद्योगवादकी जगह गांधीजीकी सुझायी हुअी व्यवस्थाकी चर्चा करते हुअे हम अिस सवाल पर ज्यादा विचार करेंगे।

**अेक भ्रम :** बहुतसे लोगोंका खयाल है कि गांधीजी बिजलीके अुपयोगके खिलाफ थे और वैज्ञानिक आविष्कारोंके विरोधी थे। यह खयाल गलत है। यदि अुद्योगवादके दोष दूर किये जा सकें और यंत्रोंका अुपयोग आम जनताकी भलाअीके लिअे किया जाय, तो वे अुन्हें अपनी योजनामें स्थान देनेके लिअे तैयार थे। अेक बार जब अुनसे पूछा गया कि क्या वे बिजलीको नापसन्द करते हैं तो अुन्होंने जवाब दिया :

> "कौन कहता है? अगर हम बिजलीको गांव-गांव और गांवके भी हरअेक घरमें पहुंचा सकें, तो मुझे अिसमें कोअी आपत्ति नहीं कि गांवोंके लोग अपने औजार बिजलीसे चलायें। लेकिन अुस हालतमें बिजलीघरकी मालिकी राज्यकी अथवा ग्रामवासियोंकी होनी चाहिये, जैसे कि गांवके चरागाह पर अुनकी मालिकी होती है। लेकिन जहां न बिजली है और न यंत्र हैं वहां बेकार लोग क्या करें? वहां तुम अुन्हें काम देनेकी कोअी व्यवस्था करोगे या यह चाहोगे कि कामके अभावमें वे अपने हाथ ही काट डालें?"*

अेक दूसरे अवसर पर अुन्होंने कहा था :

> "चूंकि हम भाप और बिजलीका अुपयोग जान गये हैं, अिसलिअे हमको अुन्हें समुचित अवसर पर, जब हम अुद्योगवादसे बचना सीख जायेंगे, अिस्तेमाल करनेके योग्य होना चाहिये। अिसलिअे हमारी चेष्टा यह होनी चाहिये कि अुद्योगवाद किसी न किसी प्रकार नष्ट हो जाय।"‡

**वैज्ञानिक आविष्कारोंके बारेमें गांधीजीका रुख :** वैज्ञानिक शोधों और आविष्कारोंके बारेमें गांधीजीके मनोभावसे मनुष्यके कल्याणकी अुनकी गहरी भावना और अिन साधनोंके दुरुपयोगके विषयमें अुनकी चिंता प्रगट होती है। वे कहते हैं : "मैं अैसे हरअेक आविष्कारका स्वागत करूंगा जिससे सबका लाभ सिद्ध होता है। लेकिन आविष्कार-आविष्कारमें फर्क है। मैं हजारों आदमियोंको अेक साथ ही मारनेका सामर्थ्य रखनेवाली जहरीली गैसोंका स्वागत तो नहीं कर सकता।"†

---

* हरिजन, २२–६–'३५

‡ हिन्दी नवजीवन, ७–१०–'२६

† हरिजन, २२–६–'३५

"मैं यह भी कहूंगा कि वैज्ञानिक शोधोंका अुपयोग वैयक्तिक लाभके साधनोंके रूपमें होना वंद होना चाहिये। अैसा हो तो मजदूरोंको हदसे ज्यादा काम नहीं करना पड़ेगा और यंत्र मनुष्यकी प्रगतिमें वाधक न होकर सहायक होंगे।" *

**अुद्योगवादका विकल्प :** अुद्योगवाद अस्वीकार किया जाय तो अुसकी जगह हमें कोअी दूसरी व्यवस्था तो लेनी ही पड़ेगी। यह व्यवस्था क्या होगी? अिस विषय पर लिखनेवाले यूरोपीय लेखक कहते हैं कि पश्चिमी ढंगका अुद्योगीकरण ही सव देशोंको अपनाना होगा, अुनकी अिच्छा हो या न हो। अुसके सिवा कोअी दूसरा मार्ग नहीं है। लेकिन ये लेखक अपना निष्कर्ष यूरोपीय अुदाहरणोंके आधार पर निकालते हैं, जो भारतीय परिस्थितियोंसे पूरा मेल नहीं खाते। वे "पश्चिमी परिस्थितियोंके आधार पर अैसा परिणाम निकालते हैं कि वहांके लिअे जो वात सही है वही वात भारतके लिअे भी सही होनी चाहिये। वे भूल जाते हैं कि भारतमें परिस्थितियां अनेक महत्त्वपूर्ण मामलोंमें वहांसे विलकुल भिन्न हैं।"‡ याद रखना चाहिये कि अर्थशास्त्रके नियम परिस्थितियोंके भेदसे वदलते रहते हैं। अिसलिअे अुनकी सलाह अेक सीमासे आगे हमारा मार्गदर्शन नहीं करती। जो वात यूरोपके लिअे सच है, यह जरूरी नहीं कि वह भारतके लिये भी सच हो।

"हम यह भी जानते हैं कि हर राष्ट्र अपनी-अपनी विशेषतायें, अपना-अपना व्यक्तित्व रखता है। भारतवर्ष भी अपनी विशेपता रखता है; और यदि हमें अुसके अनेक रोगोंकी दवा खोजनी हो, तो हमें अुसकी प्रकृतिकी तमाम विलक्षणताओंको ध्यानमें रखकर दवा तजवीज करनी होगी।" †

अिसलिअे भारतका यूरोप जैसा अुद्योगीकरण करना अेक असम्भव प्रयत्न करना है।

**पश्चिमकी और भारतकी परिस्थितियोंमें भेद :** "भारतको पश्चिमी ढंग पर औद्योगिक क्यों वनना चाहिये? पाश्चात्य सभ्यता शहराती है। अिंग्लैंड या अिटली जैसे छोटे छोटे देश अपनी जीवन-धाराको शहराती वना सकते हैं। अमेरिका जैसे विशाल देशके लिअे भी, जिसकी आवादी वहुत कुछ छिछली या विखरी हुअी है, यही अेक अुपाय है।

---

* हरिजन, १३–११–'२४

‡ यंग अिंडिया, २–७–'३१

† हिन्दी नवजीवन, ६–८–'२५

लेकिन यह सोचने जैसी बात है कि अेक घनी आबादीवाले विशाल देशको, जिसकी प्राचीन परम्परा ही देहाती है और जो अब तक बराबर अुपयोगी बनी हुअी है, न तो पाश्चात्य आदर्शकी नकल करना है, और न करनी चाहिये। यह आवश्यक नहीं है कि जो बात परिस्थिति विशेषवाले देशके लिअे अच्छी है, वही अेक बिलकुल जुदी परिस्थितिवाले देशके लिअे भी अनुकूल हो। वही आहार किसीको पोषक सिद्ध होता है और किसीको मारक। किसी देशकी प्राकृतिक रचना अुसकी संस्कृतिके निर्माणमें महत्त्वका हाथ रखती है। ध्रुव प्रदेशमें रहनेवाले किसी मनुष्यके लिअे 'फरकोट' भले ही अेक आवश्यक वस्तु हो, विषुवत् रेखाके बीचोंबीच (अुष्णतम प्रदेशमें) रहनेवालेका अुसीसे दम घुटने लगेगा।" *

"भारतको अपने अर्थशास्त्र, अपनी अर्थनीति और अुद्योगों आदिके विषयमें अपनी कार्य-प्रणालीका स्वतंत्र विकास करना है।"×

**पश्चिमकी और भारतकी बीमारीकी समानता:** यूरोप और भारतकी परिस्थितियोंका अन्तर जानते हुअे गांधीजी स्वीकार करते हैं कि वे पश्चिमको अुसकी समस्याओं पर कोअी सलाह नहीं दे सकते। लेकिन चूंकि अुनसे अपनी राय देनेको कहा जाता है अिसलिअे वे यूरोपकी स्थितिका विश्लेषण करने और अुसके सुधारका अुपाय सुझानेका साहस करते हैं। वे कहते हैं, "मैं यूरोपकी बीमारी और अुसका अिलाज अुस अर्थमें तो नहीं जानता जिस अर्थमें कि मैं भारतकी बीमारी और अुसका अिलाज जाननेका दावा करता हूं। लेकिन मैं महसूस करता हूं कि अगरचे यूरोपमें लोगोंको राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त है, बुनियादी तौर पर यूरोप भी अुसी बीमारीसे पीड़ित है जिससे कि भारत।" ‡

अूपरकी पंक्तियोंमें जिस बीमारीकी बात कही गयी है, वह बीमारी है जनतंत्रकी ओटमें शासक वर्गके द्वारा आम जनताका शोषण। अगर अिस बीमारीको दूर करना हो, तो अस्पष्ट शब्दोंमें अितना कहने मात्रसे हमारा काम नहीं चलेगा कि जनताको अुसकी गिरी हुअी हालतसे अूपर अुठाना है और अुसे शोषणसे मुक्त करना है। हमें अिसका अुत्तर गहराअीसे सोचकर ढूंढ़ निकालना चाहिये। "वह अुत्तर क्या यह नहीं है कि वे † वही दरजा

---

* हिन्दी नवजीवन, २५–७–'२९

× स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ८४४।

‡ यंग अिंडिया, ३–९–'२५

† यानी जनता।

प्राप्त करना चाहते हैं जो आज पूंजीका है? यदि अैसा हो तब तो वह केवल हिंसाके द्वारा ही पाया जा सकता है।"*

**हिंसक क्रांतिके दोष :** मजदूर वर्ग द्वारा हिंसाके रास्ते पूंजीका दरजा पानेके प्रयत्नका अेक अुदाहरण रूसकी क्रांतिमें मिलता है। अुसका क्या परिणाम आया है? गांधीजी कहते हैं:

> "जहां अुद्योगीकरणको परम लक्ष्य माना गया है और अुसकी पूजा हुअी है, अुस रूस पर मैं नजर डालता हूं तो वहांके जीवनसे मैं खुश नहीं हो पाता। अपनी बात बाअिबलके शब्दोंमें कहूं तो 'आदमीको सारी दुनियाकी सम्पत्ति मिल जाय, पर अपनी अन्तरात्माको वह खो दे तो अुसे क्या लाभ हुआ?' और आजकी भाषामें कहूं तो अपना व्यक्तित्व खोकर आदमी किसी यंत्रका पुर्जा जैसा बन जाय तो यह स्थिति मनुष्यके गौरवका खर्व करनेवाली है। मैं चाहता हूं कि हरअेक व्यक्ति अपने ढंगसे अपना पूरा विकास करे और अिस तरह पूर्ण विकसित अिकाअीके रूपमें समाजमें अपना स्थान ग्रहण करे। गांवोंको स्वयंपूर्ण बन जाना चाहिये। यदि हमें अहिंसाके रास्ते चलना हो, तो मैं अिसके सिवा कोअी दूसरा हल नहीं देखता।"×

**पूंजीवादके दोष कैसे टाले जायें?:** यदि लोग पूंजीवादके दोष टालना चाहते हैं तो

> "वे श्रमजीवियोंकी कमाअी वस्तुका अधिक न्यायोचित बंटवारा करानेकी कोशिश करेंगे। बस, यह हमें अविलंब संतोष और सादगी पर ले जाता है, जिन्हें कि हम नये दृष्टिबिन्दुके अनुसार अपनी खुशीसे स्वीकार करेंगे। तब जीवनका लक्ष्य भौतिक सामग्रियोंकी वृद्धि न रहेगा, बल्कि सुख और आरामको कायम रखते हुअे अुनकी सीमाबद्धता होगा। हम अुस वस्तुको प्राप्त करनेका खयाल छोड़ देंगे जिसे कि हम प्राप्त कर सकते हैं, बल्कि हम अुस वस्तुको लेनेसे अिनकार करेंगे जो कि सब लोगोंको न मिलती हो। मुझे अैसा प्रतीत होता है कि यदि आर्थिक दृष्टिसे यूरोपकी जनतासे अैसी प्रार्थना की जाय, तो अुसको सफल होना चाहिये; और यदि अैसे प्रयोगमें कुछ अच्छी सफलता हुअी हो, तो अुससे बहुत भारी और अज्ञात आध्यात्मिक परिणाम अुत्पन्न होंगे। मैं अिस बातको नहीं मानता कि आध्यात्मिक तत्त्व अपने ही क्षेत्रमें काम करता है। बल्कि अिसके प्रतिकूल वह

* यंग अिंडिया, ३-९-'२५

× हरिजन, २८-१-'३९

जीवनके मामूली कार्योंके द्वारा ही अभिव्यक्त होता है। अिस तरह वह आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों पर भी अपना प्रभाव डालता है।" *

अगर यूरोपके लोग गांधीजीने अूपर जो विचार प्रगट किया है अुसे अपनानेके लिअे राजी किये जा सकें, तो अुद्देश्यकी सिद्धिके लिअे हिंसा बिलकुल अनावश्यक हो जायेगी और वे अहिंसाके जाहिर फलितार्थोंका पालन करते हुअे अपना अुचित स्थान आसानीसे प्राप्त कर लेंगे।

**विपुलताका अर्थ :** 'विपुलता'से गांधीजीका आशय यह है कि हरअेकको खाने, पीने और पहननेके लिअे जितना चाहिये अुतना भरपूर मिलना चाहिये। और अिसी तरह अुसे अपने मन और बुद्धिके शिक्षण तथा विकासके लिअे आवश्यक सुविधायें भी मिलना चाहिये। × अलबत्ता, वे यह नहीं चाहते थे कि किसीके पास जितनेका वह अच्छी तरह अुपयोग कर हकता है अुससे अधिक कुछ रहे और न वे गरीबी, अभाव, कष्ट और अस्वच्छता ही चाहते थे। +

**ग्राम-जीवनकी पुनर्रचना :** अुद्योगवादकी जगह गांधीजी जिस अर्थ-व्यवस्थाकी हिमायत करते हैं अुसका यह अर्थ नहीं है कि अुन्हें "पुरानी सादगीकी ओर लौट जाना है।" "लेकिन वह अैसी पुनर्रचना होगी जिसमें ग्राम-जीवनकी मुख्यता होगी और पशुबल तथा भौतिक बल आध्यात्मिक बलकी अधीनतामें रहेंगे।" ‡

**प्रवाहका अुलटी दिशामें परिवर्तन :** क्या वे भारतका अुद्योगीकरण करना चाहेंगे — अिस प्रश्नका जवाब देते हुअे गांधीजीने कहा था :

"अुद्योगीकरणके अपने अर्थमें मैं अवश्य ही भारतका अुद्योगीकरण करना चाहूंगा। हमें गांवोंको पुनर्जीवित करना है। हमारे गांव हमारे शहरोंकी तमाम आवश्यकताओंका अुत्पादन और पूर्ति करते थे। जबसे हमारे शहर विदेशी मालका बाजार बन गये और अिस सस्ते तथा घटिया विदेशी मालसे अुन्होंने गांवोंको पूर कर अुनका शोषण शुरू किया तभीसे भारत गरीब हो गया।" †

अिसलिअे गांधीजी पुन: अुसी स्वाभाविक अर्थ-व्यवस्थाकी ओर लौटना और आज गांवोंका धन शहरोंमें बहता चला आ रहा है, अुसका प्रवाह

* हिन्दी नवजीवन, ३–९–'२५

× हरिजन, १२–२–'३८

\+ वही

‡ यंग अिंडिया, ६–८–'२५

† हरिजन, २७–२–'३७

फिर गांवोंकी दिशामें मोड़ना चाहते थे। वे गांवोंमें अुद्योगोंकी स्थापना जरूर करना चाहते थे, लेकिन अुद्योगीकरणके प्रचलित अर्थमें नहीं। यानी वे नयी नयी मिलें खड़ी करके अुनकी संख्या नहीं बढ़ाते।

**स्वाभाविक अर्थ-व्यवस्था :** स्वाभाविक अर्थ-व्यवस्थामें बड़े पैमाने पर अुत्पादन करनेवाले यंत्रोद्योगों और गांवोंके हाथ-अुद्योगोंका सुमेल होगा। हाथ-अुद्योगोंसे अिन यंत्रोद्योगोंका मेल तभी हो सकता है, जब अुनकी योजना गांवोंके लाभकी दृष्टिसे की जाय। अैसे बड़े अुद्योग, जो देशकी अर्थ-व्यवस्थाके लिअे चाबीकी तरह हैं और जिनकी देशको जरूरत है, केन्द्रित किये जा सकते हैं, लेकिन अैसी कोअी भी चीज जिसका अुत्पादन थोड़ेसे गांवोंमें हो सकता है शहरोंमें केन्द्रित अुत्पादनके लिअे नहीं चुनी जानी चाहिये। गांधीजी जिन चीजोंका अुत्पादन गांवोंमें आसानीसे हो सकता हो अुनका अुत्पादन बड़े पैमाने पर काम करनेवाले यंत्रोद्योगके जरिये करनेके खिलाफ थे।*

**भारी अुद्योगों पर राज्यकी मालिकी :** वे चाबीरूप अुद्योगों पर राज्यकी मालिकी चाहते थे। अिन अुद्योगोंकी सूची तो अुन्होंने नहीं बनायी, लेकिन अुनका कहना था कि मोटे तौर पर जहां लोगोंको ज्यादा संख्यामें मिलकर काम करना पड़ता हो, वहां मालिकी राज्यकी होनी चाहिये। अैसी वस्तुओंके अुदाहरणके रूपमें, जिनके अुत्पादनके लिअे भारी यंत्रोंकी आवश्यकता होगी, अुन्होंने सीनेकी मशीनों, छापाखानों और शल्य-चिकित्साके औजारों‡ के नाम सुझाये थे। साथ ही अुन्होंने यह भी कहा था कि श्रम सादा हो या कौशल्य-साध्य, अिस श्रमके अुत्पादन पर मालिकी राज्यके मारफत श्रमिकोंकी ही होगी।†

भारी अुद्योग स्वभावतः केन्द्रित होंगे और अुन पर राष्ट्रकी मालिकी होगी। लेकिन ये सब अुद्योग गांवोंमें चलनेवाली विशाल राष्ट्रीय प्रवृत्तिका अेक अंशमात्र होंगे।× समाजवादियोंकी तरह अुनका मत था कि बड़े पैमाने पर चलनेवाले कारखानों पर या तो राष्ट्रकी मालिकी होनी चाहिये या राज्यका नियंत्रण होना चाहिये। लेकिन वे चाहते थे कि अैसे कारखानोंमें मजदूरोंको अत्यंत आकर्षक और आदर्श परिस्थितियोंमें काम करनेकी सुविधा मिलनी चाहिये और अुन्हें मुनाफेके लिअे नहीं बल्कि मानव-जातिकी सेवाकी वृत्तिसे काम करना चाहिये। काम करनेमें प्रेरक हेतु लोभ नहीं होगा, प्रेम

---

* हरिजन, २८–१–'३९

‡ हरिजन, २२–६–'३५

† हरिजन, १–९–'४६

× कन्स्ट्रक्टिव्ह प्रोग्राम (१९४१), पृ० ८।

होगा।* चावीरूप अुद्योगोंको राज्य चाहे अपने हाथोंमें न भी ले तो भी अुनके संचालन, प्रबंध और विकासमें अुनकी आवाज मुख्य अवश्य रहेगी।× गांधीजीकी कल्पनाका राज्य अहिंसा पर आधारित होगा अिसलिअे वे पैसे-वालोंसे अुनकी सम्पत्ति छीनेंगे तो नहीं, किन्तु वे यह जरूर चाहेंगे कि अुक्त कारखानोंको राज्यकी मालिकीके कारखाने बनानेकी प्रक्रियामें वे लोग स्वेच्छासे अपना सहयोग दें। वे मानते थे कि जिस तरह गरीब समाजके अंग हैं, अुसी तरह धनी भी समाजके अंग हैं — किसीको भी अछूत नहीं माना जा सकता।+

**अुद्योगोंके दोनों विभागोंमें सुमेल :** अुद्योगोंके दोनों विभागोंमें सुमेलकी स्थापना राज्यके हाथोंमें सत्ताके केन्द्रीकरण द्वारा नहीं, वल्कि 'संरक्षकता' के सिद्धान्तके अर्थका विस्तार करके ही की जा सकती है। गांधीजीकी रायमें वैयक्तिक स्वामित्वकी हिंसाकी तुलनामें राज्यकी हिंसा अधिक हानिकारक होती है। लेकिन यदि वह अनिवार्य हो, तो वे राज्यकी कमसे कम मालिकीका समर्थन करनेके लिअे तैयार थे।÷

**वैयक्तिक स्वामित्व बनाम राज्यका नियंत्रण :** यद्यपि सच कहा जाय तो वैयक्तिक स्वामित्व अहिंसासे मेल नहीं खाता, फिर भी गांधीजी अुसके साथ अिस आशासे समझौता करनेके लिअे तैयार थे कि अुसमें से कुछ अच्छा फल निकलेगा। राज्यकी मालिकी वैयक्तिक मालिकीसे ज्यादा अच्छी जरूर है, लेकिन अुसमें हिंसा है और अिसलिअे अुसके खिलाफ आपत्ति की जा सकती है। राज्य संघटित और केन्द्रीकृत हिंसाका प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्तिको आत्मा होती है, किन्तु राज्य तो अेक जड़ यंत्र है। अुसे कभी हिंसा छोड़नेके लिअे राजी नहीं किया जा सकता, क्योंकि अुसका जन्म ही हिंसासे हुआ है। अिसलिअे गांधीजी संरक्षकताके सिद्धान्तको तरजीह देते थे।‡ वे रूसमें राज्य द्वारा नियंत्रित अुद्योगोंका — यानी अैसी अर्थ-व्यवस्थाका जिसमें अुत्पादन और वितरण दोनोंका ही नियमन राज्य करता है — जो नया प्रयोग चल रहा है अुसे शंकाकी दृष्टिसे देखते थे। चूंकि यह व्यवस्था वल पर आधारित है अिसलिअे वे कहते थे कि वह अुन्हें न जाने कहां और कितनी दूर ले जायेगी।†

---

* यंग अिंडिया, १३–११–'२४
× स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ८४४।
+ हरिजन, १–९–'४६
÷ मॉडर्न रिव्यू, अक्तूबर १९३५।
‡ वही
† हरिजन, २–११–'३४

लेकिन यह जरूरी नहीं कि राज्य हिंसा पर ही आधारित हो। "सिद्धान्तमें चाहे अैसा ही हो लेकिन व्यवहारका तकाजा तो अधिकांशतः अहिंसा पर आधारित राज्यका ही होता है।"*

**अुद्योगीकरण थोक अुत्पादनका ही पर्याय है:** अुद्योगीकरण थोक अुत्पादनका ही पर्याय है। "थोक अुत्पादन कमसे कम लोगों द्वारा अत्यंत जटिल यंत्रोंकी मददसे किये जानेवाले अुत्पादनका सूचक पारिभाषिक शब्द है।" ‡ "अुद्योगीकरण वड़े पैमाने पर किया जाय तो अुससे ग्रामवासियोंका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष शोषण अवश्य होगा। कारण, अुससे प्रतियोगिता और अुत्पन्न मालको बाजारोंमें खपानेकी समस्यायें अुत्पन्न होंगी।" †

**अुद्योगवादकी बुराअियां:** अुद्योगवादकी बुराअियां संक्षेपमें अिस प्रकार हैं: (१) पूंजी और सत्ता चंद लोगोंके हाथमें अिकट्ठी हो जाती है। (२) पराश्रयिताकी वृद्धि: पैसेवाले और मध्यम वर्गके लोग मजदूरों पर, शहर गांवों पर और औद्योगिक देश कृषिप्रधान देशों पर जीना शुरू कर देते हैं। (३) पूंजी और श्रममें संघर्ष। (४) अमीरों और गरीबोंके बीचकी खाअी बढ़ती जाती है और असमानतायें अधिकाधिक अुग्र होती जाती हैं। (५) व्यापारकी और अुसके द्वारा मुनाफा कमानेकी वृत्ति बढ़ती जाती है। फलतः अेक ओर भौतिक समृद्धिकी अनियंत्रित आकांक्षा और दूसरी ओर युद्धका खतरा पैदा होता है।

**पश्चिमके अनुभवसे सबक:** पश्चिमका अनुभव हमें सिखाता है कि अुद्योगवाद या पूंजीवादकी ये सारी बुराअियां हमें टालनेकी कोशिश करना चाहिये। बड़े पैमाने पर अुद्योगीकरणसे विशेषाधिकारों और अेकाधिकारोंकी अुत्पत्ति होती है। यह बात गांधीजीको पसंद नहीं थी। जो भी वस्तु सबके लिअे समान रूपसे अुपलब्ध न की जा सके — सामान्य जनताको जिसमें हिस्सा न मिले, अुसे वे निषिद्ध मानते थे।

> "अिसलिअे हमें अपना सारा प्रयत्न गांवको स्वयंपूर्ण बनाने पर केन्द्रित करना है। वह वस्तुओंका निर्माण अुपयोगकी दृष्टिसे करेगा, विक्रीके लिअे नहीं। गांवोंमें चलनेवाले अुद्योगोंकी यह विशेषता कायम रखी जाय, तो फिर गांवोंको यह छूट दी जा सकती है कि वे अुन आधुनिक यंत्रों और औजारोंका अुपयोग करें, जिन्हें वे खरीद

---

* हरिजन, १६–२–'४७

‡ हरिजन, २–११–'३४

† हरिजन, २९–८–'३६

सकते हों। बस, अुनका अुपयोग दूसरोंका शोषण करनेके लिअे नहीं होना चाहिये।" *

"क्षणभरके लिअे मान लीजिये कि यंत्रोंसे मानव-जातिकी सारी जरूरतें पूरी हो सकती हैं, फिर भी अुनके कारण विशेष प्रदेशोंमें अुत्पादन केन्द्रित हो जायेगा। और फिर आपको वितरणका नियमन करनेके लिअे द्राविड़ी प्राणायाम करना पड़ेगा। अिसके विपरीत, यदि अुत्पादन और वितरण दोनों अुन्हीं क्षेत्रोंमें हों जहां अुन चीजोंकी जरूरत है, तो नियमन अपने-आप हो जाता है; अुसमें धोखेबाजीको कम मौका मिलता है और सट्टेको तो बिलकुल नहीं मिलता।" ×

यदि हमें अहिंसाके मार्गका अनुसरण करना है, तो समस्याके हलका केवल यही अेक अुपाय है कि गांवोंको स्वयंपूर्ण बनाया जाय।+ "स्मरणातीत कालसे जिस स्वतंत्रताका अुपभोग गांव करते आये हैं अुसकी रक्षा वे तब तक नहीं कर सकते, जब तक कि वे जीवनकी मुख्य आवश्यकताओंके अुत्पादनका नियंत्रण खुद न करते हों।" ÷ "साथ-ही-साथ अुतने ही बड़े पैमाने पर वितरणकी व्यवस्था न हो तो अुत्पादनका अेक ही परिणाम आ सकता है — दुनिया पर आपत्तिका पहाड़ टूट पड़ेगा।" ‡

**वितरण अुत्पादनके साथ साथ होना चाहिये :** वितरणमें समानता तभी आ सकती है जब कि अुत्पादन स्थानिक हो। यानी जब वितरण अुत्पादनके साथ साथ हो रहा हो। वितरण तब तक समान नहीं हो सकता, जब तक अपने मालको बेचनेके लिअे अुत्पादक दुनियाके दूर दूरके बाजारोंकी खोज करनेकी अिच्छा रखता है। अिसका यह अर्थ नहीं कि पश्चिमी देशोंने विज्ञान और संघटन (organisation) के क्षेत्रोंमें जो प्रगति की है अुसकी कोअी कीमत नहीं है। लेकिन अुनका अुपयोग लोगोंके लाभ और कल्याणकी दृष्टिसे होना चाहिये। †

"जब अुत्पादन और खपत दोनों स्थानीय बन जाते हैं, तब अनिश्चित मात्रामें और किसी भी मूल्य पर अुत्पादनकी गति बढ़ाना बन्द हो जाता है। तब हमारी वर्तमान आर्थिक व्यवस्थासे अुपस्थित

* हरिजन, २९-८-'३६
× हरिजन, २-११-'३४
+ हरिजन, २८-१-'३९
÷ यंग अिंडिया, २-७-'३१
‡ हरिजन, २-११-'३४
† वही

होनेवाली तमाम बेशुमार कठिनाअियां और समस्यायें खत्म हो जायंगी।" *

"लोगोंकी वास्तविक आवश्यकतायें पूरी हो जायेंगी, तो अुस वस्तुका अुत्पादन बन्द कर दिया जायगा। लोगोंकी आवश्यकताओंकी परवाह किये बिना और अुनके गरीब होनेका खतरा अुठाकर भी ज्यादा धन कमानेकी गरजसे अुत्पादनको तब भी जारी नहीं रखा जायगा। अैसा नहीं होगा कि चंद लोगोंकी तिजोरियोंमें धनका अस्वाभाविक संग्रह होता रहे और बाकी लोग विपुलतामें भी अभावका अनुभव करते रहें, जैसा कि अुदाहरणके लिअे अमेरिकामें आज हो रहा है।" +

अिसलिअे सिद्धान्त यह है कि:

"हरअेक गांव अपनी आवश्यकताओंका अुत्पादन आप करे और अुनका अुपयोग भी खुद ही करे। साथ ही, शहरोंकी जरूरतें पूरी करनेके लिअे अपने अंशदानके तौर पर थोड़ा-सा अतिरिक्त अुत्पादन भी वह करे।" ×

**शहरोंका अपना अुचित कार्य:** शहरोंके आक्रमणसे गांवोंकी रक्षा की जायगी। "अेक समय शहर गांवों पर निर्भर थे। अब स्थिति अुलटी है। दोनोंमें कोअी परस्परावलम्बन नहीं है।" ÷ गांधीजीकी योजनाके अनुसार "शहरोंको अैसी कोअी भी चीज पैदा नहीं करने दी जायगी, जो अुतनी ही आसानीसे गांवोंके द्वारा पैदा की जा सकती है। शहरोंका अपना अुचित कार्य गांवोंकी पैदा की हुअी वस्तुओंके वितरण-केन्द्रकी तरह गांवोंकी मदद करनेका है। ‡

प्रत्येक गांव यथासंभव स्वावलम्बी और स्वयंपूर्ण होगा। जिन वस्तुओंको वह खुद पैदा नहीं करता अुन्हें वह आसपासके दूसरे गांवोंसे लेगा और अिस पारस्परिक आदान-प्रदानके द्वारा वे अेक-दूसरेसे जुड़े रहेंगे। †

**ज्यादा रोजगार और अूंचे जीवन-स्तरमें विरोध:** अैसा प्रश्न किया जा सकता है कि असे गांव जनसंख्याके काफी बड़े हिस्सेको काम तो दे सकेंगे,

---

* हरिजन, २–११–'३४

\+ वही

× कन्स्ट्रक्टिव्ह प्रोग्राम (१९४१), पृ० ८।

÷ हरिजन, २८–१–'३९

‡ वही

† स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३६।

लेकिन क्या वे अूंचे और अुपयुक्त जीवन-स्तरका निर्माण कर सकेंगे ? बेकारीको शीघ्रतापूर्वक दूर करनेमें और लोगोंका जीवन-स्तर अूपर अुठानेमें विरोध है। हम ये दोनों चीजें करना चाहते हैं। अगर देशमें जितने कारखाने चल रहे हैं वे सब तोड़ दिये जायें, तो अिसमें शक नहीं कि हरअेक आदमीको काम दिया जा सकेगा। अिस तरह हम देशमें अैसी परिस्थिति सहज ही पैदा कर सकते हैं जिसमें बेकारी नहीं होगी और हरअेक आदमीको काम होगा, लेकिन वैसा होते हुअे भी जीवन-स्तर बहुत नीचा होगा। हम चाहते यह हैं कि सबको काम भी रहे और जीवन-स्तर भी अूंचा रहे। मार्च १९५५ में, अलाहाबादमें दिये गये अपने अेक भाषणमें पं० जवाहरलाल नेहरूने अिस विरोधकी ओर अिशारा किया था :

> "आजकी हालतमें, हमारे देशमें और दूसरे देशोंमें, जिनकी परिस्थितियां हमारी जैसी हैं, ज्यादा रोजगार पैदा करने और लोगोंका जीवन-स्तर अूपर अुठानेमें थोड़ा विरोध है। और आपको याद रखना चाहिये कि ज्यादा रोजगार और अूंचे जीवन-स्तरमें हमेशा विरोध होता है। अगर आप रोजगार पर ज्यादा भार रखते हैं, तो संभवतः अुसका परिणाम यह होता है कि जीवन-स्तर घटता है। और अगर आप जीवन-स्तर अूपर अुठाने पर ज्यादा जोर देते हैं तो बेकारी बढ़ती है। हमें अिन दोनोंका संतुलन करना पड़ता है। दोनों दिशाओंमें से किसी अेकमें भी ज्यादा दूर तक बढ़ना ठीक नहीं होता। ज्यादा बेकारी पैदा करके आप कुछ लोगोंका जीवन-स्तर अूपर अुठायें, तो सामाजिक दृष्टिसे यह ठीक नहीं होगा। दूसरी ओर यदि आप बेकारी अिस तरह दूर करें कि लोगोंका जीवन-स्तर जैसा है वैसा ही रहे, अूपर अुठे ही नहीं, तो भी आप अपने अुद्देश्यमें चूकते हैं, अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ते नहीं हैं। आप गरीब बने रहते हैं। अिसलिअे सवाल अिन दोनों प्रयत्नोंमें सही संतुलन बनाये रखनेका है जो बहुत कठिन है और अुसका यह हल है कि सम्पत्तिका हमारा अुत्पादन बढ़ना चाहिये। अगर आप ज्यादा सम्पत्ति नहीं पैदा करते, तो वितरणकी आपकी सारी योजनायें विफल हो जाती हैं। क्योंकि वितरण करनेके लिअे जितनी चाहिये अुतनी संपत्ति ही हमारे पास नहीं होती। अिसलिअे सवाल यह है कि ज्यादा अुत्पादन और ज्यादा रोजगारका मेल कैसे साधा जाय।"

अिन दो चीजोंमें से किसी अेक पर भी यदि अुचितसे अधिक जोर दिया जाय, तो हमारा विकास असंतुलित हो जाता है और हम समानताके लक्ष्यसे दूर हट जाते हैं। अूपर अुद्योगवाद या पूंजीवादकी जिन बुराअियोंकी

चर्चा हुअी है, अुन्हें दूर करनेमें भी अुससे कोअी सहायता नहीं मिलती। गांधीजी अिस विरोधसे परिचित थे। नीचे दिये जा रहे अुद्धरणसे यह बात स्पष्ट हो जाती है:

"मुल्कके कच्चे मालका अिस्तेमाल करनेवाली और ज्यादा ताकतवर अिन्सानोंकी परवाह न करनेवाली कोअी भी योजना न तो मुल्कमें समतोल कायम रख सकती है और न सब अिन्सानोंको बराबरीका दरजा दे सकती है।" *

अिसलिअे गांधीजी अैसी योजनाकी हिमायत करते हैं जिसमें गांवको ही अर्थ-रचनाका केन्द्र माना जाय:

"सच्ची योजना तो यह होगी कि हिन्दुस्तानकी समूची अिन्सानी ताकतका अच्छेसे अच्छा फायदा अुठाया जाय, और कच्चा माल विदेशोंको भेजकर बदलेमें अनाप-शनाप दामोंमें तैयार माल खरीदनेके बजाय अुसे हिन्दुस्तानके लाखों गांवोंमें ही बांटा जाय।" ‡

## स्वदेशी

**स्वदेशीके सिद्धान्तका आरंभ:** भारत या कोअी भी दूसरा देश दूसरेके लिअे अपनी शक्ति और साधनोंका अुपयोग तभी कर सकता है जब कि वह अपना पालन स्वयं करने लगे — अपनी आवश्यकताओंकी सारी वस्तुयें अपनी ही सीमाके भीतर पैदा करने लगे। अैसा होने पर अुसे अुस अुन्मत्त और विनाशक प्रतियोगितामें पड़नेकी जरूरत नहीं होगी, जो अीर्ष्या-द्वेष, अपने ही बन्धुओंके संहार आदिकी बुराअियोंको जन्म देती है। ग्राम-केन्द्रित अर्थ-रचनाके मूलमें अेक महान सिद्धान्त निहित है, जिसे गांधीजी स्वदेशी कहते हैं।

**स्वदेशीकी तीन शाखायें:** "स्वदेशी हमारे भीतरकी वह भावना है जो हम पर अपने पाससे पासके क्षेत्रकी वस्तुओंका अुपयोग करने और वहांके लोगोंकी सेवा करनेका प्रतिबन्ध लगाती है और अधिक दूरकी वस्तुओं और लोगोंको छोड़नेकी प्रेरणा देती है।" † अिस स्वदेशीकी तीन शाखायें हैं: धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक। यहां हमारा सम्बन्ध आर्थिक क्षेत्रमें स्वदेशीका प्रयोग करनेसे है। आर्थिक क्षेत्रमें स्वदेशीका अर्थ यह है कि हम केवल अपने समीपसे समीपके

* हरिजनसेवक, २३-३-'४७

‡ वही

† स्पीचेज अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३६।

पड़ोसियों द्वारा तैयार की हुअी चीजोंका ही अुपयोग करें और अुन अुद्योगोंको
कार्यक्षम बनाकर तथा जहां वे अपूर्ण हों वहां अुन्हें पूर्ण बनाकर अुन अुद्योगोंकी
...ा करें। *

**स्वदेशी क्या है:** "स्वदेशी वह भावना है जो अिन्सानको, दूसरे सब
...गोंको छोड़कर, सिर्फ अपने बिलकुल पासके पड़ोसीकी सेवा करनेकी प्रेरणा
...ती है। अिसकी शर्त यही है कि जिस पड़ोसीकी अिस तरह सेवा की जाये,
वह बदलेमें अपने पड़ोसीकी सेवा करे। अिस मानीमें स्वदेशीकी भावना
किसीको भी अपने दायरेसे अलग नहीं रखती। वह अिन्सानकी सेवा करनेकी
ताकतकी वैज्ञानिक मर्यादाभर मानती है।"‡

**मनुष्यका पहला कर्तव्य:** "मनुष्यका पहला कर्तव्य अपने पड़ोसीके
प्रति है। अिसका यह अर्थ नहीं कि विदेशीके प्रति द्वेष या स्वदेश-बन्धुके
प्रति पक्षपातका भाव रखा जाय। सेवाकी हमारी क्षमताकी स्पष्ट मर्यादायें
हैं। अपने पड़ोसीकी सेवा भी हम कठिनाअीसे ही कर पाते हैं। यदि
हममें से हरअेक व्यक्ति अपने पड़ोसीके प्रति अपने कर्तव्यका ठीक ठीक
पालन करे, तो दुनियामें अैसा कोअी आदमी नहीं बचेगा जिसे सहायताकी
जरूरत होने पर भी सेवा और सहायता न मिले। अिसलिअे कहा जा
सकता है कि जो अपने पड़ोसीकी सेवा करता है वह सारी दुनियाकी
सेवा करता है। सच तो यह है कि स्वदेशी-व्रतमें अपने और परायेका भेद
कर सकनेकी गुंजाअिश ही नहीं है। अपने पड़ोसीकी सेवा करना सारी
दुनियाकी सेवा करना है।" †

"मैं अपने नजदीकी पड़ोसीको हानि पहुंचाकर दूरवर्ती पड़ोसीकी सेवा
न करूंगा। अिसमें दंडकी बात जरा भी नहीं है। वह संकुचित भी किसी
मानीमें नहीं है, क्योंकि मुझे अपनी वृद्धिके लिअे जिन जिन चीजोंकी
जरूरत होती है वे सब मैं दुनियाके हर हिस्सेसे खरीदता हूं। मैं किसीसे भी
अैसी कोअी चीज लेनेसे अिनकार करूंगा — फिर वह कितनी ही अच्छी या
खूबसूरत हो — जो मेरी या अुन लोगोंकी, जिनका स्थान कुदरतने अिस तरह
निर्माण किया है कि मुझे सबसे पहले अुनकी खबर रखनी चाहिये, वृद्धिमें
बाधा डालती हो। मैं अुपयोगी और स्वास्थ्यदायी साहित्य दुनियाके हर हिस्सेसे
खरीदता हूं। मैं नश्तर लगानेके औजार अिंग्लैंडसे, पिन और पेंसिल आस्ट्रियासे

* स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३६।
‡ हरिजनसेवक, २३–३–'४७
† स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३७७ और ३८५

और घड़ियां स्विट्ज़रलैंडसे मंगाता हूं। पर मैं अुम्दासे अुम्दा कपासका अेक अिंच कपड़ा भी अिंग्लैंडसे या जापानसे या दुनियाके और किसी हिस्सेसे न लूंगा — क्योंकि अुससे भारतके लाखों वासियोंको हानि पहुंच रही है।" *

**स्वदेशी संकुचित धर्म नहीं है:** क्या अपनी मातृभूमिकी सेवा स्वदेश-प्रेमसे प्रेरित अेक संकुचित और वर्जनशील धर्म है? जैसा निम्नलिखित अुद्धरणसे स्पष्ट है, गांधीजी अैसा नहीं मानते थे। वे कहते हैं:

"मैं केवल भारतकी सेवा करता दीखता हूं, फिर भी मैं किसी दूसरे देशको हानि नहीं पहुंचाता। मेरी देशभक्ति वर्जनशील है और ग्रहणशील भी है। वह वर्जनशील अिस अर्थमें है कि मैं अत्यंत नम्रतापूर्वक अपना ध्यान अपनी जन्मभूमि पर ही देता हूं और ग्रहणशील अिस अर्थमें है कि मेरी सेवामें स्पर्धा या विरोधकी भावना बिलकुल नहीं है। 'अपनी सम्पत्तिका अुपयोग अिस तरह करो कि अुससे तुम्हारे पड़ोसीको कोअी कष्ट न हो' — यह केवल कानूनका सिद्धान्त नहीं परन्तु अेक महान जीवन-सिद्धान्त भी है। वह अहिंसा या प्रेमके समुचित पालनकी कुंजी है।" ‡

गांधीजीका स्वदेश-प्रेम अैसा संकुचित स्वदेश-प्रेम नहीं था कि वे दूसरे लोगोंके दुःखको महसूस न करते। वे भारतके सुखका निर्माण किसी दूसरे देशके सुखका बलिदान देकर नहीं करना चाहते थे और न यह चाहते थे कि दूसरे देशोंके नाशकी नींव पर अुसकी समृद्धि खड़ी की जाय। वे भारतको अिसलिअे फलता-फूलता और आगे बढ़ता देखना चाहते थे कि अुससे सारी दुनिया लाभ अुठा सके। अगर भारत समर्थ और शक्तिशाली हुआ, तो वह "दुनियाको अपनी कला-कौशलकी वस्तुयें और स्वास्थ्यप्रद मसाले जरूर भेजेगा, किन्तु अफीम और नशीले पेय भेजनेसे अिनकार कर देगा — भले अिस व्यापारसे अुसे प्रचुर भौतिक लाभ होता हो।" †

"स्वदेशी-व्रतका पालन करनेवाला हमेशा अपने आसपास निरीक्षण करेगा और जहां जहां पड़ोसियोंकी सेवा की जा सके, यानी जहां जहां अुनके हाथका तैयार किया हुआ जरूरतका माल होगा, वहां दूसरा छोड़कर अुसे लेगा। फिर भले ही स्वदेशी चीज पहले-पहल महंगी और कम दरजेकी हो। व्रतधारी अुसको सुधारनेकी कोशिश करेगा।

---

* हिन्दी नवजीवन, १२–३–'२५

‡ स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३६।

† यंग अिंडिया, १२–३–'२५

स्वदेशी खराब है असलिअे कायर बनकर परदेशीका अिस्तेमाल करने नहीं लग जायेगा।" *

हम स्वदेशीको अमुक गिनी-गिनायी वस्तुओं तक ही मर्यादित रखें और अस्थायी अुपायके रूपमें अैसी वस्तुओंके अुपयोगकी छूट लेते रहें जो देशमें अुपलब्ध न हों, तो भी यह कहा जा सकेगा कि हम अपने लक्ष्यकी तरफ बढ़ रहे हैं। ×

**स्वदेशीमें निःस्वार्थ सेवाका भाव है :**

"परन्तु अन्य अच्छी चीजोंकी भांति स्वदेशीका बिना सोचे-विचारे पालन किया जाय तो अुससे नुकसान हो सकता है। अिस खतरेसे बचना चाहिये। विदेशी मालको सिर्फ विदेशी होनेके कारण अस्वीकार करना और अपने देशमें अैसी चीजें तैयार करनेमें राष्ट्रका समय और धन बरबाद करना, जिनके लिअे वहां अनुकूलता नहीं है, बहुत बड़ी मूर्खता और स्वदेशीकी भावनाका भंग है। स्वदेशीका सच्चा अुपासक कभी विदेशियोंके प्रति अपने दिलमें दुर्भाव नहीं रखेगा। वह संसारमें किसीके प्रति भी वैरभाव नहीं रखेगा। स्वदेशी-धर्म घृणाका धर्म नहीं है। वह निःस्वार्थ सेवाका सिद्धान्त है, जिसकी जड़ शुद्धतम अहिंसा अर्थात् प्रेममें है।" ÷

गांधीजीने विदेशी वस्तुओंके निषेधकी हिमायत महज अिसलिअे कि वे विदेशी हैं, कभी नहीं की। अुनका आर्थिक सिद्धान्त यह था कि अुन सब विदेशी वस्तुओंका सम्पूर्ण बहिष्कार किया जाय, जिनके आयातसे तत्संबंधी स्वदेशी हितोंको नुकसान पहुंचनेकी संभावना हो। मतलब यह कि वे अैसी किसी वस्तुका आयात कदापि नहीं करना चाहते थे, जो देशमें ही पर्याप्त मात्रामें अुपलब्ध हो सकती हो। अुदाहरणके लिअे, वे आस्ट्रेलियाका गेहूं, भले वह ज्यादा अच्छी किस्मका क्यों न हो, मंगवाना गलत मानते। लेकिन यदि अुन्हें अिसका निश्चय करा दिया जाता कि अैसा करनेकी अनिवार्य आवश्यकता है, तो स्काटलैंडसे जअीका आटा मंगानेका विरोध वे न करते। महज अीर्षा-द्वेषके कारण किसी भी विदेशी वस्तुके बहिष्कारको वे कदापि सहन नहीं करते। ‡

---

* मंगल-प्रभात, प्र० १३–अ।

× स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३६।

÷ मंगल-प्रभात, प्र० १३–अ।

‡ यंग अिंडिया, १५–११–'२८

**स्वदेशीका अर्थ :** गांधीजीने स्वदेशी वस्तुकी परिभाषा अिस तरह की है: जो वस्तु करोड़ों भारतीयोंके हितका संवर्धन करती हो, भले अुसमें लगी हुअी पूंजी और कौशल विदेशी हो, वह स्वदेशी ही है। अलबत्ता, यह पूंजी और कौशल भारतीय नियंत्रणके अधीन होना चाहिये।*

**भारतीय नियंत्रणका अर्थ :** भारतीय नियंत्रणसे गांधीजीका क्या अभिप्राय था? अेक समय अैसा था जब कि भारतमें चलाया जानेवाला कोअी भी अुद्योग भारतीय अुद्योग माना जाता था, भले अुसकी पूंजी, व्यवस्था और नियंत्रण विदेशी हो और वह जनताके हितके लिअे हानिकर भी हो। सचमुच तो ये अुद्योग विदेशी ही थे, यद्यपि चूंकि वे भारतमें चलाये जाते थे अिसलिअे अुनके नामके साथ 'अिंडिया लिमिटेड' जुड़ा होता था। विदेशी अुद्योगोंको भारतमें भरनेकी अिस प्रक्रियाका परिणाम यह होता था कि नवजात भारतीय अुद्योग पनप ही नहीं सकते थे। विदेशी अुद्योगोंकी प्रतियोगिता अुन्हें क्षीण करती थी और असमयमें ही मार डालती थी। अिसलिअे गांधीजीको अैसे अुद्योगोंके प्रति अपना रुख स्पष्ट करना पड़ा। वे कहते थे:

> "किसी भी अुद्योगको हिन्दुस्तानी तभी कहा जा सकता है जब कि यह सिद्ध हो जाय कि वह जन-समुदायके लिअे हितकारी है और अुसमें काम करनेवाले कुशल कारीगर व मजदूर दोनों ही हिन्दुस्तानी हैं। अुसकी पूंजी और यंत्र भी हिन्दुस्तानी होने चाहिये; और अुस अुद्योगमें जो मजदूर काम करते हों अुन्हें अुससे पेट भरने लायक रोजी मिलनी चाहिये, अुनके रहनेके लिअे साफ-सुथरे और सुभीतेवाले मकान होने चाहिये और मजदूरोंके बच्चोंके लिअे भी मिल-मालिकोंको पर्याप्त सुविधा कर देनी चाहिये। यह हिन्दुस्तानी अुद्योगकी आदर्श व्याख्या है।"÷

अुनके मतानुसार अिस परिभाषाकी कसौटी पर सिर्फ अखिल भारत चरखा-संघ और अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघ ये दो संस्थायें ही खरी अुतर सकती थीं। लेकिन हरअेक सच्चे स्वदेशी अुद्योगको अिस परिभाषासे पूरा पूरा मेल साधनेका अुद्देश्य तो रखना ही चाहिये।

**सच्ची स्वदेशी कम्पनी :** स्वदेशी कम्पनीकी अिस कल्पनाको और अधिक स्पष्ट करते हुअे अुन्होंने कहा था:

> "मैं कहूंगा कि केवल वे ही प्रतिष्ठान स्वदेशी माने जा सकते हैं जिनका नियंत्रण, निर्देशन और व्यवस्था भारतीय हाथोंमें हो।

---

* हरिजन, २५-२-'३९

÷ हरिजनसेवक, ३०-१०-'३७

मैं स्वदेशी पूंजीका कोओी विरोध नहीं करूंगा और विदेशी हुनरके अुपयोगका — यानी विदेशी विशेषज्ञोंके अुपयोगका भी विरोध नहीं करूंगा, यदि हमें अुनकी आवश्यकता है और भारतमें वे मिलते नहीं हैं। लेकिन शर्त यह है कि यह पूंजी और यह कौशल निःशेष रूपसे भारतीयोंके नियंत्रण, निर्देशन और व्यवस्थापनमें होना चाहिये और अुनका अुपयोग भारतके हितमें होना चाहिये। . . . विदेशी पूंजी और कौशलका अुपयोग अेक चीज है, विदेशी औद्योगिक प्रतिष्ठानोंको यहां बढ़ने और फलनेका मौका देना बिलकुल दूसरी चीज है।"*

केवल 'अिंडिया लिमिटेड' की छाप धारण कर लेनेसे ये प्रतिष्ठान स्वदेशी कहलानेके हकदार नहीं हो सकते थे। अैसे विदेशी प्रतिष्ठानोंकी स्थापनाके बजाय वे यह ज्यादा पसंद करते थे कि अिन अुद्योगोंकी स्थापना कुछ वर्षोंके लिअे रोक दी जाय, ताकि अुस अवधिमें राष्ट्रीय पूंजी और व्यापारिक साहसका आवश्यक विकास हो और अुनके आधार पर भविष्यमें अैसे अुद्योग भारतीयोंके ही नियंत्रण, निर्देशन और व्यवस्थापनमें खड़े किये जा सकें।

**सच्चे स्वदेशी अुद्योगोंको संरक्षण देनेकी नीतिके समर्थक:** गांधीजी जीवनके किसी भी क्षेत्रमें कानूनी हस्तक्षेपको बुरा मानते थे। किन्तु स्वदेशी अुद्योगोंको संरक्षण देनेकी नीतिके वे प्रबल समर्थक थे। वे अिस बातकी जोरदार हिमायत करते थे कि स्वदेशी अुद्योगोंका रक्षण और पोषण करनेके लिअे विदेशी वस्तुओं पर कड़ा आयात-कर लगाना चाहिये।‡

गांधीजी संरक्षण-नीतिके अैसे प्रबल समर्थक थे, अिसका कारण यह था कि सरकारकी नीतिकी रचना लंकाशायरके कपड़ा-निर्माताओंके हितमें हुआ ो थी; अुसमें भारतीय किसानोंकी तकलीफका कोओी खयाल नहीं किया ा था। अिसलिअे वे कहते थे:

"खुला व्यापार अिंग्लैंडके लिअे लाभकर होगा। अुसे अपंग देशोंमें अपना माल फैलाना है और अपनी जरूरतोंको अत्यंत सस्ते भावमें दूसरे देशोंसे माल लाकर पूरा करना है। लेकिन हिन्दुस्तानकी जनताको अिस खुले व्यापारने ही तबाह किया है; क्योंकि अिसके द्वारा अुसके देहातके गृह-अुद्योग बिलकुल नष्ट-भ्रष्ट हो गये हैं। फिर, जब तक राज्य-रक्षण नहीं मिलता तब तक कोओी भी नवीन व्यापार दूसरे देशके व्यापारके साथ प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता।"†

* हरिजन, २६–३–'३८
‡ स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३३६।
† हिन्दी नवजीवन, १८–५–'२४

पुनः "विना किसी अत्युक्तिके यह कहा जा सकता है और अिसका कोअी प्रतिवाद नहीं कर सकता कि अिंग्लैंडने अपनी समृद्धिका भवन भारतके व्यापार और अुद्योगोंके नाशकी नींव पर खड़ा किया है। लंकाशायरकी वढ़तीके लिअे भारतके गृह-अुद्योगोंको नष्ट हो जाना पड़ा है।" *

"अिंग्लैंडकी अर्थ-रचना जर्मनीकी अर्थ-रचनासे भिन्न है। जर्मनी अपनी वीटकी शक्करके वल पर मालदार वना है, जव कि अिंग्लैंड विदेशी वाजारोंका शोषण करके मालदार वना है। अेक अपेक्षाकृत छोटे देशके लिअे जो वात संभव हो सकी वह अैसे देशके लिअे संभव नहीं है, जो १९०० मील लम्वा और १४०० मील चौड़ा है। किसी राष्ट्रकी अर्थ-रचना अुसकी जलवायु, अुसकी भूमि और अुसके निवासियोंके स्वभाव आदिके द्वारा नियंत्रित होती है। अिन सव वातोंमें भारतकी परिस्थितियां अिंग्लैंडकी परिस्थितियोंसे भिन्न हैं। अैसी कअी वस्तुअें, जो अिंग्लैंडके लिअे पोषक आहार जैसी हैं, भारतके लिअे जहर सिद्ध होंगी। . . . अेक अैसे देशके लिअे जो अनेक अुद्योगोंका निर्माण करके औद्योगिक वन गया है, जिसके निवासी ज्यादातर शहरोंमें रहते हैं, जिसकी प्रजाको दूसरे राष्ट्रोंका शोषण करके अपनी जीविका चलानेमें कोअी संकोच नहीं होता और अिसलिअे जो अपने अस्वाभाविक व्यापार-वाणिज्यकी रक्षा करनेके लिअे दुनियाकी सवसे वड़ी जलसेनाका वोझ अुठाता है — अैसे देशके लिअे 'मुक्त व्यापार' सही अर्थनीति हो सकती है।" ×
(यद्यपि गांधीजी अुसे नीति-सम्मत नहीं मानते थे।)

मुक्त व्यापार भारतके लिअे अभिशाप और अुसकी गुलामी कायम रखनेवाला सिद्ध हुआ।

**संरक्षण भेदभावसे भिन्न है:** अतः भारतीय अुद्योगोंको दिये गये संरक्षणके विषयमें यह कहना कि अिस तरह भारतीय और यूरोपीय हितोंके वीचमें भारतीय हितोंके पक्षमें भेदभाव वरता गया, अनुचित है। भारतीय अुद्योगोंको संरक्षण देनेसे अिनकार करनेका अर्थ भारतीय गुलामीको कायम रखना होता। "किसी महाकाय राक्षस और वौनेके वीच अधिकारोंकी समानताका भला क्या अर्थ हो सकता है? अिन दो असमान जीवोंके वीच समानताकी वात सोचनेके पहले वौनेको मदद देकर राक्षसकी अूंचाअी तक पहुंचाना होगा।" ‡ दोनोंके वीच समानता स्थापित करनेकी यह प्रक्रिया भारतके लाखों-करोड़ों लोगोंके हितमें जरूरी और अनिवार्य थी।

---

* यंग अिंडिया, २६–३–'३१

× यंग अिंडिया ८–१२–'२१

‡ यंग अिंडिया, २६–३–'३१

अिस प्रक्रियाको प्रजातीय भेदभाव कहकर वर्णित करना गलत है। प्रजातीय भेदभावका यह दोषारोपण सिद्ध नहीं किया जा सकता, क्योंकि जो भारतीय अपने विदेशी आश्रयदाताओंका सहारा पाकर सत्ता और अधिकारके स्थान अधिकृत किये वैठे हैं अुनसे भी यह अपेक्षा रखी जाती है कि वे जनताके हितोंकी दृष्टिसे जो परिवर्तन करना वांछनीय होगा वैसा परिवर्तन स्वीकार कर लेंगे। सन् १९३१ में, गोलमेज परिषदमें भारतके ब्रिटिश व्यापारियोंने भावी भारतीय संविधानमें आर्थिक संरक्षणोंका दावा पेश किया था और यह मांग रखी थी कि अुनके खिलाफ किसी किस्मका प्रजातीय भेदभाव न वरता जाय। गांधीजीनें अुनकी दूसरी मांगको सहर्ष तत्काल स्वीकार कर लिया और यह प्रस्ताव किया कि अैसी कोअी भी निर्योग्यता (disqualification) जो भारत राष्ट्रके भारतमें जन्मे हुअे नागरिकों पर न लगायी जाती हो, महज प्रजाति, रंग या धर्मके कारण अैसे दूसरे आदमियों पर नहीं लादी जायगी, जो कानूनी तौर पर भारतमें प्रवेश करते हों या वहां रहते हों। यह नुसखा अैसी व्यवस्था कर देगा जिससे अंग्रेज या यूरोपीय, अमरीकी, जापानी आदि किसी भी दूसरे विदेशीके खिलाफ कोअी भेदभाव न हो।*

अिंग्लैंडके साथ भारतके १०० सालसे भी ज्यादा लंवे संवंधोंके कारण गांधीजी स्वतंत्र भारतमें अुसके व्यापारके साथ दूसरे देशोंकी तुलनामें रियायती व्यवहार करनेके लिअे राजी थे, वशर्ते कि अुससे भारतके हितोंकी हानि न हो।× वे दूसरे विदेशी कपड़ेकी तुलनामें लंकाशायरके कपड़ेको तरजीह देनेके लिअे तैयार थे, अलवत्ता यह कपड़ा अैसा हो जिसकी भारतको जरूरत हो और जो भारतमें वन न सकता हो।‡ वे अैसे स्वतंत्र भारतकी कल्पना करते थे जो शोषणसे, भीतर और वाहर, सर्वथा मुक्त हो और कहते थे कि यदि ब्रिटेन अिस भारतका मित्र या साझी हो, तो वह अुसकी विदेशों द्वारा पूरी की जानेवाली जरूरतोंका मुख्य पूर्तिकर्ता होगा।†

**अयोग्यताका संरक्षण नहीं:** विदेशोंसे आयात माल पर प्रतिवंधक कर लगानेका आशय यह नहीं था कि अयोग्यताका संरक्षण किया जाय। गांधीजी कहते थे कि जब हमें स्वराज्य मिल जायगा, तव हमें योग्यता और कौशलकी आजकी अपेक्षा ज्यादा जरूरत होगी।÷

---

* स्पीचेज अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ८४४।

× यंग अिंडिया, २६–३–'३१

‡ यंग अिंडिया, १५–१०–'३१

† यंग अिंडिया, २६–३–'३१

÷ यंग अिंडिया, १६–७–'३१

**वहिष्कार वनाम स्वदेशी :** वहिष्कार और स्वदेशी अेक ही चीज नहीं है। "स्वदेशी अेक सार्वकालिक सिद्धान्त है। स्वदेशीकी अुपेक्षाके परिणाम-स्वरूप मनुष्य-जातिने अपरिमित दुःख भोगा है। स्वदेशीका अर्थ है कि अपनी आवश्यकताकी वस्तुओंका अुत्पादन अपने ही देशमें किया जाय और अुन्हींका वितरण और अुपभोग किया जाय।"* वह अेक रचनात्मक कार्यक्रम है। किन्तु वहिष्कार अेक अस्थायी युक्ति है, जिसका आशय विरोधीको आर्थिक हानि पहुंचाकर अपनी मांग स्वीकार करानेके लिअे किया जाता है। "अिस-लिअे वहिष्कार अयोग्य प्रकारका अेक अैसा प्रभाव है जिसका अुपयोग अपना अुद्देश्य हासिल करनेके लिअे किया जाता है। अप्रत्यक्ष रूपसे और तव जव कि वह लम्बे समय तक लगातार जारी रखा जाय अुसका यह परिणाम आ सकता है कि अुस वस्तुका देशमें ज्यादा अुत्पादन होने लगे।"‡ वहिष्कारमें सारे विदेशी मालका वहिष्कार नहीं होता, सिर्फ अपने विरोधीके मालका वहिष्कार होता है।

> "वहिष्कार तभी प्रभावकारी हो सकता है जव प्रायः सव लोग अुसका अमल करें। लेकिन स्वदेशीके नियमका पालन कोअी अेक आदमी भी करे तो अुससे देशको अुतना लाभ होता है। वहिष्कारकी सफलताके लिअे जनताके क्रोध और घृणा आदिके भावोंको अुकसाना पड़ता है। अिसके विना वहिष्कारमें सफलता नहीं मिलती। अिसलिअे वहिष्कारके अवांछित परिणाम भी आ सकते हैं और यह भी संभव है कि दोनों पक्षोंमें स्थायी मनोमालिन्य पैदा हो जाय।"†

जिस घटनाको टालनेकी कोशिश की जा रही हो, अुसके घट चुकनेके वाद वहिष्कार वेकार हो जाता है। अभीष्ट परिणाम लानेके लिअे अुसका प्रयोग अेकाअेक और तत्काल करना पड़ता है। अुसका क्षेत्र अितना वड़ा होता है कि वहुत जल्दीमें जो संघटन अुसके लिअे खड़ा किया जाता है, वह संघटन अुतने वड़े विशाल क्षेत्र पर कावू नहीं पा सकता। अिसके सिवा, विरोधी अपना माल हमारे देशमें किसी दूसरे देशके जरिये दाखिल कर दे — यह कठिनाअी तो वनी ही रहती है।

अिसलिअे अिन दोनोंकी तुलना करके गांधीजी निम्नलिखित विचार पर पहुंचे थे :

> "मैं स्वदेशीमें मानता हूं, क्योंकि वह अेक विकासशील प्रक्रिया है और समयके साथ अधिकाधिक वलवान वनती जाती है। कोअी भी

---

* यंग अिंडिया, १४–१–'२०

‡ वही

† वही

संस्था या संघटन अुसे अपना सकता है और अुसका आचरण कर सकता है। शासकोंके न्याय या अन्यायसे अुसका कोअी संबंध नहीं है। वह अपना पुरस्कार स्वयं ही है। अिसलिअे अुसमें प्रयत्नके अपव्ययका या विफलताका कोअी सवाल नहीं है। गीताके शब्दोंमें अिस धर्मका स्वल्प आचरण भी महान भयसे हमारी रक्षा करता है। अिसलिअे स्वदेशी और बहिष्कार अेक नहीं हैं; अुनमें जमीन-आसमानका अन्तर है।" *

**स्वदेशीकी कामचलाअू परिभाषा :** स्वदेशीकी बिलकुल सम्पूर्ण और सर्वग्राही परिभाषा देना संभव नहीं है। वह भावना-रूप है, अैसी भावना जो रोज बढ़ती जाती है और अनेक रूपोंमें अपना प्रकाशन करती है। लेकिन राजनीतिक कार्य-क्रमके अंगके रूपमें गांधीजीको अुसकी अेक कामचलाअू परिभाषा बनानी थी। अिस परिभाषाके अनुसार स्वदेशी शब्द अुन अुपयोगी वस्तुओंका वाचक है, जो भारतमें छोटे अुद्योगों द्वारा बनायी गयी हों। ये छोटे अुद्योग अकसर कमजोर होते हैं और वे अपने पांवों पर खड़े हो सकें अिसके लिअे लोगोंको अुनके विषयमें शिक्षित करनेकी जरूरत होती है। अिसके सिवा, अिन अुद्योगोंको अपनी वस्तुओंकी कीमत ठहराने, मजदूरोंकी मजदूरी निश्चित करने और सेवा-सहायता आदिके द्वारा अुनका कल्याण साधनेमें किसी विधिपूर्वक गठित सार्व-जनिक संस्थाका मार्गदर्शन स्वीकार करना चाहिये। यह परिभाषा बड़े और संघटित अुद्योगों द्वारा बनायी वस्तुओंका वर्जन करती है। अिन अुद्योगोंको किसी केन्द्रीय सार्वजनिक संस्थाकी सहायताकी आवश्यकता नहीं होती और अुनमें सरकारी सहायता प्राप्त करनेकी सामर्थ्य होती है। वे अपने पांवों पर खड़े हो सकते हैं और अुन्हें अपनी वस्तुओंके लिअे बाजार ढूंढ़नेमें कोअी कठिनाअी नहीं होती।

स्वदेशी-कार्यको छोटे पैमाने पर चलनेवाले, असंघटित सामान्य अुद्योगों और खासकर गृह-अुद्योगोंके प्रचार-प्रोत्साहन आदि तक ही सीमित रखा जाय, अिसका यह अर्थ नहीं है कि बड़े अुद्योगोंको नष्ट कर दिया जाय। और न अुसका यह अर्थ है कि अैसे अुद्योगोंसे देशको जो लाभ होता है, अुसकी अुपेक्षा की जाय। मतलब अितना ही है कि किसी भी सार्वजनिक संस्थाको अुन अुद्योगोंका विज्ञापन बननेकी जरूरत नहीं है, जिनके पास विज्ञापनके अपने प्रचुर साधन हैं और जो अपनी देखभाल खुद कर सकते हैं। स्वदेशीकी भावना देशमें पर्याप्त मात्रामें पैदा हो चुकी है और अुनकी मदद करती ही है। अुसके लिअे किसी सार्वजनिक संस्थाको प्रयत्न करनेकी जरूरत नहीं है। बड़े और संघटित अुद्योगोंके मालका प्रचार और विज्ञापन करनेका अेक ही नतीजा होगा। अुससे अुनके मालका महत्त्व बढ़ जायगा। अुनकी

* यंग अिंडिया, १४–१–'२०

वस्तुओंकी कीमतें बढ़ने लगेंगी और अिन फल-फूल रहे किन्तु प्रतियोगी प्रतिष्ठानोंमें अस्वास्थ्यकर होड़ पैदा होगी। किसी सफलतापूर्वक चलनेवाले प्रतिष्ठानकी मददके लिअे सेवासंस्था खड़ी करना प्रयत्नका अपव्यय ही कहा जायगा। बड़े अुद्योग-धंधोंका विज्ञापन करनेवाले अेजेंट बनकर हम देशको कोअी लाभ नहीं पहुंचा सकते।

**सामान्य अुद्योगों पर ही अपना प्रयत्न केन्द्रित करें:** हमारा प्रयत्न अुपयोगी तभी होगा जब हम अुसे छोटे पैमाने पर चलनेवाले अैसे सामान्य अुद्योगों पर केन्द्रित करें, जो अपना अस्तित्व बनाये रखनेके लिअे संघर्ष कर रहे हैं और जिन्हें जनताके सहयोगकी जरूरत है। खादीके सिवा भी अैसे कअी अुद्योग हैं। अगर स्वदेशीका प्रचार करनेवाला कोअी सच्चा संगठन हो, तो अुसका कर्तव्य होगा कि वह तमाम हाथ-अुद्योगोंका पता लगाये, अुनकी स्थितिकी सही जानकारी हासिल करे और अुन अुद्योगोंमें लगे हुअे कारीगरोंके जीवनमें दिलचस्पी लेकर अुन्हें सुधारनेकी कोशिश करें। गांधीजी हर-अेक हाथ-अुद्योगका संजीवन और विकास करनेकी बात नहीं करते थे। वे हरअेक हाथ-अुद्योगकी जांच करते थे और यह देखते थे कि गांवोंकी अर्थ-रचनामें अुसका स्थान क्या है। और यदि अुन्हें यह निश्चय हो जाता था कि अुसमें अपनी कोअी विशेषता है और अुसे प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये तो फिर वे वैसा करते थे।

**प्रारंभिक स्वदेशी प्रदर्शनियां:** कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनके साथ स्वदेशी प्रदर्शनीका होना आरंभ हुआ तबसे सन् १९३६ तक अुसमें कोअी परिवर्तन नहीं हुआ। अिन प्रदर्शनियोंका आयोजन विशाल पैमाने पर होता था और अुनका अुद्देश्य स्वदेशी वस्तुओंको प्रोत्साहन देना तथा प्रदर्शनियोंकी आयसे अधि-वेशनोंके खर्चकी पूर्ति करना था। सन् १९३६ में यह दृष्टि बदल गयी। २८ मार्च, १९३६ को लखनअू कांग्रेसमें गांधीजीने जिस प्रदर्शनीका अुद्-घाटन किया अुसमें वस्तुओंका प्रदर्शन दर्शकोंको चमत्कृत करनेकी दृष्टिसे नहीं किया गया था; अुसका अुद्देश्य दर्शकोंको भारतीय ग्रामवासियोंके जीवन और धन्धोंकी झांकी दिखाना था। अिस नयी प्रदर्शनीका अुद्देश्य लोगोंको अिस सत्यका दर्शन कराना था कि जिन्हें भरपेट भोजन भी नहीं मिलता वे हमारे गांवोंमें बसनेवाले देशबन्धु भी अैसी वस्तुओंका अुत्पादन कर सकते हैं, जिनका अुपयोग शहरवासी भलीभांति कर सकते हैं और अिस तरह गांववालोंका तथा अपना दोनोंका भला कर सकते हैं।* जिसका शैक्षणिक महत्त्व न हो, अैसी कोअी वस्तु अिस प्रदर्शनीमें नहीं रखी गयी थी।

---

* हरिजन, ४–४–'३६

**ग्रामीण प्रदर्शनियोंका आरम्भ :** प्रदर्शनियोंके विषयमें कांग्रेसकी दृष्टिमें परिवर्तन तो हुआ था, फिर भी यह याद रहे कि यह प्रदर्शनी हुआी थी शहरमें ही। गांधीजीने कहा था कि प्रदर्शनीका आयोजन गांववालोंके लिअे नहीं बल्कि शहरवालोंको ध्यानमें रखकर किया गया है। अुसका अुद्देश्य शहरवालोंको यह देखने और समझनेका मौका देना है कि गांववाले किस तरह रहते हैं और वे क्या कर सकते हैं।*

अिसके बाद अेक दो महीनेमें ही गांधीजी अपने अिस विचारकी दिशामें और आगे बढ़ गये। अुनकी कल्पनाकी दूसरी प्रदर्शनी मगनवाड़ी (वर्धा, मध्यप्रदेश) में हुआी। अुसका अुद्‌घाटन करते हुअे गांधीजीने अपने भाषणमें कहा :

> "अिस प्रदर्शनीके आयोजनका अुद्देश्य वर्धा-निवासियोंको अिस बातकी तालीम देना है कि अपने आसपासके गांवोंके प्रति अुनका कर्तव्य क्या है और ग्रामवासियोंको अिस बातकी तालीम देना है कि अपनी अुन्नतिके लिअे वे क्या कर सकते हैं। यह प्रदर्शनी अुन्हें अपने गांव कैसे साफ रखना, क्या खाना, अपने अुद्योग-धन्धोंमें सुधार कैसे करना और अपनी मौजूदा आयमें थोड़ीसी वृद्धि कैसे करना आदि सिखाती है। प्रदर्शनी शहरवालोंको बताती है कि वे गांववालोंका विविध तरीकोंसे किस तरह शोषण कर रहे हैं और गांववालोंका बनाया हुआ माल खरीदकर किस तरह वे अुनकी मदद कर सकते हैं।"+

अिसी सिलसिलेमें गांधीजीने यह आशा प्रगट की थी कि भविष्यमें ये प्रदर्शनियां बड़े शहरोंके बजाय कसबोंमें करनेकी कोशिश की जाय। अुन्होंने दर्शकोंसे अनुरोध किया कि वे खुद ग्राम-परायण बनें और बाहर ग्राम-परायणताका संदेश लेकर जायें।

**ग्रामीण प्रदर्शनियां :** लगभग छह माहके बाद गांधीजी अिस दिशामें अेक कदम और आगे बढ़ गये। अुन्होंने सुझाया कि कांग्रेसका अधिवेशन और प्रदर्शनी, दोनों ही गांवोंमें हों। अुस वर्ष कांग्रेसके अधिवेशनके लिअे महाराष्ट्रके पश्चिम खानदेश जिलेका फैजपुर गांव चुना गया था। गांधीजीने अब अपना सारा ध्यान ग्रामीण जनता पर ही केन्द्रित कर दिया और अपना संदेश मुख्यतः अुन्हींको लक्ष्यमें रखकर दिया। अिस अधिवेशनमें हुआी प्रदर्शनीका अुद्‌घाटन करते हुअे अुन्होंने कहा था :

---

* हरिजन, ४–४–'३६

\+ हरिजन, १६–५–'३६

"यह असली ग्राम-प्रदर्शनी है, जो गांववालोंके परिश्रमसे तैयार की गअी है। यह शुद्ध शिक्षणात्मक प्रयत्न है। ग्रामवासियोंको यह दिखाना ही अिसका अेकमात्र अुद्देश्य है कि अगर वे अपने हाथ और पैरों तथा अपने आसपासकी साधन-सामग्रीका ठीक ठीक अुपयोग करें, तो वे किस प्रकार अपनी आमदनीको दुगुना कर सकते हैं। . . . संक्षेपमें कहा जाय तो हमें अुनको यह सिखाना है कि धूलसे कंचन किस तरह बन सकता है, और अुन्हें यह सिखाना ही अिस प्रदर्शनीका अुद्देश्य है।"*

प्रदर्शनीमें आये हुअे लोगोंसे अुन्होंने कहा:

"हमारे राष्ट्रपतिके लिअे जिस प्रकारके जुलूसका आयोजन किया गया था, अुसकी वह अनोखी सादगी आपने जरूर देखी होगी — खास करके वह सुन्दर सजा हुआ रथ जिसमें छह जोड़ी बैल जुते हुअे थे। आपको यहां क्या मिलनेवाला है अिस बातके लिअे आपको तैयार करनेकी गरजसे ही अिस प्रकारका यह सब आयोजन किया गया था। शहरकी जैसी कोअी खूबी या आराम यहां आपको नहीं मिलेगा, यहां तो आपको अैसी ही चीजें मिलेंगी जिन्हें कि गांवके गरीब आदमी मुहैया कर सके हैं। अिस तरह यह जगह हम सबके लिअे अेक तीर्थस्थान बन गअी है — यह हमारी काशी है, यह हमारा मक्का है, जहां हम स्वतंत्रता-देवीके चरणों पर प्रार्थना-कुसुमांजलि चढ़ाने और राष्ट्रकी सेवाके लिअे अपनेको अुत्सर्ग करने आये हैं। आप लोग यहां गरीब किसानों पर हुकूमत जतलाने नहीं आये हैं, बल्कि यह सीखनेके लिअे आप यहां आये हैं कि अुनके रोजमर्राके मशक्कतके कामोंमें भाग लेकर — जैसे, भंगीका काम करके, अपने कपड़े वगैरा खुद धोकर और अपना आटा खुद पीसकर आप अुनका भार किस तरह हलका कर सकते हैं। . . . हम यहां सेवा लेनेके लिअे नहीं, किन्तु सेवा देनेके लिअे आये हैं।"†

कांग्रेसके अगले अधिवेशनमें, जो फरवरी १९३८ में गुजरातके हरिपुरा नामक स्थान पर हुआ था, गांधीजीने अपना यह विचार पुनः दुहराया कि अधिवेशनके साथ होनेवाली प्रदर्शनीका लक्ष्य लोगोंको शिक्षा देना है। अुन्होंने चरखेका महत्त्व बताते हुअे अुसे समस्त हाथ-अुद्योगोंका केन्द्र बताया और दर्शकोंसे अनुरोध किया कि वे नये हाथ-अुद्योगोंकी खोज करें और गांवोंको स्वयंपूर्ण बनायें। अगली प्रदर्शनी कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनके साथ मार्च

---

* हरिजनसेवक, २-१-'३७

† वही

१९३९ में त्रिपुरीमें हुआी थी। गांधीजी अुस समय राजकोटमें, देशी राज्योंकी प्रजाकी नागरिक स्वतंत्रताओंकी रक्षाके प्रयत्नमें, अुपवास कर रहे थे। अिसलिअे अिस प्रदर्शनीमें वे अुपस्थित नहीं हो सके थे। सन् १९३९ में द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू हो गया। वाअिसरॉयने जनताके प्रतिनिधियोंसे सलाह-मशविरा किये बिना ही युद्धमें भारतके शरीक होनेकी घोषणा कर दी और अिसके विरोधमें कांग्रेस मंत्रि-मंडलोंने अपने पदोंका त्याग कर दिया। मार्च १९४० में कांग्रेसका वार्षिक अधिवेशन युद्धकी बढ़ती हुआी घटाओंकी छायामें बिहारमें रामगढ़ नामक स्थान पर हुआ। प्रदर्शनीका अुद्घाटन करते हुअे गांधीजीने अपने भाषणमें अपने अिस विश्वासको दुहराया कि आधुनिक शहरी सभ्यताकी अपेक्षा विकेन्द्रीकरण पर आधारित हाथ-अुद्योगोंवाली सभ्यता कहीं ज्यादा श्रेष्ठ है। राष्ट्रके जीवनमें अिस समय अेक नये अध्यायका आरम्भ हो चुका था। गांधीजी स्वतंत्रता-संग्रामकी तैयारियोंमें लग गये और चूंकि कांग्रेस बिखर गयी थी अिसलिअे फिर कोअी प्रदर्शनियां नहीं हुअीं।

## खादी

**स्वदेशीकी मूर्ति:** खादीको स्वदेशीकी मूर्ति कहा गया है। आजसे सौ ही साल पहले चरखा हमारा राष्ट्रीय अुद्योग था। भारत कपास पैदा करनेवाला देश है अतः यहां चरखा ओीस्ट अिन्डिया कम्पनीके आनेके पहलेसे ही था। ओीस्ट अिन्डिया कम्पनीके अेजेंटोंने योजनापूर्वक और अत्यंत अमानुषिक ढंगसे चरखेका नाश किया। यह कहना सही नहीं है कि हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअीका नाश आधुनिक यंत्रों और आर्थिक दबावके कारण हुआ। अिस विशाल अुद्योगका नाश — पूरा या लगभग पूरा — ओीस्ट अिन्डिया कम्पनीने अत्यन्त अनैतिक और असाधारण अुपायों द्वारा किया।* यदि अुनके नाशके लिअे योजनापूर्वक निष्ठुर अुपायोंका अुपयोग न किया गया होता, तो कताअीकी यह राष्ट्रीय कला और अुद्योग कताअीके नये औजारोंके द्वारा — वे कितने ही बढ़िया क्यों न होते — कभी नष्ट नहीं हो सकता था।† चरखेके मिटते ही जनताकी रही-सही स्वतंत्रता भी चली गयी।‡

**नाशकी कहानी:** खादीके अुत्पादनमें कताअीके पहलेकी और बादकी सारी क्रियायें — कपास पैदा करना, चुनना, साफ करना, धुनकना, पूनियां बनाना, कातना, ताना-बाना करना, बुनना, रंगना आदि — आ जाती हैं।

---

* यंग अिंडिया, १८–८–'२०

† यंग अिंडिया, ८–१२–'२१

‡ हरिजन, १३–४–'४०

अिस प्राचीन अुद्योगके नाशके फलस्वरूप हमारे देशमें गुलामी तथा गरीबी आयी और भारतीय वस्त्रोंमें प्रगट होनेवाली अुस अनुपम कला-कारीगरीका लोप हो गया, जिसे देखकर सारी दुनिया चकित होती थी और हमसे द्वेष करती थी।*

जबसे अिस केन्द्रीय ग्रामोद्योग और अिससे सम्बद्ध दूसरे हाथ-अुद्योगोंका नाश हुआ है, तभीसे हमारे गांवोंमें से बुद्धि और हंसी-खुशीकी चमक चली गयी और हमारे गांव निर्जीव और दीप्तिशून्य हो गये हैं। अुनकी लगभग वही दशा हो गयी है जो अुनके कंकाल-मात्र रह गये ढोरोंकी है।+ गांवोंका वातावरण आलस्य तथा आशा और विश्वासके अभावसे भर गया है।

चरखा भारतके सात लाख गांवोंको स्वयंपूर्ण बनाता था। चरखेके नाशके साथ तेल-घानी जैसे दूसरे ग्रामोद्योग भी नष्ट हो गये। अिन अुद्योगोंकी जगह नये अुद्योग शुरू नहीं हुअे। परिणाम यह हुआ कि गांव अपने विविध अुद्योग-धन्धों, अपनी सर्जक प्रतिभा और अिन धन्धोंके द्वारा अुन्हें जो थोड़ा-बहुत पैसा मिल जाता था अुसे खो बैठे।×

**खादीका जन्म :** खादी और चरखेके महत्त्वकी ओर गांधीजीका ध्यान पहली बार १९०८ में गया जब अुन्हें अिस बातका भी पता नहीं था कि चरखा कैसा होता है। जब वे चरखे और करघेका अन्तर भी नहीं जानते थे। अुस समय अुन्हें भारतके गांवोंकी दशाकी अत्यन्त धुंधली-सी कल्पना थी, फिर भी अुन्हें यह निश्चय हो गया था कि अुनकी गरीबीका मुख्य कारण चरखेका नाश है और अुन्होंने अपने मनमें यह ठान लिया था कि भारत लौटने पर वे अुसका पुनरुद्धार करेंगे।÷

**खादीका अुद्देश्य :** चरखेके आन्दोलनका अुद्देश्य भारतकी लाखों झोपड़ियोंमें कताअीकी — जिसे यहांसे अन्यायपूर्ण, अवैध और अत्याचारपूर्ण अुपायोंके द्वारा निकाला गया था — फिरसे स्थापना करना है।† चरखा सामान्य जनताकी आशाका प्रतीक था। अगर ग्रामवासियोंको अपनी अुपयुक्त स्थिति प्राप्त करना है, तो अुसका सबसे सीधा और स्वाभाविक अुपाय यही है कि चरखेको अुसके सारे फलितार्थोंके साथ फिरसे जीवित किया जाय।‡

---

* यंग अिंडिया, १६–२–'२१

\+ कन्स्ट्रक्टिव्ह प्रोग्राम (१९४१), पृ० ७।

× हरिजन, १३–४–'४०

÷ हरिजन, १९–१२–'४८

† यंग अिंडिया, २१–११–'२९

‡ हरिजन, १३–४–'४०

प्रति मनुष्य प्रति वर्ष १३ गज कपड़ेके हिसावसे भारतकी जनताके लिअे जितना कपड़ा चाहिये, सन् १९२० में भारत अुसका आधेसे भी कम पैदा करता था। भारत अपनी जरूरतका सारा कपास खुद पैदा करता था। वह अपने कपासकी लाखों गांठें जापान और लंकाशायरको निर्यात कर देता था और अुसका अधिकांश तैयार कपड़ेके रूपमें अुसके पास वापिस आ जाता था, यद्यपि अपनी आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिअे जरूरी सारा कपड़ा और सूत हाथ-बुनाअी और हाथ-कताअीके जरिये वह खुद पैदा कर सकता था।*

**पूरक अुद्योग और दुर्भिक्षसे रक्षाका साधन :** भारतकी किसान-जनताका अधिकांश सालमें चार-छह माह ही काम करता है; बाकी समय अुसे वेकारीमें बिताना पड़ता है। अिसलिअे वह लगभग भुखमरीकी हालतमें जीती है। यह अुसकी सामान्य स्थिति है। फिर, किसानोंकी अिस वेकारीमें, जो अुन्हें परिस्थितिवश जबरदस्ती भोगनी पड़ती है, बार बार होनेवाले दुर्भिक्ष और ज्यादा वृद्धि करते हैं। अपनी स्वल्प-सी आयके साधनोंकी पूर्तिके लिअे अैसा कौनसा कार्य है जिसे किसान लोग अपने घर बैठे आसानीसे कर सकते हैं।† प्रत्येक कृषिप्रधान देशको अैसे अेक पूरक अुद्योगकी आवश्यकता होती है, जिसके द्वारा वहांके किसान अपने खाली समयका सदुपयोग कर सकें। भारतमें अैसा अुद्योग हमेशा कताअीका रहा है, क्योंकि अुससे किसानोंको थोड़ा-बहुत आर्थिक लाभ भी होता है।

> **अेकमात्र सार्वत्रिक अुद्योग :** "लाखों लोगोंके लिअे अेकमात्र सार्वत्रिक अुद्योग कताअी ही है और कोअी नहीं। अिसका यह अर्थ नहीं कि दूसरे अुद्योगोंका कोअी महत्त्व नहीं है या वे निकम्मे हैं। सच तो यह है कि व्यक्तिगत दृष्टिकोणसे कोअी भी दूसरा अुद्योग कताअीकी तुलनामें ज्यादा आयवर्धक होगा। अुदाहरणके लिअे, घड़ियां बनाना अेक अत्यंत आयवर्धक और मोहक अुद्योग होगा। मगर अुसमें कितने आदमी लग सकते हैं? क्या वह लाखों ग्रामीणोंके लिअे किसी कामका है? ...भूखसे मर रहे लोगोंके सामने हम अनेक प्रकारका कच्चा अन्न रख दें और अुनसे अपनी अिच्छानुसार चुनाव कर लेनेकी आशा करें, तो अिसका क्या परिणाम होगा? पहले तो अुनकी समझमें नहीं आयगा कि क्या किया जाय और बादमें संभवतः वे जो अुन्हें सबसे आकर्षक मालूम होता होगा अुस पर टूट पड़ेंगे और नुकसान अुठायेंगे। ... जो और किसी अुद्योगको अपना सकते हों और

---

* यंग अिंडिया, १८–८–'२०

† यंग अिंडिया, ३–११–'२१

अपनाना चाहते हों वे शौकसे अुसे अपना लें। मगर राष्ट्रके साधन अेक हाथ-कताअीके अुद्योग पर ही केन्द्रित होने चाहिये, क्योंकि अिसे सब तुरंत अपना सकते हैं और अधिकांश लोग अन्य किसी अुद्योगको नहीं अपना सकते।"*

"लाखों लोगोंके लिअे जिसकी कल्पना की जा सकती है, अैसा सबसे ज्यादा अुपयुक्त और व्यावहारिक अुद्योग कताअी ही है।"+

लोग आर्थिक, बौद्धिक और नैतिक दृष्टिसे ज्यादा-ज्यादा गरीब होते जा रहे थे। अुनकी काम करने, विचार करने, यहां तक कि जीनेकी भी अिच्छा तेजीसे क्षीण होती जा रही थी। खादीने अुन्हें काम दिया, अुसके औजार दिये और अपनी बनायी वस्तुओंके लिअे — यानी कपड़ेके लिअे तैयार बाजार भी दिया। जहां कल तक सघन निराशा छायी हुअी थी वहां अुसने अुन्हें आशाका प्रकाश दिया।×

हाथ-कताअी अुनके लिअे नहीं है जो कोअी दूसरा अधिक आर्थिक लाभवाला धन्धा करते हों: गांधीजीने अैसा कभी नहीं कहा कि जो ज्यादा आर्थिक लाभवाला धन्धा करते हों वे अपना वह धन्धा छोड़ दें और हाथ-कताअीका धंधा शुरू कर दें। अुन्होंने बार बार यही कहा कि केवल अुन लोगोंसे ही कताअी करनेका आग्रह किया जाय, जिनके पास कोअी दूसरा आर्थिक लाभवाला धंधा न हो और वे भी कताअीका काम अपने खाली समयमें ही करें। "कताअीका सारा विचार अिस मान्यता पर आधारित है कि अिस देशमें अैसे लाखों स्त्री-पुरुष मौजूद हैं, जो धन्धेके अभावमें सालमें कमसे कम चार माह बेकार रहते हैं।"÷

ज्यों ही अिन लाखों स्त्री-पुरुषोंको कताअीसे कोअी ज्यादा अच्छा यानी आर्थिक दृष्टिसे ज्यादा लाभकारी धन्धा मिल जाय अुन्हें कताअीका काम छोड़ देनेकी पूरी आजादी है। लोगोंके पास कताअीसे ज्यादा अच्छा धंधा हो तो अिससे, गांधीजी कहते थे, सबसे ज्यादा खुशी मुझे होगी।† जब तक सोलह वर्षसे अूपरके प्रत्येक तंदुरुस्त स्त्री-पुरुषके लिअे भारतके प्रत्येक गांवमें अुनके खेत या झोपड़ीमें, या कारखानेमें ही, काम और काफी मजदूरी दिलानेका बेहतर तरीका न निकाल लिया जाय, तब तक लाखों ग्रामीणोंकी

* यंग अिंडिया, ३०-९-'२६
+ यंग अिंडिया, १२-४-'२८
× हरिजन, २०-६-'३६
÷ यंग अिंडिया, २२-१०-'२५
† यंग अिंडिया, २१-११-'२९

दृष्टिसे खादी ही अेकमात्र सच्ची आर्थिक योजना है। या फिर गांवोंके स्थान पर अितने शहर बन जाने चाहिये कि देहातियोंको वे जरूरी सुख-सुविधायें प्राप्त हो जायं, जो अेक सुनियमित जीवनके लिअे जरूरी हैं। मैंने अपनी बात अितनी पूरी तरह यही दिखानेके लिअे पेश की है कि जितने लम्बे समयकी कल्पना की जा सकती हो अुतने लम्बे समय तक अिस समस्याका हल खादी ही रहेगी।*

**हाथ-करघेके बजाय चरखेको ज्यादा महत्त्व देनेका कारण:** यह सवाल पूछा जा सकता है कि चरखे पर अितना जोर क्यों है? अुसकी तुलनामें हाथ-करघेको अुतना महत्त्व क्यों नहीं दिया जाता? गांधीजी हाथ-करघेके खिलाफ नहीं थे। अेक स्थान पर वे अिस विषय पर लिखते हुअे कहते हैं कि वह निस्सन्देह अेक विशाल और फलता-फूलता अुद्योग है।+ लेकिन

> "*हाथ-बुनाअी अेक लम्बी प्रक्रिया है,* जिसमें सतत परिश्रमकी जरूरत होती है; और अुसमें कअी प्रक्रियायें अैसी करनी पड़ती हैं, जिनमें अेकसे अधिक व्यक्तियोंके अेक ही समय काम करनेकी आवश्यकता होती है। यह किसानकी कुटियामें संभव नहीं है। अिसलिअे अतीत कालसे हाथ-बुनाअी अेक अलग धंधा और आजीविकाका स्वतंत्र साधन रहा है। किसानको कोअी अैसा सहायक धंधा चाहिये, जिसे वह जब मरजी हो करने लगे और जब चाहे छोड़ सके। करोड़ोंके लिअे वह धंधा हाथ-कताअी है। बेशक, फालतू समयका अुपयोग करनेके लिअे दूसरे भी अैसे धंधे हैं। परन्तु जो करोड़ों नर-नारियोंके काम आ सके अैसा हाथ-कताअीके सिवा दूसरा कोअी धंधा नहीं मिलेगा।"×
>
> **हाथ-बुनाअी अेक स्वतंत्र धन्धा है:** "प्रथम तो हाथ-बुनाअी सहायक अुद्योगके रूपमें व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि अिसका सिखाना आसान नहीं है। वह भारतवर्षमें कभी सार्वत्रिक नहीं हुआ; अुसमें काम करनेके लिअे कअी आदमी चाहिये और वह चाहे जब नहीं किया जा सकता। वह आम तौर पर अेक स्वतंत्र धंधा ही रहा है और रह सकता है और ज्यादातर लोगोंके लिअे मोची-काम या लुहार-कामकी तरह अेक पूरा धंधा है, जिसे करते हुअे वे कुछ और नहीं कर सकते।"÷

---

* हरिजन, २०–६–'३६

+ यंग अिंडिया, ११–११–'२६

× यंग अिंडिया, १४–५–'२५

÷ यंग अिंडिया, ११–११–'२६

**हाथ-करघा अुद्योगकी मुश्किल :** अिसके सिवा हाथ-करघेके बुनकरका मिलके सूत पर आधार रखना और यह सोचना कि अपने करघेके लिअे अुसे जितना सूत चाहिये वह अुसे बराबर मिलता रहेगा गलत है। अपने प्रारंभिक वर्षोंके अनुभवसे गांधीजीने यह समझ लिया था कि मिलोंका अुद्देश्य अपना सूत यथासंभव खुद बुनना है; हाथकरघा-बुनकरोंके साथ अुनका सहयोग स्वेच्छा-प्रेरित नहीं बल्कि अनिवार्य और अस्थायी है।*

"मिल-मालिक अितने परोपकारी जीव नहीं हैं कि हाथ-करघेका जुलाहा जब अुनके साथ सफल स्पर्धा करने लगेगा तब भी वे अुसे सूत देते रहेंगे।" +

"मौका मिलने पर मिल-मालिक तो खुद ही अपने सूतको बुनने लगेंगे। अुनका धंधा पैसा कमानेके लिअे है, परोपकारके लिअे नहीं। अिसलिअे जिससे ज्यादा पैसे मिलें, वही काम वे करेंगे।" ×

"यह बात अधिक लोग नहीं जानते कि मिलका सूत बुननेवाले जुलाहोंकी बहुत बड़ी संख्या साहूकारोंके पंजेमें है और जब तक मिलके सूतका भरोसा वे करते रहेंगे, अुनकी वही हालत रहेगी। ग्राम्य अर्थ-शास्त्रके अनुसार जुलाहेको मिलोंसे न लेकर अपने साथी किसानसे ही सूत लेना चाहिये।" ÷

"मिलके सूतका अिस्तेमाल ही हाथ-करघेकी कारीगरीका खास दुश्मन है। हाथ-कते सूतसे ही वह अुबर सकती है। अगर चरखा मिट जाता है तो करघा भी जरूर मिट जायगा।" †

**हाथ-कताअी और हाथ-बुनाअी परस्पर पूरक हैं :** हाथ-बुनकरोंका सच्चा सहारा तो हाथ-कताअी करनेवाले हैं और हाथ-कताअीवालोंका सच्चा सहारा हाथ-बुनकर हैं। हाथ-बुनकर अपनी सूतकी जरूरतके लिअे हाथ-कताअी-वालोंका ही आधार ले सकते हैं और हाथ-कताअीवाले अपने सूतकी बुनाअीके लिअे हाथ-बुनकरोंका। वे अेक-दूसरेके पूरक हैं। ‡ हाथ-कताअीका दुबटा सूत बुननेवाला बुनकर अन्तमें मिल-सूतके बुनकरसे ज्यादा अच्छी हालतमें रहेगा, क्योंकि हाथ-कताअीके सूतके बुनकरको साल भर हमेशा काम मिलता रहेगा। §

* आत्मकथा, भाग पांच, प्र. ३९; १९५७।

+ हरिजनसेवक, १–९–'४६

× हरिजनसेवक, ३१–३–'४६

÷ हिन्दी नवजीवन, ११–११–'२६

† हरिजनसेवक, १–९–'४६

‡ हरिजनसेवक, ३१–३–'४६

§ हरिजन, २५–८–'४६

"अगर बुनकर लोग हाथ-कताअीका सूत नहीं बुनते हैं, तो अपने धन्धेकी हत्या कर डालनेका दोष अुन पर ही होगा।" * अगर चरखा असफल हुआ, तो हाथ-करघा मरे विना नहीं रहेगा। +

**मिल-अुद्योगका स्थान :** "सूत-मिलके साथ साथ चरखे न चल सकनेके लिअे कोअी कारण नहीं है। जिस तरह घरका रसोअीघर भी चलता है और होटल भी चलता है, अुसी तरह ये दोनों साथ साथ चल सकते हैं।" ×

"अगर मिलें आजकी तरह जनताको लूटनेके लिअे नहीं, बल्कि अुनकी सेवा करनेके लिअे चलायी जायं, तो वे घर घरके चरखों और करघोंके काममें मदद करेंगी और अुनकी जगह नहीं ले लेंगी, जो आज वे ले लेती हैं।" ÷

कपड़ेकी जिन किस्मोंका अुत्पादन खादी-संस्थायें आसानीसे कर सकती हैं, अुनका अुत्पादन मिलोंको नहीं करना चाहिये और अिस तरह अुन्हें अपनी शक्ति अुन किस्मोंका अुत्पादन करनेके लिअे सुरक्षित रखनी चाहिये जिन्हें खादी-संस्थायें आसानीसे नहीं बना सकतीं।

"हमारी मिलें अितना सूत तैयार नहीं करतीं जितना हमें चाहिये और यदि वे अुतना सूत तैयार करने लगें, तो वे अपनी कीमतें तब तक कम नहीं रखेंगी जब तक कि अुन्हें अिसके लिअे विवश न किया जाय। अुनका अुद्देश्य स्पष्टत: पैसा कमाना है और अिसलिअे वे राष्ट्रकी आवश्यकताओंका खयाल करके अपनी कीमतोंका नियमन करेंगी, अैसी आशा रखना व्यर्थ है।" †

वंग-भंगके दिनोंमें बंगालमें स्वदेशीका जो आन्दोलन चला था, मिल-मालिकोंकी बेअीमानी और लोभके कारण अुसकी गतिमें भारी रुकावट पैदा हुअी थी। अुन्होंने अपने कपड़ेकी कीमतें बढ़ा दी थीं और स्वदेशीके नामसे विदेशी कपड़ा भी बेचा था। अिस नकली खादीके सम्बन्धमें जो तथ्य सामने आये थे वे बताते थे कि मिलें लोगोंके व्यापक हितोंके खिलाफ अपने संकुचित लाभके लिअे स्वदेशीकी भावनाका दुरुपयोग करनेमें आगा-पीछा नहीं करेंगी। ‡ मिल-मालिक यह नहीं देखते कि अुनकी मुनाफा-

---

* हरिजन, ३१–३–'४६
+ यंग अिंडिया, ११–११–'२६
× यंग अिंडिया, २१–७–'२०
÷ हिन्दी नवजीवन, १२–४–'२८
† हरिजन, २०–६–'३६
‡ यंग अिंडिया, १०–५–'२८

ख़ोरीकी नीतिसे स्वदेशीके आदर्शको और देशको, दोनोंको, नुकसान पहुंचता है।* अुन्हें अपनी कीमतोंका किसी अुचित नीतिके अनुसार नियमन करना चाहिये और अपना मुनाफा भरसक कम कर लेना चाहिये। अतिरिक्त आयका अुपयोग मजदूरोंकी हालत सुधारनेमें होना चाहिये।+

**खादी मिलोंके लोभ पर नियंत्रण रखती है:** "खादी-अुत्पत्ति और खादी-प्रचारसे दो तरहके प्रभाव अेक ही साथ पड़ते हैं। पहले तो अिससे मिल-मालिकोंके लोभ पर अंकुश रहता है और दूसरे यह बात अनोखी जान पड़ने पर भी अुससे स्वदेशी मिलोंको विदेशी मिलोंके साथ प्रतियोगिता करनेमें बहुत ही प्रभावकारी प्रोत्साहन मिलता है। . . . अेकमात्र विशुद्ध खादीके प्रचारको रोक दीजिये, मिलके कपड़ोंसे खिलवाड़ शुरू कीजिये और आप खादीको मार डालेंगे और साथ ही साथ अंतमें जाकर स्वदेशी मिलोंको भी मार डालेंगे, क्योंकि विदेशी कपड़ेकी प्रतियोगितामें वे अकेले अपने पैरों पर नहीं ठहर सकतीं। अगर खादी-भावना न हो तो विदेशी वस्त्रके साथ देशी मिलोंकी प्रतियोगितामें खलल डालनेवाली जो अेक बात है, यानी स्वस्थ सार्वजनिक भावना, वह बिलकुल ही न रहेगी।"×

**खादीके पक्षमें दावे:** गांधीजी चरखेके लिअे यह दावा करते थे कि वह हमारी गरीबीके सवालको अत्यन्त सरल, स्वाभाविक तथा व्यवस्थित पद्धतिसे हल करनेकी शक्ति रखता है और महत्त्वकी बात यह है कि अुसमें हमें लगभग कुछ भी खर्च नहीं करना पड़ता।÷ कताअीके अिन लाभोंको गिनाते हुअे अुन्होंने कहा था:†

१. जिन लोगोंको फुरसत है और जिन्हें थोड़ेसे पैसोंकी भी जरूरत है, अुन्हें अिससे आसानीसे रोजगार मिल जाता है।

२. अिसका हजारोंको ज्ञान है।

३. यह आसानीसे सीखी जा सकती है।

४. अिसमें लगभग कुछ भी पूंजी लगानेकी जरूरत नहीं होती।

५. चरखा आसानीसे और सस्ते दामोंमें तैयार किया जा सकता है।

---

* यंग अिंडिया, २३–२–'२२

\+ यंग अिंडिया, १५–३–'२८

× हिन्दी नवजीवन, १०–५–'२८

÷ यंग अिंडिया, ८–१२–'२१

† यंग अिंडिया, २१–८–'२४

६. लोगोंको अिससे अरुचि नहीं है।

७. अिससे अकालके समय तात्कालिक राहत मिल जाती है।

८. विदेशी कपड़ा खरीदनेसे भारतका जो धन बाहर चला जाता है अुसे यही रोक सकती है।

९. अिससे करोड़ों रुपयोंकी जो बचत होती है वह अपने-आप सुपात्र गरीबोंमें बंट जाती है।

१०. अिसकी छोटी-से-छोटी सफलतासे ही लोगोंको बहुत-कुछ तात्कालिक लाभ होता है।

११. लोगोंमें सहयोग पैदा करनेका यह अत्यंत प्रबल साधन है।

**खादी आन्दोलनकी मंजिलें :** खादीका आन्दोलन अभी तक अनेक मंजिलोंसे गुजर चुका है। अेक पुरानी नष्ट हो गयी कलाके विरल अवशेषकी स्थितिसे धीरे धीरे बढ़कर वह भारतके स्वतंत्रता-संग्रामका चिह्न बन गयी। अपने मूल रूपमें खादी खेतीका पूरक अुद्योग थी। अुसका अुद्देश्य महज यह नहीं था कि शहरी लोगोंको अैसी सुन्दर खादी मुहैया कर दी जाय, जो मिलोंके कपड़ेकी बराबरी करे या दूसरे अुद्योगोंकी तरह चंद कारीगरोंको काम-धन्धा दे; अुसका असली अुद्देश्य किसानोंको अपनी फुरसतके समयका अर्थोत्पादक अुपयोग करनेकी सुविधा कर देना था।* जिस तरह गांवके लोग अपना खाना खुद पका लेते हैं अुसी तरह अपने अुपयोगके लिअे अुन्हें अपनी खादीका अुत्पादन भी खुद कर लेना चाहिये। अपने अुपयोगके बाद बच रही खादीको यदि वे चाहें तो बेच सकते हैं।+

सन् १९२० के बाद कुछ वर्षोंमें गांधीजीके आर्थिक विचार ठोस और व्यावहारिक बन गये। अुन्होंने अपना ध्यान धनके अुत्पादन और वितरणके सवाल पर लगाया और सत्ता तथा पूंजीका केन्द्रीकरण रोकने और धनका समान बंटवारा सिद्ध करनेकी दृष्टिसे चरखेका प्रचार करनेका प्रयत्न किया। सन् १९२५ में अुन्होंने सारे भारतको खादीमय कर देनेके अुद्देश्यसे अखिल भारत चरखा-संघकी स्थापना की।

अुनके खादी-संबंधी विचारोंमें पुनः परिवर्तन हुआ और सन् १९३५ में खादीके व्यापारिक पहलूके बजाय अुसके स्वावलम्बनके पहलू पर अधिक जोर दिया जाने लगा। अखिल भारत चरखा-संघका असली काम शैक्षणिक हो गया। अिस नयी योजनामें खादी-मंडलोंका काम खादीकी बिक्री करनेके बजाय खादी-अुत्पादनकी विविध प्रक्रियाओंका शिक्षण देना अधिक हो गया।×

---

* हरिजन, ६–७–'३५

\+ वही

× वही

खादीकार्यसे संबंधित सारी संस्थाओंमें स्वावलम्बी खादीको पहला स्थान दिया गया। *

जब जोर स्वावलंबी खादी पर दिया जाने लगा, तब व्यापारिक अुत्पादन शहरी लोगोंकी वास्तविक आवश्यकताओं तक सीमित हो गया। + स्वावलंबी खादी और बिक्रीवाली खादीका अुत्पादन दोनों साथ साथ चलते रहे। बिक्रीवाली खादीका अुत्पादन स्वावलम्बी खादीके अुत्पादनका गौण परिणाम हो गया। ×

प्रारंभिक वर्षोंमें गरीबोंको राहत पहुंचाने पर जोर था। प्रसंगतः वह अमीरों और गरीबोंको जोड़नेवाली सजीव कड़ी बन गयी और अुसे राजनीतिक महत्त्व प्राप्त हो गया। अभी तक सूत कातने और बुननेका काम सामान्य जनता करती थी। नयी योजनामें भी सामान्य जनता ही करती रही, किन्तु अुसका अुद्देश्य बदल गया; अब वह मुख्यतः अपने ही अुपयोगके लिअे कातने-बुनने लगी। गांधीजीने खादीके विकासमें जो दोष देखे अुनके कारण अिस परिवर्तनकी आवश्यकता हुअी। गांवोंके जो लोग सूत कातते और बुनते थे, वे अुसका अुपयोग खुद नहीं करते थे। वे खादीके अुपयोगकी कीमतको न तो समझते थे और न अुसकी कद्र करते थे। अिसलिअे अखिल भारत चरखा-संघने अपने सारे साधन गांववालोंको खादीधारी बनानेके प्रयत्नमें लगा दिये। ÷

खादीका अुद्देश्य आरंभसे ही मौजूदा अस्वाभाविक रचनाको अुलटनेका था, यद्यपि अुसमें शहरी लोगोंको बरबाद करनेका विचार कदापि नहीं था। मौजूदा रचनाको अुलटनेका अर्थ था गांवों और शहरोंके स्वाभाविक सम्बन्धको पुनः स्थापित करना। † खादीका यह अुद्देश्य लगभग वैसा ही था जैसा कि अस्पृश्यता-निवारणका। तथाकथित अुच्च वर्गोंने वर्षों तक निचले वर्गोंकी अुपेक्षा की थी। खादीने अुच्च वर्गवालोंको निचले वर्गोंके हितमें प्रायश्चित्त करनेका न्यौता देकर अिस दुहरी बुराअीको निर्मूल करनेका काम किया। ‡

**खादीके फलितार्थ :** "खादीमें जो चीजें समायी हुअी हैं, अुन सबके साथ खादीको अपनाना चाहिये। खादीका अेक मतलब यह है कि

---

* हरिजन, २६–१०–'३५

\+ हरिजन, ६–७–'३५

× हरिजन, २६–१०–'३५

÷ हरिजन, २१–७–'४६

† वही

‡ हरिजन, ६–७–'३५

हममें से हरअेकको सम्पूर्ण स्वदेशीकी भावना वढ़ानी और टिकानी चाहिये, यानी हमें अिस वातका दृढ़ संकल्प करना चाहिये कि हम अपने जीवनकी सभी जरूरतोंको हिन्दुस्तानकी वनी चीजोंसे और अुनमें भी हमारे गांवमें रहनेवाली आम जनताकी मेहनत और अक्लसे वनी चीजोंके जरिये पूरा करेंगे। अिस वारेमें आजकल हमारा जो रवैया है, अुसे विलकुल वदल डालनेकी यह वात है। मतलव यह कि आज हिन्दुस्तानके सात लाख गांवोंको चूसकर और वरवाद करके हिन्दुस्तानके . . . जो दस-पांच शहर मालामाल हो रहे हैं, अुनके वदले हमारे सात लाख गांव स्वावलम्वी और स्वयंपूर्ण वनें और अपनी राजी-खुशीसे हिन्दुस्तानके शहरों और वाहरकी दुनियाके लिअे अिस तरह अुपयोगी वनें कि दोनों पक्षोंको फायदा पहुंचे।" *

खादी देशमें रहनेवाले सब लोगोंकी आर्थिक आजादी और समानताका आरम्भ वतलाती है। वह "भारतीय मानव-समुदायकी अेकता और समानताकी प्रतीक है और अिसलिअे पंडित नेहरूके शब्दोंमें अुसे 'भारतीय आजादीकी पोशाक' कहा जा सकता है।" †

अेडम स्मिथने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' में आर्थिक प्रक्रियाका नियंत्रण करनेवाले सिद्धान्तोंका निरूपण किया है। अुसमें अुसने अुन वातोंका भी वर्णन किया है जो अिन आर्थिक सिद्धान्तोंके व्यापारमें बाधा अुपस्थित करती हैं। वह अिन वातोंमें 'मानवीय अुपादान' को मुख्य मानता है। दूसरी ओर खादीका सारा अर्थशास्त्र अिस 'मानवीय अुपादान' पर ही आश्रित है। खादीके अर्थशास्त्रके अनुसार वाधा अुपस्थित करनेवाली वात मनुष्यका स्वार्थ है, जिसे अेडम स्मिथ शुद्ध आर्थिक हेतु वताता है। अिस तरह खादीके अर्थशास्त्रकी दृष्टि अेडम स्मिथकी अथवा प्रचलित अर्थशास्त्रकी दृष्टिसे ठीक अुलटी है। अिसलिअे मिलके कपड़ेके अुत्पादनमें जो आर्थिक नियम लागू होते हैं वे खादीके अुत्पादनमें लागू नहीं होते। व्यापारिक दृष्टिसे किये जानेवाले अुत्पादनमें मालकी गुणवत्ताको कम करना, अुसमें घटिया किस्मके मालका मिश्रण करना और लोगोंकी कुरुचिको अुभाड़ने और तृप्त करनेवाले मालका निर्माण करना आदि अुपायोंका खुला प्रयोग होता है। खादीमें मालकी खपतके लिअे अिन अुपायोंके अवलम्वनका अुपयोग अेकदम वर्जित है। अिसी तरह अुसमें कारीगरोंको कमसे कम मजदूरी देने और ज्यादासे ज्यादा मुनाफा कमानेके नियमका भी कोअी स्थान नहीं है। खादीमें विक्रीसे होनेवाली सारी आय मूल अुत्पादकोंको पहुंचा दी जाती है;

---

* रचनातमक कार्यक्रम, १९५९।

† वही

बीचवाले लोगोंको अुनका मेहनताना भर मिलता है, अुससे अधिक कुछ नहीं।*
"खादी व्यापारिक युद्धकी नहीं, व्यापारिक शांतिकी निशानी है।"+

**सबसे बड़ी सहकारी मंडली:** कताअीके अुद्योगकी सफलताके लिअे सहकारकी अनिवार्य आवश्यकता है। हाथ-कताअीका प्रचार करके गांधीजी अपने शब्दोंमें दुनियाकी सबसे बड़ी सहकारी मंडलीकी स्थापना कर रहे थे। अुनका यह दावा बहुत बड़ा जरूर था, किन्तु वह गलत नहीं था। वह गलत नहीं था क्योंकि हाथ-कताअी अपना माना हुआ मकसद तब तक पूरा नहीं कर सकती, जब तक कि अुसमें लगे हुअे लाखों लोग सचमुच सहयोगसे काम न करें। अिस अुद्योगमें सहयोग आरम्भसे ही जरूरी है। हाथ-कताअी आदमीको आत्म-निर्भर बनाती है, पर साथ ही वह अुसे अिस बातको समझनेकी सुविधा और प्रेरणा भी देती है कि अिस अुद्योगमें हर कदम पर परस्परावलम्बनकी और मालके अुत्पादन तथा वितरणकी प्रक्रियामें अत्यंत विशाल पैमाने पर लाखों लोगोंके सहयोगकी आवश्यकता है।×

**सामान्य खादी-केन्द्रका चित्र:** सामान्य खादी-केन्द्र कैसा होना चाहिये, अिसका वर्णन गांधीजीने अिस तरह किया है:

> "खादी-केन्द्रको शब्दके प्रत्येक अर्थमें स्वच्छ होना चाहिये, तभी वह अुपयोगी हो सकता है। अुसके और अिस विशाल संघटनके दूसरे घटकोंमें जो सम्बन्ध है वह सर्वथा आध्यात्मिक और नैतिक है। अिसलिअे प्रत्येक खादी-केन्द्र अेक सहकारी मंडली है। ओटनेवाले, धुनने-वाले, कातनेवाले, बुननेवाले और खरीदनेवाले अिस मंडलीके सदस्य हैं और वे सब सेवा तथा पारस्परिक सद्भावनाके बन्धनोंसे अेक-दूसरेके साथ बंधे हुअे हैं।"†
>
> **खादी-संघटन अेक सेवा-संस्था है:** "खादी स्वराज्य-प्राप्तिका सरल साधन है, तो भी हमें अपनी खादी संस्थाओंको सिर्फ आर्थिक प्रवृत्तिके रूपमें ही चलाना है। अैसी संस्थाओंमें लोकशाहीका तत्त्व अेक अमुक अंशमें ही दाखिल किया जा सकता है। लोकशाहीमें संघर्ष और प्रतिस्पर्धाके लिअे भी स्थान होता है, किन्तु आर्थिक संस्थामें यह बात कहां चल सकती है? व्यापारके क्षेत्रमें क्या हम अलग अलग दलों या परस्पर-विरोधी पक्षोंकी कल्पना कर सकते हैं? अगर अैसा हो तो सारा व्यापार ही अस्तव्यस्त हो जाय। फिर खादीकी संस्थायें

---

* हरिजन, २१–९–'३४

\+ यंग अिंडिया, ८–१२–'२१

× यंग अिंडिया, १०–६–'२६

† वही

तो महज आर्थिक संस्थायें नहीं हैं; अिससे बढ़कर वे पारमार्थिक संस्थायें भी हैं। अुनका अुद्देश्य किसी भी प्रकारके स्वार्थ-साधनका नहीं किन्तु लोकहित-साधनका है। हमारी खादी संस्थाओंका ध्येय तो जनताके प्रेय-साधनका नहीं, किन्तु अुसके 'श्रेय-साधन' का है। अिसलिअे रोज रोज बदलते हुअे लोकमतसे स्वतंत्र रहकर भी अुसे कितनी ही बार अपना काम चलाना पड़ेगा। अिन संस्थाओंको व्यक्तियोंकी महत्त्वाकांक्षा पोसनेका साधन तो बनना ही नहीं चाहिये।"*

**खादी और राजनीतिक संघटन :** "खादी और राजनीतिक संघटन दो अलग अलग वस्तुयें हैं और बिलकुल अलग अलग रखी जानी चाहिये। अिस बातमें गलतफहमीके लिअे कोअी स्थान नहीं है। खादीका अुद्देश्य मानव-सेवा है, लेकिन जहां तक भारतका सम्बन्ध है अुसका राजनीतिक असर भी जरूर होगा और बहुत ज्यादा होगा।" +

खादीकी अेक आनुषंगिक विशेषता यह थी कि वह जन-सम्पर्कका साधन थी। अिसलिअे यदि खादीके द्वारा लोगोंका आलस्य दूर किया जा सके, तो यह आशा रखी जा सकती थी कि वे अुनकी बात ध्यानसे सुनेंगे, जो अुनके पास अुनकी जीविकाका साधन लेकर पहुंचते हैं। खादीके प्रचारका कार्यक्रम कार्यान्वित करते हुअे तो यही ठीक था कि अुद्देश्य शुद्ध मानव-सेवाका ही हो यानी आर्थिक हो और अुसमें किसी तरहका राजनीतिक हेतु न हो। खादीके द्वारा लोगोंको, जिस संस्थाका अुन्होंने खुद ही निर्माण किया हो, आवश्यकता होने पर, अुसके खिलाफ सविनय भंगकी कला सिखाअी जा सकती थी। यह कला सीखनेके बाद ही वे अुस चीजको सफलतापूर्वक अमान्य कर सकते थे, जिसका वे अहिंसक रीतिसे नाश करना चाहते हों। ×

**अहिंसाका प्रतीक :** चरखा हमें सारी जनताकी भलाअी करनेवाला राज्य दिलायेगा। वह गांवोंको राष्ट्रकी अर्थ-रचनामें अुनका अुपयुक्त स्थान देता है और अूंच-नीचका भेदभाव मिटाता है। सन् १९१९ में भारतकी स्वतंत्रताके प्रेमियोंको अहिंसा और चरखेका संदेश मिला और अुन्हें यह बताया गया कि अहिंसा ही स्वराज्यका अेकमात्र साधन है और चरखा अहिंसाका प्रतीक है। अहिंसाका चरखेके सिवा कोअी दूसरा साधन नहीं है। चरखेके सार्वत्रिक प्रचारके बिना अहिंसाकी मूर्त अभिव्यक्ति संभव नहीं है। ÷

---

* हरिजनसेवक, २६–१०–'३४

\+ मॉडर्न रिव्यू, अक्तूबर १९३५।

× वही

÷ हरिजन, १३–४–'४०

अहिंसा पर आधारित समाज वैसे समुदायोंका ही बना हुआ हो सकता है, जो गांवोंमें रहते हों और जो स्वेच्छापूर्ण सहयोगके द्वारा मनुष्यको शोभा देनेवाला शान्तिपूर्ण जीवन बिताते हों।*

**स्वातंत्र्योत्तर युगमें खादीका स्थान :** स्वातंत्र्योत्तर युगमें खादीका कोअी स्थान है या नहीं, यह अेक अुपयुक्त सवाल है। अिस सवालका गांधीजीने निम्नलिखित जवाब दिया था :

"खादी अहिंसाके आधार पर खड़ी अेक जीवन-पद्धतिको प्रगट करती थी और करती है। सही हो या गलत, मेरी यह राय है कि खादी और अहिंसाके करीब करीब लोप हो जानेसे यह साबित होता है कि अिन तमाम वर्षोंमें हमने खादीके मुख्य गूढ़ार्थको अच्छी तरह नहीं समझा था। अिसलिअे कअी दिशाओंमें हम भाअी भाअीकी लड़ाअी और अराजकताका दुःखद दृश्य देख रहे हैं। मुझे कोअी शंका नहीं कि कातना और खादीका बुनना पहलेसे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है, यदि हमें अैसी आजादी लेनी है जिसे भारतकी ग्रामीण जनता अंतःस्फूर्तिसे महसूस कर ले। यही अिस धरती पर अीश्वरका राज्य या रामराज्य कहा जायगा। खादीके द्वारा हम मनुष्य पर शक्ति द्वारा संचालित यंत्रोंका आधिपत्य स्थापित करनेके बजाय यंत्रों पर मानवकी प्रभुता स्थापित करनेकी कोशिश कर रहे हैं। खादीके द्वारा हम श्रम पर पूंजीकी धृष्ट विजयके स्थान पर पूंजीको श्रमके अधीन बनानेका प्रयत्न कर रहे हैं। अिसलिअे यदि भारतमें पिछले तीस सालमें की गअी कोशिश प्रतिगामी कदम नहीं था, तो हाथ-कताअी और अुसके साथ लगी हुअी सब बातोंको पहलेसे कहीं ज्यादा जोरसे और ज्यादा बुद्धिके साथ आगे बढ़ाना चाहिये।"×

**खादी ग्रामोद्योगोंका मध्यबिन्दु है :** "खादी केन्द्रीय सूर्य है और दूसरे ग्रामोद्योग ग्रहोंकी तरह अुसके चारों ओर घूमते हैं। अुनका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। अिसी तरह खादी भी दूसरे अुद्योगोंके बिना नहीं जी सकती। वे पूरी तरह परस्परावलम्बी हैं। सच तो यह है कि हमें गांवोंवाला भारत या शहरोंवाला भारत — अिन दोमें से अेकका चुनाव कर लेना है। गांव तबसे हैं जबसे भारत देश है; शहरोंको विदेशी आधिपत्यने पैदा किया है। आज तो शहरोंका बोलबाला है और वे गांवोंको अिस तरह चूस रहे हैं कि गांव जर्जर होकर नष्ट होते जा रहे हैं। मेरी खादी-मनोवृत्ति मुझे बताती है कि जब यह आधिपत्य

---

* हरिजन, १३–१–'४०

× हरिजन, २१–१२–'४७

नहीं रहेगा, तब शहरोंको गांवोंकी मातहती करनी होगी।... गांवोंका शोषण स्वयं अेक संगठित हिंसा है। अगर हम चाहते हैं कि स्वराज्यका निर्माण अहिंसाके आधार पर ही हो, तो हमें गांवोंको अुनका अुचित स्थान देना पड़ेगा। यह हम कभी नहीं कर सकेंगे, यदि हम देशी या विदेशी शहरी कारखानोंमें तैयार हुअी चीजोंके बजाय ग्रामोद्योगकी वस्तुओंका अुपयोग करके ग्रामोद्योगोंका पुनरुद्धार नहीं करेंगे।" *

अब यह बात स्पष्ट हो जायगी कि गांधीजी खादी और अहिंसाको अभिन्न क्यों मानते थे। खादी मुख्य ग्रामोद्योग है। खादीका नाश हो जाय तो अुसके साथ गांवोंका और अहिंसाका नाश अनिवार्य हो जायगा। यह बात आंकड़ोंसे सिद्ध नहीं की जा सकती। अिसका प्रमाण तो हमारी आंखोंके सामने मौजूद है।×

## अन्य ग्रामोद्योग

**रचनात्मक कार्योंकी आवश्यकता :** सन् १९३३ के अंतिम और १९३४ के प्रारंभिक दिनोंमें गांधीजीका चलाया हुआ सविनय अवज्ञा आन्दोलन अपने सर्वोच्च बिन्दुको पार कर चुका था और देशभरमें कांग्रेस-जन यह सोच रहे थे कि अब क्या होगा। अैसा मालूम होता था कि जेलसे बाहर जो लोग रह गये थे वे सब किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गये थे। यों तो गांधीजी रचनात्मक कार्य पर हमेशा जोर देते ही थे, किन्तु अिस समय अुन्हें अुसकी आवश्यकताका जैसा भान हुआ वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। बेशक रचनात्मक कार्य, सन् १९२० में कांग्रेसका जो कार्यक्रम तैयार हुआ था, अुसका अभिन्न अंग बन गये थे। लेकिन चूंकि अुनमें बाहरी तड़क-भड़कका अभाव था, अिसलिअे वे अुपेक्षाके शिकार हो गये थे। लेकिन सविनय अवज्ञा आन्दोलनको सफल बनाना हो, तो राष्ट्रका काम रचनात्मक कार्य किये बिना नहीं चल सकता था। अगर प्रत्येक नागरिक स्वराज्यकी अिमारतके निर्माणमें रचनात्मक प्रवृत्तिके द्वारा अपना-अपना हिस्सा देना सीख ले और अुसका महत्त्व समझने लगे, तो क्षितिज पर फिलहाल प्रकाशका कोअी चिह्न न होते हुअे भी निराश होनेका कोअी कारण नहीं रहेगा। अिसलिअे सन् १९३४ में गांधीजीने अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघकी स्थापना की। अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघका अुद्देश्य भारतके मरते हुअे ग्रामोद्योगोंको पुनः जीवित करना था।

**ग्रामोद्योग खादीके पूरक :** ग्रामोद्योगोंका दर्जा खादीसे अलग है। अुनमें स्वेच्छापूर्वक किये जानेवाले कामके लिअे ज्यादा स्थान नहीं है। अुनमें से

---

* हरिजन, २०–१–'४०

× वही

प्रत्येकमें काम करनेवालोंकी अेक सीमित संख्या ही समा सकती है। अुनका महत्त्व खादीके लक्ष्यमें सहायक पूरक अुद्योग होनेमें है। वे खादीके बिना नहीं ठहर सकते और अुनके अभावमें खादी अपनी शान खो देगी। गांवकी अर्थ-रचना हाथ-पिसाअी, हाथ-कुटाअी, साबुन-साजी, कागज, दियासलाअी, चमड़ेका काम, तेलघानी आदि आवश्यक ग्रामोद्योगोंके बिना सम्पूर्ण नहीं हो सकती। यदि मांग हो तो अिसमें शक नहीं कि हमारे गांव हमारी अधिकांश जरूरतोंकी पूर्ति कर सकते हैं। *

## अुद्योग और खेती

**सच्चा सामाजिक अर्थशास्त्र:** सच्चा सामाजिक अर्थशास्त्र हमें यह सिखाता है कि मालिक और मजदूर अेक ही अखंड शरीरके दो हिस्से हैं। अुनमें से कोअी भी अेक दूसरेसे बड़ा या छोटा नहीं है। अुनके हित अेक-दूसरेके विरोधी नहीं बल्कि समान और अन्योन्याश्रित हैं। ×

**मालिकोंके कर्तव्य:** मालिकसे क्या अपेक्षा है? पहली अपेक्षा तो यह है कि वह अपने सब कार्योंमें पूरी अीमानदारीका पालन करे। व्यापार पूरी अीमानदारीके साथ चलाना कठिन तो है, पर असंभव नहीं है। हां, यह बात सही है अीमानदारीके द्वारा बहुत ज्यादा पैसा कमाना संभव नहीं है। +

व्यापारमें बेअीमानी क्षम्य नहीं मानी जानी चाहिये। विशुद्ध अीमानदारीका सिद्धान्त जैसा जीवनके दूसरे क्षेत्रोंको लागू है वैसा ही अिस क्षेत्रके लिअे भी वह आवश्यक है और व्यापारीको चाहिये कि अुसे कितना ही नुकसान क्यों न हो रहा हो वह अपने सिद्धान्तकी हत्या न करे। ÷

अिस बातमें दो मत नहीं हो सकते कि दूसरे व्यापारियोंकी तरह मिल-मालिकोंको भी अपने मजदूरों और दूसरे कर्मचारियोंके कल्याणमें माता-पिता जैसी दिलचस्पी लेना चाहिये। अुनके सम्बन्ध मात्र मालिकों और सेवकोंके नहीं होने चाहिये। †

कअी मालिक अैसा समझते हैं कि अपने कामगारोंके प्रति अुनका कर्तव्य अुनकी भौतिक आवश्यकतायें पूरी कर देना है, अुससे अधिक कुछ नहीं। अिसी तरहके विचार रखनेवाले किसी चाय-बागानोंके मालिकने अेक बार गांधीजीको बिन-मांगी सलाह देते हुअे यह लिखा था कि वे असहयोग

* कन्स्ट्रक्टिव्ह प्रोग्राम (१९४१), पृ० ११।

× यंग अिंडिया, ३–५–'२८

\+ हरिजन, २८–७–'४६

÷ हरिजन, १३–३–'३७

† यंग अिंडिया, ३–५–'२८

आंदोलन स्थगित कर दें और मजदूरोंकी दशा सुधारनेके लिअे कानूनका आश्रय लें। अुसके बारेमें गांधीजीने यह लिखा था :

"लेखक जिस स्वभावका प्रतिनिधित्व करता है अुसके नमूने मैंने नेटालमें और यहां चम्पारनमें, दोनों जगह, देखे हैं। अुसका हेतु शुभ है लेकिन अुसे नहीं मालूम कि वह अेक सहृदय या दयालु पशुपालमात्र है, अुससे अधिक कुछ नहीं। अेक बार यह स्वीकार कर लिया जाय कि मनुष्योंके साथ पशुओं जैसा व्यवहार किया जा सकता है, तो कितने ही यूरोपीय व्यवस्थापकोंको पशुओंके साथ किया जानेवाला निर्दयताका व्यवहार रोकनेका ध्येय रखनेवाली संस्थाओंकी ओरसे योग्यताका प्रमाणपत्र दिया जा सकता है। मैं अपने अनुभवसे जानता हूं कि निःशुल्क दवा, निःशुल्क डॉक्टरी सेवा, निःशुल्क आवास आदि सब अैसी युक्तियां मात्र हैं, जिनका अुद्देश्य 'कुली' को हमेशा गुलाम बनाये रखना है। मेरी रायमें अगर अुसे अपने कामका पूरा पारिश्रमिक दिया जाय और घर तथा दवा आदिका मूल्य अुससे वसूल किया जाय, तो वह आजकी अपेक्षा कहीं ज्यादा स्वतंत्र होगा।"*

गांधीजीकी रायमें डॉक्टरी सहायता आदिकी सुविधायें मुफ्त नहीं दी जानी चाहिये। अलबत्ता, अैसी व्यवस्था जरूर होनी चाहिये कि सुविधायें अुन्हें तत्काल और सस्ते दामोंमें मिल सकें। मुफ्त दी जानेवाली सहायता जिन्हें यह सहायता दी जाती है अुनके स्वाभिमानको नष्ट कर देती है। अिसके सिवा, अैसी सहायता कभी तो भावना-शून्य मनसे दी जाती है और कभी लेनेवाले अुसका दुरुपयोग करते हैं। तो यह जरूरी है कि अिन दोनों बुराअियोंका निराकरण हो और लोगोंको अुनसे बचाया जाय।×

**मजदूरोंके अधिकार और कर्तव्य :** मजदूरोंके अधिकार और कर्तव्य क्या हैं? यह समझनेमें कोअी कठिनाअी नहीं होना चाहिये कि अुन्हें अुतनी अूंचीसे अूंची मजदूरी पानेका अधिकार है जितनी कि अुद्योग अपनी शक्तिके अनुसार दे सकता हो। और अुनका कर्तव्य यह है कि वे अपनी मजदूरीके अेवजमें अपनी पूरी योग्यताके अनुसार काम करें।+

मजदूर जो चीज चाहते हैं और जो अुन्हें मिलनी चाहिये वह मात्र रोटियां नहीं हैं। असलमें वे समान दरजेके स्वमानी नागरिकोंकी हैसियतसे सभ्योचित जीवन चाहते हैं, मनुष्यकी हैसियतसे न्याय चाहते हैं, अरक्षाके भयसे त्राण चाहते हैं। अिसके सिवा अुन्हें स्वच्छ और आरोग्यकी दृष्टिसे

---

* यंग अिंडिया, २९-६-'२१

× यंग अिंडिया, ३-५-'२८

+ स्पीचेज़ अेंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १०४५।

अुपयोगी आदतें सीखनेकी, मितव्ययिता और अुद्योगपरायणता आदि गुणोंका विकास करनेकी तथा शिक्षाप्राप्तिकी आवश्यकता है।* अुन्हें संस्कारवान वनना चाहिये और अपने आचरणमें आदर्श पवित्रता और ओमानदारी प्रगट करना चाहिये। और अिसके लिअे अुनमें अखंड अुद्योग, आत्मत्याग और धैर्यके साथ तथा वुद्धिपूर्वक श्रम करनेकी शक्ति होनी चाहिये।

**कामकी परिस्थितियां :** गांधीजीने मजदूरोंके हिताहित पर प्रभाव डालनेवाले दूसरे कओी सवालों — जैसे मजदूरोंके चुनावमें भ्रष्टाचारकी वुराओी, कामके घंटे, अुनकी सुरक्षितता, स्वास्थ्य, आवासकी व्यवस्था आदि — पर भी विचार किया है, अुनके सम्वन्धमें लेख लिखे हैं। अुन्होंने 'सरदारों' के जरिये मजदूरोंके चुनावकी प्रथाकी निंदा की। अुन्होंने कहा कि मजदूरोंका चुनाव सरदारोंके यानी अैसे दलालोंके जरिये हो जिनका अुद्देश्य मजदूरोंको किसी भी तरह भर देना होता है, तो मजदूरोंको अिकरार (कान्ट्रेक्ट) की स्वतंत्रता नहीं रहती। दलाल नौकरीकी अिच्छा रखनेवाले आदमीके सामने कारखानेकी नौकरीकी वहुत वढ़िया तसवीर पेश करता है और अिस तरह अुसे अपना गांव छोड़नेके लिअे लुभाता है; लेकिन अंतमें जव नौकरी स्वीकार करनेके वाद अुस आदमीको वस्तुस्थितिका पता चलता है तो वह वहुत निराशा अनुभव करता है। जव तक आसपास वहीं अैसे गरीव लोग हों जो वेकार हैं और काम चाहते हैं, तव तक वाहरसे मजदूर लाना गलत है।×

अुन्होंने कामके घंटे – जो अुस समय वहुत ज्यादा थे – कम करनेके लिअे भी कहा। दुनियाका अनुभव वताता है कि कामके घंटे ज्यादा होनेसे काम ज्यादा नहीं होता वल्कि कम ही होता है।+ जिन्हें ज्यादा घंटे काम करना पड़ता है अुन्हें वौद्धिक और नैतिक विकासके लिअे कोओी समय नहीं मिलता। अिसमें कोओी आश्चर्य नहीं कि अुनकी दशा पशुकी जैसी हो जाती है।÷ अिस अत्यन्त जरूरी सुधारको स्वेच्छापूर्वक कर डालनेके लिअे केवल थोड़ेसे साहस और आरम्भ-शक्तिकी ही जरूरत है। मालिक लोग अुसे अुदारतापूर्वक खुद न करेंगे तो वह आगे-पीछे होनेवाला है ही। लेकिन अगर वह दवावके परिणामस्वरूप होगा तो अुसमें शोभा नहीं होगी। मजदूरोंके कामके घंटे कम होने चाहियें, यह अेक जगद्-व्यापी आन्दोलन है जिसे कोओी रोक नहीं सकता।† सन् २० के अपने अेक भाषणमें गांधीजीने अहमदावादके मिल-

---

* हरिजन, २९–९–'४६

× यंग अिंडिया, २–९–'२६

+ यंग अिंडिया, २२–१०–'२५

÷ यंग अिंडिया, २८–४–'२०

† यंग अिंडिया, २२–१०–'२५

||२८

मालिकोंसे कामके घंटे १२ से १० करनेके लिअे और मजदूरोंसे १० घंटेमें ही १२ घंटे जितना काम कर देनेका आग्रह किया था।*

अेक दूसरी बुराअी जिसके कारण अमुक वर्गके मजदूरोंको बहुत कष्ट भोगना पड़ता है हदसे ज्यादा मेहनतवाला काम करनेकी है। रिक्शा खींचनेका काम करनेवालोंके बारेमें यह बात खास तौर पर सही है। अुन्हें मर्यादाके बाहर अितनी सख्त मेहनत करनी पड़ती है कि वे चार छह सालमें ही हृदय अथवा फेफड़ेके रोगके शिकार हो जाते हैं और मर जाते हैं। यह बात अुन्होंने अेक पार्वतीय नगरमें रिक्शा खींचनेवाले मजदूरोंकी दशाका अध्ययन करनेके बाद कही थी। अुन्होंने कहा था, मुझे आश्चर्य होता है कि रिक्शाका अुपयोग करनेवाले अितने निष्ठुर कैसे हो जाते हैं कि अुन्हें यही दिखाअी नहीं देता कि रिक्शा-चालकोंको हदसे ज्यादा कठोर परिश्रम करना पड़ता है।×

**बालकों द्वारा मजदूरी :** अुन्होंने अिस बातकी हिमायत की कि कारखानोंमें मजदूरोंके तौर पर लिये जानेवाले बालकोंकी अुम्र बढ़ा दी जाय।+

> "छोटे छोटे बालक स्कूलोंसे अुठा लिये जायें और अुन्हें पैसा कमानेके लिअे मजदूरीके काममें लगा दिया जाये — यह वस्तु राष्ट्रीय पतनकी निशानी है। कोअी भी राष्ट्र अपने बालकोंका अैसा दुरुपयोग नहीं कर सकता। यदि वह अैसा करे तो अपने राष्ट्र-पदके अयोग्य ठहरेगा। कमसे कम सोलह वर्षकी अुम्र तक तो बालकोंको स्कूलोंमें रहनेका अवसर मिलना ही चाहिये।"÷

**सुरक्षितता :** अपने अेक लेखमें अुन्होंने अिंग्लैंडकी सरकार कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंकी सुरक्षितताका जैसा ध्यान रखती है अुसकी प्रशंसा की थी। न केवल गंदे अथवा हानिकर धंधोंमें लगे हुअे मजदूरोंकी सुरक्षाकी बल्कि जनताकी सुरक्षाकी योग्य व्यवस्थाके लिअे भी जो अुपाय किये जाने चाहिये अुन्हें ढूंढ़ निकालनेमें खूब सावधानी रखी गअी है। भारतमें हरिजनोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारके साथ अिस बातकी तुलना करते हुअे अुन्होंने अिस लेखमें कहा था कि भारतकी आबहवामें मैले और गंदे कामोंमें लगे हुअे तथाकथित अछूतोंकी सुरक्षाके लिअे और अैसा काम करनेवालोंकी छूतसे जनताकी सुरक्षाके लिअे अिंग्लैंडमें जितना ध्यान दिया जाता है अुससे भी ज्यादा ध्यान देनेकी जरूरत है। अैसे ध्यानके अभावमें ये मजदूर धूल और

---

* यंग अिंडिया, २८–४–'२०

× हरिजन, १६–६–'४६

\+ यंग अिंडिया, २५–७–'२९

÷ यंग अिंडिया, २८–४–'२० और ५–५–'२०

गंदगीके जीवित वाहन वन जायेंगे।* मेहतरोंकी सुविधा और सुरक्षाके लिअे अुन्होंने अैसे नियम वनानेको कहा कि अुन्हें अमुक प्रकारके अैसे वर्तन और झाडू आदि दिये जायें जिससे अुन्हें गंदगीका हाथसे स्पर्श करनेकी जरूरत न रहे। अिसके सिवा अुन्हें अैसी सादी पोशाक भी दी जानी चाहिये जिसे वे कामके समय पहिनें। चालू पद्धतिका नतीजा यह होता है कि काम कमसे कम होता है, अस्वच्छता ज्यादासे ज्यादा होती है और साथ ही रिश्वत चलती है, भ्रष्टाचार फैलता है और सम्वद्ध लोग अशिष्टता सीखते हैं। अिसलिअे निरीक्षकों या अधिदर्शकोंको (अिंस्पेक्टरों या ओवरसियरोंको) स्वच्छताके अिस मानवोपयोगी कामको दूसरोंसे किसी भी तरह करा लेनेके वजाय खुद करनेकी तालीम मिलना चाहिये।×

**निर्धारित अल्पतम श्रेणीके घरोंकी व्यवस्था:** औद्योगिक प्रतिष्ठान ३० से लगाकर ४०% तकका मुनाफा घोषित करते हैं, लेकिन अपने सवसे कम वेतन पानेवाले कर्मचारियोंके लिअे वे घरकी कोअी सुविधा नहीं देते। कअी जगह तो ये लोग, जो मालिकोंको अुनका मुनाफा कमाकर देते हैं, विलकुल अंधेरी और गंदी कोठरियोंमें रहते हैं। कअी म्युनिसिपैलिटियां भी अपने कम वेतन पानेवाले कर्मचारियोंकी आवास-सम्वन्धी जरूरतोंके वारेमें अेकदम अुपेक्षाका व्यवहार करती हैं। अिस सम्वन्धमें अुन्होंने अिस वातका आग्रह किया कि अविवाहित, विवाहित और वाल-वच्चेवाले लोगोंके लिअे अमुक अल्पतम श्रेणीके घरोंकी व्यवस्था होनी ही चाहिये। मालिकोंको कर्मचारियोंकी यह प्राथमिक जरूरत अवश्य ही पूरी करनी चाहिये।+

**वेतन:** वेतनके सवाल पर लिखे गये गांधीजीके लेखोंमें वहुत थोड़े ही अैसे हैं जिनमें अहमदावादके कपड़ा-अुद्योग जैसे किसी वड़े अुद्योगमें प्रचलित वेतन-दरोंके वारेमें विचार किया गया हो। अिस विषयसे सम्वद्ध वाकीके लेखोंमें हाथ-कताअी तथा अन्य गृह-अुद्योगोंमें अल्पतम वेतन या वेतनोंके मानीकरणकी चर्चा है।

अहमदावादके कपड़ा-अुद्योगमें वेतनोंके झगड़े पर अपना निर्णय देते हुअे निर्णायकने यह सिद्धान्त पेश किया था कि जहां मजदूरको अितना वेतन नहीं मिलता जिससे वह समुचित जीवन-मानका निर्वाह कर सके, वहां अुसे अपने मालिकसे वेतनको अुस हद तक वढ़ानेके लिअे कहनेका अधिकार है।÷ गांधीजीने निर्णायकके अिस साहसपूर्ण निर्णयका स्वागत किया था। मजदूरी

* हरिजन, १–४–'३३

× हरिजन, ६–१०–'४६

+ हरिजन, ११–७–'३६

÷ यंग अिंडिया, १२–१२–'२९

करके अपना पेट पालनेवाले अिन लाखों-करोड़ोंके साथ न्याय करनेके लिअे हमें अुन्हें अैसा वेतन देना ही चाहिये जिससे अुनका निर्वाह हो जाये। हमें अुनकी असहायताका लाभ नहीं अुठाना चाहिये।* सच तो यह है कि यदि कोअी अुद्योग यह अल्पतम जीवन-वेतन न दे सकता हो, तो अुसे अपनी दुकान अुठा लेनी चाहिये।×

यह अल्पतम वेतन अितना अवश्य होना चाहिये कि (१) मजदूरोंको अैसा संतुलित, पर्याप्त और पोषक आहार मिल जाय,+ जिससे आदमी रोज आठ घंटा अच्छी तरह काम कर सकने जितना सशक्त वना रहे, (२) अुसे पर्याप्त कपड़ा मिलता रहे, और (३) ज्यादा अच्छा घर और दूसरी सामान्य सुविधायें मिलती रहें।÷

हाथ-कताअीवालोंके लिअे अल्पतम मजदूरी तय करनेका विरोध कुछ लोगोंने अिस आधार पर किया था कि कतवैये खुद कम मजदूरीके पक्षमें अपना मत देंगे और किसी भी हालतमें कतवैयेकी मजदूरी किसानकी मजदूरीसे अधिक नहीं होना चाहिये।† अिनमें से पहली दलील तो वही है जो सव शोपक और अत्याचारी दिया करते हैं। दूसरी दलीलके जवावमें गांधीजीका यह कहना था कि किसानकी मजदूरी जैसी कोअी चीज नहीं है और किसानकी हालतको दूसरोंकी हालत कैसी होना चाहिये अिसका मानदण्ड (स्टैन्डर्ड) नहीं माना जा सकता। किसानको तो अपनी जमीनसे अितना भी नहीं मिलता कि वह भरपेट खा सके या अपनी जमीनका पूरा लगान भी चुका सके।‡ अखिल भारत चरखा-संघ और अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघ जैसी जन-हितकारी संस्थायें सस्ता खरीदने और महंगा वेचनेकी व्यापारिक नीतिका अनुसरण नहीं कर सकतीं। कारण, अुनका अुद्देश्य ग्रामोद्योगकी वस्तुओंका सस्ता अुत्पादन नहीं वल्कि वेरोजगारीसे पीड़ित गांववालोंको जीवन-वेतन दे सकनेवाला काम देना है।§ अिसलिअे मानदण्ड तो अुसी वेतनको माना जा सकता है जिससे किसानको अपनी रोजी-रोटी मिल जाये। अिससे कुछ भी कम देनेकी कोशिश गुनाह-जैसी ही है।⊕

* हरिजन, १३–७–’३५
× हरिजन, ३१–८–’३५
+ हरिजन, १६–१–’३७
÷ यंग अिंडिया, १२–१२–’२९
† हरिजन, १४–९–’३५
‡ वही
§ हरिजन, १३–७–’३५
⊕ हरिजन, १४–९–’३५

गांधीजीके सामने सबसे कठिन सवाल हाथ-कताओ और दूसरे ग्रामोद्योगोंके लिअे अल्पतम राष्ट्रीय वेतन निर्धारित करनेका था। और अुन्होंने अन्तमें यह निर्णय किया कि आठ घंटे डटकर काम करनेका मेहनताना आठ आना होना चाहिये। आठ घंटेके कामका अर्थ अच्छी योग्यतावाले कारीगरके द्वारा अुतने समयमें तैयार किया गया माल माना गया।*

अिसके सिवा अुन्होंने यह भी तय किया कि बिहारके कतवैयेको गुजरातके कतवैयेसे कम मजदूरी देनेका कोअी कारण नहीं है। अिसमें सन्देह नहीं कि जीवन-मानमें अन्तर होनेके कारण अलग-अलग प्रान्तोंमें चीजोंके दामोंमें अन्तर है। लेकिन अखिल भारत चरखा-संघ परिस्थितियोंको अुनके मौजूदा रूपमें स्वीकार करनेके लिअे बाध्य नहीं है। यदि वे अन्यायमूलक हैं, तो संघको चाहिये कि वह अुन्हें बदले।×

यह याद रहे कि सन् ३० और ४० के दरमियान गांवके कारीगरके लिअे आठ आने रोजकी मजदूरी नगण्य नहीं थी। अुस समय कारखानोंमें काम करनेवाले मजदूरोंको जो अल्पतम वेतन मिलता था अुससे यह अधिक ही थी, कम नहीं। अिस निश्चयके अनुसार अखिल भारत चरखा-संघने तीन-चार सालके अंदर कताअीकी मजदूरी क्रमशः बढ़ाकर आठ आना प्रतिदिन करनेकी कोशिश की। लेकिन संघ अपने अिस प्रयत्नमें सफल नहीं हुआ। गांधीजीने अिस विषय पर लिखते हुअे निम्नलिखित विचार प्रगट किये थे:

> "सामान्यतः गांवोंमें कहीं भी ग्रामीण मजदूरों अथवा कारीगरोंको आठ घंटेके कामके लिअे आठ आने नहीं मिलते। कतवैयेको तब तक आठ आने प्रतिदिन देना संभव नहीं होगा, जब तक कि दूसरे वर्गोंके मजदूरोंको अितना ही नहीं मिलने लगता। और जब तक परिस्थितियां बिलकुल बदल नहीं जातीं, तब तक खरीदनेवाले वर्गोंके पास अितना पैसा ही नहीं है कि वे सब किस्मके मजदूरोंको आठ आना रोज दे सकें। सेना पर होनेवाला अत्यंत भारी और अनुत्पादक खर्च देशको अेकदम तबाह कर रहा है। अिसके सिवा बड़े अधिकारियोंको दिये जानेवाले और देशके बाहर खर्च होनेवाले बड़े वेतनों और अुसी अनुपातमें बड़ी पेंशनों पर होनेवाला व्यय भी अेक कारण है। अिस बढ़ती हुअी गरीबीके कअी दूसरे आन्तरिक कारण भी हैं।"÷

ये सब कारण अपने-आपमें महत्त्वपूर्ण तो हैं, लेकिन आठ आना प्रतिदिनकी मजदूरीका लक्ष्य क्यों असफल हो गया अिस बातको वे पूरी तरह

* हरिजन, १३–७–'३५
× हरिजन, ६–७–'३५
÷ हरिजन, २६–८–'३९

नहीं समझाते। पहले लिखे गये अेक लेखमें अुन्होंने अेक दूसरी महत्त्वपूर्ण बातका अुल्लेख किया था, जो कि अिस लक्ष्यकी असफलताका मुख्य कारण थी। यह बात थी — खादीके शास्त्रका अज्ञान। गांवोंमें जो चरखा चल रहा था वह अुत्पादनका सक्षम (efficient) साधन नहीं था और अिसलिअे वह कातनेवालोंको संतोषप्रद कमाअी नहीं दे सकता था। यह स्थिति आज भी कायम है। यही कारण है कि अखिल भारत खादी बोर्डको गम्भीर विचारके बाद अिस निर्णय पर आना पड़ा कि चरखेकी कार्यक्षमता बढ़ाना चाहिये। अुसने चरखेका अेक सुधरा हुआ रूप चलाया है जिसकी आजकल देशभरमें फैले हुअे दो सौ पचाससे भी ज्यादा केन्द्रोंमें जांच हो रही है। यदि यह प्रयोग सफल हो जाता है, तो हाथ-कताअी भविष्यमें टिकेगी और बढ़ेगी तथा गांव-वालोंके लिअे अभी भी आशा और आश्वासन देती रह सकेगी।

हरअेक मजदूरको निश्चित अल्पमत मजदूरी देनेके बाद मजदूरोंकी कुशलताके अनुसार अुनकी मजदूरीमें फर्क होना चाहिये या नहीं होना चाहिये? हम पहले ही देख चुके हैं कि गांधीजी कुशल कारीगरको ज्यादा मजदूरी देनेके खिलाफ नहीं थे। लेकिन वे अैसे विचारहीन फर्कोंको जरूर मिटा देना चाहते थे जिनका मूल मात्र अैतिहासिक कारणोंमें है और जिनका मौजूदा परिस्थितियोंमें कोअी औचित्य नहीं रह गया है। कताअीके अेक घंटेके परिश्रमका मूल्य बुनाअीके अेक घंटेके परिश्रमके मूल्यसे कम क्यों होना चाहिये? सादी बुनाअीके बनिस्बत अुतने ही समयकी कताअीकी मजदूरी कम होनेका कोअी कारण नहीं है। सादी बुनाअी अेक यांत्रिक प्रक्रिया है जब कि सादीसे सादी कताअीमें हाथकी चतुराअीकी जरूरत होती है। फिर भी कतवैयेको प्रतिघंटा अेक पाअी मिलती है जब कि बुनकरको छह पाअी मिलती हैं। धुनकरको भी कतवैयेसे ज्यादा मिलता है — लगभग अुतना ही जितना बुनकरको। अिस परिस्थितिके अैतिहासिक कारण हैं। लेकिन कारण अैतिहासिक हों अिसलिअे वे न्याय्य नहीं हो जाते। अिसलिअे चरखा-संघ पर यह कर्तव्य आ पड़ा कि वह अपने सभी मजदूरों, कारीगरों आदिकी मजदूरी समान कर दे। अिसका अर्थ यह हुआ कि यदि बुनकर स्वेच्छापूर्वक समान वेतन लेना स्वीकार न करें, तो अुनसे अपना वेतन-मान कम करनेका अनुरोध किया जाय। यदि हरअेक प्रकारके अुत्पादक परिश्रमकी मजदूरी समान ही होना चाहिये, यह सिद्धान्त सही है तो अिस आदर्शके जितना संभव हो अुतने पास पहुंचनेकी कोशिश होनी ही चाहिये।*

**कानूनकी मर्यादायें:** मजदूरोंकी स्थिति सुधारनेके विविध अुपायोंमें कानून भी अेक है, लेकिन कानूनकी अपनी मर्यादायें हैं। जनमतसे आगे बढ़कर

* हरिजन, ६–७–'३५

जो कानून बनाया जाता है वह अकसर निकम्मा साबित होता है। जब तक मालिक मजदूरोंको अपने परिवारका सदस्य मानना नहीं सीख लेते या जब तक मजदूरोंको अपने अधिकार समझने और अुन्हें हासिल करनेके अुपाय जाननेकी तालीम नहीं दी जाती, तब तक मजदूरोंके लिअे अपनी स्थिति सुधारना संभव नहीं होगा। *

**मजदूरोंमें जागृतिकी आवश्यकता :** आज पूंजी श्रमका नियंत्रण करती है, क्योंकि पूंजीवालोंको अेकताकी कला आती है।+ मजदूरोंको अपनी स्थिति सुधारनेके लिअे कोशिश करना सीखना चाहिये। अुन्हें अिस सत्यको समझ लेना है कि मूल्यवान धातुओंकी तरह श्रम भी पूंजी ही है। यह खयाल गलत है कि धातुके टुकड़े या अुत्पन्न मालकी अमुक मात्रा ही पूंजी है। धातुके सिक्केकी तरह श्रम भी धन है। यदि पूंजीमें शक्ति है तो श्रममें भी शक्ति है। दोनोंमें से प्रत्येकका अुपयोग निर्माणके लिअे भी किया जा सकता है और नाशके लिअे भी। दोनों अेक-दूसरे पर निर्भर हैं। ज्यों ही मजदूरको अपनी शक्तिका भान हो जायेगा, त्यों ही वह पूंजीपतिका गुलाम होनेके बजाय अुसका सहकारी और सहभागी बन जायगा। अपनी शक्तिका यह भान अुसे अहिंसाके जरिये ही हो सकता है। मजदूरोंके बड़े समुदायको अैसी तालीम देना बेशक अेक धीमी प्रक्रिया है। लेकिन चूंकि अुसकी सफलता निश्चित है अिसलिअे वही सबसे जल्दीवाली भी है।×

**क्या मजदूर-वर्ग असहाय है ? :** मजदूरोंका यह खयाल कि मालिकोंके सामने वे बिलकुल असहाय हैं अेक अैसा भ्रम है जिसका कोअी आधार नहीं है।÷ अगर मजदूरोंको यह मालूम हो जाय कि विचारपूर्ण संघटन और तालीमके जरिये वे अपने लिअे क्या कर सकते हैं, तो अुन्हें समझमें आ जायगा कि जिस तरह मैनेजर और शेयर-होल्डर आदि कारखानेके मालिक हैं अुसी तरह वे भी अुसके मालिक हैं।† मजदूरोंने अपनी बुद्धिका विकास नहीं किया, सोचना-समझना नहीं सीखा; अिसलिअे वे मालिकोंसे डरकर गुलामीका जीवन जीते हैं या फिर चिढ़कर पूंजीपतियोंकी सम्पत्तिको — मशीनरीको और मालको — नुकसान पहुंचाते हैं, यहां तक कि अुन्हें मार डालनेमें विश्वास करने लगते हैं। लेकिन हिंसाका रास्ता अुन्हें नहीं बचा सकता। मजदूरोंमें जब आपसमें सहयोग करनेकी बुद्धि आ जायगी, तब वे पूंजीको सम्मानपूर्ण

---

* यंग अिंडिया, २९–६–'२१

\+ हरिजन, ७–९–'४७

× यंग अिंडिया, २६–३–'३१ और हरिजन, २५–६–'३८

÷ हरिजन, ३–७–'३७

† हरिजन, १३–६–'३६

सहायताके आधार पर अपना सहयोग प्रदान करेंगे। ज्यों ही मजदूर शिक्षित और संघटित होंगे और अपनी शक्तिको समझ लेंगे, त्यों ही पूंजी — असका प्रमाण कुछ भी क्यों न हो — अुन्हें दबानेमें असमर्थ हो जायगी। संघटित और शिक्षित मजदूर मालिकोंको अपनी मांगें माननेके लिअे बाध्य कर सकते हैं।

**मजदूर अपना अुचित दर्जा कैसे पा सकते हैं?:** मजदूर अपना अुचित दर्जा कैसे पा सकते हैं? निस्सन्देह अिस दिशामें पहली आवश्यकता अपने संघ बनाकर आपसकी अेकता साधनेकी है। लेकिन अनुभव बतलाता है कि यदि अिसके साथ साथ कुछ दूसरी शर्तें पूरी न की जायें, तो संघ बन्धनका कारण बन सकता है। ये शर्तें अिस प्रकार हैं:

(अ) हरअेक आदमीको अैसा समझना चाहिये कि वह अपने साथी-मजदूरोंके कल्याणका ट्रस्टी है। अुसे अपना स्वार्थ नहीं देखना चाहिये। परिस्थितियां कितनी भी गंभीर और अुकसानेवाली क्यों न हों अुसे हमेशा अहिंसक रहना चाहिये।

(ब) अगर अुसे सच्चे अर्थमें मनुष्य बनना है और अपना मनुष्योचित गौरव प्राप्त करना है, तो अुसे शराब, जुआ और अिसी तरहके दूसरे दुर्व्यसन छोड़ देना चाहिये। शराबका व्यसन हमारी आत्माको कलुषित कर देता है। अुसे संयमका जीवन जीना चाहिये और विवाहकी पवित्रताकी रक्षा करना चाहिये। अैसी कम मजदूरी पर, जिससे नीतिके प्राथमिक नियमोंका पालन करना भी असंभव हो जाय, काम करना स्वीकार करनेके बजाय यह बेहतर होगा कि वह भूखों मरना पसंद करे।*

मजदूरोंको अपने संघोंका अुपयोग जितना बाहरसे होनेवाले आक्रमणोंसे अपनी रक्षा करनेके लिअे करना चाहिये, अुतना ही अपने आंतरिक सुधारके लिअे भी करना चाहिये। अपने घर, अपना शरीर, मन और आत्माको स्वच्छ और पवित्र रखनेके लिअे जिस हद तक ज्यादा वेतन और कामके कम घंटे सहायक हो सकते हैं अुस हद तक अुन्हें ज्यादा वेतन मिलना चाहिये और कामके घंटे कम होने चाहिये। लेकिन यदि ज्यादा वेतन पाने और कामके घंटे कम करवानेमें यह अुद्देश्य न हो, तब तो अिस तरहकी कोशिश पापपूर्ण होगी।×

अपने अधिकारों और प्राप्य सुविधाओंके लिअे आग्रह करना बिलकुल अुचित है, लेकिन अुसके साथ ही यह भी अुतना ही जरूरी है कि हम हरअेक अधिकारके साथ जुड़े हुअे कर्तव्यको समझें। दुनियामें अैसा कोअी अधिकार नहीं है जिसके साथ कोअी कर्तव्य संलग्न न हो। पर्याप्त मजदूरी, मजदूरोंके साथ मालिकोंके सद्व्यवहार, स्वच्छ तथा स्वास्थ्यप्रद आवास आदि पर जोर देना

---

* डी० जी० तेन्दुलकर, महात्मा, खंड २, पृ० ३९३।

× यंग अिंडिया, ५–८–'२०

ठीक है, लेकिन यह भी समझ लेना चाहिये कि मजदूर मालिकोंके कामको अपना काम मानें और अुसे पूरा ध्यान देकर औमानदारीके साथ करें।*

**अहिंसक लड़ाओकी तालीम :** दुर्भाग्यवश हमारे किसानों और मजदूरोंमें से अधिकांशको अहिंसक लड़ाओकी तालीम नहीं मिली है। अुन्हें लगातार अुत्तेजनाकी स्थितिमें रखा जाता है और दूसरोंके बहकावेमें आकर अुन्होंने अैसी आशायें पालना शुरू कर दिया है जो अहिंसक लड़ाओ होने पर ही पूरी हो सकती हैं। समुचित तालीमके द्वारा किसानों और मजदूरों, दोनोंको ही प्रभावपूर्ण अहिंसक लड़ाओके लिअे तैयार किया जा सकता है। अुन्हें अितना ही समझानेकी जरूरत है कि यदि वे सही ढंगसे संघटित हो जायं, तो अपनी श्रम-शक्तिके रूपमें अुनके पास पूंजीपतियोंकी अपेक्षा कहीं ज्यादा धन और साधन-सम्पत्ति है। बात यह है कि पैसेके बाजार पर पूंजीपतियोंका नियंत्रण है। किन्तु श्रमके बाजार पर मजदूरोंका कोओ नियंत्रण नहीं है। अगर मजदूर-वर्गके चुने हुअे नेताओंने मजदूरोंकी समुचित सेवा की होती, तो अुन्हें अभी तक अहिंसाकी तालीमसे प्राप्त होनेवाली अनिवार्य शक्तिका भान हो गया होता। अिसके बजाय होता यह है कि अकसर मजदूरोंको मालिकोंसे अपनी मांगें बरबस स्वीकार करानेके लिअे हिंसक अुपायोंका आश्रय लेना सिखाया जाता है। सामान्यतः मजदूरोंको आजकल जो तालीम मिलती है वह अुनका अज्ञान दूर नहीं करती। अिसका परिणाम यह होता है कि वे अपने अधिकारोंकी प्राप्तिके लिअे हिंसाको ही अन्तिम साधन मानना सीखते हैं।×

**आदर्श मजदूर-संघ :** गांधीजीने अहमदाबादके मजदूरोंका संघटन किया था। अुनकी रायमें अहमदाबादके कपड़ा मिल-मजदूरोंका संघ अपने प्रकारकी अैसी आदर्श संस्था है, जिसका भारत-भरमें अनुकरण किया जा सकता है।

> "वह शुद्ध अहिंसाकी बुनियाद पर खड़ा किया गया है। अपने अब तकके कार्यकालमें अुसे कभी पीछे हटनेका मौका नहीं आया। बिना किसी तरहका शोरगुल, धांधली या दिखावा किये ही अुसकी ताकत बराबर बढ़ती गयी है। अुसका अपना अस्पताल है। मिल-मजदूरोंके बच्चोंके लिअे अुसके अपने मदरसे हैं, बड़ी अुमरके मजदूरोंको पढ़ानेके क्लास हैं, अुसका अपना छापाखाना और खादी-भंडार है, और मजदूरोंके रहनेके लिअे अुसने घर भी बनवाये हैं। अहमदाबादके करीब करीब सभी मजदूरोंके नाम मतदाताओंकी सूचीमें दर्ज हैं और चुनावमें वे पुरअसर तरीकेसे हाथ बटाते हैं। कांग्रेसकी स्थानीय प्रदेश कमेटीके

---

* डी० जी० तेन्दुलकर, महात्मा, खंड २, पृ० ३९३–९४।

× हरिजन, २९–७–'३९

कहनेसे अहमदावादके मजदूरोंने मतदाताके नाते अपने नाम दर्ज करवाये थे। यह मजदूर-संघ कांग्रेसकी दलबन्दीवाली राजनीतिमें कभी शरीक नहीं हुआ। शहरकी म्युनिसिपैलिटीकी नीति पर संघवालोंका असर पड़ता है। संघ अब तक अनेक हड़तालोंको अच्छी सफलताके साथ चला चुका है और ये सब हड़तालें पूरी तरह अहिंसक रही हैं। यहांके मजदूरों और मालिकोंने अपने आपसी झगड़े मिटानेके लिअे ज्यादातर अपनी राजी-खुशीसे पंचकी नीतिको स्वीकार किया है।"*

गांधीजी कहते थे कि यदि मेरी चले तो भारतमें जितनी मजदूर-संस्थायें हैं, अुनका नियमन अहमदावादके मजदूर-संघको आदर्श मानकर अुसके अनुसार ही करूं। अिस मजदूर-संघके द्वारा वे पूंजी और श्रमके बीचमें अुठनेवाले सवालोंको अहिंसाके द्वारा हल करनेका प्रयत्न कर रहे थे।×

**चम्पारनका किसान-आन्दोलन :** जो लोग गांधीजीकी किसानोंका संघटन करनेकी पद्धति जानना चाहते हैं अुन्हें चम्पारनके किसान-आन्दोलनका अध्ययन करना चाहिये। भारतमें सत्याग्रहका पहला प्रयोग अिसी आन्दोलनमें किया गया था। "चम्पारनका आन्दोलन आम जनताका आन्दोलन बन गया था और वह शुरूसे लेकर आखिर तक पूरी तरह अहिंसक रहा था। अुसमें कुल मिलाकर कोअी बीस लाखसे भी ज्यादा किसानोंका सम्बन्ध था। सौ साल पुरानी अेक खास तकलीफको मिटानेके लिअे यह लड़ाअी छेड़ी गयी थी। अिसी शिकायतको दूर करनेके लिअे पहले कअी खूनी बगावतें हो चुकी थीं। किसान बिलकुल दबा दिये गये थे। मगर अहिंसक अुपाय वहां छह महीनोंके अन्दर पूरी तरह सफल हुआ।"+

**दूसरे किसान-आन्दोलन :** "अिनके सिवा खेड़ा, बारडोली और बोरसदमें किसानोंने जो लड़ाअियां लड़ीं, अुनके अध्ययनसे भी पाठकोंको लाभ होगा। किसान-संगठनकी सफलताका रहस्य अिस बातमें है कि किसानोंकी अपनी जो तकलीफें हैं, जिन्हें वे समझते हैं और बुरी तरह महसूस करते हैं, अुन्हें दूर करनेके सिवा दूसरे किसी भी राजनीतिक हेतुसे अुनके संघटनका दुरुपयोग न किया जाय। किसी अेक निश्चित अन्यायको या शिकायतके कारणको दूर करनेके लिअे संगठित होनेकी बात वे झट समझ लेते हैं। अुनको अहिंसाका अुपदेश करना नहीं पड़ता। अपनी तकलीफोंके अेक कारगर अिलाजके रूपमें वे अहिंसाको समझकर अुसे आजमा लें और फिर अुनसे कहा जाय कि

* रचनात्मक कार्यक्रम (१९५९), पृ० ४६।
× यंग अिंडिया, १४-१-'३२
+ रचनात्मक कार्यक्रम (१९५९), पृ० ४३।

अुन्होंने जिसे आजमाया है वही अहिंसक पद्धति है, तो वे फौरन ही अहिंसाको पहचान लेते हैं और अुसके रहस्यको समझ जाते हैं।" *

**मजदूर-संघकी नीतिका आधार-स्तम्भ :** अहिंसामें विश्वास रखनेवाली प्रत्येक मजदूर-संस्थाको अपनी नीतिके निश्चयमें अपनी सत्य और न्यायकी भावनाका अनुसरण करना चाहिये, सस्ती प्रसिद्धि पानेके आकर्षणका नहीं। यदि अुसे अिस बातका पूरा विश्वास है कि वह सही रास्ते पर चल रही है तो वह अुसे छोड़ेगी नहीं, दूसरे लोग चाहे जो करें या न करें। अुदाहरणके लिअे, वह हड़तालोंकी योजना राजनीतिक हेतु या प्रयोजनकी सिद्धिके लिअे नहीं करेगी, अपने सदस्योंकी सामाजिक या आर्थिक स्थिति सुधारनेके लिअे ही करेगी।

## हड़तालें

**सन् १९१८ की स्मरणीय हड़ताल :** गांधीजी संघटित हड़तालोंके विशेषज्ञ थे। अिस क्षेत्रमें अुन्होंने पहला प्रयत्न दक्षिण अफ्रीकामें अत्यंत विपरीत परिस्थितियोंमें किया था और यह प्रयत्न सफल हुआ था। सन् १९१८ की अहमदाबादकी हड़तालमें अुन्होंने हड़तालकी अपनी कार्य-प्रणालीमें और सुधार किया। अपने अनुभवके आधार पर वे कह सकते थे कि हड़तालें अिस तरह संघटित की जा सकती हैं कि अुनकी सफलता किसी प्रकार टाली ही न जा सके। ×

यह हड़ताल अिक्कीस दिन तक चली थी। अिस बीचमें गांधीजीने हड़तालियोंके पथ-प्रदर्शनके लिअे अनेक पत्रिकायें निकाली थीं। ये पत्रिकायें मजदूरोंकी न्याय्य मांगोंके लिअे लड़ी जानेवाली लड़ाअीकी अहिंसक कार्य-प्रणालीकी सर्वांगपूर्ण हाथ-पोथी कही जा सकती हैं। यह हाथ-पोथी अुन घटनाओंका निर्देश करती है जिनके परिणामस्वरूप आगे चलकर मिल-मालिकोंने तालाबन्दी घोषित कर दी और मजदूरोंने यह प्रतिज्ञा ली कि वे तब तक काम पर वापिस नहीं जायेंगे, जब तक कि अुनकी मांगें मंजूर नहीं कर ली जातीं। अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिअे हड़तालियोंको कैसा व्यवहार करना चाहिये, अपनी बेकारीके वक्तका अुपयोग अुन्हें किस तरह करना चाहिये, संघके नेता मजदूरोंको अुनकी प्रतिज्ञाके पालनमें क्या सहायता दे सकते हैं — अिन सब सवालोंके बारेमें अिन पत्रिकाओंमें विस्तृत सूचनायें हैं। अुनमें अिस प्रश्नकी चर्चा है कि न्याय क्या है; अुनमें दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहियोंकी वीरताकी कहानियां हैं और अुनमें हड़तालियोंको यह बताया गया है कि कठिनाअियों

* रचनात्मक कार्यक्रम (१९५९), पृ० ४४।

× हरिजन, २०–४–'४०

और प्रलोभनोंसे लड़ते हुअे वे अपनी निष्ठा और अपने मनोबलकी रक्षा कैसे कर सकते हैं। अन्तमें अुनमें सत्याग्रहकी अुस अद्‌भुत विजयका वर्णन है, जिसमें दोनों पक्षोंकी जीत हुअी।

**सफल हड़तालकी शर्तें :** अुन्होंने सफल हड़तालकी सात शर्तें बताअी हैं :

१. हड़तालका कारण न्यायपूर्ण होना चाहिये और वाजिब शिकायतके बिना कोअी हड़ताल नहीं होनी चाहिये। *

२. हड़तालियोंमें व्यावहारिक सहमति होना चाहिये। ×

"हड़तालियोंकी मांगें और मांगोंको स्वीकार करनेके लिअे काममें लिये गये अुपाय, दोनों न्यायपूर्ण और स्पष्ट होने चाहिये। यदि मांगके पीछे पूंजीपतियोंकी स्थितिसे लाभ अुठानेका हेतु है, तो वह मांग अनुचित है।" + हड़तालियोंको हड़ताल छेड़नेसे पहले अेक अपरिवर्तनीय न्यूनतम मांग निश्चित कर लेना चाहिये और अुसकी घोषणा कर देना चाहिये। ÷ सन् १९१८ की अपनी हड़तालमें अहमदाबादके मजदूरोंने जो प्रतिज्ञा ली थी, अुसकी पहली धारामें ही यह स्पष्ट कर दिया गया था कि वे अपने काम पर तब तक वापिस नहीं जायेंगे, जब तक अुनके वेतनमें ३५% वृद्धि न हो जाय। ३५% वृद्धिकी मांग मजदूरों और अुनके नेताओंने आपसमें काफी चर्चाके बाद अुचित ठहरायी थी।

३. हड़तालियों और अुनके नेताओंमें पूरी पूरी सहमति होनी चाहिये। †

भारतके मजदूरोंके नेता दो प्रकारके हैं — अेक वे जो मजदूरोंमें से ही अूपर आये हैं, दूसरे बाहरवाले जो मजदूरोंमें से आये हुअे नेताओंको सलाह देते हैं और अुनका मार्गदर्शन करते हैं। नेताओंकी अिन दोनों श्रेणियों और मजदूरोंमें जब तक पूरी पूरी सहमति नहीं होगी तब तक मजदूरोंकी लड़ाअियां विफल ही होती रहेंगी। ‡

४. हिंसा नहीं होनी चाहिये। ⊕

५. हड़तालमें शामिल न होनेवाले या हड़तालका द्रोह करनेवाले मजदूरोंके साथ कोअी दुर्व्यवहार नहीं होना चाहिये। ⊛

---

* यंग अिंडिया, २२–९–'२१

× यंग अिंडिया, १६–२–'२१

+ यंग अिंडिया, २८–४–'२०

÷ यंग अिंडिया, २२–९–'२१

† स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १०४५।

‡ वही

⊕ यंग अिंडिया, १६–२–'२१

⊛ वही

हड़ताल मजदूरोंकी अपनी प्रेरणासे होनी चाहिये; अुसके लिअे किसी प्रकारके अनुचित अुपायोंका आश्रय न लिया जाय। यदि अुसकी योजना लोगों पर किसी तरहका दवाव डाले विना की जाय, तो अुसमें गुंडाशाही या लूट-मारके लिअे कोअी अवकाश नहीं होगा। अैसी हड़तालमें हड़तालियोंमें परस्पर पूरा पूरा सहकार होगा। हड़ताल शांतिपूर्ण होनी चाहिये और अुसमें कहीं भी शक्तिका प्रदर्शन नहीं होना चाहिये।* जिन्हें हड़ताल-द्रोही माना गया हो अुन पर किसी तरहका दवाव नहीं डाला जाना चाहिये। साथी-मजदूरों पर अैसा कोअी दवाव डाला जायगा तो अुससे अुलटा हड़तालियोंका ही नुकसान होगा।×

"परन्तु आप पूछ सकते हैं कि दगावाजोंका क्या किया जाय? दुर्भाग्यसे वेवफा मजदूर तो हमेशा ही रहेंगे। परन्तु मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप अुनसे लड़ाअी न करें, बल्कि अुन्हें समझायें और अुनसे कहें कि अुनकी नीति संकुचित है, जब कि आपकी नीतिमें सारे मजदूरोंका हित समाया हुआ है। संभव है वे आपकी बात न सुनें। अुस सूरतमें आपको अुन्हें वरदाश्त करना चाहिये, न कि अुनसे लड़ना चाहिये।"+ अहमदावादमें सन् १९१८ की हड़तालके समय मजदूरोंने जो प्रतिज्ञा ली थी, अुसकी अेक शर्त यह थी कि वे किसी प्रकारका कोअी अुपद्रव नहीं करेंगे। मार-पीट, चोरी, मालिककी सम्पत्तिको नुकसान पहुंचाना, गाली-गलौज करना आदि दुष्कृत्योंसे दूर रहेंगे और अुनका व्यवहार शांतिपूर्ण होगा। यदि हड़ताल अुचित है तो जिस संस्थाके खिलाफ अुसका संघटन किया गया हो अुस संस्थाके हड़तालके द्रोहियोंको प्रश्रय देने अथवा हड़तालियोंको दवानेके लिअे दूसरे आक्षेपार्ह अुपायोंका अवलंबन करने पर संस्थाकी निंदा की जानी चाहिये।÷

६. हड़तालियोंको हड़तालके दिनोंमें अपने पालन-पोषणके लिअे जनताके चन्दे पर, दान† पर, भीख‡ पर या अपने संघके कोष पर निर्भर नहीं होना चाहिये।§

अगर हड़ताली मजदूर जनताके चन्देसे या अपने संघके कोष आदिसे आर्थिक सहायताकी अुम्मीद करते हों, तो वे अपनी हड़तालको अनिश्चित

---

* हरिजन, २–६–'४६

× स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १०४५।

+ हरिजन, ७–११–'३६

÷ हरिजन, ३१–३–'४६

† यंग अिंडिया, २२–९–'२१

‡ आत्मकथा (अंग्रेजी), भाग पांच, प्र० २०; १९४८।

§ यंग अिंडिया, १६–२–'२१

काल तकके लिअे नहीं लम्बा सकते। और जो हड़ताल अनिश्चित काल तक न लम्बाअी जा सकती हो अुसकी सफलता अनिवार्य नहीं हो सकती।*

७. हड़ताल कितनी भी लंबी चले हड़तालियोंको दृढ़ रहना चाहिये। अिसके लिअे हड़तालियोंमें या तो अपने बचाकर रखे पैसेसे या किसी अुपयोगी और अुत्पादक अस्थायी धंधेमें लगकर अपना निर्वाह करनेकी शक्ति होनी चाहिये।×

"मिल-मजदूरोंके जीवनमें सदा अुतार-चढ़ाव आते ही रहते हैं। किफायत और मितव्यय बेशक अिसका अेक अुपाय है और अुसकी अवहेलना करना अपराध होगा। परंतु अिस प्रकार की गअी बचतसे बहुत मदद नहीं मिलती, क्योंकि हमारे मिल-मजदूरोंमें से अधिकांशको मुश्किलसे गुजर चलानेके लिअे भी सतत संग्राम करना पड़ता है। अिसके अतिरिक्त किसी मजदूरका हड़ताल या बेकारीके दिनोंमें घर पर बेकार बैठे रहनेसे कभी काम नहीं चलेगा। मजबूरन् बेकार रहनेसे अधिक अुसके साहस और स्वाभिमानको हानि पहुंचानेवाली कोअी और वस्तु नहीं होती। मजदूर-वर्गको तब तक कभी सुरक्षितता अनुभव नहीं होगी और अुसमें आत्म-विश्वास और बलकी भावनाका तब तक विकास नहीं होगा, जब तक कि अुसके सदस्योंके पास जीविकाके अेकसे अधिक अचूक साधन नहीं होंगे।" +

**हड़तालियोंको अपने समयका अुपयोग किस तरह करना चाहिये :**

गांधीजीने जितनी भी हड़तालें चलायीं अुन सबमें अुन्होंने अेक नियमके पालनका आग्रह अवश्य रखा। नियम यह था कि हड़तालियोंको अपने निर्वाहके लिअे अपने ही अूपर निर्भर रहना चाहिये और अलग-अलग अथवा सहकारपूर्वक मिल-जुलकर कुछ न कुछ काम जरूर करना चाहिये। हड़तालकी सफलताका रहस्य अिसी बातमें है; और अिससे हड़तालियोंको आवश्यक तालीम भी मिलती है। अुन्हें समझ सकना चाहिये कि यदि अुनमें किसी अेक मालिककी नौकरी करने और अमुक वेतन कमानेकी योग्यता है, तो अुनका श्रम अिस लायक होना ही चाहिये कि अुन्हें वही वेतन अन्यत्र भी मिल सके। अिसलिअे हड़ताली अपना समय बेकार बितायें और सफल होनेकी अुम्मीद भी रखें, अैसा नहीं हो सकता।÷

---

* स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १०४५।

× यंग अिंडिया, १६-२-'२१ और २२-९-'२१; आत्मकथा (अंग्रेजी), भाग पांच, प्र० २०; १९४८।

\+ हरिजन, ३-७-'३७

÷ हरिजन, २-६-'४६ और स्पीचेज़ अेंड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा ...ंत्री, पृ० १०४५।

अहमदाबादके कपड़ा-मिल मजदूर-संघने सन् १९३७ में गांधीजीकी सूचनासे अेक प्रयोग शुरू किया था। अुसने अपने सदस्योंको मिलोंमें वे लोग जो काम करते थे अुसके अतिरिक्त अेक पूरक अुद्योगकी तालीम देना शुरू की थी। अुद्देश्य यह था कि तालाबन्दी, हड़ताल या नौकरी छूटनेकी स्थितिमें अुन्हें भूखों मरनेकी नौबत नहीं आयगी, अुनके पास हमेशा अिस नये अुद्योगका सहारा रहेगा।* अिस प्रयोगके कअी लाभप्रद परिणाम निकले हैं।

**जब हड़तालका अिलाज बेकार होता है:** "जब हड़तालियोंकी जगह लेनेके लिअे दूसरे मजदूर काफी हों, तब हड़तालका अिलाज बेकार होता है। अुस सूरतमें, अन्यायपूर्ण व्यवहार हो या नाकाफी मजदूरी मिले या अैसा ही और कोअी कारण हो तो त्यागपत्र ही अुसका अुपाय है।"+

बम्बअीमें सन् १९४६ में जलसेनाके सिपाहियोंके विद्रोह और मेहतरोंकी हड़तालके सिलसिलेमें हम अिस अिलाजकी अुपयुक्तता पर विचार करेंगे।

**सफलताके लिअे शर्तोंका पालन जरूरी:** "अुपरोक्त सारी शर्तें पूरी न होने पर भी सफल हड़तालें हुअी हैं। पर अिससे तो अितना ही सिद्ध होता है कि मालिक कमजोर थे और अुनका अन्तःकरण अपराधी था। हम अकसर बुरे अुदाहरणोंका अनुकरण करके भयंकर भूलें करते हैं। सबसे सुरक्षित बात यह है कि हम अैसे अुदाहरणोंकी नकल न करें जिनका हमें क्वचित् ही पूर्ण ज्ञान होता है, परंतु अैसी शर्तोंका अनुकरण करें जिन्हें हम सफलताके लिअे अत्यावश्यक जानते और मानते हैं।÷

**सहानुभूतिजन्य हड़तालें:** कभी कभी मजदूर लोग किसी दूसरे अुद्योगके मजदूरोंकी हड़तालमें, अुनके कष्टके साथ अपनी सहानुभूति प्रगट करनेके लिअे, खुद भी हड़ताल पर चले जाते हैं। गांधीजीका मत था कि भारतके मजदूरों और कारीगरोंमें राष्ट्रीय चेतनाका विकास अभी अुस हद तक नहीं हुआ है, जो सहानुभूतिमें की जानेवाली सफल हड़तालोंके लिअे जरूरी होता है। अिसमें दोष राजनीतिक नेताओंका है। अुन्होंने अिन वर्गोंकी आशाओं और आकांक्षाओंका अध्ययन नहीं किया है और न अुन्हें राजनीतिक स्थितिकी जानकारी करानेका कष्ट अुठाया है। अुन्होंने यह माना है कि जो हाअीस्कूलों और कालेजोंसे निकले हैं वे ही राष्ट्रीय कार्यमें भाग लेनेके योग्य हैं। अिसलिअे मजदूरों और कारीगरोंसे अकस्मात यह आशा करना अुचित नहीं है कि

---

* हरिजन, ३–७–'३७

+ यंग अिंडिया, १६–२–'२१

÷ वही

वे अपने अलावा दूसरोंके हितोंकी कद्र करेंगे और अुनके लिअे त्याग करेंगे। अिसलिअे राजनीतिक या किन्हीं दूसरे अुद्देश्योंके लिअे अुनका दुरुपयोग नहीं होना चाहिये।* ये शब्द गांधीजीने कोअी ३५ वरस पहले लिखे थे, जब कि राजनीति अवकाश-भोगी वर्गोंके मनोविनोदका साधन थी। गांधीजीने देशके राजनीतिक आन्दोलनका रंग ही बदल दिया है और मजदूर अपनी गहरी नींदसे जाग गये हैं। लेकिन अभी भी यह नहीं कहा जा सकता कि वे विकासकी अुस स्थितिमें पहुंच गये हैं, जहां वे अपने कार्योंके सारे फलितार्थ और परिणाम समझने लगे हों।

जल्दीमें सहानुभूतिजन्य हड़तालें समयसे पहले करानेका फल यह होगा कि हमारे कामको असीम हानि पहुंचेगी।× सहानुभूतिजन्य हड़तालें तब तक नहीं होनी चाहिये, जब तक यह अन्तिम रूपमें साबित न हो जाय कि संबंधित लोगोंने दुराग्रही और सहानुभूतिशून्य अधिकारियोंसे न्याय प्राप्त करनेके लिअे सब अुचित अुपाय आजमा लिये हैं।+ अैसी हड़तालोंका अुद्देश्य आत्मशुद्धि होना चाहिये। सहानुभूतिजन्य हड़तालकी विशेषता सहानुभूति रखनेवालों द्वारा अुठायी गयी असुविधा और कष्टमें है।÷

"शांतिपूर्ण हड़ताल अुन्हीं लोगों तक सीमित रहनी चाहिये जिन्हें वह कष्ट हो जो दूर कराना है। अुदाहरणके लिअे, मान लीजिये कि टिम्बकटूके दियासलाअी बनानेवालोंको अपनी स्थितिसे तो पूरा संतोष है, परंतु वहांके मिल-मजदूरोंको भूखों मारनेवाली मजदूरी मिलती है; अिसलिअे अुनकी हमदर्दीमें वे लोग हड़ताल करते हैं, तो दियासलाअी बनानेवालोंकी हड़ताल अेक किस्मकी हिंसा होगी। वे टिम्बकटूके मिल-मालिकोंका माल खरीदना बन्द करके अत्यंत कारगर ढंगसे मदद दे सकते हैं, और अुन्हें देनी चाहिये। तब अुन पर हिंसाका आरोप नहीं लग सकेगा। परंतु अैसे अवसरोंकी कल्पना की जा सकती है जब सीधे कष्ट न भोगनेवालोंका काम बन्द कर देना कर्तव्य हो जाय। अुदाहरणके लिअे, यदि अुपरोक्त दृष्टांतमें दियासलाअीके कारखानेके मालिक टिम्बकटूके मिल-मालिकोंसे मिल जायं, तो मिल-मजदूरोंसे मिल जाना दियासलाअीके कारखानेके मजदूरोंका स्पष्ट कर्तव्य हो जायगा। परंतु मैंने यह बात जोड़ देनेका सुझाव केवल दृष्टांतके तौर पर दिया है। आखिर तो हरअेक मामलेको अुसके अपने ही गुण-दोषसे जांचना

* यंग अिंडिया, २२–९–'२१

× वही

+ हरिजन, ११–८–'४६

÷ यंग अिंडिया, २२–९–'२१

पड़ेगा। हिंसा अेक सूक्ष्म बल है। अुसे सदा ही देख सकना आसान नहीं होता, भले ही आप अुसे महसूस करते रहें।"*

**मजदूरोंकी सबसे अच्छी सेवा:** मजदूरोंकी सबसे अच्छी सेवा यह होगी कि अुन्हें स्वावलम्बन सिखाया जाय, अुन्हें अुनके कर्तव्यों और अधिकारोंकी कल्पना करा दी जाय, अुन्हें अैसा तैयार कर दिया जाय कि वे अपनी न्यायपूर्ण शिकायतोंको खुद दूर करा सकें। अुसके बाद वे धीरे धीरे राजनीतिक, राष्ट्रीय या मानवीय सेवा करनेकी क्षमता खुद प्राप्त कर लेंगे।×

**राजनीतिक अुद्देश्योंके लिअे मजदूरोंका दुरुपयोग:** "और देशोंकी तरह भारतमें भी मजदूर-जगत अुन लोगोंकी दया पर निर्भर है, जो सलाहकार और पथप्रदर्शक बन जाते हैं। ये लोग सदा सिद्धान्तपालक नहीं होते, और सिद्धान्तपालक होते भी हैं तो हमेशा बुद्धिमान नहीं होते। मजदूरोंको अपनी हालत पर असंतोष है। असंतोषके लिअे अुनके पास पूरे कारण हैं। अुन्हें यह सिखाया जा रहा है, और ठीक सिखाया जा रहा है, कि अपने मालिकोंको धनवान बनानेका मुख्य साधन वे ही हैं। राजनीतिक स्थिति भी भारतके मजदूरोंको प्रभावित करने लगी है। और अैसे मजदूर-नेताओंका अभाव नहीं है जो समझते हैं कि राजनीतिक हेतुओंके लिअे हड़तालें कराअी जा सकती हैं।"+

गांधीजीका मत था कि अैसे अुद्देश्योंके लिअे मजदूर-हड़तालोंका अुपयोग करना गम्भीर भूल होगी। वे अिस बातसे अिनकार नहीं करते थे कि अैसी हड़तालोंसे राजनीतिक हेतु सिद्ध किये जा सकते हैं। पर अहिंसक असहयोगकी योजनामें अुनका समावेश नहीं हो सकता। यह समझनेके लिअे बुद्धि पर बहुत जोर डालनेकी जरूरत नहीं है कि जब तक मजदूर देशकी राजनीतिक स्थितिको समझ न लें और सबकी भलाअीके लिअे काम करनेको तैयार न हों, तब तक मजदूरोंका राजनीतिक अुपयोग करना बहुत ही खतरनाक बात होगी। अिसकी अुनसे अचानक आशा रखना कठिन है। यह आशा अुस वक्त तक नहीं रखी जा सकती, जब तक वे अपनी खुदकी हालत अितनी अच्छी न बना लें कि सभ्य तरीके पर जीवन व्यतीत कर सकें। अिसलिअे सबसे बड़ी सहायता मजदूर यह कर सकते हैं कि वे अपनी स्थिति सुधार लें, अधिक जानकार हो जायं, अपने अधिकारोंका आग्रह रखें और जिस मालके तैयार करनेमें अुनका अितना महत्त्वपूर्ण हाथ होता है अुसके

---

* यंग अिंडिया, १८–११–'२६

× यंग अिंडिया, २२–९–'२१

\+ यंग अिंडिया, १६–२–'२१

त अुपयोगकी भी मालिकोंसे मांग करें। मजदूर लोग ज्यों ज्यों ज्यादा
टित होंगे और देशके हितका तथा अपने हितका विचार करना सीखेंगे,
ं त्यों जिस मालके निर्माणमें वे अपने परिश्रमके द्वारा अितना ज्यादा हिस्सा
ते हैं अुसकी कीमतोंमें अुचित फेरफार करनेके लिअे आग्रह करेंगे और
रूरत हुअी तो अुसके लिअे लड़ेंगे। अैसा समय आना चाहिये — और
वह जितनी जल्दी आये अुतना अच्छा — जब कि मालिकोंके मुनाफे, मजदूरोंके
वेतनों और मालकी कीमतोंमें अुचित अनुपात रहेगा। अिसलिअे विकासकी
ठीक दिशा यह होगी कि मजदूर लोग अपना दर्जा बढ़ायें और आंशिक
मालिकोंका दर्जा प्राप्त करें। अतः हड़तालें मजदूरोंकी हालतके सुधारके
लिअे ही होनी चाहिये और जब अुनमें देशभक्तिकी वृत्ति पैदा हो जाय, तब
अपने तैयार किये हुअे मालकी कीमतोंके नियंत्रणके लिअे भी हड़ताल हो
सकती है।*

आर्थिक बेहतरीके लिअे होनेवाली हड़तालोंका कोअी राजनीतिक अुद्देश्य
हरगिज नहीं होना चाहिये। अिस तरहकी मिलावटसे राजनीतिक अुद्देश्य कभी
सफल नहीं होता और आम तौर पर हड़ताली विपत्तिमें पड़ जाते हैं। अैसी
हड़तालें तभी होनी चाहिये जब दूसरे सारे वैध अुपाय आजमा लिये गये
हों और अुनमें सफलता न मिली हो।×

**अहिंसक कार्रवाअीमें राजनीतिक हड़तालोंका स्थान:** राजनीतिक
हड़तालों पर अुनके ही गुण-दोषोंकी दृष्टिसे विचार होना चाहिये। आर्थिक
हड़तालोंके साथ अुन्हें न कभी मिलाना चाहिये और न अुनसे अिनका सम्बन्ध
जोड़ना चाहिये। अहिंसक कार्रवाअीमें राजनीतिक हड़तालोंका अेक निश्चित
स्थान होता है। वे गहरे सोच-विचारके बाद ही की जाती हैं, यों ही नहीं।
अैसी हड़तालें खुली होनी चाहिये और अुसमें गुंडाशाही नहीं होनी चाहिये।
अुनका परिणाम हिंसा हरगिज नहीं होना चाहिये।+ अैसी राजनीतिक हड़ताल
जिसका अुद्देश्य सरकारको ठप कर देना हो अेक अत्यंत अुग्र राजनीतिक
कदम है और यह कदम अुठानेका अधिकार अुसी संस्थाको  कता है
जो सारी जनताका प्रतिनिधित्व करती हो। मजदूरोंके संघोंको, वे कितने ही
बलशाली क्यों न हों, यह अधिकार नहीं हो सकता।†

**बम्बअीमें जल-सेनाके सैनिकोंका विद्रोह:** सन् १९४६ में बम्बअीमें
जल-सेनाके सैनिकोंने सरकारको ठप करनेकी कोशिश की थी। अुनका

* यंग अिंडिया, १६-२-'२१ और ११-८-'२१

× हरिजन, ११-८-'४६

\+ वही

† वही

अप्रकट अुद्देश्य ब्रिटिश अधिकारी भारतीय कर्मचारियोंके साथ जिस भेदभावकी नीतिका व्यवहार करते थे अुसके खिलाफ अपना असंतोष व्यक्त करनेका था, लेकिन अुनकी प्रगट घोषणा यह थी कि वे स्वतंत्रताकी लड़ाअी लड़ रहे हैं। गांधीजीने अिस विद्रोहको अेक अविचारपूर्ण हिंसक कार्य कहा था और अुसकी भर्त्सना की थी। वे नहीं चाहते थे कि कांग्रेस जिस भारतका प्रतिनिधित्व करती है अुसके बारेमें लोग यह कहें कि अेक ओर तो वह सारी दुनियासे स्वराज्यकी लड़ाअी अहिंसाके जरिये जीतनेकी बात करता है और दूसरी ओर अुसने अपने राजनीतिक जीवनके अेक नाजुक मौके पर अपने अिस वचनके खिलाफ कार्य किया। अुन्होंने जल-सेनाके भारतीय सदस्योंसे अहिंसक प्रतिरोधका रास्ता अपनानेकी सिफारिश की और बताया कि यह रास्ता ज्यादा गौरवयुक्त और वीरतापूर्ण है और यदि अेक संगठित समूहके द्वारा अपनाया जाय, तो पूर्णतः प्रभावकारी सिद्ध होता है। यदि विदेशियोंकी नौकरी अुनके लिअे या भारतके लिअे अपमानजनक है, तो वे अैसी नौकरी करते ही क्यों हैं? अुन्होंने अुन्हें नौकरी छोड़नेकी सलाह दी और बताया कि अहिंसक असहकारके अनुसार अुन्हें अैसा ही करना चाहिये।*

"लाला लाजपतरायकी अध्यक्षतामें हुअी १९२० की कांग्रेसके कलकत्ताके विशेष अधिवेशनमें जो प्रस्ताव पास किया गया था, अुसमें अहिंसक कार्रवाअीका पहला सिद्धान्त यह प्रतिपादित किया गया था कि हरअेक अपमानजनक वस्तुसे असहयोग किया जाय। यह याद रखना चाहिये कि शाही भारतीय जलसेना शासितोंके लाभके लिअे स्थापित नहीं की गयी थी। अुसमें लोग आंखें खोलकर गये थे। वहां खुला भेदभाव नजर आता है। जो नौकरी साफ तौर पर भारतको गुलाम बनाये रखनेके लिअे संगठित की गयी है, अुसमें जानेवाला अिस भेदभावसे बच नहीं सकता। वह अिस स्थितिमें सुधारके लिअे प्रयत्न कर सकता है, अुसे करना भी चाहिये। पर यह अेक हद तक ही मुमकिन है और यह विद्रोह द्वारा नहीं किया जा सकता। संभव है विद्रोह सफल हो जाय, परंतु यह सफलता विद्रोहियोंको और अुनके संबंधियोंको ही लाभ पहुंचा सकती है, सारे भारतको नहीं। और यह सबक बुरी विरासत होगी। अनुशासन स्वराज्यमें भी अुतना ही जरूरी होगा जितना आज है। सफल विद्रोहियोंके अधीन भारत लड़नेवाले दलोंमें विभक्त हो जायगा और आपसी लड़ाअीसे थक जायगा।"× अिसलिअे गांधीजीने अुन्हें यह सलाह दी कि वे बहादुरोंकी तरह अपनी नौकरियां छोड़ दें। अैसा करके वे कमसे कम अपने सम्मान और गौरवकी रक्षा अवश्य कर सकेंगे।

* हरिजन, ३–३–'४६

× हरिजन, १०–३–'४६

**मेहतरोंकी हड़ताल :** मेहतरोंको भी अुन्होंने अैसी ही सलाह दी थी। "भंगी अेक दिनके लिअे भी अपना काम नहीं छोड़ सकता।" * "कुछ मामले अैसे हैं जिनमें हड़तालें बेजा होती हैं। मेहतरोंकी शिकायतें अिस सूचीमें शामिल हैं। मेहतरोंकी हड़तालोंके विरुद्ध मेरी राय लगभग १८९७ से है जब मैं डरबनमें था। अुस समय वहां आम हड़तालका विचार किया गया और यह प्रश्न अुठा कि मेहतरोंको अुसमें शरीक होना चाहिये या नहीं। मेरा मत अिस प्रस्तावके विरुद्ध रहा। जैसे मनुष्य हवाके बिना नहीं रह सकता, वैसे ही अुसका घर और आसपासकी जगह साफ न हो तो वह बहुत दिन तक जिन्दा नहीं रह सकता। कोअी न कोअी संक्रामक रोग अवश्य फूट निकलता है, विशेषत: जब नालियोंकी आधुनिक व्यवस्था काम नहीं करती।"×

तो क्या भंगी गंदगी और कचरेमें सड़ते हुअे अुसी तनख्वाह पर काम करते रहें जिससे अुनका पेट भी नहीं भरता? "अैसी स्थितिमें अुचित अुपाय हड़ताल करना नहीं है, बल्कि आम जनताको और खास तौर पर नौकर रखनेवाली संस्थाको यह सूचना देना है कि अुन्हें अपना काम छोड़ देना पड़ेगा, क्योंकि अिस कामके करनेवालोंको जिन्दगीमें भूखों मरनेके सिवा कुछ नहीं मिलता। हड़ताल करनेमें और नौकरी बिलकुल छोड़ देनेमें बड़ा अन्तर है। हड़ताल कष्ट-निवारणकी आशामें अेक अस्थायी अुपाय होता है। नौकरी छोड़ देना अेक खास धन्धेको अिसलिअे बन्द कर देना है कि अुसमें राहत मिलनेकी कोअी आशा नहीं है। काम बन्द कर देनेका ठीक ढंग यह है कि अेक तरफ नोटिस काफी दिन पहले दिया जाय और दूसरी तरफ यह संभावना हो कि किसी दूसरे काममें अधिक मजदूरी और गंदगी तथा कचरेसे मुक्ति मिलेगी। अिससे समाज अपनी बेहयाअीकी नींदसे जाग अुठेगा और परिणाम यह होगा कि जनताकी विवेक-बुद्धि पर आज जो काअी जमी हुअी है वह साफ हो जायगी। अिस कदमसे अेक ही झटकेमें भंगियोंके कामको अेक सुन्दर कलाका दर्जा मिल जायगा और अुसे वह प्रतिष्ठा भी मिल जायगी जो बहुत पहले मिल जानी चाहिये थी।"+

**लोकोपयोगी सेवाके महकमोंमें हड़तालें :** गांधीजीकी यह राय थी कि लोकोपयोगी सेवाके महकमोंमें हड़तालें नहीं होनी चाहिये, क्योंकि अिनमें अव्यवस्था अुत्पन्न होनेसे सारा सार्वजनिक जीवन ही अव्यवस्थित हो जाता है। अलबत्ता, वे अैसा नहीं कहते थे कि अिन महकमोंमें नौकरी करनेवालोंको किन्हीं भी हालतोंमें गुलामोंकी तरह सेवा करते रहना चाहिये। वे कहते थे

---

* हरिजन, २१–४–'४६

× वही

+ हरिजन, २६–३–'४६

कि अैसे मामलोंमें अपने कष्टके निवारणके लिअे दूसरे अैसे अुपाय मौजूद हैं, जिनके खिलाफ कोअी आपत्ति नहीं अुठायी जा सकती।*

**अहिंसक हड़ताल :** हड़तालोंने आजकल अेक सार्वत्रिक बीमारीका रूप ले लिया है। भारतमें अुनका अेक विशेष अर्थ है। हम अेक अस्वाभाविक अवस्थामें रह रहे हैं। ज्यों ही ढक्कन खुलेगा और जगह पाकर स्वतंत्रताकी ताजी हवा अन्दर आयेगी, त्यों ही हड़तालोंकी संख्यामें और वृद्धि होगी। हड़तालोंके अिस फैले हुअे ज्वरका मूल कारण यह है कि यहां और सभी जगह — जीवन अपने आधारसे विचलित हो गया है। यह आधार था — धर्म। अब अिस धर्मका स्थान, जैसा कि अेक अंग्रेज लेखकने कहा है, 'नकद नारायण' ने ले लिया है। लेकिन अेक आदमीको दूसरेसे बांध रखनेके लिअे यह आधार बहुत कमजोर है। परंतु धार्मिक आधारके रहते हुअे भी हड़तालें तो होंगी, क्योंकि यह कल्पना नहीं की जा सकती कि धर्म सबके लिअे जीवनका आधार बन जायेगा। अिसलिअे अेक ओर शोषणके प्रयत्न होंगे और दूसरी ओर हड़तालें होंगी। परन्तु अुस समय ये हड़तालें शुद्ध अहिंसक ढंगकी होंगी। अैसी हड़तालोंसे कभी किसीकी हानि नहीं होगी।×

**हड़तालोंका दुरुपयोग :** हड़ताल न्यायकी प्राप्तिके लिअे मजदूरोंका स्वतःसिद्ध अधिकार है।+ हड़ताल बहुत बढ़िया अुपाय है, लेकिन अुसका दुरुपयोग कठिन नहीं है। मजदूरोंको मजबूत मजदूर-संघोंके रूपमें अपना संघटन करना चाहिये और अिन संघोंकी अनुमतिके बिना हड़ताल कदापि न करना चाहिये। हड़ताल करनेसे पहले मालिकोंके साथ समझौतेकी कोशिश अवश्य करना चाहिये। समझौतेकी चर्चा किये बिना हड़तालकी जोखिम अुठाना अुचित नहीं है।÷ समझौते पर पहुंचनेके जितने अुपाय हो सकते हैं, वे सब समाप्त हो जायं तभी हड़ताल करना अुचित होगा।† बेशक यदि मालिक लोग पंच-फैसला करवानेकी मांग नामंजूर कर दें, तो मजदूर हड़तालका आश्रय ले सकते हैं।‡

**जब हड़तालें अपराधरूप होती हैं :** ज्यों ही पूंजीपति पंच-फैसलेका सिद्धान्त स्वीकार कर लें, त्यों ही हड़तालें अपराधरूप मानी जानी चाहिये।§ झगड़ोंको निपटानेके लिअे निष्पक्ष न्यायालयका प्रस्ताव हमेशा स्वीकार कर लिया जाना

---

* हरिजन, १०–८–'४७

× हरिजन, २२–९–'४६

\+ यंग अिडिया, २८–४–'२०

÷ यंग अिडिया, ११–२–'२०

† हरिजन, ७–११–'३६

‡ वही

§ यंग अिडिया, २८–४–'२०

चाहिये। अुसका अस्वीकार कमजोरीका चिह्न है। दवाव अन्तमें अव्यवस्था ही अुत्पन्न करेगा। * मांगें पंचोंके समक्ष पेश कर दी जानी चाहिये। वे विलकुल अुचित हों तो भी वे तव तक हड़तालका कारण नहीं मानी जा सकतीं, जव तक कि पंच-फैसलेकी विधि पूरी न हो जाय। अेकाअेक की हुअी हड़ताल किसीको हुक्म देने-जैसा ही है और वह खतरनाक है।×

**अनुचित हड़तालें :** यह तो जाहिर ही है कि अैसी कोअी हड़ताल होनी ही नहीं चाहिये, जो विचार करने पर अुचित न ठहरे। किसी भी अन्याय-पूर्ण हड़तालको सफल नहीं होना चाहिये। अैसी हड़तालोंके प्रति जनताको तनिक भी सहानुभूति प्रगट नहीं करना चाहिये।+ जिस हड़तालके पीछे अुचित कारण न हों जनताको अुसकी स्पष्ट शब्दोंमें निन्दा करना चाहिये। अिसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि हड़ताली अपने काम पर वापिस चले जायेंगे।÷

**पंच-फैसला क्यों? :** पंच-फैसले या अदालती फैसलेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाय, तो सामान्यत: मजदूरों और मालिकोंके झगड़ेका मामला जनताके सामने आता ही नहीं है। यदि हड़तालके पीछे जनताके विश्वासपात्र निष्पक्ष व्यक्तियोंका समर्थन न हो, तो हड़तालके गुण-दोषोंका निर्णय करनेके लिअे जनताके पास और कोअी साधन नहीं होता। हड़ताली खुद अपने मामलेके गुण-दोषका निर्णय नहीं कर सकते। अिसलिअे या तो मामला अैसे पंचको सौंपा जाना चाहिये, जिसे दोनों पक्ष मंजूर करें, या फिर अदालती फैसला होना चाहिये।†

पूंजी और श्रममें मेल हो, वे अेक-दूसरेके प्रति सम्मानका भाव रखते हों और दर्जेकी समानता स्वीकार करते हों, तो हड़तालोंका होना नामुमकिन हो जाय।‡ ज्यों ज्यों मजदूर संघटित होते जायंगे हड़तालें वहुत कम होंगी।§ ज्यों ज्यों अिन संघटित मजदूरोंका मानसिक विकास होगा और वे अेक समूहके रूपमें काम करना सीखेंगे, त्यों त्यों अुनकी समझमें यह वात ज्यादा ज्यादा आयगी कि हड़तालके सिद्धान्तका स्थान पंच-फैसलेके सिद्धान्तने ले लिया है।⊕

---

* हरिजन, १२–५–'४६

× हरिजन, ७–२–'४६

+ हरिजन, ११–८–'४६

÷ हरिजन, ३१–३–'४६

† हरिजन, ११–८–'४६

‡ हरिजन, ३१–३–'४६

§ स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १०४५।

⊕ वही

"चूंकि मालिकों और मजदूरोंके बीचमें, बहुत अच्छी तरह चलाये जा रहे कारखानोंमें भी, कभी कभी मतभेद पैदा होते ही रहेंगे, अिसलिअे अैसे मतभेदोंको निपटानेके लिअे पंच-फैसलेकी पद्धति क्यों नहीं होनी चाहिये, ताकि दोनों पक्ष पंचोंके निर्णय पर अीमानदारीके साथ और तत्परतापूर्वक अमल करें?"*

**पंचोंका निर्णय दोनों पक्षोंको अनिवार्य रूपसे मान्य करना चाहिये :** मालिकों और मजदूरोंको शान्तिपूर्वक रहना हो तो अुनके बलवानसे बलवान संघटनको भी पंच-फैसलेका सिद्धान्त स्वीकार कर लेना चाहिये।× अेक बार पंच-फैसलेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया कि फिर दोनों पक्षोंको पंचोंका निर्णय स्वीकार करना ही चाहिये, भले वह अुन्हें पसंद आया हो या नहीं।+

**कुछ अनिवार्य शर्तें :** आज अैसी स्थिति है कि पूंजीपति मजदूरोंसे डरते हैं और मजदूर पूंजीपतियोंसे नाराज हैं। गांधीजी अेक तरफ डर और दूसरी तरफ नाराजीके अिस सम्बन्धकी जगह पारस्परिक विश्वास और सम्मानके भावकी स्थापना करना चाहते थे।† पंच-फैसलेकी पद्धति झगड़ा पैदा हो जाय तब अुसे सुलझा सकती है, किन्तु अुसका होना नहीं रोक सकती। अुस लक्ष्यको पाना हो तो हमें कुछ अनिवार्य शर्तोंका पालन करना होगा, जो अिस प्रकार हैं :

"१. मजदूरोंका वेतन, वेतनकी जिस दरको न्यूनतम माना गया हो, अुससे कम नहीं होना चाहिये। अिस न्यूनतम वेतनका निश्चय करनेमें किन किन बातोंका विचार किया जायेगा, अिसके बारेमें दोनों पक्षोंमें सहमति होनी चाहिये।

"२. अुद्योगकी भलाअीके लिअे यह आवश्यक है कि मजदूरोंको हिस्सेदारोंकी बराबरीका समझा जाय। और अिसलिअे यह मान लिया जाना चाहिये कि अुन्हें मिलोंके लेन-देन-सम्बन्धी कार्योंकी ठीक ठीक जानकारी रखनेका हक है। अगर मजदूरोंको मालिकोंकी बराबरीका मालिक मान लिया जाता है, तो अुनकी संस्थाको — अुनके संघको मिलोंके कामकाजका हिसाब देखनेकी वही सुविधा मिलनी चाहिये जो हिस्सेदारोंको मिलती है। सच तो यह है कि मजदूरोंको मालिकोंमें तब तक विश्वास नहीं हो सकता, जब तक मिलोंके कामकी कोअी भी महत्त्वकी बात अुनसे छिपाअी जाती है।

---

* हरिजन, ३१–३–'४६

× यंग अिंडिया, १९–९–'२९

\+ यंग अिंडिया, ११–२–'२०

† यंग अिंडिया, २०–८–'२५

"३. तमाम अुपलब्ध मिल-मजदूरोंका अैसा रजिस्टर होना चाहिये जो दोनों पक्षोंको स्वीकार हो और मजदूर-संघके सिवा और किसीके मारफत मजदूरोंको लेनेकी प्रथा बंद कर देनी चाहिये। यह अैसी बात है जिसमें कोअी ढिलाअी नहीं हो सकती। यदि मजदूर-संघकी रचना अेक अुतनी ही वांछनीय संस्थाके तौर पर हुअी है जितनी वांछनीय मिल-मालिकोंकी संस्था मानी जाती है, यदि मजदूर-संघको अेक अनिवार्य बुराअीकी तरह महज सहन नहीं किया जाता है, तो अुसका यही परिणाम होना चाहिये कि अुपलब्ध मजदूरोंका दोनों पक्षों द्वारा स्वीकृत रजिस्टर हो और मिल-मालिक मजदूर-संघसे बाहरके किसी आदमीको काम पर न लगायें।

"४. श्रमको वही दर्जा और वही प्रतिष्ठा मिलनी चाहिये जो कि पूंजीको मिलती है।*

"अूपरके मुद्दे जरूरी हैं, लेकिन अुनकी यह सूची पूरी न मानी जाय।"

**मजदूरोंको चेतावनी**: गांधीजीने मजदूरोंको भी साफ साफ शब्दोंमें चेतावनी और नसीहत दी है:

"दूसरी तरफ, यदि आपकी संख्या भारी हो, आप लाखों-करोड़ों हों, तो भी मिल नहीं चला सकेंगे। आपमें मिल चलानेकी बुद्धि नहीं है। आपके पास करोड़ों रुपये हों तो भी आप अुसे नहीं चला सकते। मुझे कोअी करोड़ रुपये दे तो भी मैं मिलका काम संभालनेसे अिनकार कर दूंगा। वे करोड़ रुपये मैं खादी या हरिजन-कार्यमें खुशीसे लगा दूंगा, परन्तु आदर्श मिल नहीं चला सकता। बीस वर्षके संगठित कार्यके बाद भी आपमें मिल चलानेकी योग्यता नहीं आअी है और न अगले बीस वर्षके भीतर अुसके आनेकी कोअी संभावना है। अगर आपके खयालसे वह योग्यता आपमें है, तो आपको रास्ता दिखानेके लिअे किसी नेताकी आवश्यकता नहीं है।

"मैं अवश्य चाहता हूं कि आप किसी दिन वह योग्यता प्राप्त कर लें। व्यक्तिशः यह अवश्य संभव है कि आप अपनेको अैसी तालीम दें जिससे आप मिल चला सकें। अुस सूरतमें बाकीके लोग वैसे ही गुलाम रहेंगे जैसे आप लोग हैं। मेरे कहनेका अर्थ यह है कि निश्चित अवधिके भीतर आप सामूहिक रूपमें मिल नहीं चला सकते।×

"अगर हर आदमी हकों पर जोर देनेके बजाय अपना फर्ज अदा करे, तो मनुष्य-जातिमें जल्दी ही व्यवस्था और अमनका राज्य

---

* हरिजन, १३–२–'३७

× हरिजन, ७–११–'३६

कायम हो जाय। राजाओंके राज्य करनेके दैवी अधिकार जैसी या रैयतके अिज्जतसे अपने मालिकोंका हुक्म माननेके नम्र कर्तव्य जैसी कोअी चीज नहीं है। यह सच है कि राजा और रैयतके पैदाअिशी भेद मिटने ही चाहिये, क्योंकि वे समाजके हितको नुकसान पहुंचाते हैं। लेकिन यह भी सच है कि अभी तक कुचले और दबाकर रखे गये लाखों-करोड़ों लोगोंके हकोंका ढिठाअीभरा दावा भी समाजके हितको ज्यादा नहीं तो अुतना ही नुकसान पहुंचाता है। अुनके अिस दावेसे दैवी अधिकारों या दूसरे हकोंकी दुहाअी देनेवाले राजा-महाराजा या जमींदारों वगैराके बनिस्बत करोड़ों लोगोंको ही ज्यादा नुकसान पहुंचेगा। ये मुट्ठीभर जमींदार, राजा-महाराजा, या पूंजीपति बहादुरी या बुजदिलीसे मर सकते हैं, लेकिन अुनके मरनेसे ही सारे समाजका जीवन व्यवस्थित, सुखी और सन्तुष्ट नहीं बन सकता।" *

अगर पूंजीपतियोंमें अपने धनका अभिमान करनेकी प्रवृत्तिका होना संभव है, तो मजदूरोंमें अुसी प्रकार अपने संख्यागत बलका अभिमान होना संभव है। अभिमानके जिस नशेसे पूंजीपति प्रभावित हो सकते हैं, अुसी नशेसे मजदूर भी प्रभावित और अुन्मत्त हो सकते हैं। ×

"अिसलिअे यह जरूरी है कि हम हकों और फर्जोंका आपसी संबंध समझ लें। . . . जो हक पूरी तरह अदा किये गये फर्जसे नहीं मिलते, वे प्राप्त करने और रखने लायक नहीं हैं। वे दूसरोंसे छीने गये हक होंगे। अुन्हें जल्दीसे जल्दी छोड़ देनेमें ही भला है। . . . जो शक्ति कुदरती तौर पर फर्जको अदा करनेसे पैदा होती है, वह सत्याग्रहसे पैदा होनेवाली और किसीसे न जीती जा सकनेवाली अहिंसक शक्ति होती है।" +

जब लोग अहिंसाको अपने आचरणके सिद्धान्तके तौर पर स्वीकार कर लेते हैं, तो वर्ग-संघर्ष असंभव हो जाता है। अुस दिशामें अहमदाबादमें प्रयोग किया गया था और अुसके अत्यंत संतोषप्रद परिणाम निकले। ‡ गांधीजीने दक्षिण अफ्रीका, चम्पारन और अहमदाबादमें मजदूरोंके संगठनका जो काम किया, अुसके पीछे पूंजीपतियोंके प्रति दुश्मनीकी भावना नहीं थी। हरअेक

---

* हरिजनसेवक, ६–७–'४७

× यंग अिंडिया, २६–३–'३१

\+ हरिजनसेवक, ६–७–'४७

‡ यंग अिंडिया, २६–३–'३१

मामलेमें मजदूरोंका प्रतिरोध, जिस हद तक अुसे जरूरी समझा गया अुस हद तक, पूरी तरह सफल रहा।*

मजदूरोंको मुमकिन है मिल-मालिकोंसे लड़ना पड़े। लेकिन अुन्हें अपनी यह लड़ाअी प्रेम, सम्मान और अनिच्छाकी अुसी भावनासे लड़ना चाहिये जो कि वे अपने सगे-सम्वन्धियोंसे लड़नेमें रखेंगे। लड़ाअीकी अहिंसक पद्धति पूंजीपतिका नाश नहीं करना चाहती, क्योंकि पूंजीको वह श्रमका दुश्मन नहीं मानती। अहिंसक पद्धति पूंजीपतियोंका हृदय-परिवर्तन करना चाहती है। अिसमें शक नहीं कि पूंजीवाद और अुसकी सारी वुराअियोंका नाश होना चाहिये। मजदूरोंको चाहिये कि वे अिस प्रयत्नमें पूंजीपतियोंका सहयोग मांगें और अिस विश्वासके साथ मांगें कि पूंजी और श्रमका सहयोग पूरी तरह संभव है।

## अुपसंहार

पिछले पृष्ठोंमें मैंने गांधीजीकी अेक अैसे समाजको दी हुअी शिक्षाओंका जिसके जीवनमें विज्ञानके आविष्कारों और नये नये यंत्रोंने क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिये हैं, सारांश देनेका प्रयत्न किया है। जहां तक हो सका है मैंने विचारके वाहनके तौर पर गांधीजीके अपने शब्दोंका ही अुपयोग किया है। अुनके ये विचार-रत्न यहां-वहां विखरे पड़े थे; मैंने अुन्हें चुनकर अेक सूत्रमें पिरो दिया है।

गांधीजी राष्ट्रको अेक अत्यन्त मूल्यवान विरासत दे गये हैं। अुन्होंने भारतके लिअे और सारी मानव-जातिके लिअे अुद्धारका मार्ग दिखाया है अिस मार्ग पर गांधीजीने खुद लम्बी यात्रा की और कुछ दूरी तक हमें वे अपने साथ ले गये। अव वे हमारे वीचमें नहीं हैं। हमें अुनका निश्चित और हमेशा मिलनेवाला सहारा अव प्राप्त नहीं हैं; हम अुसका अभाव महसूस करते हैं और अंधेरेमें अपना रास्ता टटोलते चलते हैं। लेकिन अिस अंधेरेके वावजूद हमें हिम्मत नहीं हारना चाहिये। हिम्मत हार जायें तो हम वरवाद हो जायेंगे। साथ ही, हम अंधोंकी तरह अपना मार्ग टटोलते रहें, यह भी ठीक नहीं है।

अैसी स्थितिमें आवश्यकता अिस वातकी है कि हम अपने परिश्रमको ज्ञानके अुजालेसे आलोकित करें। प्रश्न खादीका हो, या विजलीके अुपयोगका हो या कोअी दूसरा, हमें हमेशा अपने प्रयत्नको गतिमान और तेजस्वी वनाना चाहिये। गांधीजी जो कुछ कह गये हैं अुसे मात्र दूहराते रहना काफी नहीं है।

“जो आदमी हर वातको शास्त्रीय दृष्टिसे देखनेका आदी है, वह किसी वस्तुको श्रद्धासे शास्त्रीय मानकर संतुष्ट नहीं होगा। वह

* यंग अिंडिया, १७-३-’२७

अुसे बुद्धिकी कसौटी पर कसनेका आग्रह रखेगा। श्रद्धा जब बुद्धिसे संबंध रखनेवाले मामलोंमें दखल देती है तब वह पंगु हो जाती है। अुसका क्षेत्र वहां शुरू होता है जहां बुद्धिका क्षेत्र खतम होता है। श्रद्धाके आधार पर किये गये निर्णय अटल होते हैं, जब कि बुद्धिके आधार पर किये गये निर्णय अस्थिर और श्रेष्ठ तर्कके सामने मात खा जानेवाले होते हैं। शास्त्रकी मर्यादा बताना अुसकी कीमत घटाना नहीं है। हमारा दोनोंके बिना काम नहीं चल सकता — दोनों अपनी अपनी जगह अुपयोगी हैं।" *

अिसलिअे शास्त्रीय ज्ञान और श्रद्धा दोनोंको अपना मार्गदर्शक मानकर हमें गांधीजी द्वारा जलायी गयी प्रगतिकी मशालको आगे ले जाना चाहिये।

गांधीजी अिस बातसे अनभिज्ञ नहीं थे कि अुनकी शिक्षायें अुनके अनुयायियोंके हाथमें पड़कर जड़ मतवादका रूप ले सकती हैं। अिसलिअे अुन्होंने अुन लोगोंको आगाह कर दिया था कि वे अुन्हें बुद्धिपूर्वक समझें, शब्दोंको न पकड़ें। अुन्होंने कहा था:

"अेक दूसरा और ज्यादा गंभीर खतरा भी है। खतरा यह है कि आपका संघ + कहीं सम्प्रदायका रूप न ले ले। जब कभी कोअी कठिनाअी पेश होगी आप लोग 'यंग अिंडिया' और 'हरिजन' के मेरे लेखोंमें अुसका हल ढूंढ़ेंगे और अुनका प्रमाण-वाक्योंकी तरह अुपयोग करेंगे। सच तो यह है कि मेरे शरीरके साथ मेरे लेख भी जला दिये जाने चाहिये। जीवित तो वही रहेगा जो मैंने किया है, न कि जो मैंने कहा है या लिखा है। पिछले कुछ दिनोंमें मैंने अकसर यह कहा है कि हमारे सब धर्मग्रन्थ नष्ट हो जायें तो भी औशोपनिषद्का वह अेक मंत्र हिन्दू धर्मका रहस्य घोषित करनेके लिअे काफी होगा। लेकिन यदि कोअी अैसा व्यक्ति ही न हो जो अुसे अपने जीवनमें अुतारकर अुसे सिद्ध कर दिखाये, तो अुस मंत्रसे भी कोअी लाभ न होगा। अिसी तरह मैंने जो कुछ कहा है या लिखा है वह अुसी हद तक अुपयोगी है जिस हद तक अुसने आपको सत्य और अहिंसाके महान सिद्धान्तोंको आत्मसात् करनेमें मदद दी हो। यदि आपने अिन सिद्धान्तोंको आत्मसात् नहीं किया है, तो मेरे लेखोंसे आपको कोअी मदद नहीं मिल सकती। यह बात मैं आपसे अेक सत्याग्रहीकी हैसियतसे कह रहा हूं और मैं अुसमें से अेक भी शब्द छोड़नेके लिअे तैयार नहीं हूं। . . . मैं अिस बातकी परवाह नहीं

* हरिजनसेवक, ३१–३–'४६

\+ गांधी-सेवा-संघ।

करता कि मेरे मरनेके बाद क्या होगा, लेकिन मैं यह जरूर चाहता हूं कि आपका संघ बंधे हुअे पानी जैसा नहीं बल्कि हमेशा बढ़ते रहनेवाले वृक्ष जैसा हो। अिसलिअे आप मुझे भूल जाअिये। संघके नामके साथ मेरे नामका योग अनावश्यक चीज है। आप मेरे नामको मत पकड़िये; सिद्धान्तोंको पकड़िये। आप अपने प्रत्येक कार्यकी जांच अुसी कसौटी पर कीजिये और जो भी समस्यायें खड़ी हों अुनका वीरतापूर्वक मुकाबला करें।" *

गांधीजीकी अिस चेतावनीके होते हुअे भी यदि हम अुनके शब्दोंको ही पकड़ते रहें, तो यह अुन शब्दोंके अर्थकी हत्या होगी। अपनी विरासतको भूलना अेक पाप-कृत्य है।

खुशीकी बात है कि आजकी हमारी ज्वलंत समस्याओंका हल हम अिसी वृत्तिसे ढूंढ़ रहे हैं। अुदाहरणके लिअे, सुधरे हुअे और ज्यादा सक्षम चरखेकी अर्थशास्त्रीय परीक्षा की जा रही है और अुसके सम्बन्धमें राष्ट्रीय पैमाने पर व्यापक प्रयोग किये जा रहे हैं। निकट भविष्यमें हमारी जल-विद्युत योजनाओंके पूरा होनेकी संभावना दिख रही है। अुस समय गृह-अुद्योगोंमें बिजलीका अुपयोग मात्र बौद्धिक विवेचनका विषय नहीं रह जायगा। अखिल भारत खादी-ग्रामोद्योग बोर्ड अिस प्रश्नके सारे पहलुओंकी छानबीन कर रहा है। खादी-ग्रामोद्योग पत्रिकाने दिसम्बर १९५४ में अखिल भारत खादी-ग्रामोद्योग कार्यकर्ताओंकी पूनामें नवम्बर १९५४ में हुअी परिषदके कामकाजका विवरण देते हुअे अेक विशेषांक निकाला था। अिस अंकमें अिस और अैसे दूसरे प्रश्नों पर बहुत-सी अुपयोगी जानकारी दी गयी है।

राजनीतिक आजादी प्राप्त करनेके बाद अब हम अपने आर्थिक अुद्धारके कार्यमें जुट गये हैं। कुछ लोग आर्थिक आजादीका अर्थ यंत्र-विज्ञान सम्बन्धी प्रगति करते हैं। लेकिन आर्थिक प्रगतिकी कसौटी मानव-कल्याणकी वृद्धि है। हम अपनी आर्थिक नीतियोंको जिस हद तक अिस देशकी जनताकी सुख-समृद्धिके रूपमें कार्यान्वित कर सकेंगे, अुसी हद तक हमारी प्रगति वास्तविक होगी। गांधीजीकी शिक्षाओंकी तुलना हम दिशासूचक तारेसे कर सकते हैं। अुसकी अुपेक्षा करना गलत होगा। हम अुसकी अुपेक्षा करेंगे तो निश्चित है कि हम नुकसान अुठायेंगे। और हम भूल न जायें अिसलिअे यह याद रखना अच्छा है कि नैतिक आजादीके बिना राजनीतिक और आर्थिक आजादीका कोअी अर्थ नहीं है।

बम्बअी, २७ जून १९५६ व्हो० बी० खेर

---

* डी० जी० तेन्दुलकर, महात्मा, खण्ड ४, पृ० १८८।

# आर्थिक और औद्योगिक जीवन

## अुसकी समस्यायें और हल

भाग – १

# १

# हिन्द स्वराज्य

[सन् १९०९ में गांधीजीने अेस० अेस० किल्डोनन नामक जहाज पर अिंग्लैंडसे दक्षिण अफ्रीका लौटते हुअे 'हिन्द स्वराज्य'* नामक पुस्तक लिखी थी। अिस पुस्तकमें 'आधुनिक सम्यता' का जोरदार खंडन है। यह संवादके रूपमें लिखी गअी है और गांधीजीकी अपने सहयोगियोंके साथ हुअी चर्चाओंका विश्वस्त विवरण है। यह बीस अध्यायोंमें विभाजित है, जिनमें स्वराज्य, सम्यता, वकील, डॉक्टर, मशीनरी, शिक्षा, अहिंसक प्रतिरोध आदि विषय हैं। भारतमें अपने अेक मित्रको लिखे गये पत्रमें गांधीजीने अिस पुस्तककी विषय-वस्तुका सारांश दिया था। वह सारांश नीचे दिया जाता है।]

१. पूर्व और पश्चिमके बीच कोअी अगम्य खाअी नहीं है।

२. पश्चिमी या यूरोपीय सम्यता जैसी कोअी चीज नहीं है; यह नाम भ्रामक है। अुसे आधुनिक सम्यता कहना चाहिये और अुसकी विशेषता यह है कि वह अेकदम भौतिक है।

३. आधुनिक सम्यताके संपर्कमें आनेसे पहले यूरोपके लोग पूर्वके लोगोंसे या कमसे कम हिन्दुस्तानियोंसे बहुतसी समानता रखते थे; और आज भी वे यूरोप-निवासी जो आधुनिक सम्यताके प्रभावमें नहीं आये हैं, अुन लोगोंकी अपेक्षा जो अिस सम्यताकी अुपज हैं, हिन्दुस्तानियोंसे ज्यादा अच्छी तरह मिल सकते हैं।

४. हिन्द पर शासन अंग्रेज लोग नहीं कर रहे हैं, शासन कर रही है आधुनिक सम्यता — अपनी रेलों, टेलीग्राफ, टेलीफोन और प्रायः अुन सब आविष्कारोंके जरिये जिन्हें आधुनिक सम्यताकी विजय माना गया है।

५. बम्बअी, कलकत्ता और हिन्दके दूसरे मुख्य शहर अिस आधुनिक सम्यता-रूपी महामारीके अड्डे हैं।

६. अगर अंग्रेजी राज्यको कल आधुनिक तरीकों पर आधारित हिन्दुस्तानी राज्यमें बदल दिया जाये, तो भी हिन्दुस्तानका ज्यादा भला नहीं होगा;

* नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद–१४, द्वारा प्रकाशित।

अलबत्ता, जो दौलत अिंग्लैंड चली जाती है, अुसका कुछ हिस्सा रोकनेकी योग्यता अिसमें आ जायेगी; लेकिन तब हिन्द यूरोप या अमेरिकाके दूसरी या पांचवीं श्रेणीके राष्ट्र-जैसा हो जायेगा।

७. पूर्व और पश्चिम वास्तवमें तब ही मिल सकते हैं, जब पश्चिम आधुनिक सभ्यताको लगभग पूरी तरह फेंक दे या छोड़ दे। पूर्व आधुनिक सभ्यताको अपना ले तब भी वे मिलते हुअे-से दिखाअी पड़ सकते हैं, लेकिन वह मिलाप सशस्त्र समझौते जैसा होगा, जैसा कि अुदाहरणके लिअे जर्मनी और अिंग्लैंडके बीच है। ये दोनों राष्ट्र, दोनोंमें से कोअी दूसरेको निगल न जाये अिस आपत्तिसे बचनेके लिअे, मानो मृत्युके निरंतर रहनेवाले खतरेके बीच जी रहे हैं।

८. किसी व्यक्ति या समूहके लिअे सारी दुनियाके सुधारकी शुरुआत करना या अुसकी बात सोचना निरी धृष्टता है। आवागमनके बहुत ज्यादा कृत्रिम तथा तेज साधनोंसे अैसा करनेकी कोशिश करना, असंभवको संभव बनानेका प्रयत्न करने जैसा होगा।

९. सामान्य तौर पर यह कहा जा सकता है कि भौतिक सुविधाओंकी वृद्धि किसी भी तरह नैतिक विकासमें कोअी मदद नहीं करती।

१०. आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान जादू-टोनेका केन्द्रीभूत सार है। तथा-कथित अुच्च कोटिके डॉक्टरी कौशलकी अपेक्षा नीम-हकीमी कहीं अधिक अच्छी चीज है।

११. अस्पताल वे हथियार हैं जिन्हें शैतान अपने स्वार्थके लिअे यानी अपने राज्य पर अपनी प्रभुता कायम रखनेके लिअे काममें लेता आ रहा है। वे दुर्व्यसन, पीड़ा, नैतिक पतन और सच्ची गुलामीको कायम रखते हैं। अेक समय था जब मैं डॉक्टरी तालीम लेना चाहता था। अब मैं समझ गया हूं कि मेरा वैसा सोचना बिलकुल गलत था। अस्पतालोंमें चलनेवाले घृणित व्यापारोंमें किसी भी रूपमें कोअी हिस्सा लेना मैं पाप समझता हूं। अगर यौन-रोगोंके लिअे, यहां तक कि क्षय आदि रोगोंके लिअे भी, अस्पताल न होते, तो हमारे बीचमें क्षयकी बीमारी और यौन-दुर्व्यसन आजकी अपेक्षा कम होते।

१२. हिन्दकी मुक्ति, जो कुछ अुसने पिछले पचास सालोंमें सीखा है, अुसे भूल जानेमें है। रेलवे, टेलीग्राफ, अस्पताल, वकील, डॉक्टर आदिको खतम होना पड़ेगा और तथाकथित अुच्च वर्गोको सजगतासे, धार्मिक श्रद्धाके साथ तथा विचारपूर्वक किसानका सीधा-सादा जीवन जीना सीखना होगा — यह जानते हुअे कि यही जीवन सच्चा आनन्द देनेवाला है।

१३. हिन्दको मशीनके बने कपड़े नहीं पहनना चाहिये, चाहे वे यूरोपीय मिलोंसे आते हों या हिन्दुस्तानी मिलोंसे।

१४. अिग्लैंड हिन्दको अैसा करनेमें मदद कर सकता है और तब वह हिन्द पर अपने अधिकारके औचित्यको सिद्ध कर दिखायेगा। अैसा प्रतीत होता है कि आज अिग्लैंडमें कअी लोग अैसे हैं जो अिस प्रकार सोचते हैं।

१५. समाजकी अैसी व्यवस्था करनेमें, जिससे लोगोंकी भौतिक स्थिति पर रोक लगी रहे, प्राचीन कालके ॠषियोंकी सच्ची बुद्धिमानी थी। पांच हजार साल पहलेका अनगढ़ हल आज भी हमारे किसानोंका हल है। हमारी मुक्ति—हमारी समस्याओंका हल अिसीमें है। लोग अैसी परिस्थितियोंमें लम्बी आयु पाते हैं, यूरोपने आधुनिक सभ्यताको अपनाकर जो शांति भोगी है, अुसकी तुलनामें कहीं अधिक शांतिका जीवन जीते हैं और मैं महसूस करता हूं कि हरअेक विचारवान मनुष्य — प्रत्येक अिग्लैंडवासी तो जरूर ही — यदि वह चाहे तो अिस सत्यको सीख सकता है और अिसके अनुसार कार्य कर सकता है।

अहिंसक प्रतिकारकी सच्ची भावना ही मुझे अुपरोक्त लगभग निश्चित निष्कर्षों तक लायी है। अेक अहिंसक सत्याग्रहीके रूपमें, मैं अिस बातकी परवाह नहीं करता कि अैसा महान सुधार अुन लोगोंके मध्य हो सकेगा या नहीं, जो अपना संतोष वर्तमान अुन्मत्त दौड़में पाते हैं। अगर मैं अिसकी सच्चाअीको महसूस करता हूं, तो मैं मानता हूं कि मुझे अिसी मार्गका अनुगमन करना चाहिये और अुसमें खुश होना चाहिये; और अिसलिअे मैं अुस समय तक अिंतजार नहीं कर सकता जब तक सारे लोग अिस चीजको शुरू न कर दें। हम सब जो अिस प्रकार सोचते हैं अुन्हें यह जरूरी कदम अुठाना है, और यदि हम सच्चाअी पर हुअे तो मैं मानता हूं कि बाकीके लोग हमारा अनुसरण अवश्य करेंगे। सिद्धान्त हमारे सामने मौजूद है; हमारे व्यवहारको यथासंभव वहां तक पहुंचना होगा। भाग-दौड़के बीच रहते हुअे संभव है कि हम अपनेको अुसकी बुराअीसे पूरी तरह मुक्त करनेमें समर्थ न हो सकें। हर समय जब मैं रेलमें बैठता हूं या मोटर-बसका अुपयोग करता हूं, तब अनुभव करता हूं कि मैं अपनी विवेक-बुद्धिकी हिंसा कर रहा हूं। मैं अिस आधारके तार्किक नतीजेसे नहीं डरता हूं। अिग्लैंडकी यात्रा अनुचित है और दक्षिण अफ्रीका तथा हिन्दके बीच समुद्री जहाजोंके जरिये जाना-आना भी अनुचित है। आप और मैं अिन चीजोंका अुपयोग अपने अिसी जीवनमें छोड़ सकते हैं, और शायद छोड़ देंगे। लेकिन मुख्य बात तो यह है कि हम अपने सिद्धान्तको स्पष्टतया समझ लें। आप वहां अनेक तरहके मनुष्योंको अनेक अवस्थाओंमें देख रहे होंगे, अिसलिअे मैं अनुभव करता

हूं कि मैंने मानसिक रूपसे (अपने मतानुसार) जो प्रगतिशील कदम अुठाया है वह मुझे आपको बता देना चाहिये। अगर आप मुझसे सहमत हैं तो आपका कर्तव्य हो जायेगा कि आप क्रांतिकारियोंसे और दूसरे सब लोगोंसे कहें कि जो आजादी वे चाहते हैं — या वैसा मानते हैं — वह लोगोंकी हत्या करने या हिंसा करनेसे नहीं प्राप्त होती, लेकिन अपना सुधार करनेसे और सच्चे रूपमें हिन्दुस्तानी होने और रहनेसे प्राप्त होती है। तब अंग्रेज शासक सेवक होंगे, वे स्वामी नहीं रहेंगे। वे संरक्षक (ट्रस्टी) होंगे, न कि अत्याचारी, और वे हिन्दके सारे निवासियोंके साथ पूरी तरहसे शान्तिपूर्वक रहेंगे। अिसलिअे हमारा भविष्य अंग्रेज जातिके हाथमें नहीं है, लेकिन खुद हिन्दुस्तानियोंके हाथमें है; और अगर अुनमें पर्याप्त मात्रामें आत्मत्याग तथा आत्म-संयम है, तो वे अिसी क्षण अपनेको आजाद बना सकते हैं। और जब हम भारतमें सादगीकी अुस स्थितिको प्राप्त कर लेंगे, जो आज भी हममें काफी मात्रामें है तथा कुछ सालों पूर्व तक तो जो हमारे बीच अपनी परिपूर्णावस्थामें थी, तब श्रेष्ठ भारतीयों और श्रेष्ठ यूरोपियोंके लिअे भारतमें कहीं भी, किसी भी स्थान पर अेक-दूसरेसे प्रेमपूर्वक मिलना संभव होगा। सादगीके अिस वातावरणमें अेक-दूसरेकी मित्रताका सम्पादन करनेवाले ये भारतीय और यूरोपीय दूसरोंके लिअे प्रेरणारूप सिद्ध होंगे। जब वेगवान वाहन नहीं थे तब भी अुपदेशक और प्रचारक देशके अेक कोनेसे दूसरे कोने तक सारे खतरोंका सामना करते हुअे पैदल चलते थे — अपने स्वास्थ्यको फिरसे प्राप्त करनेके लिअे नहीं, यद्यपि अुनकी पदयात्राओंसे अुन्हें यह लाभ मिल ही जाता था, बल्कि मान जातिके कल्याणके खातिर। तब बनारस और तीर्थयात्राके अन्य स्थान प नगर थे, जब कि आज वे दूषित हैं।

महात्मा, जी० डी० तेन्दुलकर, खंड १; पृ० १२९

२

# स्वराज्यमें भारतकी क्या दशा होगी?

पाठकोंने मेरे पास ढेरों पर्चे भेजे हैं, जो वेस्टर्न अिंडिया नेशनल लिबरल अेसोसियेशनकी प्रचार-समिति खूब बंटवा रही है। पर्चा नं० ६ में यह लिखा है:

"गांधीराज्यकी स्थापना होने पर भारतका क्या स्वरूप होगा? रेलें नहीं होंगी। अस्पताल नहीं होंगे। मशीनें नहीं होंगी।

"किसी जल या स्थल सेनाकी जरूरत नहीं होगी, क्योंकि गांधीजी दूसरे राष्ट्रोंको वचन दे देंगे कि भारत अुनके कामकाजमें हस्तक्षेप नहीं करेगा और अिसीलिअे वे भारतके कामोंमें हस्तक्षेप नहीं करेंगे!

"न कानूनोंकी जरूरत होगी, न अदालतोंकी, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपना कानून होगा। हरअेकको अपनी मरजीका काम करनेकी आजादी होगी। बड़े आरामका जीवन होगा, क्योंकि हर आदमी खद्दरकी लंगोटीमें घूमेगा और खुलेमें सोयेगा।"

मैं यह नहीं कह सकता कि अिसमें कोअी अत्युक्ति है। यह कुशलतासे बनाया गया व्यंगचित्र है, जो पाश्चात्य युद्धनीतिमें जायज माना जाता है। केवल अिसके भीतरका गूढ़ आशय ही झूठा है। मेरा अभिप्राय मैं यहां स्पष्ट कर दूं। पहली बात तो यह है कि भारतवर्ष 'गांधीराज्य' स्थापित करनेका प्रयत्न नहीं कर रहा है। वह स्वराज्यकी स्थापनाके लिअे जीतोड़ परिश्रम कर रहा है। और स्वराज्य-प्राप्तिके खातिर वह खुशीसे और औचित्यके साथ गांधीका बलिदान कर देगा। 'गांधीराज्य' अेक आदर्श स्थिति है और अुस स्थितिमें पांचों नकारात्मक बातें सच्चा चित्र अुपस्थित करेंगी। परन्तु कोअी स्वप्नमें भी यह खयाल नहीं करता, मेरा तो बेशक नहीं है, कि स्वराज्यमें रेलें नहीं होंगी, अस्पताल नहीं होंगे, यंत्र नहीं होंगे, जल और स्थल सेना नहीं होगी, कानून तथा कानूनी अदालतें नहीं होंगी। अिसके विपरीत रेलें होंगी, किन्तु अुनका अुद्देश्य भारतका सैनिक या आर्थिक शोषण नहीं होगा, बल्कि अुनका अुपयोग भीतरी व्यापार बढ़ाने और तीसरे दरजेके मुसाफिरोंके जीवनको काफी आरामदेह बनानेमें किया जायेगा। तीसरे दरजेकी मुसाफिरी करनेवाली जनता जो किराया देती है, अुसका कुछ बदला अुसे मिलेगा। कोअी यह आशा नहीं करता कि स्वराज्यमें रोगोंका सर्वथा अभाव होगा! अिसलिअे स्वराज्यमें अस्पताल तो अवश्य होंगे, परन्तु यह आशा रखी जाती है कि तब अस्पतालोंका

अुद्देश्य भोग-विलासके रोगियोंकी अपेक्षा दुर्घटनाओंके शिकार होनेवालोंकी सेवा करना अधिक होगा। बेशक, चरखेके रूपमें यंत्र भी होंगे। आखिर तो चरखा भी अेक नाजुक यंत्र ही है। अिसमें मुझे कोअी शंका नहीं कि स्वतंत्र भारतमें कअी कारखाने खड़े होंगे, जिनका अुद्देश्य लोगोंको लाभ पहुंचाना होगा, न कि आजकलकी तरह जनसाधारणका खून चूसना। जलसेनाका तो मुझे कुछ पता नहीं है, लेकिन अितना मैं अवश्य जानता हूं कि भावी भारतकी स्थलसेनाके सैनिक भारतको गुलाम बनाये रखने और दूसरे राष्ट्रोंकी आजादी छीननेके लिअे रखे गये भाड़ेके टट्टू नहीं होंगे। तब स्थलसेना बहुत कुछ घटा दी जायगी, अुसमें अधिकांश स्वयंसेवक होंगे और अुसका अुपयोग आन्तरिक व्यवस्था रखनेके लिअे पुलिस-शक्तिकी तरह किया जायगा। स्वराज्यमें कानून होंगे और कानूनी अदालतें भी होंगी; परन्तु वे लोगोंकी स्वतंत्रताके रक्षक होंगे, न कि आजकी तरह अेक नौकरशाहीके हथियार होंगे, जिसने अेक संपूर्ण राष्ट्रको शक्तिहीन बना दिया है तथा जो अुसे और भी शक्तिहीन बनाने पर तुली हुअी है। अन्तमें, स्वराज्यमें जो चाहे अुसे लंगोटी पहनने और खुलेमें सोनेकी स्वतंत्रता होगी। लेकिन मुझे आशा है कि आजकलकी तरह लाखों आदमियोंके लिअे अेक मैला-सा चिथड़ा पहनकर घूमना जरूरी नहीं होगा, जो आवश्यक कपड़ा खरीदनेका साधन न होनेसे आज लंगोटीका काम देता है। न स्वराज्यमें लाखों लोगोंको मकानोंके अभावमें अपने थके हुअे और भूखे शरीरोंको खुलेमें आराम देना पड़ेगा। अिसलिअे 'हिन्द स्वराज्य' में प्रकट किये गये कुछ विचारोंको सन्दर्भसे अलग करके अुन्हें व्यंगात्मक रूपमें जनताके सामने अिस तरह रखना, मानो मैं हर आदमीके अपनानेके लिअे अुन विचारोंका प्रचार कर रहा होअूं, अुचित नहीं है।

यंग अिंडिया, ९-३-'२२; पृ० १४५

३

# स्वराज्यकी व्यावहारिक परिभाषा

स्वतंत्रता अेक अैसा शब्द है, जो शताब्दियोंके प्रयोगसे पुनीत हो गया है और अिसलिअे अिसके आसपास बहुतेरे लोगोंकी रायोंको अेकत्र कर लेना कोअी बड़ी बात नहीं है। परन्तु अुसकी अैसी व्याख्या करनेका साहस कोअी नहीं करेगा, जो अुन सबको पसन्द हो सके। अिसलिअे मैं सुझाता हूं कि स्वराज्यकी जगह लेनेवाला दूसरा कोअी अच्छा शब्द प्राप्त नहीं है और अुसकी अेक ही सार्वत्रिक व्याख्या हो सकती है: 'भारतका वह पद जिसकी अभिलापा किसी दिये हुअे अवसर पर भारतीय लोग करें।'

यदि मुझसे कोअी यह पूछे कि अिस घड़ी हिन्दुस्तान क्या चाहता है, तो मैं कहूंगा कि मुझे पता नहीं। मैं सिर्फ अितना कह सकूंगा कि मैं तो अुससे यही चाहता हूं कि वह अिस बातकी अभिलापा रखे कि हिन्दुओं और मुसलमानोंमें सच्चे सम्बन्ध रहें, जनसाधारणको रोटी मिले और छुआछूत दूर हो। अिस घड़ी तो मैं स्वराज्यकी यही व्याख्या करूंगा। यह व्याख्या मैं अिसलिअे पेश कर रहा हूं कि मैं अेक व्यावहारिक आदमी होनेका दावा करता हूं। मैं जानता हूं कि हम अिग्लैण्डसे अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता चाहते हैं। वह पूर्वोक्त तीन बातोंके बिना कभी नहीं मिल सकती — यदि हमारे पास हथियार होते और हमें अुनका प्रयोग भी करना आता तब भी नहीं मिल सकती।

हिन्दी नवजीवन, २०–७–'२४; पृ० ३९४

४

# राष्ट्रीय मांग

[ १५ सितम्बर, १९३१ को लन्दनकी गोलमेज परिषदकी फेडरल स्ट्रक्चर सब-कमेटीके सामने दिया गया गांधीजीका भाषण। ]

आरम्भमें ही मुझे स्वीकार करना चाहिये कि आपके सामने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी स्थिति रखते हुअे मैं काफी कठिनाअी महसूस कर रहा हूं। मैं कहना चाहूंगा कि मैं अिस सब-कमेटीमें और साथ ही जब अुचित समय आयेगा तब गोलमेज परिषदमें शुद्ध सहयोगकी भावनाके साथ शामिल होनेके लिअे और अपनी शक्तिभर सहमतिके मुद्दे खोजनेकी कोशिश करनेके लिअे आया हूं। मैं सम्राटकी सरकारको यह आश्वासन भी देना चाहूंगा कि मेरी अिच्छा हुकूमतको किसी भी समय झंझटमें डालनेकी न तो है, न होगी और यहां अुपस्थित अपने सहयोगियोंको भी मैं यही आश्वासन देना चाहूंगा कि हमारे दृष्टिकोणोंमें चाहे कितना ही अंतर हो, मैं अुनके रास्तेमें किसी भी तरह बाधक नहीं बनूंगा। अतअेव यहां मेरी स्थिति पूरी तरह आपकी सद्भावना और सम्राटकी सरकारकी सद्भावना पर निर्भर है। अगर किसी समय मुझे यह मालूम होगा कि मैं परिषदकी कोअी भी सेवा नहीं कर सकता, तो मैं खुदको अिससे हटा लेनेमें संकोच नहीं करूंगा। मैं अुनसे भी, जो अिस कमेटी और परिषदके प्रबंधके लिअे जिम्मेदार हैं, कह सकता हूं कि वे केवल मुझे संकेत भर कर दें और फिर हटनेमें मुझे कोअी झिझक नहीं होगी।

मुझे अैसा अिसलिअे कहना पड़ रहा है, क्योंकि मैं जानता हूं कि सरकार और कांग्रेसके बीच मौलिक मतभेद हैं और यह भी संभव है कि मेरे और मेरे सहयोगियोंके बीचमें महत्त्वपूर्ण मतभेद हैं। अिसके सिवा मुझे अपना काम अेक मर्यादाके भीतर रहते हुअे करना होगा। मैं कांग्रेसका, भारतीय राष्ट्रीय महासभाका, अेक गरीब और विनम्र प्रतिनिधि-मात्र हूं; और अिसलिअे यह बता देना अुचित ही है कि कांग्रेस वास्तवमें क्या है और अुसका अुद्देश्य क्या है। तब आप मेरे साथ सहानुभूति रखेंगे, क्योंकि मैं जानता हूं कि मेरे कंधों पर जिम्मेदारीका जो बोझ है वह बहुत भारी है।

## कांग्रेस क्या है?

अगर मैं गलती नहीं करता हूं, तो भारतमें कांग्रेस सबसे पुराना राजनीतिक संगठन है। अुसकी अवस्था लगभग ५० सालकी है और अिस अरसेमें

वह विना किसी रुकावटके वरावर अपने वार्षिक अधिवेशन करती रही है। वह सच्चे अर्थोंमें राष्ट्रीय है। वह किसी खास जाति, किसी खास वर्ग, किसी विशेष हितकी प्रतिनिधि नहीं है। वह सर्व-भारतीय हितों और सब वर्गोंकी प्रतिनिधि होनेका दावा करती है। मुझे यह बताते हुअे बहुत आनन्द होता है कि अुसकी अुपज आरम्भमें अेक अंग्रेज मस्तिष्कमें हुअी। अेलेन ऑक्टोवियस ह्यूमको हम कांग्रेसके पिताके रूपमें जानते हैं। दो महान पारसियों फिरोज-शाह मेहताने और दादाभाअी नौरोजीने — जिन्हें सारा भारत 'वृद्ध पितामह' कहनेमें प्रसन्नता अनुभव करता है, अिसका पोषण किया। आरम्भसे ही कांग्रेसमें मुसलमान, अीसाअी, अॅंग्लो-अिंडियन गोरे आदि शामिल थे; बल्कि मुझे यों कहना चाहिये कि अिसमें सब धर्म, पंथ और सम्प्रदायोंका थोड़ा-बहुत पूर्णताके साथ प्रतिनिधित्व होता रहा। स्वर्गीय बदरुद्दीन तैयबजीने अपने आपको कांग्रेसके साथ मिला दिया था। मुसलमान और पारसी भी कांग्रेसके सभापति रहे हैं। अिस समय कमसे कम अेक भारतीय अीसाअी अध्यक्षका नाम मुझे याद आता है: ये थे श्री अुमेशचन्द्र बनर्जी। श्री कालीचरण बनर्जीने, जिनसे ज्यादा विशुद्ध चरित्रवाले किसी भारतीयको मैं जानता नहीं, अपनेको कांग्रेसके साथ अेक कर दिया था। मैं और निस्सन्देह आप भी, अपने बीच श्री के० टी० पालका अभाव अनुभव कर रहे होंगे। यद्यपि वे कभी कांग्रेसमें विधिवत् शामिल नहीं हुअे, फिर भी वे पूरे राष्ट्रवादी थे और कांग्रेससे सहानुभूति रखते थे।

जैसा कि आप जानते हैं, स्वर्गीय मौलाना मुहम्मदअली, जिनकी अुपस्थितिका भी आज यहां अभाव है, कांग्रेसके सभापति थे, और अिस समय कांग्रेसकी कार्यसमितिके १५ सदस्योंमें ४ सदस्य मुसलमान हैं। स्त्रियां भी हमारी कांग्रेसकी सभापति रह चुकी हैं — पहली डॉ० अेनी बेसेंट थीं और दूसरी श्रीमती सरोजिनी नायडू। श्रीमती नायडू आजकल कार्यसमितिकी सदस्य भी हैं; और अिस प्रकार जहां हमारे यहां वर्ग या पंथका भेदभाव नहीं है वहां किसी प्रकारका स्त्री-पुरुष-भेद भी नहीं है।

कांग्रेसने अपने आरम्भसे ही अछूत कहलानेवालोंके अुद्धार-कार्यको अपने हाथोंमें ले रखा है। अेक समय था जब कि कांग्रेस अपने प्रत्येक वार्षिक अधिवेशनके समय अपनी सहयोगी संस्थाकी तरह सामाजिक परिषदका भी अधिवेशन किया करती थी, जिसे स्वर्गीय रानडेने अपने अनेक कामोंमें अेक काम बना लिया था और जिसे अुन्होंने अपनी शक्तियां समर्पित की थीं। आप देखेंगे कि अुनके नेतृत्वमें सामाजिक परिषदके कार्यक्रममें अछूतोंके सुधारके कार्यको अेक खास स्थान दिया गया था। किन्तु सन् १९२० में कांग्रेसने अेक बड़ा कदम अुठाया और अस्पृश्यता-निवारणके सवालको राजनीतिक मंचका अेक आधार-स्तंभ बनाकर राजनीतिक कार्यक्रमका अेक महत्त्वपूर्ण अंग बना

दिया। जिस प्रकार कांग्रेस हिन्दू-मुस्लिम-अेकताको और अिसलिअे सब सम्प्रदायोंके पारस्परिक अैक्यको स्वराज्य-प्राप्तिके लिअे अनिवार्य समझती थी, अुसी प्रकार पूर्ण स्वराज्य-प्राप्तिके लिअे अस्पृश्यताके निवारणको भी वह अनिवार्य समझने लगी।

सन् १९२० में कांग्रेसने जो स्थिति ग्रहण की थी, वह आज भी बनी हुअी है; और अिस प्रकार कांग्रेसने अपने आरम्भसे ही अपनेको सच्चे अर्थोंमें राष्ट्रीय सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है।

अगर यहां अुपस्थित महाराजागण मुझे आज्ञा दें तो मैं यह बतलाना चाहता हूं कि अपने आरम्भमें ही कांग्रेसने अुनकी सेवाका कार्य भी अुठा लिया था। मैं अिस कमेटीको याद दिलाना चाहता हूं कि वह व्यक्ति "भारतके वृद्ध पितामह" ही थे, जिन्होंने काश्मीर और मैसूरके प्रश्नको हाथमें लेकर सफलताको पहुंचाया था और मैं अत्यन्त विनम्रतापूर्वक कहना चाहता हूं कि ये दोनों राजवंश श्री दादाभाअी नौरोजीके और कांग्रेसके प्रयत्नोंके लिअे कम अृणी नहीं हैं। अब तक भी राजाओंके घरेलू और आन्तरिक मामलोंमें हस्तक्षेप न करके कांग्रेस अुनकी सेवाका प्रयत्न करती रही है।

मैं आशा करता हूं कि अिस संक्षिप्त परिचयसे, जिसका दिया जाना मैंने आवश्यक समझा, यह सब-कमेटी और जो कांग्रेसके दावेमें दिलचस्पी रखते हैं वे यह जान सकेंगे कि अुसने जो दावा किया है अुसकी वह योग्य अधिकारी है। मैं जानता हूं कि कभी-कभी वह अपने अिस दावेको कायम रखनेमें असफल भी हुअी है, लेकिन मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि अगर आप कांग्रेसका अितिहास देखेंगे, तो आपको मालूम होगा कि असफल होनेकी अपेक्षा वह सफल ही अधिक हुअी है और समयके साथ अुसकी सफलता लगातार बढ़ती गयी है। सबसे अधिक, कांग्रेस अपने मूल रूपमें, देशके अेक कोनेसे दूसरे कोने तक ७,००,००० गावोंमें बिखरे हुअे करोड़ों मूक, अर्ध-नग्न और भूखे मानवोंकी प्रतिनिधि है; फिर चाहे ये लोग ब्रिटिश भारतके नामसे पुकारे जानेवाले प्रदेशके हों अथवा भारतीय भारत अर्थात् देशी-राज्योंके। अिसलिअे अैसा प्रत्येक हित, जो कांग्रेसके मतसे रक्षाके योग्य है, अिन लाखों मूक लोगोंके हितका साधन होना चाहिये। आप समय समय पर अिन विभिन्न हितोंमें प्रत्यक्ष विरोध देखते हैं। परन्तु यदि वस्तुतः कोअी वास्तविक विरोध हो तो मैं कांग्रेसकी ओरसे बिना किसी संकोचके यह बता देना चाहता हूं कि अिन लाखों मूक मानवोंके हितकी रक्षाके लिअे कांग्रेस प्रत्येक हितका बलिदान कर देगी। अिसलिअे कांग्रेस मूलतः अेक किसानोंका संगठन है या अैसा कहिये कि वह अधिकाधिक वैसी बनती जा रही है। आपको और कदाचित् अिस समितिके भारतीय सदस्योंको भी यह जानकर आश्चर्य होगा कि कांग्रेसने आज अखिल

भारतीय चरखा-संघ नामक अपने संगठन द्वारा करीव दो हजार गांवोंकी लगभग ५० हजार स्त्रियोंको रोजगारमें लगा रखा है और अिनमें संभवत: ५० प्रतिशत मुसलमान स्त्रियां हैं। अुनमें हजारों अछूत कहलानेवाली जातियोंकी भी हैं। अिस प्रकार हम अिस रचनात्मक कार्यके द्वारा रचनात्मक रीतिसे अिन गांवोंमें प्रवेश कर चुके हैं और ७,००,००० गांवोंमें से प्रत्येक गांवमें प्रवेश करनेकी कोशिश की जा रही है। यह काम यद्यपि मनुष्यकी शक्तिके वाहरका है; फिर भी यदि मनुष्यके प्रयत्नसे हो सकता हो, तो आप शीघ्र ही कांग्रेसको अिन सव गांवोंमें फैली हुअी और अुन्हें चरखेका संदेश सुनाती हुअी देखेंगे।

## कांग्रेसकी मांग

कांग्रेसके प्रातिनिधिक स्वरूपकी अिस विशेपताको समझ लेनेके वाद जव मैं आपको कांग्रेसका आदेश पढ़कर सुनाअूंगा तव आपको आश्चर्य न होगा। मैं आशा करता हूं कि यह आपको अरुचिकर नहीं लगेगा। आप मान सकते हैं कि कांग्रेस अेक अैसा दावा कर रही है जो विलकुल असमर्थनीय है। जैसा भी वह है, मुझे यहां कांग्रेसकी ओरसे अुसे यथासंभव अत्यन्त विनम्रतापूर्वक लेकिन यथासंभव अधिकसे अधिक दृढ़तासे पेश करना है। मैं यहां अुस दावेको अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा तथा शक्तिके साथ प्रतिपादित करनेके लिअे आया हूं। अगर आप मुझे जो कुछ मैं मानता आ रहा हूं अुससे अुलटी वातका विश्वास करा सकें और वता सकें कि यह दावा अिन लाखों मूक लोगोंके हितोंके प्रतिकूल है, तो मैं अपनी रायमें संशोधन कर लूंगा। मेरे मनमें कोअी पूर्वग्रह नहीं है और आपकी वात सुनने और स्वीकार करनेके लिअे मैं तैयार हूं। लेकिन फिर भी मुझे अुस संशोधनको स्वीकार करनेके पूर्व अपने प्रधानोंकी सहमति लेना पड़ेगी, जिससे कि मैं कांग्रेसके प्रतिनिधिके रूपमें अुपयुक्त ढंगसे काम कर सकूं। अव मैं आपके सामने अुस आदेशको पढ़कर सुनाता हूं, जिससे आप अुन मर्यादाओंको स्पष्ट रूपमें समझ सकें जिन्हें मुझ पर लादा गया है।

यह आदेश भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कराची अधिवेशनमें स्वीकृत प्रस्तावमें निहित है। प्रस्ताव अिस प्रकार है:

> "भारत-सरकार और कांग्रेसकी कार्यसमितिके वीच जो अस्थायी संधि हुअी है, अुस पर विचार करके कांग्रेस अुसका समर्थन करती है, और यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि कांग्रेसका पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेका अुद्देश्य ज्यों-का-त्यों वना हुआ है। यदि ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधियोंके किसी सम्मेलनमें कांग्रेसके प्रतिनिधियोंके जानेके मार्गमें

दूसरे प्रकारकी रुकावटें न रह जायें (और कांग्रेसके प्रतिनिधि अुस सम्मेलनमें शरीक हों), तो कांग्रेसके प्रतिनिधि अपने अुसी अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे प्रयत्न करेंगे — खासकर अिसलिअे कि हमारे देशको सेना, विदेशी मामलों, राष्ट्रीय आय-व्यय तथा आर्थिक नीतिके संबंधमें अधिकार प्राप्त हो जायें और भारतकी ब्रिटिश सरकारने जो लेन-देन किये हैं, अुनकी जांच होकर अिस बातका निपटारा हो जाये कि भारत और अिंग्लैण्ड अिन दोनोंमें से कोअी भी जब चाहे तब अेक-दूसरेसे अलग हो जाये। कांग्रेसके प्रतिनिधियोंको अिस बातकी स्वतन्त्रता रहेगी कि अिसमें अैसी घट-बढ़ करें, जो भारतके हितके लिअे प्रत्यक्ष रूपसे आवश्यक सिद्ध हो।"

अिस प्रस्तावके प्रकाशमें, मैंने गोलमेज परिषद द्वारा नियुक्त अनेक सब-कमेटियां जिन अस्थायी निर्णयों पर पहुंची हैं अुनका यथाशक्ति सावधानी-पूर्वक अध्ययन करनेकी कोशिश की है। मैंने प्रधानमंत्रीके अुस वक्तव्यका भी सावधानीसे अध्ययन किया है, जिसमें सम्राटकी सरकारकी सुविचारित नीति दी गयी है। संभव है कि मेरा खयाल गलत हो, लेकिन जहां तक मैं समझ पाया हूं यह दस्तावेज कांग्रेसने जो लक्ष्य रखे हैं और दावे किये हैं अुन्हें पूरा नहीं करता। यह सही है कि मुझे अैसे परिवर्तनोंको स्वीकार करनेकी स्वतंत्रता है जो प्रत्यक्ष रूपसे भारतके हितमें हों, लेकिन वे अिस प्रस्तावमें अुल्लिखित बुनियादी सिद्धान्तोंसे संगत होने चाहिये। यहां मुझे अुस पवित्र समझौतेकी शर्तोंकी याद हो आती है, जो दिल्लीमें भारत-सरकार तथा कांग्रेसके बीच हुआ था। अुस समझौतेमें कांग्रेसने संघके सिद्धान्तको, केन्द्रमें जिम्मेदार सरकारके सिद्धान्तको और अिस सिद्धान्तको भी स्वीकार कर लिया है कि भारतके हितोंकी दृष्टिसे जहां तक आवश्यक हों संरक्षण जरूर होने चाहिये।

## समान भागीदारी

कल अेक मुहावरेका अुपयोग किया गया था। मैं अुन प्रतिनिधिको भूल रहा हूं, लेकिन मुझे अुनका वह मुहावरा बहुत अर्थपूर्ण मालूम हुआ। अुन्होंने कहा था, "हम केवल राजनीतिक संविधान नहीं चाहते हैं।" मैं नहीं जानता अुन्होंने अिस अुक्तिको वही अर्थ दिया था या नहीं जो कि मुझे अेकदम सूझा; परन्तु मैंने शीघ्र ही अपने-आपसे कहा, अिस मुहावरेने मुझे अेक सुन्दर शब्द-प्रयोग दिया है। यह सही है कि कांग्रेस और व्यक्तिशः मैं तो कभी भी केवल राजनीतिक संविधानसे सन्तुष्ट नहीं हो सकेंगे — अैसे राजनीतिक संविधानसे, जिसे पढ़नेसे अैसा लगे कि वह भारतको वह सब देता है जिसकी कि राज-

नीतिक दृष्टिसे वह अिच्छा कर सकता है, लेकिन यथार्थमें कुछ भी नहीं देता। अगर हम पूर्ण स्वराज्यका आग्रह करते हैं तो अिसका कारण हमारी अहंकार-भावना नहीं है; अुसका कारण यह नहीं है कि हम दुनियाको यह दिखाना चाहते हैं कि हमने ब्रिटिश जनतासे सारा संबंध तोड़ लिया है।

अिस प्रकारकी कोअी बात नहीं है। अिसके विपरीत आप अिस आदेशमें पायेंगे कि कांग्रेस ब्रिटेनके साथ अेक भागीदारीका विचार रखती है; कांग्रेस ब्रिटिश जनतासे संबंध रखनेका विचार करती है, लेकिन वह संबंध अैसा होना चाहिये जो दो पूरी तरह समानोंके बीच रह सकता हो। अेक समय था जब मैं ब्रिटिश प्रजाजन होने और कहलानेमें गौरव महसूस करता था। कअी बरसोंसे मैंने खुदको ब्रिटिश प्रजाजन कहना बन्द कर दिया है: मैं प्रजाजन कहलानेके बजाय यह ज्यादा पसन्द करूंगा कि मुझे बागी कहा जाय। अब तो मेरी आकांक्षा यह है कि मैं साम्राज्यका नहीं बल्कि संभव हो तो राष्ट्र-मंडलका —भागीदारी पर आधारित राष्ट्र-मंडलका — नागरिक बनूं। अगर अीश्वरने चाहा तो वह अेक अटूट भागीदारी होगी, अेक राष्ट्र द्वारा दूसरे पर अूपरसे थोपी हुअी भागीदारी नहीं होगी। अतअेव आप यहां देखेंगे कि कांग्रेस चाहती है कि किसी भी पक्षको अिस संबंधका अन्त करने और भागीदारीको तोड़ने या अलग होनेका अधिकार होना चाहिये। अिसलिअे यह भागीदारी अैसी होनी चाहिये कि अुससे दोनोंका लाभ हो। क्या मैं कहूं — मेरा यह कथन प्रस्तुत प्रश्नकी दृष्टिसे अप्रासंगिक हो सकता है, पर मेरे लिअे वह अप्रासंगिक नहीं है — कि जैसा मैंने अन्यत्र कहा है, मैं अच्छी तरहसे समझता हूं कि आज जिम्मेदार ब्रिटिश राजनीतिज्ञ घरेलू मामलोंके संकटको दूर करनेके प्रयत्नमें पूरी तरह डूबे हुअे हैं। हम अुनसे अिससे कमकी आशा भी नहीं कर सकते और जब मैं लन्दनकी ओर आ रहा था तभी मुझे यह खयाल आया था कि क्या हम लोग जो अभी अिस सब-कमेटीमें अुपस्थित हैं ब्रिटिश मंत्रियोंके लिअे बाधक नहीं होंगे, क्या हमारी स्थिति यहां अुनके बीचमें अनुचित हस्तक्षेप करनेवालोंकी जैसी न होगी? तो भी मैंने अपने-आपसे कहा, यह संभव है कि हमारी स्थिति अनुचित हस्तक्षेप करनेवालोंकी जैसी न हो; यह भी संभव है कि ब्रिटिश मंत्री खुद गोलमेज परिषदकी कार्रवाअीको अपने घरेलू मामलोंके लिअे प्राथमिक महत्त्वकी समझें। हां, भारतको तलवारके जोरसे दबाकर रखा जा सकता है। लेकिन ग्रेट ब्रिटेनकी समृद्धिके लिअे, ग्रेट ब्रिटेनकी आर्थिक आजादीके लिअे ज्यादा लाभदायक क्या होगा: गुलाम परन्तु बागी भारत या अैसा भारत जो ब्रिटेनका सम्मानित भागीदार होगा और जो ब्रिटेनके साथ अुसके दुःख बटायेगा और अुसकी विपत्तिके समयमें भी हिस्सा लेगा?

### मेरा सपना

हां, और आवश्यकता होने पर, परन्तु अपनी अिच्छासे, जो ब्रिटेनके साथ कंधेसे कंधा लगाकर लड़ेगा भी — किसी भी जाति या व्यक्तिके शोषणके लिअे नहीं, वल्कि सारी दुनियाकी भलाअीके लिअे। यदि मैं अपने देशके लिअे आजादीकी मांग करता हूं, तो आप विश्वास कीजिये कि मैं यह आजादी अिसलिअे नहीं चाहता कि मेरा बड़ा देश, जिसकी आवादी सम्पूर्ण मानव-जातिका पांचवां हिस्सा है, दुनियाकी किसी भी दूसरी जातिका या किसी भी व्यक्तिका शोषण करे। आप विश्वास कीजिये कि मैं अपनी शक्तिभर अपने देशको अैसा अनर्थ नहीं करने दूंगा। यदि मैं अपने देशके लिअे आजादी चाहता हूं, तो मुझे यह मानना ही चाहिये कि प्रत्येक दूसरी सवल या निर्वल जातिको अुस आजादीका वैसा ही अधिकार है। यदि मैं अैसा नहीं मानता हूं और अैसी अिच्छा नहीं करता हूं, तो अुसका यह अर्थ है कि मैं अुस आजादीका पात्र नहीं हूं। और अिसीलिअे मैंने आपके सुन्दर द्वीपके तट पर पहुंचने पर अपने-आपसे कहा कि संयोगवश ब्रिटिश मंत्रियोंको यह महसूस कराना मेरे लिअे संभव होगा कि भारत अेक मूल्यवान भागीदारके रूपमें — जिसे आप ताकतके जोरसे नहीं वल्कि प्रेमरूपी रेशमकी डोरीसे अपने साथ वांध कर रखेंगे — आपका ज्यादा सच्चा सहायक सिद्ध होगा। अैसा भारत अिंग्लैण्डके महज अेक सालके वजटको ही नहीं, कअी सालोंके वजटको संतुलित करनेमें सहायक सिद्ध होगा। ये दो राष्ट्र मिलकर क्या नहीं कर सकते? आपका राष्ट्र संख्यामें छोटा है, पर वह वहादुर है। अुसका वहादुरीका अितिहास शायद वेमिसाल है। वह गुलामीकी प्रथाके खिलाफ लड़ा है और अुसने असंख्य वार कमजोरोंकी रक्षा करनेका दावा किया है। दूसरी ओर हमारा राष्ट्र अत्यन्त प्राचीन और विशाल है। अुसकी जनसंख्या करोड़ों तक पहुंचती है। अुसका अतीत अतिशय अुज्ज्वल है। अिस समय वह दो महान संस्कृतियोंका — मुस्लिम और हिन्दू संस्कृतिका प्रतिनिधित्व करता है। अुसमें रहनेवाले ओसाअियोंकी संख्या भी कुछ कम नहीं है। अिसके सिवा अनेक गुणोंसे सम्पन्न दुनियाकी सारीकी सारी पारसी जाति भी वहां वसी हुअी है। अुसकी संख्या वहुत कम है, लेकिन दानशीलता और व्यापारिक साहसके गुणोंमें यह जाति वेजोड़ है, अग्रगण्य तो निश्चय ही है। भारतमें ये सारी संस्कृतियां अेकत्र हुअी हैं और यदि यहां प्रतिनिधियोंके रूपमें आये हुअे हिन्दुओं और मुसलमानोंको ओश्वर अैसी सही प्रेरणा दे कि वे आपसमें मिल जायें और दोनोंके लिअे सम्मान्य किसी समझौते पर पहुंच जायें, तो फिर ये दोनों राष्ट्र मिलकर क्या नहीं कर सकते? मैं अपने-आपसे और आप लोगोंसे पूछता हूं कि भारत स्वतंत्र हो, ग्रेट ब्रिटेन जितना ही स्वतंत्र हो, तो अिन दोनों राष्ट्रोंके वीचमें होनेवाली सम्मानपूर्ण

भागीदारी क्या अिस महान राष्ट्रकी घरकी स्थितिकी दृष्टिसे भी परस्पर लाभदायी नहीं होगी? और अिसलिअे यह स्वप्निल आशा लेकर ही मैं यहां आया हूं और अभी भी मैं अिस सपनेको पाल रहा हूं।

अितना कहकर शायद मैंने मुझे जो-कुछ कहना चाहिये था वह सब कह दिया है। बाकी सब आप खुद पूरा कर लेंगे। मैं मानता हूं कि आप मुझसे अैसी आशा नहीं रखेंगे कि मैं अिस सिलसिलेमें आपको हर चीजका पूरा ब्यौरा दूं और यह बताअूं कि सेना पर नियन्त्रणसे और विदेशी मामलों पर तथा वित्तीय, राजस्व-सम्बन्धी और आर्थिक नीति पर या वित्तीय लेन-देन पर नियन्त्रणसे मेरा क्या अर्थ है। वित्तीय लेन-देनके मामलोंका अुल्लेख करते हुअे कल अेक मित्रने अुन्हें पवित्र और परिवर्तनके परे कहा था। मैं अैसा नहीं मानता। यदि नये आनेवाले और पुराने जानेवाले भागीदारोंके बीचमें हिसाब हो, तो अुनके किये हुअे लेन-देनकी जांच की जाती है और अुसमें आवश्यकतानुसार घट-बढ़ भी की जाती है। अिसलिअे अगर कांग्रेस यह कहती है कि राष्ट्र जो बोझ स्वीकार कर रहा है अुसमें से कितना अुसे अुठाना चाहिये और कितना अुसे नहीं अुठाना चाहिये, अितना जानने-समझनेका अुसे अधिकार है तो वह कोअी अपराध नहीं करती। अिस हिसाब और जांचकी मांग केवल भारतके ही हितमें नहीं, दोनों देशोंके हितमें की जा रही है। मुझे निश्चय है कि ब्रिटिश जनता भारत पर अैसा कोअी भी बोझ नहीं लादना चाहती, जो कि अुसे न्यायकी दृष्टिसे अुठाना नहीं चाहिये। और मैं यहां कांग्रेसकी ओरसे यह घोषणा करता हूं कि कांग्रेस अैसे अेक भी ॠणका त्याग करनेका विचार भी नहीं करेगी, जो अुसे न्यायकी दृष्टिसे चुकाना ही चाहिये। यदि हमें अैसे सम्मान्य राष्ट्रके रूपमें रहना है जिसकी सारी दुनियामें साख हो, तो हम अपने न्याय्य कर्जकी पाअी-पाअी, जरूरत हो तो अपने रक्तसे भी, भरेंगे और चुकायेंगे।

मुझे लगता है कि अिस आदेशकी धाराओंको अिससे ज्यादा समझानेकी और कांग्रेसके लोग अुनका जो अर्थ करते हैं अुस अर्थका आपके समक्ष और अधिक पृथक्करण करनेकी कोअी जरूरत नहीं है। अगर अीश्वरकी अैसी अिच्छा होगी कि मैं अिन चर्चाओंमें भाग लेता रहूं, तो आगे अिन चर्चाओंके दरमियान मैं अिन धाराओंके आशयको सविस्तार समझाअूंगा। आगे अिन चर्चाओंके दरमियान मुझे संरक्षणों (Safeguards) के बारेमें जो कुछ कहना है वह भी कहूंगा। किन्तु, चान्सलर महोदय, मेरा खयाल है कि आपकी मेहरबानीसे अिस सभाका समय लेकर किंचित् विस्तारके साथ मैंने जो कुछ कहा है वह फिलहाल काफी है। अिस सभाका अितना

ज्यादा समय लेनेका मेरा कोअी विचार नहीं था, लेकिन मुझे लगा कि यदि अिस अवसर पर भी मैंने अपनी प्रिय आकांक्षा अपने हृदयकी सारी भावना अुंड़ेलकर आपके सामने नहीं रखी, तो मैं अुस मामलेके प्रति न्याय नहीं करूंगा जिसे आपको, अिस अुप-समितिको और ब्रिटिश राष्ट्रको — जिसके कि हम भारतीय प्रतिनिधि अिस समय मेहमान हैं — समझानेके लिअे मैं यहां आया हूं। मेरी बड़ी अिच्छा है कि जब मैं यहांसे जाअूं तो यह विश्वास लेकर जाअूं कि ग्रेट ब्रिटेन और भारतके बीच सम्मानास्पद और समानतामूलक भागीदारीका सम्बन्ध बननेवाला है।

अन्तमें मैं यह कहूंगा कि जितने दिन मैं आप लोगोंके बीचमें हूं, सदैव मैं यह प्रार्थना करता रहूंगा कि भगवान अुपर्युक्त शुभ परिणाम लाये। अिससे अधिक तो मैं क्या कहूं? चान्सलर महोदय, मैं लगभग ४५ मिनट ले चुका हूं, फिर भी आपने मुझे बीचमें टोका नहीं। अिस तरह आपने मेरे प्रति जो मेहरबानी दिखाअी है, अुसके लिअे मैं आपको धन्यवाद देता हूं। मैं अिस अुदारताका अधिकारी नहीं था। अिसलिअे आपको फिर अेक बार धन्यवाद देता हूं।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी (चौथा संस्करण), जी० अे० नटेसन अेण्ड कं०; पृ० ७८७।

## ५

# मेरे सपनोंकी आजादी

दोस्तोंने बार-बार मुझ पर जोर डाला है कि मैं यह बताअूं कि आजादी क्या है? बातके दोहराये जानेका डर होते हुअे भी मुझे कहना चाहिये कि मेरे सपनोंकी आजादीका अर्थ तो 'रामराज्य' यानी दुनियामें अीश्वरका राज्य है। स्वर्गमें यह राज्य कैसा होगा सो मैं नहीं जानता। बहुत दूरकी चीज जाननेकी मुझे अिच्छा भी नहीं है। अगर वर्तमान मनको काफी अच्छा लगता हो, तो भविष्य अुससे बहुत अलग नहीं हो सकता।

अिसलिअे राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक तीनों तरहकी आजादी ही सच्ची अजादी है।

'राजनीतिक' आजादीका मतलब ही यह है कि देश पर ब्रिटिश फौजोंकी किसी भी प्रकारकी कोअी हुकूमत न रहे।

'आर्थिक' आजादीका मतलब ब्रिटिश पूंजीपतियों और ब्रिटिश पूंजीके साथ ही अुनके प्रतिरूप हिन्दुस्तानी पूंजीपतियों और अुनकी पूंजीसे पूरी

तरह छुटकारा पाना है। दूसरे शब्दोंमें, छोटेसे छोटे आदमीको भी यह महसूस होना चाहिये कि वह बड़ेसे बड़े आदमीके बराबर है। यह तभी हो सकता है जब पूंजीपति अपनी कुशलता और अपनी पूंजीमें छोटेसे छोटे और गरीबसे गरीबको अपना हिस्सेदार बना लें।

'नैतिक' आजादीका मतलब देशकी रक्षाके लिअे रखी हुअी हथियार-बन्द फौजोंसे छुटकारा पाना है। रामराज्यकी मेरी कल्पनामें ब्रिटिश फौजी हुकूमतकी जगह राष्ट्रीय फौजी हुकूमतको बैठा देनेकी कोअी गुंजाअिश नहीं है। जिस देशमें फौजी हुकूमत होती है, फिर वह फौज देशकी अपनी ही क्यों न हो, वह देश नैतिक दृष्टिसे कभी आजाद नहीं हो सकता और अिसलिअे अुसके सबसे कमजोर कहे जानेवाले नागरिक कभी पूरी तरहसे नैतिक अुन्नति नहीं कर सकते।

यद्यपि यह दावा किया जाता है कि श्री चर्चिलने ब्रिटेनके लिये लड़ाअी जीती है, तो भी अेक सच्चे अहिंसावादी सुधारकके दृष्टिकोणसे अुन्होंने अेबर्डीनके अपने भाषणमें बुद्धिमत्ताकी बातें कही हैं। किसी हथियारोंसे लैस सिपाहीकी तरह ही श्री चर्चिल भी जानते हैं कि हमारे जमानेकी पिछली दोनों लड़ाअियोंसे कितनी तबाही और बरबादी हुअी है। अखबारोंमें अुनके भाषणका जो सार छपा है अुसे मैं अिसी अंकमें दूसरी जगह दे रहा हूं। अुनके भाषणसे निराशावादकी जो गूंज अुठती है, अुसके खिलाफ मुझे जनताको सावधान कर देना चाहिये। अगर मनुष्य-समाज लड़ाअीसे मुंह मोड़ ले तो अुसका कुछ भी नुकसान नहीं होगा। लोगोंने आखिरी बूंद तक अपना जो खून बहाया है वह बेकार गया नहीं कहा जायगा, अगर अुससे हम यह सीख लेते हैं कि अच्छा या बुरा कैसा भी कारण क्यों न हो, हमें दूसरोंका खून लेनेके बजाय खुद अपना ही खून खुशीसे देना चाहिये।

अगर ब्रिटिश मंत्रियोंका मिशन हिन्दुस्तानको स्वराज्य दे देता है, तो हिन्दुस्तानको यह तय करना पड़ेगा कि अेक फौजी राष्ट्र बननेकी कोशिशमें वह, कमसे कम कुछ सालोंके लिअे, दुनियामें पांचवें दरजेकी ताकत बना रहना चाहेगा और अिस तरह अूपर जिस निराशावादका जिक्र हुआ है अुसके जवाबमें वह दुनियाको आशाका कोअी संदेश नहीं देगा, या अपनी अहिंसाको और भी संवारकर वह अपनेको दुनियाका अैसा सबसे पहला राष्ट्र बननेके लायक साबित करेगा, जो बड़ी मुश्किलोंसे प्राप्त की हुअी अपनी आजादीका अुपयोग दुनियाके सिरसे अुस बोझको अुतारनेमें करेगा, जो लड़ाअीमें प्राप्त की गअी विजयके बावजूद अुसे पीस रहा है।

हरिजनसेवक, ५-५-'४६; पृ० ११६

## श्री चर्चिलके भाषणका अखबारी सारांश

दुनियाकी हालत आज बहुत नाजुक है। वह नफरतसे भरी पड़ी है। मानव-परिवारकी बड़ी-बड़ी शाखाअें — जीती हुअी या हारी हुअी, निर्दोष या गुनहगार — आज घबराहट, दुःख और तबाहीमें डूबी पड़ी हैं। हमारे जीवनमें दो भयानक लड़ाअियोंने मानव-हृदयको अुसकी भव्यता और सभ्यतासे अलग कर दिया है।

जिसको १९ वीं सदी 'अीसाअी सभ्यता' कहती है, अुसे अपार हानि पहुंची है। क्योंकि सब बड़ी-बड़ी कौमें अैसे तनावोंमें से गुजर रही हैं कि अुनकी भावनायें कुन्द हो गअी हैं और सामाजिक व्यवहारके सुन्दर ढंग तबाह हो गये हैं।

सिर्फ विज्ञान घातक युद्धकी जबरदस्त हवाओंकी मार खाता हुआ आगे बढ़ा है। अिसने आदमियोंके हाथमें संहारके अैसे साधन दिये हैं, जो मनुष्य द्वारा सामान्य ज्ञान या सद्गुणमें की हुअी अुन्नतिसे कहीं ज्यादा शक्तिशाली हैं।

अेक अैसी दुनियामें जहां कि पहले जरूरतसे ज्यादा खुराककी अुपज समय-समय पर अेक समस्या बन जाती थी, आज कअी देशोंके लोगों पर अकालने अपना सूखा और डरावना पंजा फैला दिया है और खुराककी कमी तो सभी देशोंमें पैदा कर दी है।

मनुष्य-जातिकी आत्मिक शक्तियोंको अुन सब तकलीफोंने खतम कर दिया है, जिनमें से वह गुजर चुकी है और आज भी गुजर रही है। सिर्फ खूंरेजीने ही हमें कमजोर और निर्बल नहीं बनाया है।

मानव-प्रेरणाके मूल स्रोत फिलहाल तो सूख चुके हैं। मानव-जातिको अैसा समय मिलना ही चाहिये, जिसमें वह अपनी पुरानी शक्तियां फिरसे प्राप्त कर सके। अपनी आजकी हालतमें मनुष्य-जाति नये आघात और नअी लड़ाअियां बिलकुल बरदाश्त नहीं कर सकती। नहीं तो वह बिलकुल शुरूकी और भद्दी दशामें पहुंच जायगी।

फिर भी हम नहीं जानते कि जो घृणा और अनिश्चितताकी भावनायें आज सब देशोंमें फैली हुअी हैं, वे अुन कसौटियोंसे अधिक कड़ी कसौटियां हमारे सामने पेश नहीं करेंगी, जिनमें से अत्यन्त कष्टसे निकल कर हम बाल-बाल बचे हैं।

बहुतसे मुल्कोंमें, जहां कि सबका संगठित और मिला-जुला प्रयत्न भी पूरा नहीं पड़ता, पार्टियोंके झगड़े और आपसी फूटको भड़काया जाता है और कठपुतलियों-जैसे मतान्ध लोगोंको खड़ा किया जाता है, जो अपनी विरोधी विचारधाराओंको चिल्ला चिल्लाकर अेक-दूसरे पर थोपनेका प्रयत्न करते हैं।

फिर भी हर मुल्कके आम लोग अपनी दयालुताको, वहादुरीको और अपने साथियोंकी सेवाकी भावनाको प्रकट करते हैं। लेकिन पार्टियां, संस्थाअें और सिद्धान्त अुनको अेक-दूसरेके खिलाफ विना कारण और वेदर्दीसे अिस तरह भिड़ा रहे हैं, जैसे विलकुल निरंकुश राजाओं और वादशाहोंके जमानेमें वे भिड़ाये जाते थे।

हरिजनसेवक, ५–५–'४६; पृ० ११६

## ६

# हिन्दुस्तानकी आजादीकी मेरी कल्पना

प्र० — आपने १५ जुलाअीके 'हरिजन' में 'सच्चा खतरा' नामके लेखमें कहा है कि आम तौर पर कांग्रेसवाले जानते ही नहीं हैं कि अुन्हें किस किस्मकी आजादी चाहिये। क्या आप अपनी कल्पनाके आजाद हिन्दुस्तानका व्यापक चित्र देंगे?

अु० — हिन्दुस्तानकी आजादीके वारेमें अपने विचार मैं समय-समय पर वता चुका हूं। मगर चूंकि यह सवाल कुछ सिलसिलेवार पूछे गये सवालोंमें से अेक है, अिसलिअे कही गअी वातोंको दोहराकर भी अिसका जवाव देना वेहतर होगा।

हिन्दुस्तानकी आजादीसे मतलव है, सारे हिन्दुस्तानकी आजादी। अुसमें हिन्दुस्तानकी रियासतें भी आ जातीं हैं और दूसरी विदेशी हुकूमतें भी। अुदाहरणके लिअे, फ्रांसीसी और पुर्तगाली हुकूमतें। मैं समझता हूं कि ये परदेशी हुकूमतें तो व्रिटेनकी सरकारके सहारे ही यहां निभ रही हैं। आजादीका अर्थ हिन्दुस्तानके आम लोगोंकी आजादी होना चाहिये,, अुन पर आज हुकूमत करनेवालोंकी आजादी नहीं। हाकिम आज जिन्हें अपने पांव-तले रौंद रहे हैं, आजाद हिन्दुस्तानमें अुन्हीं लोगोंकी मेहरवानी पर हाकिमोंको रहना होगा। अुन्हें लोगोंके सेवक वनना होगा और अुनकी मरजीके मुताविक काम करना होगा।

आजादी नीचेसे शुरू होनी चाहिये। हरअेक गांवमें जमहूरी सल्तनत या पंचायत राज होगा। अुसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। अिसका मतलव यह है कि हरअेक गांवको अपने पांव पर खड़ा होना होगा — अपनी जरूरतें खुद पूरी कर लेनी होंगी, ताकि वह अपना सारा कारोवार खुद चला सके। यहां तक कि वह सारी दुनियाके खिलाफ अपनी हिफाजत खुद कर सके। अुसे तालीम देकर अिस हद तक तैयार करना होगा कि वह

वाहरी हमलेके मुकावलेमें अपनी रक्षा करते हुअे मर-मिटनेके लायक वन जाय। अिस तरह आखिर हमारी वुनियाद व्यक्ति पर होगी। अिसका यह मतलव नहीं कि पड़ोसियों पर या दुनिया पर भरोसा न रखा जाय; या अुनकी राजी-खुशीसे दी हुअी मदद न ली जाय। खयाल यह है कि सव आजाद होंगे और सब अेक-दूसरे पर अपना असर डाल सकेंगे। जिस समाजका हरअेक आदमी यह जानता है कि अुसे क्या चाहिये और अिससे भी वढ़कर जिसमें यह जाना जाता है कि वरावरीकी मेहनत करके भी दूसरोंको जो चीज नहीं मिलती है, वह खुद भी किसीको नहीं लेनी चाहिये, वह समाज जरूर ही वहुत अूंचे दरजेकी सभ्यतावाला होना चाहिये।

अैसे समाजकी रचना स्वभावतः सत्य और अहिंसा पर ही हो सकती है। मेरी राय है कि जव तक अीश्वर पर जीता-जागता विश्वास न हो, सत्य और अहिंसा पर चलना नामुमकिन है। अीश्वर या खुदा वह जिन्दा ताकत है, जिसमें दुनियाकी तमाम ताकतें समा जाती हैं। वह किसीका सहारा नहीं लेती और दुनियाकी दूसरी सव ताकतोंके खतम हो जाने पर भी कायम रहती है। अिस जीती-जागती रोशनी पर, जिसने अपने दामनमें सव कुछ लपेट रखा है, मैं विश्वास न रखूं, तो मैं समझ न सकूंगा कि मैं आज किस तरह जिन्दा हूं।

अैसा समाज अनगिनत गांवोंका वना होगा। अुसका फैलाव अेकके अूपर अेकके ढंग पर नहीं, वल्कि लहरोंकी तरह अेकके वाद अेककी शकलमें होगा। जिन्दगी मीनारकी शकलमें नहीं होगी, जहां अूपरकी तंग चोटीको नीचेके चौड़े पाये पर खड़ा होना पड़ता है। वहां तो समुद्रकी लहरोंकी तरह जिन्दगी अेकके वाद अेक घेरेकी शकलमें होगी और व्यक्ति अुसका मध्यविन्दु होगा। यह व्यक्ति हमेशा अपने गांवके खातिर मिटनेको तैयार रहेगा। गांव अपने अिर्दगिर्दके गांवोंके लिअे मिटनेको तैयार होगा। अिस तरह आखिर सारा समाज अैसे लोगोंका वन जायगा, जो अुद्धत वनकर कभी किसी पर हमला नहीं करते, वल्कि हमेशा नम्र रहते हैं, और अपनेमें समुद्रकी अुस शानको महसूस करते हैं जिसके वे अेक जरूरी अंग हैं।

अिसलिअे सवसे वाहरका घेरा या दायरा अपनी ताकतका अिस्तेमाल भीतरवालोंको कुचलनेमें नहीं करेगा, बल्कि अुन सवको ताकत देगा और अुनसे ताकत पायेगा। मुझे ताना दिया जा सकता है कि यह सव तो खयाली तसवीर है, अिसके वारेमें सोचकर वक्त क्यों विगाड़ा जाय? युक्लिडकी परिभाषावाला बिन्दु कोअी अिन्सान खींच नहीं सकता, फिर भी अुसकी कीमत हमेशा रही है और रहेगी। अिसी तरह मेरी अिस तसवीरकी भी कीमत है। अिसके लिअे अिन्सान जिन्दा रह सकता है। अगरचे अिस तसवीरको पूरी

तरह बनाना या पाना मुमकिन नहीं है, तो भी अिस सही तसवीरको पाना या अिस तक पहुंचना हिन्दुस्तानकी जिन्दगीका मकसद होना चाहिये। जिस चीजको हम चाहते हैं अुसकी सही-सही तसवीर हमारे सामने होनी चाहिये। तभी हम अुससे मिलती-जुलती कोअी चीज पानेकी अुम्मीद रख सकते हैं। अगर हिन्दुस्तानके हरअेक गांवमें कभी पंचायती राज कायम हुआ, तो मैं अपनी अिस तसवीरकी सचाअी साबित कर सकूंगा, जिसमें सबसे पहला और सबसे आखिरी दोनों बराबर होंगे या यों कहिये कि न कोअी पहला होगा, न आखिरी।

अिस तसवीरमें हरअेक धर्मकी अपनी पूरी और बराबरीकी जगह होगी। हम सब अेक ही आलीशान पेड़के पत्ते हैं। अिस पेड़की जड़ हिलायी नहीं जा सकती, क्योंकि वह पाताल तक पहुंची हुअी है। जबरदस्तसे जबरदस्त आंधी भी अुसे हिला नहीं सकती।

अिस तसवीरमें अुन मशीनोंके लिअे कोअी जगह न होगी, जो अिन्सानकी मेहनतकी जगह लेकर चन्द लोगोंके हाथोंमें सारी ताकत अिकट्ठी कर देती हैं। सुधरे हुअे लोगोंकी दुनियामें मेहनतकी अपनी अनोखी जगह है। अुसमें अैसी मशीनोंकी गुंजाअिश होगी, जो हर आदमीको अुसके काममें मदद पहुंचायें। लेकिन मुझे कबूल करना चाहिये कि मैंने कभी बैठकर यह सोचा नहीं कि अिस तरहकी मशीन कैसी हो सकती है। सिलाअीकी सिंगर मशीनका खयाल मुझे आया था। लेकिन अुसका जिक्र भी मैंने यों ही कर दिया था। अपनी अिस तसवीरको पूर्ण बनानेके लिअे मुझे अुसकी जरूरत नहीं।

हरिजनसेवक, २८–७–’४६; पृ० २३६

## ७

# पंचायत राज

अगर हम पंचायत राज चाहते हैं, तो छोटेसे छोटा हिन्दुस्तानी बड़ेसे बड़े हिन्दुस्तानीके बराबर ही हिन्दुस्तानका राजा है। अिसके लिअे अुसे शुद्ध होना चाहिये। न हो तो अुसे अैसा बनना चाहिये। जैसा वह शुद्ध हो वैसा ही समझदार भी हो। अिससे वह जातिभेद, वर्णभेदको नहीं मानेगा। सबको अपने समान समझेगा। दूसरोंको अपने प्रेमपाशमें बांधेगा। अुसके लिअे कोअी अछूत नहीं होगा। अुसी तरह मजदूर और महाजन दोनों अुसके लिअे बराबर होंगे। अिससे वह करोड़ों मजदूरोंकी तरह पसीनेकी रोटी कमायेगा और कलम तथा कुदालीको अेकसा समझेगा। अिस शुभ अवसरको नजदीक लानेके लिअे वह खुद भंगी बन जायेगा। वह समझदार होगा, अिसलिअे अफीम या शराबको छुअेगा ही क्यों? स्वभावसे ही वह स्वदेशी-व्रतका पालन करेगा। अपनी पत्नीको छोड़कर वह सभी स्त्रियोंको अुम्रके मुताबिक अपनी मां, बहन या लड़की मानेगा। किसी पर बुरी नजर नहीं डालेगा। मनमें भी दूसरी भावना नहीं रखेगा। जो हक अुसका है वही अपनी स्त्रीका समझेगा। समय आने पर खुद मरेगा; दूसरेको कभी नहीं मारेगा। और बहादुर अैसा होगा कि सिक्खोंके गुरुओंकी तरह अकेला सवा लाखके सामने अड़ा रहेगा और अेक कदम भी पीछे नहीं हटेगा। अैसा हिन्दुस्तानी यह नहीं पूछेगा कि आजकी परिस्थितियोंमें अुसका क्या कर्तव्य है।

हरिजनसेवक, १८–१–'४८; पृ० ४५७

# ८

## ग्राम-स्वराज्य

प्र० — हिन्दुस्तानमें किसी भी क्षण जो परिस्थिति पैदा हो सकती है, अुसको ध्यानमें रखकर क्या आप ग्राम-स्वराज्य-समितिकी कोअी अैसी रूपरेखा पेश करेंगे, जो देशके गांवोंमें किसी अूपरी सत्ता या संस्थाके अभावमें, और अुस पर किसी तरहका कोअी आधार न रखते हुअे भी, अपना काम कर सके? खास तौर पर आप अैसा क्या प्रबन्ध करेंगे कि जिससे समितिको गांवका पूरा-पूरा प्रतिनिधित्व प्राप्त रहे और वह निष्पक्ष भावसे क्षमता व कुशलतापूर्वक, किसीकी राजी-नाराजीकी परवाह किये बिना, अपना काम कर सके? अुसके अधिकार-क्षेत्रकी क्या मर्यादा होगी और अुसके आदेशोंका पालन करानेके लिअे कौनसा तंत्र काम करेगा? और, वह कौनसा तरीका होगा, जिससे समूची समिति या अुसके व्यक्तिगत सदस्य अपनी घूसखोरी, अक्षमता अथवा दूसरी अयोग्यताके कारण हटाये जा सकेंगे?

अु० — ग्राम-स्वराज्यकी मेरी कल्पना यह है कि वह अेक अैसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम जरूरतोंके लिअे अपने पड़ोसियों पर भी निर्भर नहीं करेगा; और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतोंके लिअे — जिनमें दूसरोंका सहयोग अनिवार्य होगा — वह परस्पर सहयोगसे काम लेगा। अिस तरह हरअेक गांवका पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरतका तमाम अनाज और कपड़ेके लिअे पूरी कपास खुद पैदा कर ले। अुसके पास अितनी फाजिल जमीन होनी चाहिये, जिसमें ढोर चर सकें और गांवके बड़ों व बच्चोंके लिअे मन-बहलावके साधन और खेलकूदके मैदान वगैराका बन्दोबस्त हो सके। अिसके बाद भी जमीन बचे, तो अुसमें वह अैसी अुपयोगी फसलें बोयेगा, जिन्हें बेचकर वह आर्थिक लाभ अुठा सके; यों वह गांजा, तम्बाकू, अफीम वगैराकी खेतीसे बचेगा। हरअेक गांवमें गांवकी अपनी अेक नाटकशाला, पाठशाला और सभा-भवन रहेगा। पानीके लिअे अुसका अपना अिन्तजाम होगा — वाटरवर्क्स होंगे — जिससे गांवके सभी लोगोंको शुद्ध पानी मिला करेगा। कुओं और तालाबों पर गांवका पूरा नियंत्रण रखकर यह काम किया जा सकता है। बुनियादी तालीमके आखिरी दरजे तक शिक्षा सबके लिअे लाजिमी होगी। जहां तक हो सकेगा, गांवके सारे काम सहयोगके आधार पर किये जायंगे। जात-पांत और क्रमागत अस्पृश्यताके जैसे भेद आज हमारे समाजमें पाये जाते हैं, वैसे अिस ग्राम-समाजमें बिलकुल न रहेंगे। सत्याग्रह और असहयोगके

शास्त्रके साथ अहिंसाकी सत्ता ही ग्रामीण समाजका शासन-बल होगी। गांवकी रक्षाके लिअे ग्राम-सैनिकोंका अेक अैसा दल रहेगा, जिसे लाजिमी तौर पर वारी-वारीसे गांवके चौकी-पहरेका काम करना होगा। अिसके लिअे गांवमें अैसे लोगोंका रजिस्टर रखा जायगा। गांवका शासन चलानेके लिअे हर साल गांवके पांच आदमियोंकी अेक पंचायत चुनी जायगी। अिसके लिअे नियमानुसार अेक खास निर्धारित योग्यतावाले गांवके वालिग स्त्री-पुरुषोंको अधिकार होगा कि वे अपने पंच चुन लें। अिन पंचायतोंको सब प्रकारकी आवश्यक सत्ता और अधिकार रहेंगे। चूंकि अिस ग्राम-स्वराज्यमें आजके प्रचलित अर्थोंमें सजा या दंडका कोअी रिवाज नहीं रहेगा, अिसलिअे यह पंचायत अपने अेक सालके कार्यकालमें स्वयं ही धारासभा, न्यायसभा और कारोवारी सभाका सारा काम संयुक्त रूपसे करेगी। आज भी अगर कोअी गांव चाहे तो अपने यहां अिस तरहका प्रजातंत्र कायम कर सकता है। अुसके अिस काममें मौजूदा सरकार भी ज्यादा दस्तंदाजी नहीं करेगी। क्योंकि अुसका गांवसे जो भी कारगर संबंध है, वह सिर्फ मालगुजारी वसूल करने तक ही सीमित है। यहां मैंने अिस बातका विचार नहीं किया है कि अिस तरहके गांवका अपने पास-पड़ोसके गांवोंके साथ या केन्द्रीय सरकारके साथ, अगर वैसी कोअी सरकार हुअी तो, क्या सम्बन्ध रहेगा। मेरा हेतु तो ग्राम-शासनकी अेक रूपरेखा पेश करनेका ही है। अिस ग्राम-शासनमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आधार रखनेवाला संपूर्ण प्रजातंत्र काम करेगा। व्यक्ति ही अपनी अिस सरकारका निर्माता भी होगा। अुसकी सरकार और वह दोनों अहिंसाके नियमके वश होकर चलेंगे। अपने गांवके साथ वह सारी दुनियाकी शक्तिका मुकावला कर सकेगा, क्योंकि हरअेक देहातीके जीवनका सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और अपने गांवकी अिज्जतकी रक्षाके लिअे मर मिटे।

अिन पंक्तियोंको लिखते हुअे मेरे मनमें जो सवाल अुठ रहा है, वही सवाल संभव है कि पाठक भी मुझे पूछें। सवाल यह है कि अपनी अिस तसवीरके अनुसार मैं सेवाग्रामको अैसा ही रूप क्यों नहीं दे पाया हूं? मेरा जवाव यह है कि मैं कोशिश कर रहा हूं। मैं सफलताके धुंधले-से चिह्न देख रहा हूं, लेकिन मैं प्रत्यक्षमें कुछ भी नहीं दिखा सकता। किन्तु जो चित्र यहां अुपस्थित किया गया है, अपने-आपमें असंभव जैसी कोअी चीज अुसमें नहीं है। अैसे गांवको तैयार करनेमें अेक आदमीकी पूरी जिन्दगी भी खतम हो सकती है। सच्चे प्रजातंत्रका और ग्राम-जीवनका कोअी भी प्रेमी अेक गांवको लेकर वैठ सकता है और अुसीको अपनी सारी दुनिया मानकर अुसके काममें मशगूल रह सकता है। निश्चय ही अुसे अिसका अच्छा फल मिलेगा। वह गांवमें वैठते ही अेक साथ गांवके भंगी, कतवैये, चौकीदार, वैद्य और

शिक्षकका काम शुरू कर देगा। अगर गांवका कोअी आदमी अुसके पास न फटके, तो भी वह सन्तोषके साथ अपने सफाअी और कताअीके काममें जुटा रहेगा।

हरिजनसेवक, २-८-'४२; पृ० २४३-४४

९

# हिन्द सचमुच कैसे आजाद होगा?

[नीचेके दोनों अुद्धरण 'हिन्द स्वराज्य' से लिये गये हैं। पाठकके अिस प्रश्न पर कि सम्पादक (गांधीजी) हिन्दुस्तानको आजाद करनेके लिअे क्या सुझाते हैं, यह निम्नलिखित वार्तालाप सम्पादक और पाठकके बीच हुआ था।]

१

पाठक: सुधारके बारेमें आपके विचार मैं समझ गया। आपने जो कहा अुस पर मुझे ध्यान देना होगा। तुरन्त सब मंजूर कर लिया जाय, अैसा तो आप नहीं मानते होंगे; अैसी आशा भी नहीं रखते होंगे। आपके अैसे विचारोंके मुताबिक आप हिन्दके आजाद होनेका क्या अुपाय बतायेंगे?

संपादक: मेरे विचार सब लोग तुरन्त मान लें अैसी मैं आशा नहीं रखता। मेरा फर्ज अितना ही है कि आपके जैसे जो लोग मेरे विचार जानना चाहते हैं, अुनके सामने मैं अपने विचार रख दूं। वे विचार अुन्हें पसन्द आयेंगे या नहीं आयेंगे, यह तो समय बीतने पर ही मालूम होगा।

हिन्दकी आजादीके अुपायोंका हम विचार कर चुके। फिर भी हमने दूसरे रूपमें अुन पर विचार किया। अब हम अुन पर अुनके स्व-रूपमें विचार करें।

जिस कारणसे रोगी बीमार हुआ हो वह कारण अगर दूर कर दिया जाय तो रोगी अच्छा हो जायगा, यह जग-मशहूर बात है। अिसी तरह जिस कारणसे हिन्द गुलाम बना वह कारण अगर दूर कर दिया जाय तो वह बंधनसे मुक्त हो जायगा।

पाठक: आपकी मान्यताके मुताबिक हिन्दका सुधार (सभ्यता) अगर सबसे अच्छा है तो फिर वह गुलाम क्यों बना?

संपादक: सुधार तो मैंने कहा वैसा ही है, लेकिन देखनेमें आया है कि सब सुधारों पर आफतें आया करती हैं। जो सुधार अचल है वह

आखिरकार आफतको दूर कर देता है। हिन्दके बालकोंमें कोअी न कोअी कमी थी अिसलिअे वह सुधार आफतोंसे घिर गया। लेकिन अिस घेरेमें से छूटनेकी अुसमें ताकत है, यह अुसका गौरव दिखाता है।

और फिर सारा हिन्दुस्तान अुसमें (गुलामीमें) घिरा हुआ नहीं है। जिन्होंने पश्चिमकी शिक्षा पाअी है और जो अुसके पाशमें फंस गये हैं, वे ही गुलामीमें घिरे हुअे हैं। हम जगतको अपनी दमड़ीके मापसे नापते हैं। अगर हम गुलाम हैं तो जगतको भी गुलाम मान लेते हैं। हम कंगाल दशामें हैं अिसलिअे मान लेते हैं कि सारा हिन्दुस्तान अैसी दशामें है। दरअसल अैसा कुछ नहीं है। फिर भी हमारी गुलामी सारे देशकी गुलामी है, अैसा मानना ठीक है। लेकिन अूपरकी बात हम ध्यानमें रखें तो समझ सकेंगे कि हमारी अपनी गुलामी मिट जाय, तो हिन्दुस्तानकी गुलामी मिट गअी मान लेना चाहिये। अिसमें अब आपको स्वराज्यकी व्याख्या भी मिल जाती है। हम अपने अूपर राज करें वही स्वराज्य है, और वह स्वराज्य हमारी हथेलीमें है।

अिस स्वराज्यको आप सपने जैसा न मानें। मनसे मानकर बैठे रहनेका यह स्वराज्य नहीं है। यह तो अैसा स्वराज्य है कि आपने अगर अुसका स्वाद चख लिया हो, तो दूसरोंको अुसका स्वाद चखानेके लिअे आप जिन्दगी-भर कोशिश करेंगे। लेकिन मुख्य बात तो हर शख्सके स्वराज्य भोगनेकी है। डूबता आदमी दूसरेको नहीं तारेगा, लेकिन तैरता आदमी दूसरेको तारेगा। हम खुद गुलाम होंगे और दूसरोंको आजाद करनेकी बात करेंगे तो वह बननेवाली नहीं है।

लेकिन अितना काफी नहीं है। हमें और भी आगे सोचना होगा।

अब आपकी समझमें अितना तो आया होगा कि अंग्रेजोंको देशसे निकालनेका मकसद सामने रखनेकी जरूरत नहीं है। अगर अंग्रेज हिन्दी होकर रहें तो हम अुनका समावेश यहां कर सकते हैं। अंग्रेज अगर अपने सुधार (सभ्यता) के साथ रहना चाहें तो अुनके लिअे हिन्दुस्तानमें जगह नहीं है। अैसी हालत पैदा करना हमारे हाथमें है।

पाठक: अंग्रेज हिन्दी बनें यह आपकी बात नामुमकिन है।

संपादक: हमारा अैसा कहना यह कहनेके बराबर है कि अंग्रेज मनुष्य नहीं हैं। वे हमारे जैसे बनें या न बनें, अिसकी हमें परवाह भी नहीं है। हम अपना घर साफ करें। फिर रहने लायक लोग ही अुसमें रहेंगे; दूसरे अपने आप चले जायेंगे। अैसा अनुभव तो हरअेक आदमीको हुआ होगा।

पाठक: अैसा होनेकी बात अितिहासमें तो नहीं देखी।

संपादक : जो चीज अितिहासमें नहीं देखी वह नहीं होगी, अैसा माननेमें तो हमारी ही कमी (न्यूनता) है। जो बात हमारी अकलमें आ सके अुसे आखिर हमें आजमाना तो चाहिये ही।

हर देशकी हालत अेकसी नहीं होती। हिन्दुस्तानकी हालत विचित्र है। हिन्दुस्तानका बल असाधारण है। अिसलिअे दूसरे अितिहासोंसे हमारा कम संबंध है। मैंने आपको बताया कि जब और सुधार (सभ्यतायें) मिट्टीमें मिल गये, तब हिन्दके सुधारको आंच नहीं आयी है।

पाठक : मुझे ये सब बातें ठीक नहीं लगतीं। हमें लड़कर अंग्रेजोंको निकालना ही होगा, अिसमें कोअी शक नहीं। जब तक वे हमारे मुल्कमें हैं तब तक हमें चैन नहीं पड़ सकता। 'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं' अैसा देखनेमें आता है। अंग्रेज यहां हैं अिसलिअे हम कमजोर होते जा रहे हैं। हमारा तेज चला गया है और हमारे लोग घबराये-से दीखते हैं। वे हमारे देशके लिअे यम (काल) जैसे हैं। अुस यमको हमें किसी भी प्रयत्नसे भगाना ही होगा।

संपादक : आप अपने आवेशमें मेरा सारा कहना भूल गये हैं। अंग्रेजोंको यहां लानेवाले हम हैं और वे हमारी बदौलत यहां रहते हैं। आप यह कैसे भूल जाते हैं कि हमने अुनका सुधार अपनाया है अिसलिअे वे यहां रह सकते हैं? आप अुनसे जो नफरत करते हैं वह नफरत आपको अुनके सुधारसे करनी चाहिये। फिर भी यह मान लें कि हम लड़कर अुन्हें निकालना चाहते हैं। तो यह कैसे हो सकेगा?

पाठक : जैसे अिटलीने किया वैसे। मेजिनी और गैरीबाल्डीने जो किया वह तो हम भी कर सकते हैं। वे महावीर थे अिस बातसे क्या आप अिनकार कर सकेंगे?

हिन्द स्वराज्य, प्रक० १४; पृ० ४८-५०

## २

संपादक : आपने अिटलीका अुदाहरण ठीक दिया। मैजिनी महात्मा था। गैरीबाल्डी बड़ा योद्धा था। वे दोनों पूजनीय थे। अुनसे हम बहुत सीख सकते हैं। फिर भी अिटलीकी दशा और हिन्दुस्तानकी दशामें फरक है।

पहले तो मैजिनी और गैरीबाल्डीके बीचका भेद जानने लायक है। मैजिनीके अरमान अलग थे। मैजिनी जैसा सोचता था वैसा अिटलीमें नहीं हुआ। मैजिनीने मनुष्य-जातिके फर्जके बारेमें लिखते हुअे यह बताया है कि हरअेकको स्वराज्य भोगना चाहिये। यह बात तो अुसके लिअे सपने जैसी

रही। गैरीबाल्डी और मैजिनीके बीच मतभेद हो गया था, यह हमें याद रखना चाहिये। अिसके सिवा, गैरीबाल्डीने हर अिटालियनके हाथमें हथियार दिये और हर अिटालियनने हथियार लिये।

अिटली और आस्ट्रियाके बीच सुधार (सभ्यता) का भेद नहीं था। वे तो 'चचेरे भाअी' माने जायंगे। 'जैसेको तैसा' वाली बात अिटलीकी थी। अिटलीको परदेशी (आस्ट्रियाके) जूअेसे छुड़ानेका मोह गैरीबाल्डीको था। अिसके लिअे अुसने कावूरके मारफत जो साजिशें कीं, वे अुसकी शूरताको बट्टा लगानेवाली हैं।

और अंतमें नतीजा क्या निकला? अिटलीमें अिटालियन राज करते हैं अिसलिअे अिटलीकी प्रजा सुखी है, अैसा अगर आप मानते हों तो मैं आपसे कहूंगा कि आप अंधेरेमें भटकते हैं। मैजिनीने साफ साफ बताया है कि अिटली आजाद नहीं हुआ है। विक्टर अिमेन्युअलने अिटलीका अेक अर्थ किया, मैजिनीने दूसरा। अिमेन्युअल, कावूर और गैरीबाल्डीके विचारसे अिटलीका अर्थ था अिमेन्युअल या अिटलीका राजा और अुसके हुजूरी। मैजिनीके विचारसे अिटलीका अर्थ था अिटलीके लोग — अुसके किसान। अिमेन्युअल वगैरा तो अुनके (प्रजाके) नौकर थे। मैजिनीका अिटली अब भी गुलाम है। दो राजाओंके बीच शतरंजकी बाजी लगी थी; अिटलीकी प्रजा तो सिर्फ प्यादा थी और है। अिटलीके मजदूर अब भी दुःखी हैं। अिटलीके मजदूरोंकी दाद-फरियाद नहीं सुनी जाती, अिसलिअे वे लोग खून करते हैं, विरोध करते हैं, सिर फोड़ते हैं और वहां बलवा होनेका डर आज भी बना हुआ है। आस्ट्रियाके जानेसे अिटलीको क्या लाभ हुआ? जिन सुधारोंके लिअे जंग मचा वे सुधार हुअे नहीं, प्रजाकी हालत सुधरी नहीं।

हिन्दुस्तानकी अैसी दशा करनेका तो आपका अिरादा नहीं ही होगा। मैं जानता हूं कि आपका विचार हिन्दुस्तानके करोड़ों लोगोंको सुखी करनेका होगा, यह नहीं होगा कि आप या मैं राजसत्ता ले लूं। अगर अैसा है तो हमें अेक ही विचार करना चाहिये। वह यह कि प्रजा स्वतंत्र कैसे हो।

आप कबूल करेंगे कि कुछ देशी रियासतोंमें प्रजा कुचली जाती है। वहांके शासक नीचतासे लोगोंको कुचलते हैं। अुनका जुल्म अंग्रेजोंके जुल्मसे भी ज्यादा है। अैसा जुल्म अगर आप हिन्दुस्तानमें चाहते हों तो हमारी पटरी कभी नहीं बैठेगी।

मेरा स्वदेशाभिमान मुझे यह नहीं सिखाता कि देशी राजाओंके मातहत जिस तरह प्रजा कुचली जाती है अुसी तरह अुसे कुचलने दिया जाय। मुझमें बल होगा तो मैं देशी राजाओंके जुल्मके खिलाफ और अंग्रेजी जुल्मके खिलाफ जूझूंगा।

स्वदेशाभिमानका अर्थ मैं देशका हित समझता हूं। अगर देशका हित अंग्रेजोंके हाथों होता हो तो मैं आज अंग्रेजोंको झुककर नमस्कार करूंगा। अगर कोअी अंग्रेज कहे कि देशको आजाद करना चाहिये, जुलमके ख़िलाफ होना चाहिये और लोगोंकी सेवा करनी चाहिये, तो अुस अंग्रेजको मैं हिन्दी मानकर अुसका स्वागत करूंगा।

फिर अिटलीकी तरह हिन्दको हथियार मिलें तब वह लड़ सकता है; पर अिस महाभारत (बहुत बड़े) कामका तो, मालूम होता है, आपने विचार ही नहीं किया है। अंग्रेज गोला-बारूदसे पूरी तरह लैस हैं, अिससे कुछ डर नहीं लगता। लेकिन अैसा तो दीखता है कि अुनके हथियारोंसे अुन्हींके खिलाफ लड़ना हो तो हिन्दको हथियारबंद करना ही होगा। अगर अैसा हो सकता हो तो अिसमें कितने साल लगेंगे? और तमाम हिन्दियोंको हथियारबंद करना तो हिन्दको यूरोप-सा बनाने जैसा होगा। अैसा अगर हुआ तो आज यूरोपके जो बेहाल हैं वैसे ही हिंदके भी होंगे। थोड़ेमें हिन्दको यूरोपका सुधार अपनाना होगा। अैसा ही होनेवाला हो तो अच्छी बात यह होगी कि जो अंग्रेज अुस सुधारमें कुशल हैं अुन्हींको हम यहां रहने दें। अुनसे थोड़ा-बहुत झगड़कर हम कुछ हक पायेंगे, कुछ नहीं पायेंगे और अपने दिन गुजारेंगे।

लेकिन बात तो यह है कि हिन्दकी प्रजा कभी हथियार नहीं अुठायेगी; न अुठाये यह ठीक ही है।

पाठक: आप तो बहुत आगे बढ़ गये। सबके हथियारबंद होनेकी जरूरत नहीं। हम पहले तो कुछ खून करके आतंक फैलायेंगे। फिर जो थोड़े लोग हथियारबंद तैयार होंगे वे खुल्लमखुल्ला लड़ेंगे। अुसमें पहले तो बीस पचीस लाख हिन्दी मरेंगे सही। लेकिन आखिर हम देशको अंग्रेजोंसे जीत लेंगे। हम गुरीला (डाकुओं जैसी) लड़ाअी लड़कर अंग्रेजोंको हरा देंगे।

संपादक: आपका खयाल हिन्दकी पवित्र भूमिको राक्षसी बनानेका लगता है। खून करके हिन्दको छुड़ायेंगे, अैसा विचार करते हुअे आपको त्रास क्यों नहीं होता? खून तो हमें अपना करना चाहिये। क्योंकि हम नामर्द बन गये हैं अिसलिअे हम खूनका विचार करते हैं। अैसा करके आप किसको आजाद करेंगे? हिन्दकी प्रजा अैसा कभी नहीं चाहती। हम जैसे लोग ही, जिन्होंने अधम सुधाररूपी भांग पी है, नशेमें अैसा विचार करते हैं। खून करके जो लोग राज्य करेंगे वे प्रजाको सुखी नहीं बना सकेंगे। धींगराने[1] जो खून किया, जो खून हिन्दुस्तानमें हुअे हैं, अुनसे देशको

---

१. पंजाबी युवक मदनलाल धींगराने जुलाअी १९०९ में लंदनमें कर्नल सर कर्ज़न वाअिलीको गोलीका निशाना बनाया था। अुसे फांसीकी सज़ा मिली थी।

फायदा हुआ है अैसा अगर कोअी मानता हो तो वह बड़ी भूल करता है। धींगराको मैं देशाभिमानी मानता हूं, लेकिन अुसका देशप्रेम पागल था। अुसने अपने शरीरका बलिदान गलत तरीकेसे दिया। अुससे अंतमें तो देशको नुकसान ही होनेवाला है।

पाठक : लेकिन आपको अितना तो कबूल करना ही होगा कि अंग्रेज अिस खूनसे डर गये हैं, और लॉर्ड मॉर्लेने जो कुछ दिया है वह अैसे डरसे ही दिया है।

संपादक : अंग्रेज डरपोक प्रजा हैं, और बहादुर भी हैं। गोला-बारूदका असर अुन पर तुरंत होता है यह मैं मानता हूं। संभव है लॉर्ड मॉर्लेने जो दिया वह डरसे दिया हो। लेकिन डरसे मिली हुअी चीज जब तक डर बना रहता है तभी तक टिक सकती है।

हिन्द स्वराज्य, प्रक० १५; पृ० ५१–५४

## १०

# हिंसा या अुद्योगीकरणसे स्वराज्य प्राप्त नहीं होगा

[गांधीजी द्वारा रस्किनके 'अन्टु दिस लास्ट' के आधार पर लिखित 'सर्वोदय' * के अंतिम प्रकरण 'सारांश' से।]

रस्किनने अपने बंधुओं — अंग्रेजों — के लिअे जो लिखा, वह अगर अंग्रेजोंको अेक दरजा लागू होता हो तो हिन्दियोंको हजार दरजा लागू होता है। हिन्दुस्तानमें नये विचार फैल रहे हैं। आजकलके पश्चिमी शिक्षा पाये हुअे जवानोंमें जोश आया है वह तो ठीक है। लेकिन जोशका अगर अच्छा अुपयोग किया जाय तो अच्छा परिणाम आता है और गलत अुपयोग किया जाय तो बुरा परिणाम ही आनेवाला है। 'स्वराज्य' पाना चाहिये, अैसी अेक ओरसे आवाज अुठती है। विलायतकी तरह कारखाने खोलकर झटपट पैसा जमा करना चाहिये, अैसी आवाज दूसरी ओरसे अुठती है।

स्वराज्यका अर्थ हम शायद ही समझते होंगे। नातालमें स्वराज्य है। फिर भी हम कहना चाहते हैं कि अगर नातालके जैसा हम करना चाहते हों तो वह स्वराज्य नरक-राज्यके बराबर होगा। वे (गोरे) काफिरों[1]को कुचलते हैं, हिंदियोंको मिटाते हैं। स्वार्थमें अंधे होकर स्वार्थ-राज्य भोगते

---

* नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद–१४, द्वारा प्रकाशित।

१. अफ्रीकाके आदिवासी; हबशी।

हैं। अगर काफ़िर और हिंदी नातालमें से चले जायें, तो वे आपसमें लड़कर खतम हो जायेंगे।

तो क्या ट्रांसवालके जैसा स्वराज्य हम लेंगे? जनरल स्मट्स अुसके अगुआओंमें से अेक हैं। वे अपने लिखित या जवानी दिये हुअे वचन निभाते नहीं हैं। कहते हैं कुछ, करते हैं कुछ। अंग्रेज अुनसे परेशान हो गये हैं। पैसा बचानेके बहाने अंग्रेज सिपाहियोंकी रोजी छीन ली जाती है और अुनकी जगह डचोंको रखते हैं। हम नहीं मानते कि अिसमें से अंतमें डच भी सुखी होंगे। जिनकी निगाह स्वार्थ पर ही है वे परायी प्रजाको लूटकर अपनी प्रजाको लूटनेके लिअे भी आसानीसे तैयार हो जायेंगे।

दुनियाके चारों ओर नजर डालनेसे हम देख सकेंगे कि स्वराज्यके नामसे पहचाना जानेवाला राज्य प्रजाकी खुशहाली या सुखके लिअे काफी नहीं है। अेक आसान मिसाल लेनेसे यह बात झट समझमें आ जायगी। लुटेरोंकी टोलीमें अगर स्वराज्य हो तो अुसका क्या परिणाम आयेगा, यह सब समझ सकते हैं। अुन पर तो जो लुटेरे न हों अुन्हींका अगर काबू हो तो वे अंतमें सुखी होंगे। अमरीका, फ्रांस, अिंग्लैंड ये सब बड़े राज्य हैं। लेकिन वे सचमुच सुखी हैं अैसा माननेका कोअी कारण नहीं है।

'स्वराज्य' का सच्चा अर्थ है अपनेको काबूमें रखना जानना। अैसा तो वह आदमी कर सकता है, जो खुद नीतिका पालन करता है; किसीको ठगता नहीं है; सत्यको छोड़ता नहीं है; अपने मां-बाप, अपनी पत्नी, अपने बच्चे, अपने नौकर, अपने पड़ोसी, सबके प्रति अपना फर्ज अदा करता है। अैसा आदमी किसी भी देशमें अपना स्वराज्य भोगता है। जिस प्रजामें अैसे बहुतसे लोग हों वहां सहज रूपमें ही स्वराज्य है।

अेक प्रजा दूसरी पर राज्य करे यह आम तौर पर गलत है। अंग्रेज हम पर राज्य करते हैं यह विपरीत बात है, लेकिन अगर अंग्रेज हिन्दुस्तान छोड़ जायें तो हिन्दियोंने कुछ कमाया अैसा माननेका कारण नहीं है।

वे (यहां) राज्य करते हैं अिसका कारण हम ही हैं; वह कारण है हमारा आपसी बेमेल — हमारे घरकी फूट, हमारी अनीति और हमारा अज्ञान। ये तीन चीजें अगर दूर हो जायें तो अेक पत्ता भी हिलाये बिना अंग्रेज हिन्दुस्तान छोड़कर चले जायेंगे; अितना ही नहीं हम सच्चा स्वराज्य भोगने लगेंगे।

'बमगोला' छोड़नेमें बहुतोंको मजा आता है। यह निरे अज्ञान और नासमझीकी निशानी है। अगर सब अंग्रेजोंको मार डालना मुमकिन हो, तो जो मारनेवाले हैं वे ही हिन्दुस्तानके मालिक बन जायेंगे। अिसलिअे हिन्दुस्तान तो अनाथ विधवा ही रहेगा। अंग्रेजों पर चलाये जानेवाले बमगोले अंग्रेजोंके

चले जाने पर हिन्दियों पर गिरेंगे। फ्रांसके प्रजातंत्रके प्रेसिडेंटको मारनेवाला फ्रेंच ही था। अमरीकाके प्रेसिडेंट क्लीवलैन्डको मारनेवाला अमेरिकन था। अिसलिअे जल्दीमें विना सोचे-समझे पश्चिमकी प्रजाकी अंधी नकल न करना ही हमारे लिअे ठीक है।

जैसे पापकर्मसे — अंग्रेजोंको मारकर — सच्चा स्वराज्य नहीं मिलेगा, वैसे हिन्दुस्तानमें वड़े कारखाने खोलनेसे भी नहीं मिलेगा। सोना-चांदी जमा होनेसे कुछ स्वराज्य नहीं मिल जायगा। यह वात रस्किनने अच्छी तरह साबित कर दी है। याद रखना चाहिये कि पश्चिमी सभ्यताको अभी सौ ही साल हुअे हैं। सचमुच तो पचास ही साल मानने चाहिये। अितने समयमें तो पश्चिमकी प्रजा वर्णसंकर-सी मालूम होती है। हमारी प्रार्थना है कि जैसी यूरोपकी दशा है वैसी हिन्दुस्तानकी कभी न हो। यूरोपकी प्रजायें अेक-दूसरेकी ताकमें वैठी हैं। मात्र अपने गोला-वारूदकी तैयारीसे ही सव चुप वैठे हैं। जब किसी समय जबरदस्त आग भड़केगी तव यूरोप नरक नजर आयेगा। यूरोपका हरअेक राज्य काले आदमीको अपना भक्ष्य समझ लेता है। जहां सिर्फ पैसेका ही लोभ हो वहां दूसरा कुछ हो ही नहीं सकता। अुन्हें अेक भी मुल्क अगर नजर आये तो जैसे कौअे मांसके टुकड़े पर टट पड़ते हैं वैसे अुस मुल्क पर वे टूट पड़ते हैं। यह अुनके कारखानोंके कारण होता है अैसा माननेके कुछ कारण हैं।

अंतमें, हिन्दुस्तानको स्वराज्य मिले अैसी सब हिन्दियोंकी पुकार है और वह सही है। लेकिन स्वराज्य नीतिके रास्ते पर पाना है। वह सच्चा स्वराज्य होना चाहिये। और वह नाश करनेवाले तरीकोंसे या वड़े कारखानोंसे नहीं मिलेगा। अुद्योग चाहिये, लेकिन सही रास्तेसे चाहिये। हिन्दुस्तानकी भूमि अेक समय सुवर्ण-भूमि मानी जाती थी, क्योंकि हिंदी लोग सुवर्ण-रूपसे थे। आज भूमि तो वही है, लेकिन लोग वदल गये हैं। अिसलिअे वह भूमि वीरान-सी हो गअी है। अुसको फिरसे सुवर्ण-भूमि वनानेके लिअे हमें खुद सद्‌गुणोंसे सुवर्ण वनना होगा। अुसका पारस (जिसे छूनेसे लोहा सोना वन जाता है वह) तो दो अक्षरोंमें रहा है और वह है 'सत्य'। अिसलिअे अगर हरअेक हिन्दी 'सत्य' का ही आग्रह रखेगा, तो हिन्दुस्तानको घर वैठे स्वराज्य मिलेगा।

## ११

# स्वराज्य पर कुछ विचार

[गांधीजीने आजादीकी लड़ाओीमें हिंसाके अुपयोगका विरोध किया था। निम्नलिखित अुद्धरण हमें बतलाते हैं कि लड़ाओीके जरिये प्राप्त होने-वाले स्वराज्यका अुन्होंने क्यों विरोध किया था:]

१. यदि समस्याका समाधान तलवारके बल होना है, तो वह सिक्खों या गुरखोंकी तलवारसे नहीं, वह तो अखिल भारतीय तलवारसे होना चाहिये। यदि पशुबलका शासन चलना हो तो भारतके लाखों लोगोंको युद्धकला सीखनी चाहिये; वर्ना अुन्हें हमेशाके लिअे अुसकी शरणमें रहना होगा जो तलवारसे शासन करता है, चाहे वह परदेशी हो या स्वदेशी। लाखों लोग मूक पशुओंकी तरह रहनेवाले हैं। असहयोग आन्दोलन जनतामें आत्म-गौरव और शक्तिका भान जाग्रत करनेका प्रयत्न है। यह तभी हो सकता है जब अुन्हें यह महसूस करा दिया जाये कि अुन्हें पशुबलसे डरनेकी जरूरत नहीं है।

यंग अिंडिया, १-१२-'२०; पृ० ३

२. मैं कहता हूं कि क्रांतिकारी तरीका भारतमें सफल नहीं हो सकता। यदि खुल्लमखुल्ला लड़ाओी संभव होती, तो मैं शायद मान लेता कि हम हिंसाके अुस पथ पर चलें जिस पर दूसरे देश चले हैं और कमसे कम अुन गुणोंका ही विकास करें जिनका अुदय रणक्षेत्रमें दिखायी गयी वीरतासे होता है। पर युद्धकांडके द्वारा भारतके स्वराज्यकी प्राप्तिको तो मैं, जहां तक नजर पहुंचती है वहां तक किसी भी समयमें असंभव मानता हूं। युद्धके द्वारा हमें चाहें अंग्रेजी शासनकी जगह दूसरा शासन मिल जाय, पर जिसे जनताकी दृष्टिसे स्वशासन कहा जा सके अैसा स्वशासन नहीं मिल सकता। स्वराज्यकी तीर्थयात्रा बड़ी कठिन, बड़ी कष्टप्रद चढ़ाओी है। अुसके मानी हैं देहातियोंकी सेवा करनेके ही अुद्देश्यसे देहातोंमें प्रवेश करना। दूसरे शब्दोंमें अिसका अर्थ है राष्ट्रीय शिक्षा — जनताकी शिक्षा। अिसका अर्थ है जनताके अंदर राष्ट्रीय चैतन्य और जागृति अुत्पन्न करना। वह कोओी जादूगरके आमकी तरह अचानक नहीं टपक पड़ेगा। वह तो वट-वृक्षकी तरह प्रायः बे-मालूम बढ़ेगा। खूनी क्रांति कभी यह चमत्कार नहीं दिखा सकती।

हिन्दी नवजीवन, २१-५-'२५; पृ० ३२७

[ यद्यपि गांधीजी भारतके लिअे राजनीतिक सत्ताका हस्तांतरण अत्यन्त आवश्यक मानते थे, लेकिन वे अैसे निरे हस्तांतरणसे ही सन्तुष्ट नहीं होनेवाले थे। अपने स्वराज्यकी योजनामें वे जनताके सभी प्रकारके शोषणका अन्त चाहते थे। ]

३. फिर भी मेरा मन कहता है कि असलमें देखा जाय तो क्या यूरोप — यद्यपि यूरोपको राजनीतिक स्वराज्य प्राप्त है — और क्या भारत, दोनोंको अेक ही रोग है। केवल राजनीतिक सत्ताके अेक हाथसे निकलकर दूसरे हाथमें चले जानेसे मेरी महत्त्वाकांक्षाको संतोष न होगा, हालांकि मैं भारतके राष्ट्रीय जीवनके लिअे सत्ताका अिस प्रकार हस्तांतरित होना परम आवश्यक मानता हूं। यूरोपके लोग निःसन्देह राजनीतिक सत्ता तो रखते हैं पर स्वराज्य नहीं। अेशिया और अफ्रीकाके लोगोंको वे अपने आंशिक लाभके लिअे लूटते हैं और अुनका शासक-वर्ग अुन्हें प्रजासत्ताके पवित्र नाम पर लूटता है। सो यदि जड़को देखें तो रोग वही दिखाअी देता है जो कि भारतवर्षको है। अिसलिअे अिलाज भी वही काम दे सकेगा।

हिन्दी नवजीवन, ३–९–'२५; पृ० २०

४. वह आम जनता है जिसे स्वराज्य प्राप्त करना है। यह न तो धनवानोंका अेकमात्र कार्य है और न शिक्षित वर्गोंका। दोनोंको अपने स्वार्थोंको स्वराज्यकी किसी भी योजनामें विलीन कर देना चाहिये।

यंग अिंडिया, २०–४–'२१; पृ० १२४

५. मैं आपसे कह सकता हूं कि कांग्रेस लोगोंके किसी खास दलकी नहीं है। वह तो सबकी है; लेकिन अुसका मुख्य रस अुन गरीब किसानोंकी रक्षा करनेमें होना चाहिये, जो हमारी जनसंख्याका बहुत बड़ा भाग हैं। अिसलिअे कांग्रेसको वास्तवमें गरीबोंका प्रतिनिधित्व करना चाहिये। लेकिन अिसका यह मतलब नहीं कि और सब वर्गों — मध्यम वर्गों, पूंजीपतियों या जमींदारोंके हितोंकी वह अुपेक्षा करेगी। कांग्रेसका अेकमात्र लक्ष्य यह है कि भारतके अन्य सब वर्ग गरीब जनताके हितोंकी रक्षा करें और अुन्हें बढ़ायें।

यंग अिंडिया, १६–४–'३१; पृ० ७९

६. अिसलिअे मैं हमारा ध्येय आपके समक्ष रखूंगा। यह ध्येय है विदेशी जुअेसे अुसके संपूर्ण अर्थोंमें मुकम्मिल आजादी। और यह आजादी लाखों मूक लोगोंके लिअे होगी। अिसलिअे प्रत्येक अैसे स्वार्थ पर, जो कि अुनके

स्वार्थके विपरीत है, फिरसे विचार होना चाहिये और यदि वह संशोधनके योग्य न हो तो अुसे खतम हो जाना चाहिये।

यंग अिंडिया, १७–९–'३१; पृ० २६३

[जो स्वराज्य गांधीजी चाहते थे वह कुछ लोगोंका अेकाधिकार नहीं होगा। अिसके विपरीत वह श्रमिक जनताकी स्वेच्छापूर्ण अनुमतिके व्यापक आधार पर स्थापित होगा, जो जनता सत्ताका नियमन और नियंत्रण करनेकी क्षमता प्राप्त करेगी।]

७. स्वराज्यसे मेरा मतलब भारतके लोगोंकी स्वीकृतिसे होनेवाले शासनसे है। वह स्वीकृति बालिग आबादीकी बड़ीसे बड़ी संख्या द्वारा निश्चित होनी चाहिये और अुसमें देशमें पैदा हुअे या बाहरसे आकर बसे हुअे वे सब स्त्री-पुरुष शामिल होने चाहिये, जिन्होंने शरीर-श्रम द्वारा राज्यकी सेवामें भाग लिया हो और अपना नाम मतदाताओंकी सूचीमें लिखवानेका कष्ट अुठाया हो। . . . मैं यह दिखा देनेकी आशा रखता हूं कि स्वराज्य चंद आदमियोंके सत्ता प्राप्त करनेसे नहीं आयेगा, परन्तु सत्ताका दुरुपयोग होने पर सबमें अुसका मुकाबला करनेकी क्षमता अुत्पन्न होनेसे आयेगा। दूसरे शब्दोंमें स्वराज्य जनसाधारणको सत्ताका नियमन और नियंत्रण करनेकी अुनकी शक्तिका भान करानेसे प्राप्त होगा।

यंग अिंडिया, २९–१–'२५; पृ० ४०–४१

[वास्तवमें गांधीजीका अन्तिम राजनीतिक ध्येय अराजकतावाद था।]

८. स्वशासनका अर्थ है सरकारी नियंत्रणसे स्वतंत्र होनेका सतत प्रयत्न, फिर सरकार विदेशी हो चाहे राष्ट्रीय। स्वराज्य सरकार अेक हास्यास्पद चीज बन जायगी, अगर जीवनकी हर छोटी बातके नियमनके लि लोग अुसके मुंहकी तरफ देखने लगें।

यंग अिंडिया, ६–८–'२५; पृ० २७६ .का है,

९. मेरी दृष्टिमें राजनीतिक सत्ता कोअी साध्य नहीं है, ...हि जानना
प्रत्येक विभागमें लोगोंके लिअे अपनी हालत सुधार सकने...रण ही है।
है। राजनीतिक सत्ताका अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वार...से द्वेष न करे,
नियमन करनेकी शक्ति। अगर राष्ट्रीय जीवन अितना ...व राजा बननेकी
वह स्वयं आत्म-नियमन कर ले, तो किसी प्रतिनिधित्व... अिस तरह जिसमें
जाती। अुस समय ज्ञानपूर्ण अराजकताकी स्थिति ...ाका स्वराज्य है।
हरअेक अपना राजा होता है। वह अिस ढंगसे ... राजा और प्रजा दोनोंकी
अपने पड़ोसियोंके लिअे कभी बाधा नहीं बन...ाज लूटनेवाले और लुटनेवाले
गये हैं। दोनोंमें से अेककी भी

कोओी राजनीतिक सत्ता नहीं होती, क्योंकि कोअी राज्य नहीं होता। परन्तु जीवनमें आदर्शकी पूरी सिद्धि कभी नहीं होती। अिसलिअे थोरोने कहा है कि जो सबसे कम शासन करे वही अुत्तम सरकार है।

यंग अिंडिया, २–७–’३१; पृ० १६२

## १२

# मेरी कल्पनाके स्वराज्यमें राजा और रंकका स्थान

विलेपारलेमें (बम्बअी) कार्यकर्ताओंकी जो सभा हुअी थी, अुसमें यह सवाल पूछा गया था:

"आप कहा करते हैं कि आपकी कल्पनाका स्वराज्य राजा और रंक दोनोंको न्याय देगा, दोनोंकी रक्षा करेगा और दोनोंके हितोंका ध्यान रखेगा। क्या यह बात परस्पर विरोधी नहीं है? आज मजदूर और मालिक, धनवान और अुसके नौकर, ब्राह्मण और भंगी, अमीर और गरीब — अिन दोके बीच जहां देखिये वहां वर्ग-संघर्ष चल रहा है। 'है' और 'नहीं' का झगड़ा अनादि कालसे चला आता मालूम होता है। अैसा लगता है कि दूसरेको दु:खी बनाये बिना मनुष्य खुद सुखी हो ही नहीं सकता। यह कुदरतका ही नियम मालूम होता है। आप कुदरतके अिस नियमको बदलने पर तुले हुअे हैं। यह हवामें तलवार चलाने जैसा नहीं लगता?"

सवाल अच्छा है और बहुतसे लोगोंके मनमें अुठता होगा। अिस पर न विचार करें।

अगर कभी अिस दुनियामें रामराज्य जैसी कोअी चीज थी, तो अुसकी
नहीं आज भी संभव होनी चाहिये। मेरा विश्वास है कि रामराज्य
रक्षा क यानी पंच; पंच यानी परमेश्वर। पंच यानी लोकमत। जब
अिसलिअे ...टी नहीं होता तब वह शुद्ध होता है। लोकमत पर रचा
अिसका यह ...सी जगहके लिअे रामराज्य है। अैसा तंत्र हम आज भी
जमींदारोंके हित... । कुछ जमींदार आज सादेपनमें अपनी रैयतसे भी
भारतके अन्य सब ... अुसमें ओतप्रोत हो जानेकी कोशिश करते हैं। यह
यंग अिंडिया, १६–...जा लोग अपनी प्रजाको लूटने और चूसनेवाले ही
... अच्छे बुरे दोनों तरहके लोग देखे हैं। सारे
६. अिसलिअे मैं हमा...ीं होते। यह सच है कि गरीबोंके मित्र या
जुअेसे अुसके संपूर्ण अर्थोंमें मु...हुतसे धनवान मैंने नहीं देखे। मैं यह भी
मूक लोगोंके लिअे होगी। अिस...

स्वीकार करता हूं कि जिन्हें मैंने देखा है अुनमें सुधारकी गुंजाअिश है। मैं जिसे राक्षसी तंत्र कहता हूं अुसमें मुझे यह अनुभव हुआ है। तब लंकामें अगर विभीषण ही अेक अपवाद हो, तो अिसमें अचरज कैसा? जहां अेक भला है वहां अनेककी आशा जरूर रखी जा सकती है। जब अपवाद बढ़ जाते हैं, तब वे नियमका रूप ले लेते हैं। यह तो मैंने जो संभव है अुसकी बात कही। अितनेसे पूछनेवाले भाअीको सन्तोष नहीं हो सकता।

संभवको अस्तित्वमें लानेकी कोशिश सत्याग्रह है। सत्य यानी न्याय। न्यायी तंत्रका मतलब है सत्ययुग या स्वराज्य, धर्मराज्य, रामराज्य, लोकराज्य। अैसे तंत्रमें राजा प्रजाका रक्षक होता है, मित्र होता है। अुसके जीवन और प्रजाके गरीबसे गरीब आदमीके जीवनके बीच आजका जमीन आसमानका फर्क नहीं होगा। राजाके महल और प्रजाकी झोपड़ीके बीच अुचित साम्य होगा। दोनोंकी जरूरतोंके बीच अगर कोअी फर्क होगा तो मामूली ही होगा। दोनोंको शुद्ध हवा और पानी मिलेगा। प्रजाको जरूरी खुराक मिलेगी। राजा अपने भोजनमें से छप्पन भोगका त्याग करके सिर्फ छह भोगसे ही संतोष मानेगा। गरीब लोग अगर लकड़ी या मिट्टीके बरतनोंसे अपना काम चलायें, तो राजा भले तांबे-पीतलके बरतन अिस्तेमाल करे। सोने-चांदीके बरतन अिस्तेमाल करनेका लोभ रखनेवाले राजा प्रजाको लूटनेवाले ही होने चाहिये। गरीबको पहनने-ओढ़नेके जरूरी कपड़े मिलने चाहिये। राजा भले ज्यादा कपड़े रखे; लेकिन अुसके कपड़ों और गरीबोंके कपड़ोंके बीचका भेद अीर्ष्या और द्वेष पैदा करानेवाला नहीं होना चाहिये। राजाके और रंकके बच्चे अेक ही प्राथमिक शालामें पढ़ेंगे। राजा अपनेको प्रजाका आश्रयदाता नहीं मानेगा। अगर वह प्रजाकी सेवा करेगा, तो अुसे प्रजा पर किया हुआ अुपकार नहीं मानेगा। कर्तव्य-पालनमें अुपकारको कोअी जगह नहीं है। प्रजाकी सेवा करना राजाका धर्म है।

जिस प्रकार राजाका धर्म प्रजाका रक्षक और मित्र बनकर रहनेका है, अुसी प्रकार रंकका धर्म राजाका द्वेष न करनेका है। गरीबको यह जानना चाहिये कि अुसकी गरीबी बहुत हद तक अुसके अपने दोषोंके कारण ही है। गरीब अपनी हालत सुधारनेकी कोशिश तो करे, लेकिन राजासे द्वेष न करे, अुसका नाश न चाहे। वह राजाका सुधार ही चाहे। गरीब राजा बननेकी अिच्छा न रखे; अपनी जरूरतें पूरी करके सन्तुष्ट रहे। अिस तरह जिनमें दोनों अेक-दूसरेकी मदद करते रहें वही मेरी कल्पनाका स्वराज्य है।

मेरी रायमें अिस स्वराज्यको पानेके लिअे राजा और प्रजा दोनोंकी शिक्षामें महत्त्वका परिवर्तन करना जरूरी है। आज लूटनेवाले और लुटनेवाले दोनों अंधेरेमें भटक रहे हैं। वे रास्ता भूल गये हैं। दोनोंमें से अेककी भी

हालत सहन करने लायक नहीं है। लेकिन राजाओं और धनिकोंके गले यह बात जल्दी अुतरेगी नहीं। लेकिन अेकके गले अुतर जाय, तो दूसरेके गले अपने-आप अुतर जायगी, अिस नीतिके मुताबिक मैंने रंक या गरीबकी सेवा पसन्द की है। हर कोअी राजा नहीं हो सकता, लेकिन हर कोअी सबमें तो समा सकता है। अगर गरीब अपने हकों और फर्जोंको समझ ले, तो आज हमें स्वराज्य मिल सकता है। यह भान सत्याग्रहके जरिये जितनी तेजीसे हो सकता है, अुतनी तेजीसे दूसरे किसी तरीकेसे नहीं हो सकता। अिसका हमने पिछले १२ महीनोंमें प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया है। अिस सत्याग्रहमें जितनी गंदगी घुस गयी थी, अुस हद तक हमारी स्वराज्य-प्राप्तिमें बाधा पड़ी।

सत्याग्रह लोकशिक्षा और लोक-जागृतिका सबसे बड़ा साधन है। सत्याग्रहका दूसरा अर्थ आत्मशुद्धि है। राजवर्गके सामने हम सिर्फ आत्म-शुद्धिकी बात ही कर सकते हैं। अुस पर अिसका असर पड़नेमें थोड़ा समय लगेगा। गरीब वर्ग तो हमेशा रहनुमाअीकी खोजमें ही रहता है; अुसे अपने दुखोंका ज्ञान है, पर अुन्हें दूर करनेवाले अुपायका नहीं। अिसलिअे जो भी अुन्हें अुपाय बतानेवाला मिल जाता है, अुसीका अुपाय वे आजमाते हैं। अैसी हालतमें अगर कोअी सच्चे सेवक अुन्हें मिल जाते हैं, तो वे अुन्हें छोड़ते नहीं और अुनका अुपाय स्वीकार करते हैं। अिसलिअे अेक दृष्टिसे गरीब वर्ग जिज्ञासु कहा जायेगा। स्वराज्य भी अुसीके मारफत मिल सकता है। वह अपनी शक्तिको पहचाने और पहचानते हुअे भी मर्यादामें रहकर ही अुसका अुपयोग करे अितना हो जाय, तो मेरी कल्पनाका स्वराज्य आया समझिये। जब जनता अैसी शक्ति पा लेगी, तब वह विदेशी या देशी सरकार दोनोंका सफलतासे मुकाबला कर सकेगी।

अिसलिअे कार्यकर्ताओंका धर्म सिर्फ लोकसेवा ही है। लोकसेवा सत्य और अहिंसाके रास्तेसे ही हो सकती है। अुसमें जितनी गंदगी घुसेगी अुतनी लोक-प्रगति रुकेगी।

अिसी बीच अगर राजवर्ग और धनिक-वर्ग जमानेके तकाजेको पहचानें, तो वे अपने पास रहे धन और धनोपार्जनकी शक्तिका मालिकाना हक छोड़कर अुनके रक्षक या ट्रस्टी बन जायेंगे, और चूंकि रक्षकको भी अपनी जीविका कमानेका हक है अिसलिअे वे अुस धनका मर्यादित और जरूरी अुपयोग ही करेंगे। अगर वे अैसा नहीं करेंगे, तो राजा और प्रजा तथा अमीर और गरीबके बीचका जहरीला संघर्ष चला ही करेगा। सत्याग्रह अिस जहरको रोक सकेगा, अैसी आशासे मेरे जैसे लोग अुस शस्त्रको अपना सब कुछ अर्पण कर चुके हैं।

हरिजनसेवक, ३०–१०–'४९; पृ० ३०८–९

## १३

# मजदूरोंका गणराज्य

[ 'साप्ताहिक पत्र' से । ]

लालकुर्तीवालोंके थोड़ेसे प्रतिनिधियोंका अेक शिष्ट-मंडल गांधीजीसे मिला और अुसने अुनसे दिल खोलकर लम्बी बातचीत की। अुन लोगोंने समझाया कि 'आपको कोअी शारीरिक हानि पहुंचानेका हमारा हरगिज अिरादा नहीं था; आपकी जान और तन्दुरुस्ती हमें अुतनी ही प्यारी है जितनी और किसीको। और व्यक्तिगत आतंकवाद हमारा धर्म नहीं है।' हां, अस्थायी संधिके* अपने विरोध पर वे अटल थे। अुनका विश्वास है कि अुससे भारतवर्षमें मजदूरों और किसानोंके स्वतंत्र गणराज्यका अुनका ध्येय प्राप्त करनेमें कोअी सहायता नहीं मिल सकती। गांधीजीने अुन्हें अुमड़ते हुअे प्रेमसे कहा, "लेकिन मेरे प्यारे नौजवानो, बिहारमें जाकर देखो तो तुम्हें पता चलेगा कि वहां मजदूरों और किसानोंका गणराज्य काम कर रहा है। जहां दस वर्ष पहले भय और गुलामी थी, वहां आज साहस, वीरता और अन्यायका विरोध नजर आ रहा है। यदि तुम पूंजीको नेस्तनाबूद करना चाहते हो या धनवानों या पूंजीपतियोंको मिटा देना चाहते हो, तो अिसमें तुम्हें कभी सफलता नहीं मिलेगी। तुम्हें करना यह चाहिये कि पूंजीपतियोंको मजदूरोंकी ताकतका प्रत्यक्ष प्रमाण दिखा दो। फिर वे अुन लोगोंके लिअे, जो अुनके खातिर घोर परिश्रम करते हैं, संरक्षक बनना मंजूर कर लेंगे। मैं मजदूरों और किसानोंके लिअे अिससे अधिक कुछ नहीं चाहता कि अुन्हें खाने, रहने और पहननेको काफी मिल जाय और वे स्वाभिमानी मनुष्योंकी तरह साधारण आरामसे रह सकें। यह स्थिति पैदा हो जानेके बाद अुनमें से अुमदा दिमागवाले जरूर औरोंकी अपेक्षा अधिक धन कमायेंगे। परन्तु मैं तुम्हें बता चुका हूं कि मैं क्या चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि धनवान अपने धनको गरीबोंकी धरोहर समझें या अपनेको अुनकी सेवामें अर्पित कर दें। क्या तुम्हें मालूम है कि मैंने टॉल्स्टॉय फार्मकी स्थापना की, तब अपनी तमाम जायदाद छोड़ दी थी? रस्किनकी 'अन्टु दिस लास्ट' पुस्तकने मुझे प्रेरणा दी थी और मैंने अुसीके ढंग पर अपने फार्मकी स्थापना की थी। अब तुम स्वीकार करोगे कि अेक तरहसे मैं तुम्हारे किसानों और मजदूरोंके गणराज्यका 'संस्थापक सदस्य' हूं। और तुम किस

---

* १९३१ में हुआ गांधी-अिर्विन समझौता।

चीजको अधिक मूल्यवान समझते हो — धनको या श्रमको? मान लो कि तुम सहाराके रेगिस्तानमें फंस गये और तुम्हारे पास गाड़ियों रुपया-पैसा है। वह तुम्हारे क्या काम आयेगा? परंतु यदि तुम श्रम कर सकते हो, तो तुम्हें भूखे रहनेकी जरूरत नहीं होगी। तो फिर धनको श्रमसे अधिक अच्छा कैसे समझा जाये? अहमदावाद जाकर वहांके मजदूर-संघको आंखोंसे देखो कि वह कैसा काम कर रहा है; तब तुम्हें पता चलेगा कि वे अपना खुदका गणराज्य स्थापित करनेकी कैसी कोशिश कर रहे हैं।

यंग अिंडिया, २–४–'३१; पृ० ५८–५९

## १४

## समाजवादी कौन?

समाजवाद अेक सुन्दर शब्द है और जहां तक मुझे मालूम है, समाजवादमें समाजके सब सदस्य बराबर होते हैं — न कोअी नीचा होता है, न कोअी अूंचा। किसी व्यक्तिके शरीरमें सिर सबसे अूपर होनेके कारण अूंचा नहीं होता और न पैरके तलवे जमीनको छूनेके कारण नीचे होते हैं। जैसे व्यक्तिके शरीरके सब अंग बराबर होते हैं, वैसे ही समाजरूपी शरीरके सारे अंग भी बराबर होते हैं। यही समाजवाद है।

अुसमें राजा और प्रजा, अमीर और गरीब, मालिक और मजदूर सब अेक स्तर पर होते हैं। धर्मकी भाषामें कहें तो समाजवादमें द्वैत या भेदभाव नहीं होता। सर्वत्र अेकता, अद्वैतका प्रभुत्व होता है। संसार भरके समाजको देखें तो द्वैत या अनेकताके सिवा कुछ नहीं दिखाअी देता। अेकता या अद्वैतका नाम-निशान नहीं दिखाअी देता। यह आदमी अूंचा है, वह नीचा है, यह हिन्दू है, वह मुसलमान है, तीसरा अिसाअी है, चौथा पारसी है, पांचवां सिक्ख है और छठा यहूदी है। अिनमें भी बहुतसी अुप-जातियां हैं। मेरी कल्पनाकी अेकता या अद्वैतवादमें सब अेक हो जाते हैं; अेकतामें समा जाते हैं।

अिस अवस्था तक पहुंचनेके लिअे हम अेक-दूसरेकी तरफ देखते नहीं रह सकते। जब तक सारे लोग समाजवादी न बन जायें तब तक हम कोअी हलचल न करें, अपने जीवनमें कोअी फेरफार न करके भाषण देते रहें और बाज पक्षीकी तरह जहां शिकार मिल जाय वहां अुस पर झपट पड़ें — यह समाजवाद नहीं है। समाजवाद जैसी शानदार चीज झपट्टा मारनेसे हमसे दूर ही जानेवाली है।

समाजवाद पहले समाजवादीसे शुरू होता है। अगर अैसा अेक भी समाजवादी हो तो आप अुस पर शून्य बढ़ा सकते हैं। पहले शून्यसे अुसकी ताकत दस गुनी हो जायगी। अुसके बाद हरअेक शून्यका अर्थ पिछली संख्यासे दस गुना होगा। परन्तु यदि आरंभ करनेवाला स्वयं ही शून्य हो, दूसरे शब्दोंमें कोअी भी आरंभ नहीं करे, तो कितने ही शून्योंके बढ़ जाने पर भी परिणाम शून्य ही होगा। शून्योंके लिखनेमें जितना समय और कागज खर्च होगा वह भी व्यर्थ ही जायेगा।

यह समाजवाद स्फटिककी तरह शुद्ध है। अिसलिअे अिसे सिद्ध करनेके साधन भी शुद्ध होने ही चाहिये। अशुद्ध साधनोंसे प्राप्त होनेवाला साध्य भी अशुद्ध ही होता है। अिसलिअे राजाका सिर काट डालनेसे राजा और प्रजा बराबर नहीं हो जायेंगे। और न मालिकका सिर काटनेसे मालिक और मजदूर बराबर हो जायेंगे। हम असत्यसे सत्यको प्राप्त नहीं कर सकते। सत्यमय आचरण द्वारा ही सत्यको प्राप्त किया जा सकता है। क्या अहिंसा और सत्य दो चीजें हैं ? हरगिज नहीं। अहिंसा सत्यमें और सत्य अहिंसामें छिपा हुआ है। अिसीलिअे मैंने कहा है कि वे अेक ही सिक्केके दो पहलू हैं। वे अेक-दूसरेसे अभिन्न हैं। सिक्केको किसी भी तरफसे पढ़ लीजिये। केवल पढ़नेमें ही फर्क है — अेक तरफ अहिंसा है, दूसरी तरफ सत्य। दोनोंका मूल्य अेक ही है। सम्पूर्ण शुद्धताके बिना यह दिव्य स्थिति अप्राप्य है। मन या शरीरकी अशुद्धि रखी और आपमें असत्य और हिंसा आयी।

अिसीलिअे सत्यपरायण, अहिंसक और शुद्ध-हृदय समाजवादी ही भारत और संसारमें समाजवादी समाज स्थापित कर सकेंगे। जहां तक मैं जानता हूं, संसारमें कोअी भी देश अैसा नहीं है जो शुद्ध समाजवादी हो। अुपरोक्त साधनोंके बिना अैसे समाजका अस्तित्वमें आना असम्भव है।

हरिजन, १३–७–'४७; पृ० २३२

## १५

# सत्य और अहिंसा — समाजवादके मूल आधार

समाजवादीको सत्य और अहिंसाकी मूर्ति होना चाहिये। और अिसके लिअे अीश्वरमें अुसकी जीती-जागती श्रद्धा होनी चाहिये। सत्य और अहिंसाका यंत्रकी तरह पालन करना कसौटीके वक्त काम नहीं देता। अिसलिअे मैंने कहा है कि सत्य ही परमेश्वर है।

यह परमेश्वर चेतनामय शक्ति है। जीव भी अिसी शक्तिसे बना हुआ है। यह जीव शरीरमें रहता है, मगर वह खुद शरीर नहीं है। अिस महान शक्तिके अस्तित्वसे अिनकार करनेवाला व्यक्ति अपनेमें रहनेवाली अिस अखूट शक्तिसे वंचित रहकर अपंग बनता है। बेपतवारकी नावकी तरह वह अिधर-अुधर टकराता है और आखिरमें कहीं भी पहुंचे बिना बरबाद हो जाता है। यह हालत हममें से बहुतोंकी होती है। अैसे लोगोंका समाजवाद कहीं भी नहीं पहुंचता। करोड़ों मनुष्यों तक अुसके पहुंचनेकी तो बात ही दूर है।

यह सारी बात अगर सच हो तो क्या अीश्वरमें श्रद्धा रखनेवाला कोअी समाजवादी नहीं होगा? अगर हो तो अुसने प्रगति क्यों नहीं की? अीश्वर-भक्त तो बहुतसे हो गये। अुन्होंने क्यों नहीं समाजवाद कायम किया?

अिन दो शंकाओंका सचोट जवाब देना मुश्किल है। फिर भी मैं मानता हूं कि अीश्वरको माननेवाले समाजवादीको अैसा कभी नहीं लगा होगा कि समाजवादका आस्तिकतासे कोअी सीधा संबंध है। शायद अीश्वर-भक्तोंको समाजवादकी जरूरत ही न रही हो। अीश्वर-भक्तोंके मौजूद रहते हुअे भी दुनियामें वहम कहां नहीं देखनेमें आते? हिन्दू धर्ममें अीश्वर-भक्तोंके होते हुअे भी छुआछूत जैसे महान कलंकने क्या समाज पर राज्य नहीं किया?

अीश्वर-तत्त्व क्या है, अुसमें कितनी शक्ति छिपी हुअी है, यह हमेशा खोजका विषय रहा है।

मेरा यह दावा रहा है कि अिसी खोजमें से सत्याग्रहकी खोज हुअी है। यह नहीं कहा जा सकता कि सत्याग्रहसे संबंध रखनेवाले सारे कायदे बन गये हैं। मैं यह भी नहीं कहता कि अिसके सारे कायदे मैं जानता हूं। मगर मैं अितना दृढ़तासे कह सकता हूं कि सत्याग्रहसे जो कुछ भी पाने जैसा है वह सब पाया जा सकता है। सत्याग्रह बड़ेसे बड़ा साधन

है, हथियार है। मेरी रायमें समाजवाद तक पहुंचनेका अिसके सिवा दूसरा कोअी रास्ता नहीं है।

सत्याग्रहके जरिये समाजके सारे राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक रोगोंको मिटाया जा सकता है।

हरिजनसेवक, २०-७-'४७; पृ० २०४

१६

## मेरा समाजवादी होनेका दावा तथाकथित समाजवादके बाद भी जिंदा रहेगा

[श्री प्यारेलालजी द्वारा लिखित 'चार साल बाद'के महत्त्वपूर्ण अंश।]

लुअी फिशर* ने विधान-निर्मात्री सभा पर बातचीत शुरू की। "मैं विधान-निर्मात्री सभामें जाकर अेक अलग ही मतलब हल करूंगा — अुसे लड़ाअीका मैदान बना दूंगा — और अुसे सर्वोपरि सत्तावाली सभा जाहिर कर दूंगा। अिस बारेमें आपकी क्या राय है?"

गांधीजीने कहा: "दूसरेकी खड़ी की हुअी चीजको सर्वोपरि सत्ता जाहिर कर देनेसे कोअी फायदा नहीं होगा; आखिर तो वह अंग्रेजोंकी ही बनाअी हुअी है। सिर्फ अधिकार जता देनेसे कोअी सभा सर्वोपरि सत्तावाली नहीं बन जाती। सर्वसत्ताधारी बननेके लिअे आपको वैसा बरताव भी करना होगा। जोहानिसबर्गकी टूले स्ट्रीटके तीन दर्जियोंने मिलकर अैलान किया था कि वे सर्वसत्ताधारी हैं। लेकिन अुससे कोअी नतीजा नहीं निकला। वह कोरा मजाक ही साबित हुआ।

"फिर भी मैं प्रस्तावित विधान-निर्मात्री सभाको क्रांतिकारी ही मानता हूं। मैंने यह कहा है और मैं सोलह आने अिस बातको मानता हूं कि प्रस्तावित विधान-निर्मात्री सभा रचनात्मक ढंगसे सविनय आज्ञाभंगका अेक पुर-असर अेवज है। हालांकि मैं हमारे समाजवादी मित्रोंकी कुरबानी और आत्म-संयमकी भावनाकी बड़ीसे बड़ी कदर करता हूं, फिर भी अुनके और मेरे तरीकोंमें जो स्पष्ट फर्क है अुसे मैंने कभी छिपाया नहीं। वे जाहिरा तौर पर हिंसा और अुससे सम्बन्ध रखनेवाली बातोंमें विश्वास रखते हैं, जब कि मेरे लिअे अहिंसा ही सब कुछ है।"

---

* लुअी फिशर, सुप्रसिद्ध अमेरिकन पत्रकार।

अिससे बातचीतका विषय समाजवादकी ओर मुड़ा। श्री फिशरने बीचमें ही कहा : "जैसे आप समाजवादी हैं, वैसे ही वे भी हैं।"

गांधीजी : "सच्चा समाजवादी तो मैं हूं, वे नहीं। अुनमें से कअियोंके पैदा होनेसे पहले भी मैं समाजवादी था। जोहानिसबर्गके अेक अुग्र समाजवादीको मैंने अपने समाजवादी होनेका यकीन करा दिया था। लेकिन अिस बातके कहनेसे यहां कोअी मतलब हासिल नहीं होगा। मेरा यह दावा तो तब भी कायम रहेगा, जब अुनका समाजवाद मिट जायेगा।"

फिशर : "आपके समाजवादसे आपका क्या अर्थ है?"

गांधीजी : "मेरे समाजवादका अर्थ है 'सर्वोदय'। मैं गूंगे, बहरे और अंधोंको मिटाकर अुठना नहीं चाहता। अुनके समाजवादमें अिन लोगोंके लिअे कोअी जगह नहीं है। भौतिक अुन्नति ही अुनका अेकमात्र मकसद है। मसलन्, अमेरिकाका मकसद है कि अुसके हर शहरीके पास अेक मोटर हो। मेरा यह मकसद नहीं। मैं अपने व्यक्तित्वके पूर्ण विकासके लिअे आजादी चाहता हूं। अगर मैं चाहूं तो आसमानमें टिमटिमाते तारों तक पहुंचनेकी निसैनी बनानेकी आजादी मुझे मिलनी चाहिये। अिसका मतलब यह नहीं कि मैं अैसी कोअी बात करूंगा ही। दूसरी तरहके समाजवादमें व्यक्तिगत आजादी नहीं है। अुसमें आपका कुछ नहीं होता, आपका अपना शरीर भी आपका नहीं होता।"

फिशर : "हां, लेकिन समाजवादके भी कअी प्रकार हैं। सुधरे हुअे रूपमें मेरे समाजवादका अर्थ यह है कि हर चीज पर स्टेटका हक नहीं है। पर रूसमें अैसा ही है। वहां सचमुच आपके शरीर पर भी आपका हक नहीं होता। बिना किसी गुनाहके आप किसी भी वक्त गिरफ्तार किये जा सकते हैं। वे आपको जहां चाहें वहां भेज सकते हैं।"

गांधीजी : "क्या आपके समाजवादमें राज्यका आपके बच्चों पर अधिकार नहीं होता? और क्या वह अुन्हें मनचाहे तरीकेसे तालीम नहीं देता?"

फिशर : "सभी राज्य अैसा करते हैं। अमेरिका भी अैसा ही करता है।"

गांधीजी : "तब तो रूस और अमेरिकामें कोअी बड़ा फर्क नहीं है।"

फिशर : "आप असलमें तानाशाहीका विरोध करते हैं।"

गांधीजी : "लेकिन अगर समाजवाद तानाशाही नहीं है तो निकम्मे लोगोंका शास्त्रभर है। मैं अपने आपको साम्यवादी भी कहता हूं।"

फिशर : "नहीं, नहीं, अैसा न कहिये। अपनेको साम्यवादी कहना आपके लिअे बड़ी खतरनाक बात है। मैं वही चाहता हूं, जो आप चाहते हैं, जो जयप्रकाश और दूसरे समाजवादी चाहते हैं — अेक आजाद दुनिया।

लेकिन साम्यवादी अैसा नहीं चाहते। वे अैसा कायदा चाहते हैं जो शरीर और मन दोनोंको गुलाम बना दे।"

गांधीजी: "क्या मार्क्सके बारेमें भी आपके यही ख्याल हैं?"

फिशर: "साम्यवादियोंने अपने मतलबके अनुसार मार्क्सवादको तोड़-मरोड़ लिया है।"

गांधीजी: "लेनिनके बारेमें आपकी क्या राय है?"

फिशर: "लेनिनने अिसकी शुरुआत की थी। स्टालिनने अुसे पूरा कर दिया। जब साम्यवादी आपके पास आते हैं तो वे कांग्रेसमें शामिल होना चाहते हैं और अुस पर कब्जा करके अुसे अपनी स्वार्थसिद्धिका साधन बनाना चाहते हैं।"

गांधीजी: "समाजवादी भी अैसा ही करते हैं। मेरा साम्यवाद समाजवादसे ज्यादा भिन्न नहीं है। वह दोनोंका मीठा मेल है। साम्यवाद, जैसा कि मैंने अुसे समझा है, समाजवादका कुदरती परिणाम है।"

फिशर: "हां, आप ठीक कहते हैं। अेक समय था जब दोनोंमें फर्क करना कठिन था। लेकिन आज साम्यवादियों और समाजवादियोंमें बड़ा फर्क है।"

गांधीजी: "तो क्या आपका मतलब यह है कि आप स्टालिन-मार्का साम्यवाद नहीं चाहते?"

फिशर: "लेकिन हिन्दुस्तानी साम्यवादी हिन्दुस्तानमें स्टालिन-मार्का साम्यवाद ही कायम करना चाहते हैं। और अुसके लिअे आपके नामका नाजायज फायदा अुठाना चाहते हैं।"

गांधीजी: "लेकिन अिसमें वे कामयाब नहीं होंगे।"

हरिजनसेवक, ४-८-'४६; पृ० २५०

## १७

# अहिंसक समाजवादी व्यवस्था

श्री जयप्रकाश नारायणने मेरे पास अेक प्रस्तावका नीचे लिखा मसविदा भेजा था, और मुझे लिखा था कि अगर मैं अिस प्रस्तावमें दी गअी तसवीरसे सहमत होअूं, तो अिसे रामगढ़में होनेवाली कांग्रेस कार्य-समितिके सामने पेश कर दूं। प्रस्ताव अिस प्रकार था :

"कांग्रेस और देशके सामने आज अेक महान राष्ट्रीय अुथल-पुथलका अवसर अुपस्थित है। आजादीकी आखिरी लड़ाअी जल्दी ही लड़ी जानेवाली है, और यह सब अैसे समय हो रहा है जब महान शक्तिशाली परिवर्तनोंके द्वारा सारा संसार जड़से हिलाया जा रहा है। दुनियाभरके विचारक लोग आज अिस बातके लिअे चिंतित हैं कि अिस यूरोपीय युद्धके महानाशमें से अेक अैसी नयी दुनियाका जन्म हो, जिसकी जड़ राष्ट्रों-राष्ट्रों और मनुष्यों-मनुष्योंके बीचके सद्भावपूर्ण सहयोग पर कायम की गअी हो। अैसे समय कांग्रेस स्वतंत्रताके अपने अुन आदर्शोंको निश्चित रूपसे व्यक्त कर देना आवश्यक समझती है, जिन पर कि वह अड़ी हुअी है और जिनके लिअे वह जल्दी ही देशकी जनताको अधिकसे अधिक कष्ट सहनेका न्यौता देनेवाली है।

"स्वतंत्र भारतीय राष्ट्रका काम होगा कि वह राष्ट्रोंके बीच शान्तिकी स्थापना करे, सम्पूर्ण निःशस्त्रीकरणके लिअे यत्नशील रहे और राष्ट्रीय झगड़ोंको किसी स्वतंत्रतापूर्वक स्थापित आन्तर-राष्ट्रीय सत्ता द्वारा शान्तिपूर्वक निबटानेकी कोशिश करे। वह खास तौर पर अपने पड़ोसी देशोंके साथ, फिर वे महान शक्तिशाली साम्राज्य हों या छोटे-छोटे राष्ट्र, मित्र बनकर रहनेका यत्न करेगा और किसी भी विदेशी राज्य या प्रदेश पर अपना अधिकार जमानेकी अिच्छा न करेगा।

"देशके सभी कायदे-कानून सर्व-साधारण जनता द्वारा स्वतंत्रतापूर्वक व्यक्त की गअी अिच्छाके अनुसार बनाये जायेंगे; और देशमें शान्ति और सुव्यवस्था कायम रखनेका अन्तिम आधार जन-साधारणकी स्वीकृति और सम्मति पर ही रहेगा।

"स्वतंत्र भारतीय राष्ट्रमें जनताको सम्पूर्ण व्यक्तिगत और नागरिक स्वतंत्रता होगी और सांस्कृतिक तथा धार्मिक मामलोंमें पूरी आजादी दी जायेगी। पर अिसका यह मतलब नहीं होगा कि हिन्दुस्तानकी जनता

अपनी संविधान-सभा द्वारा अपने लिअे जो शासन-विधा
अुसको हिंसा द्वारा अुलट देनेकी आजादी किसीको रहेगी

"देशकी राष्ट्रीय सरकार राष्ट्रके नागरिकोंके बीच किस
भेदभाव न रखेगी। प्रत्येक नागरिकको समान अधिकार रहें
और परम्पराके कारण मिलनेवाली सभी सुविधाअें या भेदभाव
दिये जायंगे। न तो सरकार द्वारा किसीको कोअी पद या अुपाधि
दी जायगी और न परम्परागत सामाजिक दरजेके कारण ही कोअी किसी
अुपाधिका हकदार माना जायगा।

"राज्यका राजनीतिक और आर्थिक संगठन सामाजिक न्याय
और आर्थिक स्वतंत्रताके सिद्धान्तों पर किया जायेगा। अिस संगठनके
फलस्वरूप जहां समाजके प्रत्येक व्यक्तिकी राष्ट्रीय आवश्यकताओंकी
पूर्ति होगी, तहां अिसका अुद्देश्य केवल भौतिक आवश्यकताओंकी तृप्ति ही
न रहेगा; वल्कि अपेक्षा यह रखी जायेगी कि अिसके कारण राष्ट्रका
हरअेक व्यक्ति स्वास्थ्यपूर्ण जीवन विता सके और अपना नैतिक तथा
वौद्धिक विकास कर सके। अिसके लिअे और समाजमें समताकी भावना
स्थापित करनेके लिअे राज्य द्वारा छोटे पैमाने पर चलनेवाले अैसे अुद्योग-
धंधोंको प्रोत्साहित किया जायेगा, जो व्यक्तियों द्वारा या सहकारी
संस्थाओं द्वारा सभीके समान हितकी दृष्टिसे चलाये जायेंगे। वड़े पैमाने
पर सामूहिक रूपसे चलनेवाले सभी अुद्योग-धंधोंको अन्तमें जाकर अिस
तरह चलाना होगा कि जिससे अुनका अधिकार और आधिपत्य व्यक्ति-
योंके हाथसे निकलकर समाजके हाथमें आ जाये। अिस लक्ष्यकी सिद्धिके
लिअे राज्य यातायातके भारी साधनों, व्यापारी जहाजों, खानों और दूसरे
वड़े-वड़े अुद्योग-धंधोंका राष्ट्रीयकरण शुरू कर देगा। वस्त्र-व्यवसायका
प्रवंध अिस तरह किया जायेगा कि जिससे अुत्तरोत्तर अुसका केन्द्रीकरण
रुके और विकेन्द्रीकरण वढ़े।

"गांवोंके जीवनका पुनःसंगठन किया जायेगा, अुन्हें स्वतंत्र शासित
अिकाअी वनाया जायेगा और जहां तक संभव होगा अधिकसे अधिक
स्वावलम्वी वनानेका यत्न किया जायेगा। देशके जमीन-सम्वन्धी कानूनोंमें
जड़-मूलसे सुधार किया जायेगा, और यह सुधार अिस सिद्धान्त पर
होगा कि जमीनका मालिक अुसे जोतनेवाला ही हो सकता है। और हर
काश्तकारके पास अुतनी ही जमीन होनी चाहिये, जितनीसे वह अपने
परिवारका अुचित रीतिसे भरण-पोषण कर सके। अिससे जहां अेक ओर
जमींदारीकी अनेक प्रथायें वन्द हो जायेंगी, तहां खेतीमें गुलामीकी प्रथा
भी नष्ट हो जायेगी।

"राज्य वर्गोंके हितों या स्वार्थोंकी रक्षा करेगा। लेकिन जब ये स्वार्थ गरीबों या पद-दलितोंके स्वार्थमें बाधक होंगे, तो राज्य गरीबों और पद-दलितोंके स्वार्थकी रक्षा करके सामाजिक न्यायकी तुलाको समतौल रखेगा।

"राज्यकी मालिकीवाले और राज्यकी व्यवस्थामें चलनेवाले सभी अुद्योग-धंधोंके प्रबंधमें मजदूरोंको अपने चुने हुअे प्रतिनिधि भेजनेका अधिकार रहेगा और अिस प्रबंधमें अुनका हिस्सा सरकारके प्रतिनिधियोंके बराबर होगा।

"देशी राज्योंमें सम्पूर्ण प्रजातंत्रात्मक सरकारें स्थापित होंगी और नागरिकोंकी समताके तथा सामाजिक भेदभावको मिटानेके सिद्धान्तके अनुसार राजाओं और नवाबोंके रूपमें देशी रियासतोंमें कोअी नामधारी शासक नहीं रहेंगे।"

मुझे श्री जयप्रकाशका यह प्रस्ताव पसन्द आया और मैंने कार्य-समितिको अुनका पत्र और प्रस्तावका यह मसविदा पढ़कर सुनाया। लेकिन समितिने यह सोचा कि रामगढ़ कांग्रेसमें अेक ही प्रस्ताव पास करनेकी बात पर डटे रहना जरूरी है, और पटनामें जो मूल प्रस्ताव पास हुआ था अुसमें किसी प्रकारका परिवर्तन करना अिष्ट नहीं है। समितिकी यह दलील निरपवाद थी; अिसलिअे प्रस्तुत प्रस्तावके गुण-दोषोंकी चर्चा किये बिना ही अुसे छोड़ दिया गया। मैंने श्री जयप्रकाशको अपने प्रयत्नके परिणामसे सूचित कर दिया। अुन्होंने मुझे लिखा कि अिसके बाद अुनको संतोष देनेवाली सबसे अच्छी बात यह होगी कि मैं अुनके अिस प्रस्तावको अपनी पूरी सहमति या जितनी मैं दे सकूं अुतनी सहमतिके साथ प्रकाशित कर दूं।

श्री जयप्रकाशकी अिस अिच्छाको पूरा करनेमें मुझे कोअी कठिनाअी नहीं मालूम होती। अेक अैसे आदर्शके नाते, जिसे देशके स्वतंत्र होते ही हमें कार्यरूपमें परिणत करना है, मैं श्री जयप्रकाशकी अेक सूचनाको छोड़कर शेष सभी सूचनाओंका आम तौर पर समर्थन करता हूं।

मेरा दावा है कि आज हिन्दुस्तानमें जो लोग समाजवादको अपना ध्येय मानते हैं, अुनसे बहुत पहले मैं समाजवादको स्वीकार कर चुका था। लेकिन मेरा समाजवाद मेरे लिअे सहज और स्वाभाविक था और पुस्तकोंसे ग्रहण नहीं किया गया था। वह अहिंसामें मेरे अटल विश्वासका ही परिणाम था। कोअी भी आदमी, जो सक्रिय अहिंसामें विश्वास करता है, सामाजिक अन्यायको, फिर वह कहीं भी क्यों न होता हो, बरदाश्त नहीं कर सकता — वह अुसका विरोध किये बिना रह नहीं सकता। जहां तक मैं जानता हूं,

दुर्भाग्यवश पश्चिमके समाजवादियोंने यह मान लिया है कि अपने समाजवादी सिद्धान्तोंको वे हिंसा द्वारा ही अमलमें ला सकते हैं।

मैं सदासे यह मानता आया हूं कि नीचसे नीच और कमजोरसे कमजोरके प्रति भी हम जोर-जबरदस्तीके जरिये सामाजिक न्यायका पालन नहीं कर सकते। मैं यह भी मानता आया हूं कि पतितसे पतित लोगोंको सही तालीम दी जाये, तो अहिंसक साधनों द्वारा सब प्रकारके अत्याचारों प्रतिकार किया जा सकता है। अहिंसक असहयोग ही अुसका मुख्य साधन कभी कभी असहयोग भी अुतना ही कर्तव्य-रूप हो जाता है जितना सहयोग। अपनी बरबादी या गुलामीमें खुद सहायक होनेके लिअे कोअी बंधा हुआ नहीं है। जो स्वतंत्रता दूसरोंके प्रयत्नों द्वारा — फिर वे कितने ही अुदार क्यों न हों — मिलती है, वह अुन प्रयत्नोंके न रहने पर कायम नहीं रखी जा सकती। दूसरे शब्दोंमें, अैसी स्वतंत्रता सच्ची स्वतंत्रता नहीं है। लेकिन जब पतितसे पतित भी अहिंसक असहयोग द्वारा अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करनेकी कला सीख लेते हैं, तो वे अुसके प्रकाशका अनुभव किये बिना नहीं रह सकते।

अिसलिअे जब मैंने श्री जयप्रकाशके अिस प्रस्तावको पढ़ा और देखा कि वे देशमें जिस प्रकारकी शासन-व्यवस्था कायम करना चाहते हैं, अुसका आधार अुन्होंने अहिंसाको ही माना है तो मुझे खुशी हुअी। मेरा यह पक्का विश्वास है कि जिस चीजको हिंसा कभी नहीं कर सकती, वही अहिंसात्मक असहयोग द्वारा सिद्ध की जा सकती है; और अुससे अन्तमें जाकर अत्याचारियोंका हृदय-परिवर्तन भी हो सकता है। हमने हिन्दुस्तानमें अहिंसाको अुसके अनुरूप अवसर अभी तक दिया ही नहीं है। फिर भी आश्चर्य है कि अपनी अिस मिलावटी अहिंसा द्वारा भी हमने अितनी शक्ति प्राप्त कर ली है।

जमीनके बारेमें श्री जयप्रकाशकी सूचनायें भड़कानेवाली हो सकती हैं; लेकिन वे दरअसल वैसी हैं नहीं। सभ्योचित जीवनके लिअे जितनी जमीनकी आवश्यकता है, अुससे अधिक किसी आदमीके पास नहीं होनी चाहिये। अैसा कौन है जो अिस हकीकतसे अिनकार कर सके कि आम जनताकी घोर गरीबीका मुख्य कारण आज यही है कि अुसके पास अुसकी अपनी कही जानेवाली कोअी जमीन नहीं है?

लेकिन यह याद रखना चाहिये कि अिस तरहके सुधारताबड़तोड़ नहीं किये जा सकते। अगर ये सुधार अहिंसात्मक तरीकोंसे करने हैं, तो धनिकों और निर्धनोंको सुशिक्षित बनाना लाजिमी हो जाता है। धनिकोंको यह विश्वास दिलाना होगा कि अुनके साथ कभी जोर-जबरदस्ती नहीं की जायेगी; और निर्धनोंको यह सिखाना और समझाना होगा कि अुनकी मरजीके खिलाफ

1126

अुनसे जबरन कोअी काम नहीं ले सकता; और कष्ट-सहन या अहिंसाकी कलाको सीखकर वे अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर सकते हैं। अगर अिस लक्ष्यको हमें प्राप्त करना है, तो अूपर मैंने जिस शिक्षाका जिक्र किया है अुसका प्रारम्भ अभीसे हो जाना चाहिये। अिसके लिअे पहली जरूरत अैसा वातावरण तैयार करने की है, जिसमें पारस्परिक आदर और सद्‌भावका साम्राज्य हो। अुस अवस्थामें वर्गों और आम जनताके बीच किसी प्रकारका कोअी हिंसात्मक संघर्ष नहीं हो सकता।

अिसलिअे यद्यपि अहिंसाकी दृष्टिसे श्री जयप्रकाशकी सूचनाओंका सामान्य समर्थन करनेमें मुझे कोअी कठिनाअी नहीं मालूम होती, तो भी मैं राजाओं सम्बन्धी अुनकी सूचनाका समर्थन नहीं कर सकता। कानूनकी दृष्टिसे वे स्वतंत्र हैं। यह सच है कि अुनकी स्वतंत्रताका कोअी विशेष मूल्य नहीं है, क्योंकि अेक प्रबल शक्ति अुनका संरक्षण करती है। लेकिन वे अपनी स्वतंत्रताका दावा कर सकते हैं, जब कि हम नहीं कर सकते। श्री जयप्रकाशकी प्रस्तावित सूचनाओंमें जो बातें कही गअी हैं, अुनके अनुसार अगर अहिंसात्मक साधनों द्वारा हम स्वतंत्र हो जायें, तो अुस हालतमें मैं अैसे किसी समझौतेकी कल्पना नहीं कर सकता, जिसमें राजा लोग अपनेको खुद ही मिटानेके लिअे तैयार होंगे। समझौता किसी भी तरहका क्यों न हो, राष्ट्रको अुसका पूरा-पूरा पालन करना ही होगा। अिसलिअे मैं तो सिर्फ अैसे समझौतेकी ही कल्पना कर सकता हूं, जिसमें बड़ी-बड़ी रियासतें अपने दरजेको कायम रखेंगी। अेक तरहसे वह चीज आजकी स्थितिसे कहीं बढ़कर होगी, लेकिन दूसरी दृष्टिसे राजाओंकी सत्ता अितनी सीमित रह जायेगी कि जिससे देशी रियासतोंकी प्रजाको अपनी रियासतोंमें स्वायत्त शासनके वे ही अधिकार प्राप्त रहेंगे, जो हिन्दुस्तानके दूसरे हिस्सोंकी जनताको प्राप्त रहेंगे। अुनको भाषण, लेखन तथा मुद्रणकी स्वतंत्रता और शुद्ध न्याय प्राप्त रहेगा। शायद श्री जयप्रकाशको यह विश्वास नहीं है कि राजा लोग स्वेच्छासे अपनी निरंकुशताका त्याग कर देंगे। मुझे यह विश्वास है। अेक तो अिसलिअे कि वे भी हमारी ही तरह भले आदमी हैं और दूसरे अिसलिअे कि मेरा शुद्ध अहिंसाकी अमोघ शक्तिमें सम्पूर्ण विश्वास है। अतः अन्तमें मैं यह कहना चाहता हूं कि क्या राजा-महाराजा और क्या दूसरे लोग सभी सच्चे और अनुकूल बन जायंगे, जब हम खुद अपने प्रति, अपनी श्रद्धाके प्रति — यदि हममें श्रद्धा है — और राष्ट्रके प्रति सच्चे बनेंगे। अिस समय तो हममें अैसा बननेकी पूरी श्रद्धा नहीं है। अैसी अधकचरी श्रद्धासे स्वतंत्रताका मार्ग कभी नहीं प्राप्त किया जा सकता। अहिंसाका प्रारंभ और अन्त आत्म-निरीक्षणमें होता है — 'जिन खोजा तिन पाअिया गहरे पानी पैठ।'

हरिजनसेवक, २०–४–'४०; पृ० ८०–८२

## १८

# अहिंसा और राज्य

लन्दनके अेक भाअीने अहिंसाके अमलके बारेमें सात सवाल पूछे हैं। हालांकि 'यंग अिंडिया' या 'हरिजन' में अिस तरहके सवालोंके जवाब दिये जा चुके हैं, तो भी अगर अिन जवाबोंसे कुछ मदद मिल सकती है, तो अेक ही लेखमें सब सवालोंके जवाब दे देना फायदेमन्द होगा।

प्र० — १. क्या किसी मौजूदा हुकूमतके लिअे, जो लाजिमी तौर पर हिंसाके बल चलती है, यह मुमकिन है कि वह अुपद्रव (बलवा) करनेवालोंकी अन्दरूनी और बाहरी ताकतोंको रोकनेके लिअे अहिंसात्मक लड़ाअी लड़ सके? या जो लोग अहिंसात्मक ढंगसे अुपद्रवोंको रोकना चाहते हैं, क्या अुनके लिअे यह जरूरी है कि वे राज्याधिकारको छोड़कर बिलकुल निजी तौर पर विरोधियोंके सामने खड़े हो जायं?

अु० — हिंसाके बल पर चलनेवाली हुकूमतके लिअे अन्दरूनी या बाहरी किसी भी तरहके अुपद्रवोंको अहिंसात्मक ढंगसे शान्त करना मुमकिन नहीं है। आदमी अीश्वर और धनकी पूजा अेकसाथ नहीं कर सकता और न वह अेकसाथ शान्त और क्रुद्ध रह सकता है। दावा यह है कि राज्य अहिंसाके बल पर चल सकता है, यानी वह दुनियाकी सारी हथियारबन्द ताकतोंके खिलाफ अहिंसात्मक लड़ाअी लड़ सकता है। अैसा राज्य अशोकका था। फिरसे वैसा राज्य कायम किया जा सकता है। लेकिन अगर यह साबित कर दिया जाय कि अशोकका राज्य अहिंसाके बल नहीं चलता था, तो भी अुससे यह दावा कमजोर नहीं पड़ता। अिसके गुण-दोष पर ही अिसकी जांच होनी चाहिये।

प्र० — २. क्या आप समझते हैं कि कांग्रेसी सरकार बाहरी और अन्दरूनी अुपद्रवोंको बिलकुल अहिंसात्मक ढंगसे शान्त कर सकेगी?

अु० — बेशक, कांग्रेसी सरकारके लिअे यह मुमकिन है कि वह बाहरी हमलों और अन्दरूनी बलवोंको अहिंसात्मक ढंगसे शान्त कर सके। मुमकिन है कि कांग्रेसको अहिंसामें अितना विश्वास न हो जितना मुझे है। अगर कांग्रेस अपना रास्ता बदलती है, तो अिससे यही साबित होगा कि अब तककी हमारी अहिंसा कमजोरोंकी अहिंसा थी और यह कि कांग्रेसको अिस बातका विश्वास या श्रद्धा नहीं है कि कोअी 'स्टेट' भी अहिंसक हो सकती है।

प्र० — ३. *क्या यह जान लेनेसे कि विरोधी अहिंसावादी है, झगड़ा करनेवालेकी हिम्मत बढ़ नहीं जाती?*

अु० — झगड़ा करनेवालोंको फायदा तभी होता है, जब अुनका मुकाबला कमजोरकी अहिंसासे हो। बहादुरकी अहिंसा तो किसी भी हालतमें पूरी तरह हथियारोंसे लैस अेक बहादुर सिपाहीसे या समूची फौजसे भी मजबूत ही होती है।

प्र० — ४. अगर हिन्दुस्तानके लोगोंका अेक दल अपने स्वार्थके लिअे — जो न सिर्फ दूसरोंके खिलाफ है बल्कि बुनियादी तौर पर अन्यायपूर्ण भी है — तलवारसे काम ले, तो आपकी क्या नीति होगी? गैर-सरकारी संस्थाओंके लिअे तो अैसे मौके पर सत्याग्रह करना मुमकिन है; मगर क्या अैसी हालतमें हुकूमत करनेवालोंके लिअे भी सत्याग्रह मुमकिन हो सकता है?

अु० — सवालमें अैसी मिसाल ली गअी है, जो कभी पेश आ ही नहीं सकती। अहिंसात्मक राज्य ज्यादासे ज्यादा समझदार जनताकी मरजीके मुताबिक चलनेवाला और अुसके मनकी बात समझकर अुस तरह काम करनेवाला होना चाहिये। अैसे राज्यमें जिस दलकी कल्पना की गअी है वह नहींके बराबर ही होगा। वह अुस बड़े बहुमतकी निश्चित मरजीके खिलाफ, जिसका कि राज्य प्रतिनिधित्व करता है, खड़ा ही नहीं हो सकता। आजकी सरकार जनतासे बाहरकी चीज नहीं है। वह बहुत बड़े बहुमतकी अिच्छा ही है। अगर अुसे अहिंसात्मक ढंगसे जाहिर करें तो वह अेकका नहीं, बल्कि अेकके खिलाफ निन्यानवेका बहुमत होगा।

प्र० — ५. क्या ज्यादा मजबूत फौजी ताकतवालेका सत्याग्रह कमजोर फौजी ताकतवालेसे ज्यादा कारगर नहीं है?

अु० — ये दोनों विरोधी बातें हैं। जिसके पास मजबूत फौजी ताकत है वह सत्याग्रह कर ही नहीं सकता। मसलन्, अगर रूस अहिंसासे काम लेना चाहे तो पहले अुसे अपनी सारी हिंसक ताकतको छोड़ देना होगा। अिसमें सचाअी यह है कि जो अेक बार फौजी ताकतमें बहुत बढ़े-चढ़े थे वे अपने विचार बदल दें, तो न सिर्फ दुनियाको बल्कि अपने विरोधियोंको भी वे अपनी अहिंसा दिखा सकते हैं। जो लोग पक्के अहिंसक हैं वे अिस बातकी परवाह नहीं करेंगे कि अुनके विरोधी मजबूत फौजी ताकतवाले हैं या कमजोर हैं।

प्र० — ६. *अेक अहिंसक सेनाके लिअे किस तरहके अनुशासन और* ट्रेनिंगकी जरूरत है? क्या कुछ बातोंमें अुसकी ट्रेनिंग मौजूदा फौजी ट्रेनिंगसे मिलती-जुलती नहीं होगी?

अु० — मौजूदा फौजी ट्रेनिंगके शुरूका बहुत थोड़ा हिस्सा अहिंसक सेनाकी ट्रेनिंगमें शामिल हो सकता है। जैसे, अनुशासन, कवायद, कोरस, झंडा-वन्दन, सिग्नलिंग और अिसी तरहकी दूसरी चीजें। ये सब भी बिलकुल फौजी ढंगसे नहीं सिखाये जायेंगे, क्योंकि अिनकी बुनियाद ही दूसरी है। अेक अहिंसक सेनाके लिअे जिस तालीमकी ठीक-ठीक जरूरत है, वह है अीश्वरमें अटल श्रद्धा (विश्वास), अहिंसक सेनाके सेनापतिके हुक्मका अपनी मरजीसे पूरा पालन, और सेनाके हिस्सोंमें बाहरी और अन्दरूनी दोनों तरहका पूरा-पूरा सहयोग।

प्र० — ७. क्या आजकी हालतमें यह ज्यादा अच्छा नहीं होगा कि हिन्दुस्तान और अिंग्लैण्ड जैसे मुल्क किसी भी फौजी कदमको अुठानेसे पहले — सत्याग्रहकी आजमाअिशको पूरा मौका देनेका अिरादा रखते हुअे भी — अपनी फौजी काबलीयतको पूरा बनाये रहें?

अु० — अूपर दिये गये जवाबोंसे यह साफ हो जाना चाहिये कि जब तक हिन्दुस्तान और अिंग्लैण्ड अपनी पूरी फौजी काबलीयतको कायम रखते हैं, वे किसी भी हालतमें सत्याग्रहके साथ न्याय नहीं कर सकते। साथ ही, यह बिलकुल सही है कि फौजी ताकतें अपने आपस-आपसके झगड़ोंको शान्तिके साथ मिटानेके लिअे बराबर समझौतेकी बातचीत चलाती रहती हैं। लेकिन यहां हम लड़ाअीकी शरण लेनेसे पहले होनेवाली शान्तिकी प्रारंभिक बातचीतकी चर्चा नहीं कर रहे हैं। हम तो यह सोच रहे हैं कि लड़ाअीके नामसे पहचाने जानेवाले हथियारबन्द झगड़ेकी जगह, जिसे खुले शब्दोंमें कत्लेआम कहा जा सकता है, आखिर किस चीजको दी जाय।

हरिजनसेवक, १२–५–'४६; पृ० १२८

## १९

# क्या अहिंसक राज्य कभी अस्तित्वमें आ सकेगा?

अमेरिकासे आअी हुअी चिट्ठियोंमें से वैनकोवर (केनेडा) की अेक नमूनेदार चिट्ठी नीचे देता हूं:

"मैं सच्चे दिलसे अपने लिअे यह तो नहीं कह सकता कि मैं आपकी 'हिन्दुस्तान हिन्दुस्तानियोंके लिअे' वाली नीतिका हिमायती हूं, लेकिन 'लिबर्टी' मासिकमें मैंने आपका लेख पढ़ा है और समाचार-पत्रोंमें छपे हुअे आपके सुप्रसिद्ध जीवनके वर्णन भी पढ़े हैं। 'सुप्रसिद्ध' शब्दका प्रयोग मैंने अुस अर्थमें नहीं किया है जिस अर्थमें यह यूरोपके महान नेताओंके लिअे प्रयुक्त होता है; बल्कि अुस पुरुषके अर्थमें किया है जो अपनी निजी कल्पना-तरंगोंको स्थायी रूप देनेके बदले अपने देश-वासियोंकी स्थितिको सुधारनेका सच्चा प्रयत्न करता है। निस्सन्देह मैं यह तो जानता हूं कि आपके सिद्धान्तोंमें हिन्दुस्तानको पुनः ग्रामोद्योगोंकी ओर ले जाने, राष्ट्र-राष्ट्रके बीच आपसी आर्थिक सहयोग स्थापित करने और मनुष्य-मनुष्यके बीच सद्भाव पैदा करनेका लक्ष्य रहा है। लेकिन मैं यह जानना चाहता हूं कि आपका नया प्रजातंत्र संसारकी राजनीतिमें कौनसा स्थान ग्रहण करेगा? यूरोपके छोटे-छोटे देश मानते थे कि वे अलिप्त रह सकेंगे, लेकिन आप देख लीजिये कि आज अुनकी हालत क्या है। स्वयं हिन्दुस्तानके आध्यात्मिक नेताकी कलमसे मैं यह जानना चाहता हूं कि अुनकी सरकारका रुख अुनके देशमें रहनेवाले अंग्रेजोंके प्रति किस तरहका रहेगा, और अंग्रेजों व दूसरे देशवालोंकी पेढ़ियोंको वहां रहने दिया जायगा या नहीं? सन् १८५३ में अमेरिकन बेड़के और अेडमिरल पेरीके योकोहामाके बन्दरगाहमें प्रवेश करने तक जो नीति जापानने अख्तियार कर रखी थी, अुसीको हिन्दुस्तानकी नअी सरकार भी अपनायेगी क्या? अर्थात् क्या देशमें विदेशियोंको आने और विदेशी व्यापारको जमनेसे रोका जायगा?

"मुझे आशा है कि आप अेक केनेडियन नौजवानकी — जो आपके देशकी समस्याओंको भलीभांति समझना चाहता है — अिस धृष्टताको क्षमा करेंगे।"

अिस पत्रके शिष्टाचारवाले अंशको छोड़ देने पर लेखकका सीधा सवाल यह रह जाता है: "क्या स्वतंत्र हिन्दुस्तानमें अंग्रेजों और विदेशियोंके लिअे

स्थान रहेगा?" अिस सवालका मेरी कल्पित या सच्ची आध्यात्मिकताके साथ कोअी सम्बन्ध न होना चाहिये। स्वतंत्र अमेरिका और स्वतंत्र ब्रिटेनके लिअे यह सवाल नहीं अुठता। और जब हिन्दुस्तान सचमुच स्वतंत्र हो जायगा, तो अुसके लिअे भी नहीं अुठेगा। क्योंकि अुस समय हिन्दुस्तानको बिना किसीकी रोक-टोकके अपनी मनचीती करनेकी स्वतत्रंता रहेगी। किन्तु हिन्दुस्तानके स्वतंत्र होने पर — और देरमें या जल्दी वह स्वतंत्र होगा ही — वह क्या करेगा, यह कल्पना करनेमें आनन्दका अनुभव होता है। यदि अुसकी राजनीति पर मेरा कोअी प्रभाव रहा, तो देशमें विदेशियोंका स्वागत किया जायेगा, बशर्ते कि अुनकी अुपस्थिति देशके लिअे हितकारी हो। जैसा कि आज तक अुन्होंने किया है, अुसका शोषण करके अुसे कंगाल बनानेकी सहूलियत अुन्हें कभी न दी जायगी।

स्वतंत्र हिन्दुस्तान और बातोंमें कैसा होगा, सो तो देखनेकी बात है। जिस अहिंसात्मक नीतिका अुसने कुछ-कुछ सम्पूर्णता और कुछ-कुछ सफलताके साथ अब तक व्यवहार किया है, यदि आगे भी वह अुस पर दृढ़ रहा, तो यूरोपके छोटे-छोटे राष्ट्रोंकी बेबसीके खयालसे अुसको भयभीत होनेकी कोअी जरूरत न रहेगी। अहिंसक राज्यको बाहरी हमलोंसे अपनी रक्षा करनेके लिअे बड़े विस्तार या कदकी आवश्यकता नहीं रहती। बाहरी हमलोंसे बचनेके लिअे अैसे राज्यको थोड़ा भी खर्च करना जरूरी नहीं होता। हां, यह पूछना अुचित हो सकता है कि अिस तरहका राज्य कभी कायम होगा भी या नहीं? तात्त्विक दृष्टिसे अैसे राज्यकी कल्पनामें बुद्धि कोअी दोष नहीं पाती। दूसरा सवाल यह है कि अिस चीजको, जिसका व्यवहार कठिन बताया जाता है, कार्यरूपमें परिणत करनेके लिअे मनुष्य-स्वभाव अुतनी अुच्च कक्षा तक कभी पहुंच सकेगा या नहीं? हम जानते हैं कि व्यक्तिगत रूपसे मनुष्योंने अपने स्वभावकी अकल्पित अुच्चताका परिचय दिया है। धैर्यके साथ यत्न करनेसे अिनकी संख्याका बढ़ना असंभव नहीं। सो कुछ भी हो, सिर्फ अिसलिअे कि मैं हिन्दुस्तानकी ओरसे अैसे प्रत्युत्तरका कोअी प्रकट चिह्न दिखा नहीं सकता, मैं अपनी श्रद्धा खोकर प्रयत्न करना न छोड़ूंगा। तब तो मुझे हिन्दुस्तानके लिअे शुद्ध स्वतंत्रताकी आशा भी हमेशाके लिअे छोड़ देनी पड़ेगी, जैसी कि कुछ लोगोंने छोड़ दी है। अुनका कहना यह है कि हिन्दुस्तान अेक बहुत बड़ा और बिलकुल निहत्था देश है, अुसे सैनिक राष्ट्र बननेमें सैकड़ों बरस लग जायंगे। मैं अैसी निराशाका शिकार बननेसे अिनकार करता हूं। लोकमान्यके ज्वलन्त शब्दोंमें कहूं, तो 'स्वराज्य हिन्दुस्तानका जन्मसिद्ध अधिकार है और अुसे वह हर तरह लेकर ही रहेगा।' यश ध्येयप्राप्तिके प्रयत्नमें है, ध्येयको प्राप्त करनेमें नहीं। यह यश अहिंसात्मक प्रक्रियाओंकी सम्पूर्णता द्वारा प्राप्त हो सकेगा, अिस विषयमें मेरी श्रद्धा और मेरा अुत्साह अखूट है। अहिंसाकी अिस गूढ़ शक्तिका पता किसीने अभी तक

लगाया नहीं है। हमें सिर्फ पैर रखनेको जगह भर मिली है। लगनके साथ जुटे रहनेसे शाश्वत आनन्दके देनेवाले रत्न-भंडार खुल सकते हैं। अगर मेहनत ज्यादा है तो फल भी अुसका अुतना ही बड़ा है।

हरिजनसेवक, ५–४–'४२; पृ० १००

## २०

## अहिंसक राज्य-संचालन

[श्री महादेव देसाअी द्वारा लिखित 'अहिंसाकी मर्यादा' से।]

"अहिंसाके द्वारा राज्य-संचालन कैसे किया जाये?"

गांधीजी: "यह प्रश्न पूछते समय आप अेक बात स्वीकार कर लेते हैं, अर्थात् अहिंसक स्वराज्यकी प्राप्ति — यह समझमें आता है क्या? यदि हमने सचमुच अहिंसक मार्गसे स्वराज्य प्राप्त किया होगा, तो हममें से अधिकतर लोग अहिंसक बन चुके होंगे और हमारे देशका संगठन अहिंसक तरीकेसे हुआ होगा। अगर हमने स्वराज्य प्राप्त करने जितनी अहिंसक तैयारी की होगी, तो अहिंसक तरीकोंसे अुसे संभालनेमें हमें मुश्किल नहीं आनी चाहिये। क्योंकि अहिंसक स्वराज्य कुछ अूपरसे तो अुतरा नहीं होगा। अुसे पानेके लिअे हमें लोगोंका बहुमतसे साथ मिला होगा। अैसे राज्यका तो यह अर्थ हुआ कि गुंडे भी हमारे अंकुशमें आये होंगे। मिसालके तौर पर, सेवाग्रामकी सात सौकी आबादीमें पांच-सात गुंडे हों और बाकी सब लोगोंको अहिंसक तालीम मिली हो, तो या तो वे गुंडे बाकी लोगोंके अंकुशको स्वीकार करेंगे या गांव छोड़कर भाग जायेंगे।

"मगर आप देखेंगे कि अिस सवालकी चर्चा मैं सावधानीसे कर रहा हूं। मेरी सत्यकी भावना मुझसे कहलाती है कि शायद हम पुलिसके बिना न चला सकें। और पुलिस भी जिस तरहकी ब्रिटिश सरकार रखती है वैसी नहीं, मगर हमारे ही ढंगकी होगी। और फिर हमारी कल्पनाका बालिग मताधिकार होगा, अिसलिअे २१ वर्षके युवकका भी राजकाजमें हिस्सा होगा। अिसलिअे मैंने कहा है कि पूर्ण अहिंसक राज्य, बिना राजाके व्यवस्थित राज्य होगा। अिसलिअे वही राज्य अुत्तम होगा जिसमें पुलिस अित्यादिका अिन्तजाम कमसे कम हो। मगर बात तो यह है कि राज्यकी लगाम मेरे हाथमें देता कौन है! दें तो मैं राज्य चलाकर बता दूं। अगर मैं पुलिस रखूंगा तो वह कांग्रेसमें से लिये हुअे समाज-सुधारकोंकी पुलिस होगी।"

*

"मगर", खेर साहब[1] बोल अुठे, "कांग्रेसके मंत्री अहिंसक सत्ता लेकर नहीं आये थे। ५०० गुंडे तूफान करने पर तुल जायें और अगर अुन्हें रोका न जाये, तो वे चारों तरफ हाहाकार मचा सकते हैं। मुझे डर है कि अैसे लोगोंके साथ आप भी दूसरा बरताव न करते।"

गांधीजी हंस पड़े और बोले, "मगर अैसी परिस्थितिकी कल्पना तो मैंने की थी और अैसी हालतमें आप लोगोंको क्या करना चाहिये यह मैं कहा ही करता था। मंत्री अैसे प्रसंगोंमें घर या ऑफिससे निकलकर गुंडोंके सामने खड़े होकर अपने प्राण निछावर कर सकते थे। मगर सच्ची बात तो यह है कि हममें अैसी अहिंसा नहीं थी तो भी हमने मंत्रीपद लिया। लिया तो भले लिया। कारण कि जब हमें लगा कि सत्ता छोड़नी चाहिये तो अुसे छोड़नेमें अेक घड़ी भी नहीं लगी। हां, अितना कहूंगा कि अगर हमारे मंत्रीपदके दो या तीन सालमें हमने अखंड अहिंसाका पालन किया होता, तो कांग्रेस अहिंसा और स्वराज्यकी दिशामें बहुत आगे बढ़ गअी होती।"

बाला साहबने कहा, "मगर चार या पांच साल पहले जब अैसा प्रसंग आया था, तब मैंने कांग्रेसके नेताओंसे कहा था कि चलो निकलो और आगमें कूद पड़ो। मगर कोअी तैयार नहीं हुआ।"

गांधीजी, "यह आप मेरी ही दलीलका समर्थन कर रहे हैं। मैं यही कह रहा हूं न कि हमारी अहिंसा हृदयगत नहीं हुअी थी, वह जिह्वा तक ही रही थी। मगर अिस परसे अनुमान तो यह निकलता है कि यदि कच्ची अहिंसासे भी हम अितने आगे बढ़ सके, तो हमारी अहिंसा सच्ची रहती तो हम कितना बढ़ जाते। संभव है, शायद हम अपना ध्येय प्राप्त भी कर चुके होते।"

प्र० — "बाहरी आक्रमणका अहिंसक रीतिसे आप कैसे सामना करेंगे, यह समझाअिये?"

अु० — "अिसका चित्र मैं पूरी तरह आपके सामने नहीं खींच सकूंगा। क्योंकि हमारे पास न तो अिस चीजका अनुभव है और न यह खतरा आज हमारे सामने आकर खड़ा हुआ है। और आज तो सिखों, पठानों और गुरखोंके सरकारी लश्कर खड़े ही हैं। मेरी कल्पना तो यह है कि मैं अपनी हजार या दो हजारकी सेना दोनों लड़ती हुअी फौजोंके बीचमें रख दूंगा। अैसा करके मैं दूसरा कोअी परिणाम न भी ला सकूं, तो दुश्मनकी हिंसाको तो जरूर कम कर दूंगा। अहिंसक सेनाके सेनापतिको हिंसक सेनापतिसे ज्यादा तीव्र बुद्धि और ज्यादा समय-सूचकताकी आवश्यकता रहती है। मगर पहलेसे ही सब

---

१. बाला साहब खेर, बम्बअी राज्यके मुख्यमंत्री, सन् १९३७–३९ और १९४६–५२ के वर्षोंमें।

चित्र खींच सकनेकी शक्ति अुसे अीश्वर दे दे, तो वह अभिमानी बन जाये। और अीश्वर अैसा कंजूस है कि आवश्यकतासे ज्यादा शक्ति किसीको देता ही नहीं।"

खेर साहब विद्वान पुरुष हैं, अिसलिअे अुन्होंने अब गीताकी भाषामें अेक सवाल पूछा, "संसार सब द्वंद्वका ही बना हुआ है — हर्ष-शोक, सुख-दुःख, भय-साहस। डर होगा तो हिम्मत भी आयेगी। डर भी निकम्मी चीज नहीं है। पहाड़ पर डरकर न चलें, तो कहीं-न-कहीं खाअीमें जा पड़ेंगे। तो क्या आपकी अहिंसक सेना द्वंद्वातीत होगी, गुणातीत होगी?"

तुरन्त ही गांधीजीने गीताकी ही भाषामें अुत्तर दिया, "नहीं, हरगिज नहीं, क्योंकि मेरी सेनाने अहिंसा और हिंसाके द्वंद्वमें से अहिंसाको अपनाया होगा। मैं या मेरी सेना द्वंद्वोंसे परे नहीं है, त्रिगुणातीत नहीं है। गीताका त्रिगुणातीत तो हिंसा अहिंसासे परे है। डरका अुपयोग है, मगर डरपोक-पनका अुपयोग नहीं। डरके कारण मैं सांपके मुंहमें अुंगली न रखूंगा, मगर डरपोकपनसे सांपको देखते ही भयभीत होकर कांपने न लगूंगा। बात यह है कि हम तो मृत्यु आनेसे पहले ही अनेक बार मर जाते हैं। डर तो केवल अीश्वरका ही हो सकता है।

"मगर मेरी फौज किस किस्मकी होगी, यह मैं समझाअूं। सब सैनिकोंके पास सेनापतिकी बुद्धि होगी अैसी कल्पना ही नहीं है। मगर अुनमें सेनापतिकी अेक-अेक आज्ञाका पालन करनेकी निष्ठा और अनुशासन होगा। सेनापतिमें अैसी चीज जरूर होनी चाहिये कि जिसके कारण सब अुसका हुक्म मानें। लाखोंके दलके पाससे तो वह केवल आज्ञा-पालन ही चाहेगा। दांडीकूच केवल मेरी कल्पना ही थी। पहले तो पंडित मोतीलालजीने अुसका मजाक अुड़ाया था और जमनालालजीने कहा था कि अिससे तो वाअिसरॉयके महल पर कूच करके धावा करना ज्यादा अच्छा है। मगर मुझे तो नमकके सिवा दूसरी चीज सूझ ही नहीं सकती थी। क्योंकि मुझे तो करोड़ोंका विचार करके निर्णय करना था। यह कल्पना अीश्वर-दत्त थी। पंडित मोतीलालजीने थोड़ी दलील की, मगर अन्तमें कहा: 'आखिर सेनापति तो आप हैं, आप जो कल्पना करें वही सही है। अुसमें फेर-फार करनेके लिअे मैं आपको कैसे कह सकता हूं? हमें तो आपमें विश्वास रखकर चलना है।' अिसके बाद जब जंबूसरमें वह मुझसे मिलने आये, तब अुनकी आंखें खुल गअी थीं। जनताकी जागृतिको देखकर अुन्हें आश्चर्य हुआ था। और जागृति भी कैसी? हजारों स्त्रियोंने अुस वक्त जो शान्त हिम्मत बताअी थी, अुसके जोड़की मिसाल अितिहासमें कहां मिलेगी?

"और असा होते हुअे भी जिन हजारोंने सत्याग्रहमें हिस्सा लिया था, वे असाधारण स्त्री-पुरुष नहीं थे। अुनमें से कअी तो व्यसनी होंगे और भूलें करनेवाले होंगे। मगर अीश्वर तो जो भी कच्चे-पक्के साधन मिलते हैं, अुनका अुपयोग कर लेता है और स्वयं अलिप्त रहता है। कारण यह है कि वह गुणातीत है।"

आगे अुन्होंने कहा, "और सच्ची सेना है कौनसी? तुलसीकृत रामायणमें वानर-सेना, भालू-सेनाका वर्णन तो दिया है, पर सच्ची सेनाका वर्णन तो रामचन्द्रजीके मुखसे कहलाया गया है।"

ये सब चौपाअियां गांधीजीने पूरी नहीं सुनाअी थीं, मगर पाठकोंकी खातिर मैं (महादेवभाअी) अुन्हें यहां दे रहा हूं। प्रसंग यह है कि लंकाकांडमें रावणके सामने जब रामचन्द्रजी रणक्षेत्रमें आते हैं, तब विभीषण रामचन्द्रजीको विना रथके पैदल जाते देखकर भयभीत हो जाता है और पूछता है:

'नाथ न रथ नहिं तन पदत्राना। केहि विधि जितव वीर बलवाना।।'

अिसके अुत्तरमें रामचन्द्रजी कहते हैं:

"सुनहु सखा, कह कृपा निधाना।
जेहि जय होअि सो स्यंदन आना।।
सौरज, धीरज तेहि रथ-चाका।
सत्य, सील दृढ़ ध्वजा पताका।।
बल, विवेक, दम, परहित घोरे।
छमा, कृपा, समता रजु जोरे।।
अीस-भजन सारथी सुजाना।
विरति चर्म, संतोष कृपाना।।
दान परसु, बुधि सक्ति प्रचंडा।
वर विग्यान कठिन कोदंडा।।
अमल, अचल मन तून समाना।
सम, जम, नियम, सिलीमुख नाना।।
कवच अभेद विप्र गुरु पूजा।
अेहिसम विजय-अुपाय न दूजा।।
महा अजय संसार रिपु, जीति सकअि सो वीर।
जाके अस रथ होअि दृढ़, सुनहु सखा मति धीर।।"

अिस तरह रामायणका अुल्लेख करके गांधीजी बोले; "सो जीतनेवाली सेना तो यह है। मैं संसारसे विरक्त नहीं हुआ हूं। होना चाहता भी नहीं।

अैसे किसी विरक्तको मैं जानता भी नहीं हूं। मैं तो सेवाग्राममें बैठकर जो कुछ काम कर सकता हूं अुतना करके और जो कोअी मेरी सलाह लेने आये अुसे सलाह देकर संतोष मानता हूं। बात यह है कि हमें श्रद्धाकी जरूरत है। सत्यके मार्ग पर चलकर हम खोनेवाले क्या हैं? बहुत होगा तो कुचले जायेंगे। मगर हारनेसे क्या कुचला जाना बेहतर नहीं है?

"मगर हिंसक तैयारी करनी हो तो मेरी बुद्धि काम नहीं करेगी। हवाअी जहाज और टैंकों अित्यादिका विचार करते ही मेरा माथा चकरा जाता है। अुसके सामने मेरी अहिंसक तैयारी तो अितनी आसान है कि कोअी बात ही नहीं। और फिर अुसमें अीश्वर-जैसा सारथी मिला है, जो कभी हमें अुलटे मार्ग ले ही नहीं जा सकता। फिर डरनेका कारण ही क्या है?"

हरिजनसेवक, ३१–८–'४०; पृ० २४३–४४

# २१

# अहिंसक प्रतिरक्षा

नीचे लिखा हुआ सवाल अेक अंग्रेज मिलिटरी अफसरने भेजा है। अुन्होंने २८ जुलाअी, १९४६ के 'हरिजन' में 'आजादी' पर मेरा लेख बड़ी दिलचस्पीसे पढ़ा है। ये अफसर अेक फौजी अिंजीनियर हैं। अमेरिका और यूरोपमें खूब घूमे हैं और अपनी आंखोंसे जर्मनीमें लड़ाअीकी तबाही और बरबादी देख चुके हैं।

प्र० — अिस आदर्श हुकूमतमें (और बेशक यह हुकूमत आदर्श होगी) आदमी बाहरके हमलोंसे किस तरह बच सकता है? आजकल जब कि मशीनका दौर-दौरा है, अगर राज्यके पास नये नये हथियारोंसे लैस फौज न होगी, तो अैसे हथियारोंवाली फौज हमला करके देशको जीत सकती है और वहांके रहनेवालोंको गुलाम बना सकती है।

अु० — सवाल पूछनेवाले भाअी कहते हैं कि अुन्होंने मेरे लेखको बड़े ध्यानसे बार-बार पढ़ा है और फौजी आदमी होनेके बावजूद अुसे पसन्द भी किया है। मगर साफ पता चलता है कि मेरे लेखमें जो असल बात है अुसे वे चूक गये हैं। वह यह है कि अेक व्यक्तिकी तरह अेक राष्ट्र, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, और राष्ट्र तो क्या अेक वर्ग भी हथियारोंसे लैस सारी दुनियाके खिलाफ अपनी अिज्जतकी रक्षा कर सकता है। लेकिन शर्त यह है कि अुसमें सब अेकमतके हों और अुनमें अिस रक्षाके लिअे

पक्का अिरादा हो। यही निहत्थे लोगोंकी शक्ति और खूबसूरती है, जिसकी कोअी मिसाल नहीं मिल सकती। यही अहिंसक रक्षा है, जो किसी मंजिल पर न तो हार जानती है, न हार मानती है। अिसलिअे जिस राष्ट्र या समूहने हमेशाके लिअे अहिंसाका रास्ता अपना लिया हो, वह अणुगोलोंसे भी गुलाम नहीं बनाया जा सकता।

हरिजनसेवक, १८–८–'४६; पृ० २६९

# २२
# पुलिस-बलकी मेरी कल्पना

अेक मित्र अिस प्रकार लिखते हैं:

"अेक अंग्रेज बहनने, जिसका आपने हालमें ही अुल्लेख किया है, ठीक ही कहा है कि बाहरी आक्रमणके आगे अहिंसाका प्रयोग करना, यह हमेशाके लिअे और आजकी परिस्थितियोंमें खास जरूरी है और यह भी संभव है कि अिसका अधिक अच्छा परिणाम सिद्ध हो। मगर अंदरूनी हुल्लड़ोंके सामने अहिंसाका प्रयोग करना ज्यादा मुश्किल है। हमारे यहां मुख्य तीन प्रकारके हुल्लड़ोंकी कल्पना की जाती है: साम्प्रदायिक दंगे, जहां औद्योगिक केन्द्र हों वहां मजदूरोंके झगड़े और चोर-डाकुओंकी लूटपाट या डाकेके अुपद्रव। अिस प्रकारके हुल्लड़ोंमें निहित मूल कारण, जैसे पारस्परिक अविश्वास, सामाजिक अन्याय तथा आर्थिक शोषणमें से पैदा हुअी गरीबी और बेकारी, जब तक दूर नहीं हो जाते, तब तक अिन हुल्लड़ोंको चाहे जितनी जोर-जबरदस्तीसे दबा दिया जाये, तो भी वे बार-बार होते रहेंगे और चाहे जितना बन्दोबस्त होते हुअे भी लोगोंको अिनके कारण कष्ट-सहन करने पड़ेंगे। मूल कारण तो रचनात्मक प्रवृत्तिसे ही दूर किये जा सकेंगे। पर अैसा करनेमें वक्त लगेगा। अिस दरमियान अैसे हुल्लड़ोंके अवसर पर अधिकांश मनुष्य हिंसा-बलवालोंका रक्षण ढूंढ़नेके लिअे ही प्रेरित होंगे। अैसे समय पर भी अैसे मनुष्य जिन्हें अहिंसा पर श्रद्धा है, अपनी अहिंसाको जितने दरजे तक अधिक सक्रिय रूप दे सकेंगे अुतने दरजे तक वे अिस किस्मके हुल्लड़ोंको निर्मूल करनेमें अधिक योग देंगे। अिसलिअे हुल्लड़ोंके लिअे भी आखिरी अुपाय तो अहिंसा ही है।

"पर क्या हम अैसी समाज-रचनाकी कल्पना कर सकते हैं कि जिसमें किसी भी रूपकी हिंसाका आश्रय बिलकुल लेना ही न पड़े? हम अैसी कल्पना कर सकते हैं कि समाजमें अधिकांश लोगोंके पास अितनी सम्पत्ति न हो कि अुसे छीन लेनेके लिअे दूसरोंकी नीयत बिगड़ जाये, अिसी प्रकार हरअेकके पास अितना हो कि सब सुख-संतोषसे रह सकें, जिससे कि दूसरोंकी सम्पत्ति छीननेका अुनका मन ही न हो। फिर भी जमीन या दूसरी मिल्कियतके हक और अुपयोगके संबंधमें तथा लेन-देन और अन्य व्यवहारोंके अिकरारके संबंधमें तकरार खड़ी ही न होने पाये, अैसा होना संभव नहीं दिखाअी देता। अिसके लिअे न्याय-व्यवस्था रखनी पड़ेगी, और अुसे टिकानेके लिअे तथा पंच या अदालतके निर्णयों पर अमल करानेके लिअे पुलिस-बलकी आवश्यकता तो रहेगी ही। पुलिस रखनेके संबंधमें आपने ढिलाअी तो दी ही है। पर अुसकी मर्यादा कहां रखेंगे? आज अहिंसा-भक्तोंके हाथमें राज्यका अुत्तरदायित्व हो, तो वे आन्तरिक हुल्लड़ोंके अवसर पर पुलिस-बलका अुपयोग करें या नहीं? फिर पुलिस-बलको आप तात्कालिक आवश्यकताके लायक निभा लेनेको तैयार हैं या स्थायी तौर पर? मुझे तो अैसा मालूम होता है कि लम्बे समयके लिअे, जिसके अंतकी हम कल्पना नहीं कर सकते, समाजमें पुलिस-बलकी जरूरत पड़ेगी। अैसा लगता है कि अहिंसाकी अितनी मर्यादा स्वीकार करनी ही पड़ेगी।"

अिस पत्रमें पूछे गये प्रश्न महत्त्वके हैं और हरअेक जवाबदार सत्याग्रहीके लिअे विचारणीय हैं। अगर हम लोगोंमें सच्ची अहिंसा पैदा हुअी होती, अगर हमारी अहिंसक मानी हुअी लड़ाअियां सचमुच अहिंसक होतीं, तो अैसे प्रश्न अुठ ही नहीं सकते थे, क्योंकि अुनका हल अपने-आप हो गया होता।

पृथ्वीके ठेठ अुत्तर ध्रुवके प्रदेशका हमें अनुभव न होनेसे अुसके कल्पना-चित्र ही हमको मिल सकते हैं, पर अुससे यथेष्ट तृप्ति होती ही नहीं। यही बात अहिंसा-विषयक प्रश्नोंकी है। अगर सबके सब कांग्रेसवादी (जन) प्रामाणिक रहे होते, तो हमारी स्थिति आज त्रिशंकुकी जैसी न होती। हम सर्वत्र अहिंसाके चिह्न देखते, हममें साम्प्रदायिक अैक्य होता, हम लोगोंमें से छुआछूतका भूत निकल गया होता और समाज अधिकांशमें सुव्यवस्थित होता। मगर हम अिनमें से कुछ नहीं देखते, अितना ही नहीं, बल्कि हम देखते हैं कि कांग्रेसके प्रति जगह-जगह कटुताका प्रदर्शन किया जा रहा है। हमारे वचनों पर बहुतसे लोग विश्वास नहीं करते। मुस्लिम लीग और बहुतसे राजाओंको कांग्रेसका विश्वास नहीं, अुसके प्रति आज तो वैर-भाव

ही अुनके मनमें है। हम लोगोंमें शुद्ध अहिंसाका आचरण होता, तो कांग्रेस
आज किसीको भय न होता, बल्कि वह सबकी प्रेम-भाजन बन गअी होत

अिसलिअे जिन्हें अहिंसा पर अटल विश्वास है, अुनके लिअे आज
मैं काल्पनिक चित्र ही दे सकता हूं।

जहां तक हममें शुद्ध अहिंसा प्रगट नहीं होती, वहां तक हम अहि
मार्गसे स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। हमारा बहुमत हो तभी हमें
मिल सकती है, अिसका अर्थ यह हुआ कि प्रजाका बहुत बड़ा भाग अहिं
शासनके नीचे रहनेवाला होगा। अैसी स्थिति जब होगी तब काफी हि
वृत्तिका नाश हो गया होगा और हिंसक अुपद्रव काबूमें आ गये होंगे

अैसा होते हुअे भी मैंने यह तो स्वीकार किया ही है कि अहि
शासनमें अेक मर्यादित हद तक पुलिस-बलके लिअे स्थान होगा। यह मान
मेरी अपूर्ण अहिंसाका चिह्न है। पुलिसके बिना मैं काम चला सकूंगा
कहनेकी मेरी हिम्मत नहीं, जैसे कि यह कहनेकी हिम्मत है कि बिना फौ
मैं चला लूंगा। मैं जरूर अैसी स्थितिकी कल्पना करता हूं, जब पुलिसकी
जरूरत नहीं पड़ेगी। पर अिसका सच्चा पता तो अनुभवसे ही लग सकता

यह पुलिस आजकी पुलिससे बिलकुल भिन्न ही प्रकारकी होगी। अु
अहिंसामें विश्वास रखनेवालोंकी भरती होगी। वे लोगोंके सेवक होंगे, सर
नहीं। लोग अुनकी मदद करते होंगे और वे रोज-ब-रोज कम होते ज
वाले अुपद्रवोंका आसानीसे मुकाबला कर सकेंगे। पुलिसके पास कुछ
तो होंगे, पर अुसका अुपयोग शायद ही कभी होगा। असलमें देखा
तो अिस पुलिसको सुधारकके तौर पर समझना चाहिये। अैसी पुलि
अुपयोग मुख्यतया चोर-डाकुओंको काबूमें रखनेके लिअे ही होगा। अहिं
शासनमें मजदूर-मालिकोंका झगड़ा क्वचित् ही होगा, हड़तालें श
ही होंगी। क्योंकि अहिंसक बहुमतकी प्रतिष्ठा स्वभावतः अितनी होगी
समाजके प्रमुख समुदायोंका आदर अुसे प्राप्त होगा। अितना याद र
चाहिये कि कांग्रेसका जब अधिकार होगा, तब अधिकतर अिक्कीस व
और अिससे अूपरकी अुमरके स्त्री-पुरुष मताधिकारी होंगे। आजके संकु
विधानको अिस काल्पनिक चित्रमें स्थान नहीं है।

हरिजनसेवक, २४–८–'४०; पृ० २३४–३५

## २३
# कांग्रेसी मंत्री और अहिंसा

श्री शंकरराव देव लिखते हैं :

"लोगोंकी समझमें यह बात नहीं आ रही है कि जो लोग अपनेको सत्याग्रही कहते थे, वे मंत्री बनते ही फौज और पुलिसका अुपयोग क्यों करते हैं। लोग मानते हैं कि धर्म या व्यवहारके रूपमें मानी हुअी अहिंसाका यह भंग है, और अूपरी खयालसे यह सच भी मालूम होता है। कांग्रेसी मंत्रियोंके विचारोंमें और बरतावमें यह जो विरोध दिखाअी देता है, अुसका समर्थन करना आसान न होनेके कारण हमारे कार्यकर्ता अुलझनमें पड़ जाते हैं, और अिस विसंगतिसे लाभ अुठानेवाले कांग्रेसी और गैर-कांग्रेसी प्रचारकोंका मुकाबला करना अुनके लिअे मुश्किल हो जाता है।

"आम तौर पर कांग्रेसियोंकी अहिंसा कमजोरोंकी अहिंसा ही रही है। हिन्दुस्तानकी मौजूदा हालतमें यही हो सकता था, अिसे तो आप भी जानते हैं। आप कहते हैं कि ताकतवरकी अहिंसामें तेज होता है; फिर भी कमजोरको तगड़ा बनानेके लिअे आपने अहिंसाका अुपयोग करना स्वीकार किया, यही नहीं बल्कि आप अुनके नेता भी बने। अिस तरह दुर्बल या कमजोर होते हुअे भी आज अुनके हाथमें सत्ता आअी है। वे अंग्रेजी हुकूमतके खिलाफ तो अहिंसासे लड़े, लेकिन अब अपने हाथमें सत्ता लेकर देशमें दंगा-फसादके समय भी अहिंसाका अुपयोग करके अुसे मिटानेको वे तैयार नहीं हैं। अगर वे अैसी कोशिश करें भी तो न वे अुसमें कामयाब होंगे और न अिस काममें अुन्हें आम लोगोंका सहकार ही मिलेगा।

"मैंने आपसे पूछा था कि क्या सत्याग्रही अपने हाथमें हुकूमतकी बागडोर ले सकता है? अगर ले सकता है तो अुस हुकूमतके जरिये वह अहिंसाको कैसे आगे बढ़ा सकता है? कृपा करके आप अिस पर थोड़ी रोशनी डालिये। जिसने अहिंसाको धर्म माना है वह कभी हुकूमतमें शामिल होना पसंद नहीं करेगा। और, मेरी राय है कि अुसे अैसा करना भी नहीं चाहिये। लेकिन मैं मानता हूं कि जिन्होंने अहिंसाको सिर्फ नीति या व्यवहारकी दृष्टिसे अपनाया है, अुनके लिअे पद लेनेमें कोअी दिक्कत न होनी चाहिये। बहुतेरे कांग्रेसियोंने पद

संभाले हैं और असके लिये आपने अुन्हें अिजाजत दी है। अैसी हालतमें सवाल यह अुठता है कि अुन मंत्रियोंसे, जो अहिंसामें मानते हैं, आपका यह अुम्मीद रखना कहां तक मुनासिब है कि कमसे कम वे खुद तो दंगा-फसादके मौकों पर अहिंसाका अुपयोग करें? अहिंसाके जरिये सत्ता प्राप्त करनेके बाद अुसका अुपयोग किस तरह किया जाय, जिससे सत्ता ही गैर-जरूरी हो जाय? अगर अैसा कोअी रास्ता आप न सुझायेंगे, तो हमारे अपने मकसद तक पहुंचनेके लिअे सत्याग्रह अेक अधूरा साधन माना जायगा।"

मेरे विचारसे अिसका जवाब आसान है। कुछ समयसे मैंने यह कहना शुरू कर दिया है कि कांग्रेसके विधान या कानूनसे 'सत्य और अहिंसाको' हटा देना चाहिये। लेकिन कांग्रेसके विधानसे ये दोनों सचमुच हटाये जायं या न हटाये जायं, अगर हम यह मान लें कि वे हटा दिये गये हैं, तो स्वतंत्र रूपसे हम यह समझ सकेंगे कि कोअी काम सही है या नहीं। मैं मानता हूं कि जब तक हम देशमें भीतरी शक्तिकी रक्षाके लिअे फौज या पुलिसका अुपयोग करेंगे, तब तक अंग्रेजी सल्तनतके या दूसरी किसी विदेशी सल्तनतके मातहत ही हम रहेंगे — फिर चाहे देशकी सरकार कांग्रेसवालोंके हाथमें हो या दूसरोंके हाथमें हो। फर्ज कीजिये कि कांग्रेसी मंत्रि-मंडलोंको अहिंसामें विश्वास नहीं है। यह भी मान लीजिये कि हिन्दू, मुसलमान और दूसरे हिंदुस्तानी फौज और पुलिसका सहारा चाहते हैं। अगर अैसा है तो वह अुन्हें मिलता रहेगा। जो कांग्रेसी मंत्री अहिंसामें विश्वास रखते हैं, अुन्हें फौज या पुलिसकी मदद लेना अच्छा न लगेगा। अिसलिअे वे अिस्तीफा दे सकते हैं। अिसके मानी यह हुअे कि जब तक लोगोंमें आपसमें ही फैसला कर लेनेकी ताकत नहीं आती, तब तक हुल्लड़बाजी होती रहेगी और हममें अहिंसाका सच्चा बल पैदा ही नहीं होगा।

अब सवाल यह रहा कि अैसा अहिंसक बल किस प्रकार पैदा हो सकता है? अिस सवालका जवाब अहमदाबादसे आये हुअे अेक पत्रके जवाबमें ४ अगस्तको मैं दे चुका हूं। जब तक हममें बहादुरी और प्रेमसे मरनेकी ताकत पैदा नहीं होती, तब तक हममें वीरोंकी अहिंसाका बल नहीं आ सकता।

अब सवाल यह है कि आदर्श समाजमें कोअी राजसत्ता रहेगी या वह अेक बिलकुल अराजक समाज बनेगा? मेरे खयालमें अैसा सवाल पूछनेसे कोअी फायदा नहीं होगा। अगर हम अैसे समाजके लिअे मेहनत करते रहें, तो वह धीरे धीरे किसी हद तक अस्तित्वमें आयेगा; और अुस हद तक लोगोंको अुससे फायदा पहुंचेगा। युक्लिडने कहा है कि लाअिन वही हो सकती है जिसमें चौड़ाअी न हो। लेकिन अैसी लाअिन न आज तक कोअी

बना पाया है, न आगे भी कोअी बना पायेगा। फिर भी अैसी लाअिनको खयालमें रखनेसे ही प्रगति हो सकती है। जो बात अिस मामलेमें सच है, वह हरअेक आदर्शके बारेमें सच है।

हां, अितना याद रखना चाहिये कि आज दुनियामें कहीं भी अराजक समाज नहीं है। अगर कभी कहीं बन सकता है, तो अुसका आरंभ हिन्दुस्तानमें ही हो सकता है। क्योंकि हिन्दुस्तानमें अैसा समाज बनानेकी कोशिश की गअी है। आज तक हम आखिरी दरजेकी बहादुरी नहीं दिखा सके; लेकिन अुसे दिखानेका अेक ही रास्ता है। और वह यह है कि जो लोग अुसमें विश्वास रखते हैं, वे अुस पर चल कर दिखायें। अैसा करनेके लिअे, जिस तरह हमने जेलोंका डर छोड़ दिया है अुसी तरह, मृत्युका डर भी बिलकुल छोड़ना पड़ेगा।

हरिजनसेवक, १५–९–'४६; पृ० ३०९–१०

## २४

## सत्य और अहिंसाको न छोड़ें

अेक सेवाभावी भाअी अपना नाम देकर लिखते हैं:

"आपका साप्ताहिक अखबार 'हरिजनबन्धु' मैं नियमित पढ़ता हूं। १५ सितम्बरके 'हरिजनबन्धु' में श्री शंकरराव देवको दिये गये जवाबमें आपने लिखा है: 'मैंने कुछ समयसे कहना शुरू किया है कि कांग्रेसके विधानमें से सत्य और अहिंसाको निकाल देना चाहिये।'

"आजकी परिस्थितियोंमें अैसा होगा, तो कांग्रेस परसे लोगोंका विश्वास अुठ जायेगा। लोग अैसा समझेंगे कि जब तक कांग्रेसके हाथमें सत्ता नहीं थी, वह लोगोंको सत्य और अहिंसा पर चलनेको समझाती थी। आज सत्ता हाथमें आते ही वह सत्य और अहिंसाको विधानमें से निकालनेका सोच रही है। . . .

"अगर कांग्रेसके विधानमें से ये दो शब्द, जिनके जरिये कांग्रेस अितनी आगे बढ़ी है और आज अूंची चोटी पर बैठी है, निकल जायेंगे, तो कांग्रेस फौरन ही नीचे गिर जायेगी। अुसकी प्रतिष्ठा हलकी पड़ जायेगी। आप ही कहते थे कि सत्य और अहिंसाके बिना आप अेक कदम भी आगे नहीं चल सकते।

"किसलिअे लोग कांग्रेसवालोंको विश्वासके लायक, दयालु, सेवाभावी, हिम्मतवाले — वगैरा-वगैरा मानते आये हैं? सत्य और अहिंसाके ही कारण। सत्य और अहिंसा अुसकी जड़ है। जड़के नाश

होनेसे साराका सारा पेड़ अपने-आप सूख जायेगा। आपको तो यह कोशिश करनी चाहिये कि वह जड़ ज्यादासे ज्यादा गहरी जाय।

"अिसलिअे मुझे लगता है कि आप हरअेक कांग्रेसजनको अिन सिद्धान्तोंका पालन करनेके लिअे बाध्य करें; यदि वह अिनका पालन करनेसे अिनकार करता है, तो अुसे कांग्रेस छोड़ देनी चाहिये।"

अहिंसाका दावा करनेवाला मैं अच्छा काम करनेके लिअे भी किसीको मजबूर कैसे कर सकता हूं? अेक महान अंग्रेजने कहा है कि आजाद रहकर भूल करना अच्छा है, मगर मजबूर होकर अच्छा बनना बुरा है। मैं अिस सत्यको मानता हूं। कारण साफ है। जो दूसरोंके दबावसे अच्छा रहता है, अुसका दिल अच्छा नहीं रहता, अुलटा ज्यादा बिगड़ता है; और जब दबाव हट जाता है तो अन्दर हुआ बिगाड़ अूपर आ जाता है।

और, किसी अेक व्यक्तिके पास तो किसी पर दबाव डालनेकी ताकत होनी ही नहीं चाहिये। कांग्रेस भी जबरन् किसीसे सत्य या अहिंसा पर अमल नहीं करवा सकती। अैसी चीजें खुशीका सौदा ही होनी चाहिये।

सत्य और अहिंसाको कांग्रेसके विधानसे निकालनेकी बात पेश किये मुझे अेक सालसे ज्यादा अरसा हो गया है। . . . मेरी अिस सलाहके पीछे जोरदार कारण है। सत्य और अहिंसाकी ओटमें कांग्रेसका झूठ और हिंसाको छिपाना कोअी मामूली कारण नहीं है। अगर कांग्रेसी दिखावा न करें और सचमुच सत्य और अहिंसाके अिन दो खंभोंको पकड़े रहें, तो अिससे अच्छा और क्या हो सकता है?

मैं तो कभी यह चाह ही नहीं सकता कि सत्ता हाथमें आने पर कांग्रेस-जन सत्य और अहिंसाकी अुस सीढ़ीको छोड़ दें, जिसके सहारे वे अितने आगे बढ़े हैं। मैं मानता हूं कि अगर कांग्रेस सत्ता पाकर अिस सीढ़ीको छोड़ेगी, तो अुसका तेज बिलकुल मन्द पड़ जायगा।

अेक और भूलसे सबको बचना चाहिये। जो विधानमें नहीं लिखा हो अुस पर किसीको अमल नहीं करना चाहिये, अैसी बात तो है ही नहीं। मैंने तो आशा रखी ही है कि सत्य और अहिंसाके विधानमें से निकल जाने पर भी सब या ज्यादातर कांग्रेसी अपनी अिच्छासे अुन पर अमल करेंगे और करते-करते मरेंगे भी।

अेक भूल, जिसका जिक्र अिन सेवाभावी भाअीने नहीं किया है, सुधार दूं। कांग्रेसके विधानमें 'शांतिपूर्ण और न्यायसंगत' शब्द हैं। अुन्हें अहिंसक और सत्यपूर्ण माननेका मुझे हक नहीं। कांग्रेसके पास धर्म नहीं, कर्म ही है। अंग्रेजीमें अुसे 'पॉलिसी' कहेंगे। मेरे हकका तो सवाल ही नहीं है। मगर जब तक कर्म चलता है तब तक वह धर्म हो जाता है। यानी अुस पर

अमल करनेका बंधन होता है। अगर 'शान्ति' का मतलब अशान्ति भी हो सकता हो और 'न्यायसंगत' का मतलब झूठ भी हो सकता हो, तो मेरी सलाहके लिअे कोअी स्थान नहीं रह जाता।

हरिजनसेवक, २९–९–'४६; पृ० ३२९

## २५

## मैं अहिंसक साम्यवादमें विश्वास रखता हूं

[श्री महादेव देसाअीके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

हम लोग बेहद थक गये थे। सोनेकी तैयारीमें ही थे, क्योंकि दूसरे दिन सबेरे तीन बजे अुठना था। आंध्रके तूफान-पीड़ित प्रदेशमें घूमना था। गाड़ी चल पड़ी थी। अितनेमें ही अेक दोहरे बदनके सज्जन दौड़ते हुअे आये और अुन्होंने खिड़कीमें से झांका। पहनावा यूरोपियन था। कहने लगे, "जनाब, मैं ठेठ मिस्रसे आ रहा हूं। हिन्दुस्तानके सबसे बड़े महापुरुषसे हाथ मिलाने और अुनसे थोड़ी-सी बातचीत करनेका मौका तो मिलना ही चाहिये।" वे अंग्रेजीमें बोले, पर लहजा और अुच्चारण फ्रेंच था। अुन्हें हम क्या कहते? सिवा अंदर लेनेके चारा ही नहीं था। पर दरवाजेमें ताला लगा हुआ था। हमने कहा, "आप अगले स्टेशन पर आ जाअिये।" पर वे जरा भी समय खोना नहीं चाहते थे। खिड़कीमें से ही वे अंदर घुसे। हमने भी थोड़ी सहायता की और वे आ गये। अिस बातसे वे बड़े खुश थे कि मिस्रको कुछ तो आजादी मिली। हिन्दुस्तानके प्रति भी अुन्होंने शुभाशा प्रगट की।

"पर मैं कुछ सवाल आपसे पूछूं। मैं देखता हूं कि आप काफी थक गये हैं; पर मुझे अपने जीवनमें फिर कभी अैसा मौका नहीं मिलेगा। अिसलिअे आशा करता हूं कि आप मुझे जरूर माफ करेंगे।" मारे नींदके गांधीजीकी आंखें मुंद रही थीं। पर अिस प्रेमी आगन्तुकको वे टाल नहीं सके। "अच्छा कहिये," वे बोले।

"कम्युनिज्मके बारेमें आप क्या सोचते हैं? क्या आपके खयालसे अुससे हिन्दुस्तानका भला हो सकता है?" यह अुनका पहला सवाल था।

"रूसी ढंगका अर्थात् लोगों पर अूपरसे जबरदस्ती लादा हुआ कम्युनिज्म हिन्दुस्तानके लिअे बिलकुल नामुमकिन होगा। मैं तो अहिंसात्मक साम्यवादमें विश्वास करता हूं।" गांधीजीने कहा।

"पर रूसी कम्युनिज्म तो खानगी संपत्तिके खिलाफ है। क्या आप खानगी संपत्ति रहने देना चाहते हैं?"

"अगर कम्युनिज्म बगैर किसी तरहकी जोर-जबरदस्तीके आ सकता हो, तब तो अुसका स्वागत होगा। क्योंकि अुस हालतमें संपत्ति पर किसीका भी अधिकार तब तक नहीं होगा, जब तक कि वह जनताकी ओरसे और जनताके लिअे नहीं होगा। अेक लखपतिके पास लाखों होंगे। पर वह जनताकी ओरसे अुनका रक्षक-मात्र होगा। और जब कभी सर्व-साधारणके हितके लिअे अुनकी जरूरत होगी, तब राज्य सारी संपत्ति पर अधिकार कर सकेगा।"

"क्या समाजवादके बारेमें आप और जवाहरलालजीके बीच कोअी मतभेद है?"

"हां, है तो। पर वह अितना ही कि वे अुसके अेक अंग पर जोर देते हैं तो मैं दूसरे पर। वे शायद परिणाम पर जोर देते हैं और मैं साधन पर देता हूं। मैं शायद अुनके खयालसे अहिंसा पर जरूरतसे ज्यादा जोर दे रहा हूं। वे भी अहिंसामें विश्वास तो करते हैं। पर अगर वे यह देखें कि अहिंसाके द्वारा समाजवाद नहीं लाया जा सकता, तो वे अन्य साधनोंको भी काममें लेना बुरा न समझेंगे। असलमें मैं तो सैद्धान्तिक दृष्टिसे अहिंसाको अितना महत्त्व दे रहा हूं। मुझे अगर कोअी यह विश्वास दिला दे कि अन्य साधनोंसे आजादी लायी जा सकती है, तो भी मैं अुसे लेनेसे अिनकार कर दूंगा। वह सच्ची आजादी नहीं होगी।"

"पर क्या आपका यह खयाल है कि आपके अहिंसात्मक प्रचार (आन्दोलन) से अंग्रेज हिन्दुस्तानको आपके हाथोंमें सौंपकर यहांसे चुपचाप चले जायेंगे?"

"हां, जरूर मेरा यही खयाल है।"

"पर आपके अिस खयालका आधार क्या है?"

"अीश्वर और अुसके न्याय पर मेरी श्रद्धा आधार रखती है।"

अुन मिस्री सज्जन पर गांधीजीके अिन शब्दोंका बड़ा असर पड़ा। अुन्होंने ये शब्द लिख लिये और कहने लगे: "हम अीसाअी कहलानेवालोंकी अपेक्षा आपमें अीसाअी श्रद्धा अधिक है। मैं अिन शब्दोंको खूब मोटे मोटे अक्षरोंमें लिखकर लगा दूंगा।"

"हां, जरूर लिख लीजिये, क्योंकि अगर अैसा न हो तो अुस अीश्वरको दयामय कौन कहेगा? तब तो अुसे हिंसाका पोषक अीश्वर कहना पड़ेगा।"

यहां पर वे मित्र हमें छोड़कर चले गये। और अगला स्टेशन आनेसे पहले तो गांधीजी गाढ़ी नींदमें निमग्न हो गये।

हरिजनसेवक, १३–२–'३७; पृ० ४१३

## २६

# हृदय-परिवर्तन बनाम वैज्ञानिक समाजवाद

मुझे चिट्ठी-पत्री लिखनेवाले कुछ सज्जन बड़े आग्रही हैं। वे मुझे निग्रह-स्थानमें लाना चाहते हैं। अुनमें से अेक नमूना यह है:

"जब कभी आर्थिक कठिनािअयां खड़ी होती हैं और जब कभी पूंजीपति और मजदूरोंके आर्थिक सम्बन्धोंके विषयमें आपसे कोअी सवाल पूछा गया है, आपने हमेशा अपना 'संरक्षकता' का सिद्धान्त सामने रख दिया है, जो मुझे हमेशा हैरान किया करता है। आप चाहते हैं कि धनवान लोग अपनी दौलत और माल-मिल्कियत पर गरीबोंकी ओरसे संरक्षक रहें और अुन्हींके फायदेके लिअे असे खर्च करें। अगर मैं आपसे पूछूं कि भला यह संभव भी है, तो आप कहेंगे कि मैं मनुष्यको असलमें स्वभावतः स्वार्थी मानता हूं, अिसलिअे अैसे सवाल पूछ रहा हूं; जब कि आपने अपना सिद्धांत अिस आधार पर कायम किया है कि वह स्वभावतः भला होता है। फिर भी राजनीतिक क्षेत्रमें तो आपके ये विचार नहीं हैं। नहीं तो आपको अपना यह विश्वास छोड़ना पड़ेगा कि मनुष्य असलमें स्वभावतः भला होता है। अंग्रेज भी तो यहां अपनी हुकूमतके समर्थनमें अिसी प्रकार 'संरक्षक' होनेका दावा पेश करते हैं।

"पर ब्रिटिश साम्राज्य परसे तो आपका विश्वास कभीका अुठ गया है और आज अिस साम्राज्यका आपसे अधिक बड़ा कोअी दुश्मन नहीं है। राजनीतिक क्षेत्रमें अेक और आर्थिक क्षेत्रमें दूसरे नियमका पालन करें, तो यह मेल कैसे बैठेगा? अथवा आपका मतलब यह तो नहीं कि ब्रिटिश जनता और ब्रिटिश साम्राज्यकी भांति अभी पूंजीवाद और पूंजीपतियों परसे आपका विश्वास नहीं अुठा है? क्योंकि आपका यह संरक्षकतावाला सिद्धान्त तो ठीक वैसा ही दिखाअी देता है, जैसा राजाओंका अीश्वरदत्त अधिकारवाला सिद्धान्त मालूम होता था। पर अब अुसे कोअी नहीं मानता। पहले अेक आदमीको अपने अन्य भािअयोंकी ओरसे अुन्हींके द्वारा दी हुअी राजनीतिक सत्ताको धारण करने दिया जाता था। पर अुसने अिसका दुरुपयोग किया और जनताने अुसके खिलाफ बगावत कर दी, और अिस तरह लोकसत्ताका जन्म हुआ। अिसी प्रकार जब वे मुट्ठीभर लोग, जिन्हें जनतासे आर्थिक

सत्ता प्राप्त होती है और जिसे वे अिन लोगोंकी तरफसे धारण करते हैं, अपनी अिस सत्ताका अुपयोग अपना ही स्वार्थ साधने तथा औरोंको नुकसान पहुंचानेके लिअे करने लगें, तो अुसका अनिवार्य परिणाम यही होगा कि जनता अिन थोड़ेसे लोगोंके हाथोंमें से वह अर्थसत्ता छीन लेगी — अर्थात् समाजवादका जन्म होगा।

"अब तक तो हर भली और बुरी चीजको हासिल करनेका सिर्फ अेक ही तरीका — हिंसा — माना गया था। पर जहां किसी भले कामके लिअे भी हम हिंसाका अुपयोग करने लगते हैं, तो अुसके साथ अपने-आप कुछ बुराअियां भी आ ही जाती हैं और अुससे प्राप्त होनेवाले सुफल पर भी बुरा असर पड़ता है। पर अहिंसाका मार्ग हिंसाकी अपेक्षा अधिक अुच्च है; और वह मनुष्योंके पारस्परिक सम्बन्धोंको विषाक्त नहीं कर देता। मैं यह भी मानता हूं कि आपने अिस अुपायकी कारगरताको बड़ी सफलताके साथ सिद्ध कर दिया है। अिसलिअे मेरी यह हार्दिक अभिलाषा है कि आप अिस वर्तमान अर्थ-प्रणालीके साथ अपने अहिंसात्मक तरीकोंसे लड़कर अिसका अन्त कर दें और अेक नवीन अर्थ-प्रणाली निर्माण करनेमें सहायता करें।"

पूंजीवाद और साम्राज्यवादके साथ मेरे व्यवहारमें मुझे कोअी असंगति नहीं दिखाअी देती। पत्र-प्रेषकको कुछ विचार-भ्रम हो रहा है। मैंने कभी यह नहीं कहा और न अिसका खयाल ही किया कि राजाओं, साम्राज्यवादियों और पूंजीपतियोंका क्या दावा है या अुन्होंने क्या दावा किया है। मैंने तो सिर्फ यही कहा और लिखा है कि पूंजीका विनियोग हमें किस तरह करना चाहिये। फिर दावा करना तो अेक बात है और अुस पर अमल करना जुदी बात है। अुदाहरणार्थ, लोकसेवक होनेका दावा तो हर कोअी — जैसे मैं भी — कर सकता हूं। पर केवल दावा करनेसे ही कोअी वैसा थोड़े ही बन जाता है। लेकिन अगर मैं अपने दावेके अनुसार व्यवहार भी करने लगूं तो सभी मेरी कद्र करेंगे। अिसी तरह कोअी पूंजीपति सम्पत्ति परसे अपना अेकान्त प्रभुत्व हटाकर यह घोषणा कर दे कि यह सम्पत्ति तो जनताकी है और वह अुसका संरक्षक-मात्र है तो सबको खुशी होगी। बहुत संभव है कि मेरी सलाह कोअी नहीं मानेगा और मेरे सपने सच्चे न हो पायेंगे। पर यह भी तो कौन कह सकता है कि समाजवादियोंके सपने सच्चे होंगे? समाजवादका जन्म अिसलिअे नहीं हुआ कि पूंजीपति अपने धनका दुरुपयोग करते हैं। जैसा कि मैं बता चुका हूं, अीशोपनिषद्के पहले मंत्रमें समाजवादके ही नहीं, बल्कि साम्यवादके सिद्धांतका भी स्पष्ट अुल्लेख है। बात असलमें यह है कि जिसे हम शास्त्रशुद्ध समाजवादकी विद्या कहते हैं अुसका जन्म

तो तब हुआ, जब हृदय-परिवर्तनके तरीकों परसे कुछ लोगोंकी श्रद्धा अुठ गअी। मैं भी अुसी समस्याका हल करनेमें लगा हुआ हूं, जो शास्त्रशुद्ध समाजवादियोंके सामने पेश है। हां, यह सच है कि मैं तो हमेशा और सिर्फ शुद्ध अहिंसाके रास्ते ही जानेवाला हूं। शायद वह असफल भी हो। पर अगर अैसा हुआ तो अुसका कारण अहिंसाकी विद्यासे सम्बन्ध रखनेवाला मेरा अज्ञान ही होगा। मैं अिसका चाहे प्रवीण प्रवर्तक न होअूं, पर अिसमें मेरी श्रद्धा जरूर दिन-दिन बढ़ रही है। अखिल भारत चरखा-संघ और अ० भा० ग्रामोद्योग-संघ अैसी संस्थाअें हैं, जिनके जरिये अहिंसाकी कलाकी अखिल भारतीय पैमाने पर जांच हो रही है। चूंकि कांग्रेसका संचालन पूर्णतया लोकसत्तात्मक सिद्धान्तोंके अनुसार होता है, अतः अुसकी संचालन-नीतिमें समय-समय पर परिवर्तन होना स्वाभाविक है। अैसे परिवर्तनोंके कारण मेरे प्रयोगोंमें रुकावटें न आने पायें अिसलिअे कांग्रेसने अिन दो संस्थाओंको अुत्पन्न किया है, जिनके द्वारा मैं अपने प्रयोग बे-रोकटोक जारी रख सकूं। मेरी मनोगत संरक्षकताकी जांच तो अभी होनेको है। सुयोग्य संचालकों द्वारा सम्पत्तिका लोकहितार्थ सबसे अच्छा अुपयोग करनेका यह अेक प्रयास है।

अब पत्रके दूसरे हिस्सेको लें। मैं जीवनको जड़ दीवारोंसे विभक्त नहीं किया करता। अेक व्यक्तिकी भांति राष्ट्रका भी जीवन अविभक्त और पूर्ण होता है। कांग्रेस अथवा तथोक्त राजनीतिक जीवनसे मेरे अलग हो जानेके कारण मेरे हृदयसे हिन्दुस्तानकी आजादीके लिअे लगन लेशमात्र भी कम नहीं हुअी है। और न सविनय कानून-भंग अहिंसाकी कोअी खास प्रक्रिया है। वह तो अुन अनेक अहिंसक प्रक्रियाओंमें से अेक है, जो किसी प्रकार भी अेक-दूसरेसे असंगत नहीं हैं। मेरा तो यही काम है कि मैं जो-कुछ भी करूं अुसमें अहिंसा ही हो। मेरा तो यह दावा है कि मैं अपना प्रयोग ठीक शास्त्रशुद्ध ढंगसे किये जा रहा हूं। अहिंसाके बगीचेमें तो कअी पौधे हैं। पर अुनका अुद्गम-स्थान अेक ही है। यह कोअी जरूरी नहीं कि सबका प्रयोग अेकसाथ ही हो। अुनमें से कुछ ज्यादा प्रबल हैं; कुछ अुतने प्रबल नहीं हैं। पर हैं सब निरुपद्रवी। फिर भी अुनका अुपयोग करते समय कुशलतासे काम लेना पड़ता है। परमात्माने मुझे जो कुछ भी कौशल दिया है अुससे मैं काम ले रहा हूं। पर चूंकि मैं किसी खास पौधेको छोड़कर अेक अमुक पौधेसे काम ले रहा हूं अिसके मानी यह नहीं कि मैंने युद्धको छोड़ दिया है। युद्ध तो लक्ष्यसिद्धिके पहले रुकनेवाला नहीं है। अहिंसाके कोशमें पराजय-जैसे शब्दके लिअे स्थान ही नहीं है।

हरिजनसेवक, २०–२–'३७; पृ० ४–५

## २७

# क्या आप वर्गयुद्धको टाल सकते हैं?

प्र० — यदि आप मजदूरों, किसानों और कारखानेके श्रमिकोंको लाभ पहुंचाना चाहते हैं, तो क्या आप वर्गयुद्धको टाल सकते हैं?

अु० — वेशक मैं टाल सकता हूं, वशर्ते कि लोग अहिंसक मार्गका अनुसरण करें। पिछले वारह मास यह अच्छी तरह दिखा चुके हैं कि अहिंसाको नीतिके रूपमें अपनाने पर भी वह क्या कर सकती है। जव लोग अुसे आचरणका सिद्धान्त मान लेते हैं, तव वर्गयुद्ध असंभव वन जाता है। अिस दिशामें अहमदावादमें प्रयोग किया जा रहा है। अुसके अत्यंत संतोषजनक परिणाम आये हैं। और अुस प्रयोगके निर्णायक सिद्ध होनेकी पूरी संभावना है। अहिंसक तरीकेमें हम पूंजीपतिका नहीं, वल्कि पूंजीवादका नाश करना चाहते हैं। हम पूंजीपतिसे कहते हैं कि वह अपनेको अुन लोगोंका संरक्षक समझे, जिन पर अुसकी पूंजी वनने, टिकने और वढ़नेका दारमदार है। श्रमिकको पूंजीपतिके हृदय-परिवर्तनकी प्रतीक्षा करनेकी भी जरूरत नहीं है। यदि पूंजीमें वल है तो श्रममें भी है। वलका अुपयोग विनाशक और रचनात्मक दोनों प्रकारसे किया जा सकता है। दोनों अेक-दूसरे पर निर्भर हैं। ज्यों ही मजदूर अपनी ताकतको पहचान लेता है, त्यों ही वह पूंजी-पतिका गुलाम वना रहनेके वजाय अुसका वरावरीका हिस्सेदार वननेकी स्थितिमें आ जाता है। यदि वह अकेला ही मालिक वनना चाहेगा, तो वह संभवतः सोनेका अंडा देनेवाली मुर्गीको मार डालेगा। वुद्धि और अव-सरकी असमानतायें अनन्त काल तक वनी रहेंगी। नदीके किनारे रहनेवाले आदमीके लिअे सूखी मरुभूमिमें रहनेवालेकी अपेक्षा फसल अुगानेका अवसर सदा ही अधिक रहेगा। परन्तु यदि असमानतायें हमारे सामने हैं, तो मूलभूत समानताओंको भी हमें अपनी पहुंचके वाहर नहीं समझना चाहिये। पशु-पक्षियोंकी तरह ही प्रत्येक मनुष्यको जीवनकी आवश्यकताओंके लिअे समान हक है। और चूंकि प्रत्येक अधिकारके साथ अनुरूप कर्तव्य और अुस पर होनेवाले हमलेको रोकनेका अनुरूप अिलाज लगा हुआ है, अिसलिअे मूल प्रारंभिक समानताकी प्राप्ति और रक्षा करनेके लिअे अुन कर्तव्यों और अुपायोंकी खोज निकालनेकी ही वात रह जाती है। यह अनुरूप कर्तव्य है अपने हाथ-पैरोंसे परिश्रम करना और वह अनुरूप अुपाय है अुस आदमीसे असहयोग करना, जो मुझसे मेरे परिश्रमका फल छीन लेता है। और यदि

मुझे पूंजीपति और मजदूरकी मूल समानता स्वीकार है, जैसा कि होना ही चाहिये, तो पूंजीपतिका विनाश मेरा लक्ष्य नहीं हो सकता। मुझे अुसके हृदय-परिवर्तनकी कोशिश करनी चाहिये। मेरा असहयोग वह जो अन्याय कर रहा होगा अुसके प्रति अुसकी आंखें खोल देगा। मुझे यह डर रखनेकी जरूरत नहीं कि मेरे असहयोग करने पर कोअी और मेरा स्थान ले लेगा। क्योंकि मुझे अपने साथियों पर अितना असर डाल सकनेकी आशा है कि वे मेरे मालिकके अन्यायमें सहायता न दें। निस्संदेह सामूहिक रूपमें मजदूरोंकी अैसी शिक्षा अेक धीमी प्रक्रिया है, परन्तु चूंकि अुसमें सफलता निश्चित है अिसलिअे वह सबसे तेज भी है। यह आसानीसे प्रत्यक्ष रूपमें दिखाया जा सकता है कि पूंजीपतिके विनाशका परिणाम अन्तमें मजदूरका भी विनाश है; और जिस तरह कोअी मनुष्य अितना बुरा नहीं होता कि वह सुधारा ही नहीं जा सके, वैसे ही कोअी मानव-प्राणी अितना पूर्ण नहीं होता कि जिसे वह भूलसे सर्वथा बुरा समझ रहा है अुसके अपने हाथों किये नाशको अुचित ठहरा सके।

यंग अिंडिया, २६–३–'३१; पृ० ४९

## २८

## वर्ग-विग्रह अनिवार्य नहीं है

[श्री महादेव देसाअीके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

रचनात्मक क्रांतिके विषयमें बातचीत करते समय श्री बासील मैथ्यूजके दिमागमें कुछ और ही बातोंके बारेमें गांधीजीसे चर्चा करनेका विचार था। अिसीलिअे अुन्होंने यह विषय छेड़ा कि 'हमारे गा ोंकी अर्थ-रचनामें जमींदार और साहूकारका क्या स्थान होगा?" गांधीजीने कहा, "आज तो साहूकार अनिवार्य बन गया है। पर धीरे धीरे वह अपने-आप हट जायेगा। और न सहकारी बैंकोंकी जरूरत रहेगी। क्योंकि जब मैं हरिजनोंको वह कला सिखा दूंगा जो कि सिखाना चाहता हूं, तब अुन्हें ज्यादा नगद धनकी जरूरत नहीं रहेगी। अिसके अलावा, जो लोग आज भारी मसीबतमें फंसे हुअे हैं वे सहकारी बैंकोंका अुपयोग नहीं कर सकते। मुझे अुन्हें धनका कर्ज या जमीनें दिलानेकी अुतनी चिंता नहीं है; मुझे तो अुनके लिअे दाल-रोटी और कुछ दूध जुटानेकी चिंता है। जब लोग आलस्यमें बीतनेवाले घंटोंको दौलतमें बदलनेकी कला सीख जाते हैं, तब हमारी आवश्यकताके अनुसार सारी बातें ठीक हो जाती हैं।"

"पर जमींदारका क्या होगा? क्या अुसे भी आप हटा देना या नष्ट कर देना चाहते हैं?"

"मैं जमींदारको नष्ट तो नहीं करना चाहता, पर मैं यह भी नहीं मानता कि अुसका रहना अनिवार्य है। मैं आपको अुदाहरण देकर जरा समझा दूं कि अपने संरक्षकताके सिद्धांत पर मैं यहां किस तरह अमल कर रहा हूं। अिस गांवमें जमनालालजीका तीन-चौथाअी हिस्सा है। अलवत्ता, यहां मैं सोच-समझकर या योजना वनाकर नहीं, वल्कि यों ही अचानक आ गया हूं। जव मैंने जमनालालजीसे सहायता मांगी, तो अुन्होंने मेरे लिअे अेक झोंपड़ी और दूसरे काम करनेवालोंके लिअे मकान वनवा दिये और कहा कि सेगांवसे जो भी कुछ लाभ हो, अुसे आप गांवके लाभके लिअे काममें लगा दें। अगर मैं अन्य जमींदारोंको भी अिसी तरह राजी कर सकूं, तो ग्रामसुधार अेक आसान चीज हो जाय। वेशक, अिसके दूसरे नंवरमें जमीनका सवाल और सरकारकी लूटकी समस्या तो है ही। सवालके अुस पहलूसे संवंध रखनेवाली कठिनाअियोंको मैं अभी तो अैसी वुराअियां मान लेता हूं जो अनिवार्य हैं। अगर मौजूदा कार्यक्रम सफल हो गया, तो शायद मुझे सरकारी लूटका सामना करनेका रास्ता भी सूझ जाय।"

"तव तो आपकी वास्तविक अर्थनीति श्री नेहरूकी अर्थनीतिसे भिन्न है। क्योंकि जहां तक मैंने अुन्हें समझा है, वे तो जमींदारको विलकुल हटा देना चाहते हैं।"

"जी हां, ग्रामोद्धार और पुनर्रचनाकी मेरी और अुनकी कल्पनाओंमें भेद जरूर दिखाअी देता है। और भेद यह है कि मैं अेक वात पर जोर देता हूं तो वे दूसरी वात पर। ग्रामोद्धारकी हलचलकी तरफ वे ध्यान नहीं देते। वे कल-कारखानोंको वढ़ाना चाहते हैं। पर मुझे अिसमें शक है कि कल-कारखाने हिन्दुस्तानके लिअे कहां तक लाभदायक होंगे। दूसरे, वे मानते हैं कि वे कितना भी क्यों न टालना चाहें, अन्तमें जाकर वर्ग-विग्रह तो होकर रहेगा। मेरी नीति दूसरी है। मुझे अहिंसात्मक तरीकोंसे जमींदारों और पूंजीपतियोंके दिलको वदलनेकी प्रवल आशा और अपेक्षा है। अिसलिअे मेरे लिअे तो वर्ग-विग्रहके अनिवार्य होने जैसी कोअी वात ही नहीं है। क्योंकि अहिंसाका मार्ग तो अैसा है, जिसमें कमसे कम विग्रहकी गुंजाअिश है। किसानोंमें अपनी शक्तिका भान पैदा होते ही जमींदारी-प्रथाकी वुराअी अपने-आप नष्ट हो जायेगी। अगर किसान साफ-साफ कह दें कि जव तक हमें खाने-कपड़ेके लिअे काफी नहीं मिलेगा, और अपने आपको तथा वच्चोंको अच्छी तरह शिक्षा देनेके लिअे साधन प्राप्त नहीं होंगे, तव तक हम आपकी जमीन पर काम नहीं करेंगे, तो वेचारा जमींदार करेगा ही

क्या? असलमें पैदा किये हुअे मालका मालिक तो वह है जो अुसके अुत्पादनके लिअे परिश्रम करता है। अगर तमाम श्रमजीवी अक्लमंदीके साथ अपना संगठन कर लें, तो अुनकी शक्तिको कौन दवा सकता है? अिसलिअे मुझे वर्ग-विग्रह अनिवार्य नहीं दीखता। अगर मुझे वह अनिवार्य दिखाअी दे, तो अुसका प्रचार करने और अुसके तरीके वतानेमें मुझे कोअी हिचकिचाहट नहीं होगी।

हरिजनसेवक, ५–१२–'३६; पृ० ३३४–३५

## २९

## क्या समाजवादी क्रांति रामराज्यकी ओर ले जायेगी?

प्र० — अधिकतर समाजवादियोंका यह विश्वास है कि समाजवादी क्रान्ति होनेसे हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा पीछे पड़ जायगा और आर्थिक सवाल सामने आ जायेंगे। क्या आपकी समझसे यह अच्छा होगा कि अैसी क्रान्ति हो? क्या अिससे रामराज्य कायम होनेमें मदद मिलेगी?

अु० — समाजवादी क्रान्तिसे हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा कुछ हद तक तो शांत पड़ेगा। अितना तो हम सबको साफ होना चाहिये कि झगड़ोंके बहुतसे कारण होते हैं। हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा मिट जानेसे सब झगड़े मिट जाते हैं, अैसा तो नहीं कह सकते। अितना ही कहा जा सकता है कि हिन्दू-मुस्लिम झगड़ेने अेक भयंकर रूप ले रखा है। छोटे-मोटे दूसरे झगड़े मिट जानेसे अिस भयंकरताका रूप कम हो जायेगा अिसमें शक नहीं है। जब गुलामी मिटकर आजादी आती है, तब समाजकी सारी व्याधियां (बुराअियां) अूपर आ जाती हैं। अिससे भड़कनेका कोअी कारण मैं नहीं पाता। अगर अैसे मौके पर हमारा मन स्थिर रहे, तो हरअेक समस्या हल हो जाती है। हर हालतमें आर्थिक सवालको हल होना ही है। आज आर्थिक असमानता है। समाजवादकी जड़में आर्थिक समानता है। थोड़ोंको करोड़ और बाकी लोगोंको सूखी रोटी भी नहीं मिलती, अैसी भयानक असमानतामें राम-राज्यका दर्शन करनेकी आशा कभी न रखी जाय। अिसलिअे मैंने दक्षिण अफ्रीकामें ही समाजवादको स्वीकार किया था। मेरा समाजवादियों और दूसरोंसे यही विरोध रहा है कि सब सुधारोंके लिअे सत्य और अहिंसा ही सबसे अूंचे साधन हैं।

हरिजनसेवक, १–६–'४७; पृ० १४८

## ३०

# सेवा और स्वावलम्बनका सिद्धांत

प्र० — जब धनवान कठोर और स्वार्थी हो जाते हैं और बुराअी बेरोक जारी रहती है, तो लाजिमी तौरसे अपनी तमाम भयंकरताके साथ जनताकी क्रान्ति पैदा होती है। जब जीवन, जैसा कि आपने कहा है, अकसर बुराअियोंके बीच चुनाव है, तब क्रान्तियोंके अितिहाससे मिलनेवाली शिक्षाको मद्देनजर रखते हुअे क्या आप अैसी अुदार तानाशाहीका स्वागत करेंगे जो कमसे कम जबरदस्तीके साथ 'धनियोंका शोषण' कर ले, गरीबोंके साथ अिन्साफ करे और यों दोनोंकी सेवा करे?

अु० — मैं अुदार अथवा किसी और तरहकी डिक्टेटरशाहीको मंजूर नहीं कर सकता। अुसमें धनिकोंका लोप नहीं होगा और न गरीबोंकी हिफाजत होगी। निश्चय ही कुछ धनी मारे जायेंगे और गरीब मुहताज असहाय हो जायेंगे। अेक वर्गके रूपमें धनिक रह जायेंगे और 'अुदार' विशेषणके बावजूद गरीबोंका वर्ग भी बना रहेगा। असली दवा है अहिंसात्मक लोकतंत्र, जिसे दूसरे रूपमें सबका सच्चा शिक्षण कह सकते हैं। धनियोंको गरीबोंकी सेवाकी और गरीबोंको स्वावलम्बनके सिद्धान्तकी शिक्षा दी जानी चाहिये।

हरिजनसेवक, ८–६–'४०; पृ० १३८

## ३१

# बोलशेविज्म

प्र० — बोलशेविज्मके सामाजिक अर्थशास्त्रके बारेमें आपकी क्या राय है और आपके विचारसे हमारे देशके लिअे अुसका अनुकरण करना कहां तक ठीक होगा?

अु० — मुझे स्वीकार करना चाहिये कि बोलशेविज्म शब्दका अर्थ मैं पूरी तरह अभी तक नहीं समझ सका हूं। मैं अितना ही जानता हूं कि अुसका अुद्देश्य निजी सम्पत्तिकी संस्थाको खतम कर देना है। यह कोअी नयी बात नहीं है। यह तो अर्थ-व्यवस्थाके क्षेत्रमें अपरिग्रहके नैतिक आदर्शका प्रयोग हुआ। और यदि लोग अिस आदर्शको अपनी अिच्छासे या समझाने-बुझानेके फलस्वरूप स्वीकार कर लेते हैं तो बहुत अच्छी बात होगी। लेकिन बोलशेविज्मके बारेमें मुझे जो कुछ जाननेको मिला है अुससे अैसा प्रतीत होता है कि वह न केवल हिंसाके प्रयोगका बहिष्कार नहीं करता, बल्कि

निजी सम्पत्तिके अपहरणके लिअे और अुसे राज्यके सामूहिक स्वामित्वके अधीन बनाये रखनेके लिअे हिंसाके प्रयोगकी खुली छूट देता है। और यदि अैसा हो तो मुझे यह कहनेमें कोअी संकोच नहीं कि बोलशेविक शासन अपने मौजूदा रूपमें ज्यादा दिन तक नहीं टिक सकता। कारण, मेरा दृढ़ विश्वास है कि हिंसाकी नींव पर किसी भी स्थायी वस्तुका निर्माण नहीं हो सकता। लेकिन जो भी हो, अिसमें कोअी संदेह नहीं कि बोलशेविक आदर्शके पीछे असंख्य पुरुषों और स्त्रियोंके — जिन्होंने अुसकी सिद्धिके लिअे अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया है — शुद्धतम त्यागका बल है; और अैसा आदर्श, जिसके पीछे लेनिन जैसे महापुरुषोंके त्यागका बल है, कभी व्यर्थ नहीं जा सकता। अुनके त्यागका अुज्ज्वल अुदाहरण चिरकाल तक जीवित रहेगा और ज्यों-ज्यों समय बीतेगा त्यों-त्यों वह अिस आदर्शको अधिकाधिक शुद्धि और वेग प्रदान करता रहेगा।

यंग अिंडिया, १५–११–’२८; पृ० ३८१

## ३२

## बोलशेविज्मका अर्थ

[नीचे दिया जा रहा लेख श्री अेम० अेन० रायने बोलशेविज्म पर लिखे गये मेरे लेखके अुत्तरमें लिख भेजा है। मैं अुसे खुशीसे प्रकाशित करता हूं। लेकिन मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि अगर श्री रायके लेखमें बोलशेविज्मका सही चित्रण हुआ है, तो बोलशेविज्म बहुत मामूली वस्तु है। जिस तरह मैं पूंजीवादका जुआ बरदाश्त नहीं कर सकता, अुसी तरह बोलशेविज्मका जुआ भी मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। मैं मनुष्य-जातिका हृदय-परिवर्तन करनेमें विश्वास रखता हूं, अुसका नाश करनेमें नहीं। कारण बहुत स्पष्ट है। हम सब बहुत अपूर्ण और कमजोर हैं और यदि हम अैसे सब लोगोंको मारना शुरू कर दें जिनकी रीति-नीति हमें पसंद नहीं है, तो अिस पृथ्वी पर अेक भी आदमी जीता न बचेगा। भीड़का शासन मूलमें व्यक्तिका निरंकुश शासन ही है; अलबत्ता अुससे लाखों-गुना ज्यादा भयंकर। लेकिन मैं आशा करता हूं, बल्कि मुझे लगभग निश्चय है, कि बोलशेविज्मका सच्चा स्वरूप श्री अेम० अेन० राय द्वारा खींचे गये अुसके अिस चित्रसे कहीं ज्यादा अच्छा होगा। — **मो० क० गांधी**]

महात्मा गांधीके कुछ अमेरिकी मित्रोंने अुन्हें अैसा लिखा है कि धर्मके नाम पर वे शायद अनजाने ही भारतमें बोलशेविज्मके प्रचारका प्रारंभ कर रहे हैं। ये बिन-मांगी सलाह देनेवाले मित्र — जो जाहिर है कि अपने अिस कार्यके लिअे (शान्तिवादियोंके बानेमें छिपकर रहनेवाले) अँग्लो-सैक्सन साम्राज्यवादियोंसे प्रेरणा ग्रहण करते हैं — मुसलमान प्रजाओंके विद्रोहको दुनियाकी सुख-शांतिके लिअे खतरा बतलाते हैं। अुनकी अिस मान्यताका कारण यह है कि बोलशेविक रूस अिस विद्रोहका समर्थन कर रहा है। महात्माजी अिस अत्यंत अुद्धत पत्रका आसानीसे कड़ा जवाब दे सकते थे। वे अपने 'अुत्तरदायी (?) विदेशी मित्रों' को कह सकते थे कि मुस्लिम प्रजाओंके पास विरोध करनेका समुचित कारण है; और यह कि जो भी सरकार या राजनीतिक सिद्धान्त अिस विद्रोहका समर्थन करे, आजादीके प्रचारकोंको अुसका आदर करना चाहिये। अिसके सिवा, वे अिन अमेरिकी मित्रोंसे यह भी कह सकते थे कि अगर दुनियाके लिअे किसी खतरेकी अुन्हें समुचित चिंता है, तो अुचित यह होगा कि वे अपने देशमें ही अुसके निवारणका प्रयत्न शुरू कर दें। क्या दुनियाकी सुख-शांतिके लिअे आज अमेरिकी साम्राज्यवादसे बड़ा कोअी दूसरा खतरा है? क्या मुसलमान प्रजाका विद्रोह 'कू-क्लक्स-क्लान' या 'अमेरिकन लीजन' से ज्यादा भयंकर है? क्या बोलशेविक अनीश्वरवाद अमेरिकी जनतंत्रकी अेशिया-द्रोही भावनासे ज्यादा अधार्मिक है?

लेकिन महात्माजीने अैसा सीधा अुत्तर नहीं दिया। अुन्होंने अपने कार्यका औचित्य यह कहकर सिद्ध किया है कि वे बोलशेविक प्रवृत्तिसे सर्वथा मुक्त हैं और अुनके विषयमें किसीको अैसी शंका नहीं करनी चाहिये। लेकिन आश्चर्य यह है कि यद्यपि, जैसा वे खुद स्वीकार करते हैं, वे बोलशेविज्मके बारेमें कुछ भी जानते नहीं हैं, फिर भी अुसके खिलाफ अुनकी स्वाभाविक विरोध-भावना अितनी अुग्र है कि वे बहुत चितापूर्वक यह स्पष्ट करते हैं कि बोलशेविज्मके प्रति अुनके मनमें कहीं कोअी लगाव नहीं है। 'यंग अिंडिया' में अेक लेख लिखते हुअे वे कहते हैं: "पहले तो मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि मैं बोलशेविज्मका अर्थ नहीं जानता।" कहना होगा कि यह अेक अैसी स्वीकारोक्ति है, जिससे संबंधित व्यक्तिकी प्रतिष्ठाको बड़ा धक्का लगता है। अैसा मैं अिसलिअे कहता हूं कि अुसका वक्ता अेक विराट जन-आन्दोलनका संचालक है। अुसी लेखमें महात्माजीने यह भी कहा है कि वे जानते हैं कि बोलशेविज्मके बारेमें अेक-दूसरेके बिलकुल विरुद्ध दो रायें प्रचलित हैं — "अेक अुसका अत्यंत डरावना चित्रण करती है और अुसे कुरूप बताती है और दूसरी अुसे दुनियाकी दलित जनताकी मुक्तिका निश्चित अुपाय मानकर अुसका स्वागत करती है।" लेकिन वे यह नहीं जानते कि

अिन दो विपरीत रायोंमें से किसका विश्वास करना चाहिये। यहां भी सही निर्णय पर पहुंचनेके लिअे वे अेक बहुत आसान अुपाय आजमा सकते थे। वे यह मालूम करते — और अैसा करना कठिन नहीं — कि बोलशेविज्मकी वह पहली तसवीर कौन लोग खींचते हैं? यह तसवीर वे लोग खींचते हैं जो दुनिया पर हथियारों और रक्तपातकी नीतिका अमल करके राज्य कर रहे हैं। अपनी निष्पक्षताकी वृत्तिका आदर करनेके लिअे वे दूसरी तसवीर खींचनेवालोंकी राय न मानना चाहते तो न मानते। लेकिन महात्माजीको अिस बातका विश्वास दिलानेकी जरूरत तो नहीं होनी चाहिये कि पहला पक्ष मानव-जातिका मित्र या मुक्तिदाता तो नहीं है। अिसलिअे जब यह पक्ष किसी चीजको कुरूप बताता है, तो मानव-जातिका पीड़ित अंग आसानीसे समझ सकता है कि अुनके अिस कार्यके पीछे कोअी अशुभ हेतु है। अुन्हें समझनेमें कोअी कठिनाअी नहीं होनी चाहिये कि तसवीरका डरावना ण करनेमें अिस पक्षका अुद्देश्य अुन्हें ठगनेका है। युद्धकालमें भारतीय ट्रवादी अिसी सहज बुद्धिके द्वारा जब रायटर मित्रराष्ट्रोंकी किसी विजयका भेजता था, तब यह समझ लेते थे कि जर्मनीने दो लड़ाअियां जीती ी और अिसी सहज बुद्धिको मानकर मेक्सिकोका मजदूर अपनेको गर्वपूर्वक ल्शेविक कहता है; क्योंकि वह देखता है कि अमेरिकी पूंजीपति बोलशेविज्मके त खिलाफ हैं। लेकिन महात्माजीके अैसा न कर सकनेका कारण शायद यह है कि महात्माकी मनोरचना बहुत जटिल होती है और सहज बुद्धिको सूझनेवाली बात अुसे नहीं सूझती।

चूंकि बोलशेविज्मके बारेमें यह शोचनीय अज्ञान केवल महात्माजीमें ही नहीं, भारतके दूसरे कअी लोगोंमें भी पाया जाता है और चूंकि अिस अज्ञानके बावजूद भी वे बोलशेविज्मके बारेमें अपनी राय तो बनाते ही हैं, अिसलिअे अिस 'खतरनाक' सिद्धान्तके बारेमें कुछ शब्द कहना अनुचित न होगा — खासकर अिसलिअे कि बोलशेविज्म आजकी दुनियाका सबसे ज्यादा प्रभावशाली राजनीतिक बल है। (यहां यह याद रहे कि वह १९१७ की रूसी क्रांतिका बुनियादी सिद्धान्त है, परिणाम नहीं, जैसा कि अकसर लोगोंका खयाल है।) जिस तरह सन् १७८९ की महान फ्रेंच क्रान्तिने अुस कालमें यूरोपके राजनीतिक विचार-प्रवाह और जीवनको प्रभावित किया था, अुसी तरह यह रूसी क्रांति भी हमारे कालमें वही कार्य करनेवाली है। फर्क अितना ही है कि रूसकी भौगोलिक स्थिति और अुसकी क्रांतिके प्रेरक सिद्धान्तोंके कारण अिस क्रांतिका प्रभाव ज्यादा बड़े क्षेत्र तक पहुंचेगा और अेशिया तथा अफ्रीका भी अुससे अछूते नहीं रहेंगे। यह वस्तुस्थिति है बावजूद शांतिकी ध्वजा अुड़ानेवाले अुन सज्जनोंके भय और प्रकोपके (अुनकी अिस प्रतिक्रियाको

आसानीसे समझा जा सकता है), जिनकी सद्‌भावना पर महात्माजी सहज ही विश्वास कर लेते हैं, किन्तु जिसे दुनियाके अधिक व्यावहारिक लोग संदेहकी दृष्टिसे देखते हैं।

अब, जहां तक महात्माजीका संबंध है, बोलशेविज्मके मुख्य सिद्धान्त कुछ नये नहीं हैं। वे खुद भी अैसा ही मानेंगे। लेकिन यदि सिद्धान्तोंको कार्यमें न अुतारा जाय, तो सिद्धान्तोंका बेजान शब्दोंसे ज्यादा कोअी मूल्य नहीं होता। अपने घोषित लक्ष्यके अनुसार महात्माजी यह तो चाहते ही हैं कि जनता पूंजीवादके जुअेके बोझसे मुक्त हो जाय। बोलशेविज्म भी यही चाहता है। बोलशेविज्मके पुरस्कर्ता सामान्यतः महात्माजीके अिस कथनसे सहमत हैं कि "दुनियाके लिअे अिस समय सबसे बड़ा खतरा अुत्तरदायित्वकी भावनासे शून्य, शोषण करनेवाला और लगातार बढ़ रहा वह साम्राज्यवाद है, जो कमजोर राष्ट्रोंके स्वतंत्र अस्तित्व और विस्तारका नाश करनेके लिअे अुद्यत है।" लेकिन महात्माजी और बोलशेविकोंमें फर्क यह है कि महात्माजीके हाथोंमें स्वतंत्रताके अिस संदेशका कोअी व्यावहारिक मूल्य नहीं रहता; क्योंकि वे अुसे नीति, धर्म और अीश्वरकी अपनी रहस्यमय कल्पनाके नियंत्रणमें बांधकर रखते हैं, जब कि बोलशेविक लोग अपने ध्येय और अपनी दृष्टिको अैसे भ्रमोंसे धुंधला नहीं होने देते हैं और दुनिया जैसी है वैसा ही अुससे व्यवहार करते हैं। फल यह है कि जहां साम्राज्यवादी सत्ताओंके सम्मिलित और प्रबल विरोधके होते हुअे भी दीर्घकालीन गुलामीकी सुदृढ़ शृंखलाकी कड़ियोंको लगातार तोड़ते हुअे बोलशेविज्म आगे बढ़ता जा रहा है, वहां गांधीवाद अभी अंधेरेमें अपना रास्ता ही टटोल रहा है और अैसे नैतिक तथा धार्मिक विधि-निषेधोंकी सृष्टि करता रहता है, जो जनताको स्वतंत्रताके लिअे लड़नेकी संकल्प-शक्तिका निर्माण करनेसे रोकते हैं।

मैं यह मान लेता हूं कि महात्माजी समाजवादके— सेंट साअिमन, टामस मूर, टॉल्स्टॉय आदिके कल्पना पर आधारित समाजवादके नहीं, बल्कि कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक अेंगेल्स द्वारा आर्थिक तथ्यों और वैज्ञानिक जानकारीकी भित्ति पर निर्मित वैज्ञानिक समाजवादके — सामान्य सिद्धान्तोंसे परिचित होंगे। ये सिद्धान्त अिस प्रकार हैं: (१) अुत्पादनकी पूंजीवादी प्रणालीका अुच्छेद; (२) वैयक्तिक सम्पत्तिकी समाप्ति; (३) सामाजिक स्वामित्वके आधार पर अुत्पादन और वितरणके साधनोंका पुनर्गठन; और (४) वर्गोंकी बुराअीसे दूषित समाजका भाअीचारेकी भावनासे युक्त मानव-परिवारमें रूपान्तर। यही सब सिद्धान्त बोलशेविज्मके भी हैं; क्योंकि बोशलशेविज्म समाजवादकी ही वह प्रारंभिक अवस्था है, जब वह अपने विरोधियोंको परास्त कर रहा होता है और अिसलिअे कुछ अुग्र होता है।

बोलशेविज्म शब्दको रक्तपात, विनाश, आतंक आदिके साथ जोड़ दिया गया है, लेकिन वास्तवमें अुसके मूल अर्थमें अैसी कोअी बुराअी नहीं है। बोलशेविज्म रूसी शब्द बोलशेविकीसे बना है और बोलशेविकीका अर्थ है बहुसंख्यक पक्षके अनुयायी। अिस शब्दका प्रयोग पहले-पहल तब हुआ था, जब सन् १९०३ में कार्यक्रम और कार्य-प्रणालीके सवाल पर रूसकी सोशलिस्ट डेमोक्रेटिक लेबर पार्टी दो टुकड़ोंमें बंट गयी थी। बहुसंख्यक दलके— जिसके नेता लेनिन और कुछ दूसरे लोग थे — कार्यक्रम और कार्य-प्रणालीका नाम बोलशेविज्म पड़ गया। और चूंकि रूसके मजदूर वर्गने अिसी बहुसंख्यक दलके कार्यक्रम और कार्य-प्रणालीके अनुसार लड़कर अक्तूबर १९१७ में अपनी विजय प्राप्त की थी, अिसीलिअे अक्तूबर क्रांतिको बोलशेविस्ट विजय कहा जाता है। यह बोलशेविस्ट विजय समाजवादकी पहली विजय है। अब हम रूसी क्रांतिके ठोस परिणाम देखें: (१) अेक भ्रष्ट, अनुत्तरदायी और निरंकुश शासनका अंत हो गया। (२) अुन मध्यम वर्गोंका भी सफाया हो गया जो जनतंत्रकी आड़में, विदेशी सरकारोंकी मददसे रूसी जनताको क्रांतिके लाभोंसे वंचित करना चाहते थे। (३) जारकी निरंकुश सत्ताका मूलाधार जमींदार-वर्ग नष्ट कर दिया गया, जमीन पूरे राष्ट्रकी संपत्ति घोषित कर दी गयी और किसानोंमें बांट दी गयी। (४) बड़े-बड़े अुद्योग राष्ट्रकी सम्पत्ति घोषित कर दिये गये। (५) वैदेशिक व्यापार पर राज्यका अेकाधिकार हो गया। (६) विधान और शासनकी सारी सत्ता लोक-समुदायकी प्रचंड बहुसंख्याको यानी मजदूरों, किसानों और सैनिकोंको सौंप दी गयी। वे अिस सत्ताका प्रयोग अपनी कौंसिलों या समितियों द्वारा करते हैं, जिन्हें रूसी भाषामें सोवियत कहा जाता है। (७) वैयक्तिक संपत्तिका सारा अधिकार और अुसके कारण मिलनेवाले सब विशेषाधिकार खतम कर दिये गये। ये हैं बोलशेविज्मके सिद्धान्त जिन्हें रूसमें क्रांतिके फलस्वरूप व्यवहारमें अुतारा गया है। हमने बोलशेविज्मकी सामान्य जानकारी दे दी; अब हम यह जानना चाहेंगे कि महात्माजी अुसके बारेमें क्या सोचते हैं? अिस प्रश्नके अुत्तरमें न सिर्फ भारतको बल्कि सारी दुनियाको दिलचस्पी होगी।

अिसके बाद हम ज्यादा मुश्किल सवाल पर पहुंचते हैं। महात्माजीको शायद अिन सिद्धान्तोंके खिलाफ कोअी आपत्ति न हो, लेकिन अुन्हें कार्यान्वित करनेकी रीतिके बारेमें जरूर ही वे अनेकों शर्तें मनवाना चाहेंगे। अुनके लिअे तो हर चीजकी अेक ही कसौटी है। अगर बोलशेविज्म अनीश्वरवादी है, तो वे अुसके खिलाफ हैं। अपने निर्णयके लिअे अुन्हें अितना ही काफी हो जाता है। हमने अुन्हें संक्षेपमें बोलशेविज्मकी परिभाषा दे दी है। अब

वे विचार करें और कहें कि वह ओश्वरकी अस्वीकृतिका सूचक है या नहीं है। वे उसे ओश्वरकी अस्वीकृतिका सूचक तब तक नहीं कह सकते, जब तक कि वे वैयक्तिक सम्पत्ति और स्थापित स्वार्थोंको ओश्वरीय विधान न मानते हों। जिसमें शक नहीं कि बोल्शेविज्म वैयक्तिक संपत्ति और स्थापित स्वार्थोंको — जो कि अितिहासके आदिकालसे ही मनुष्य-समाजके लिअे अभिशाप-रूप सिद्ध हुअे हैं — अमान्य करता है। बोल्शेविज्मके व्यावहारिक कार्यक्रममें ओश्वर या धर्मका कोअी सवाल नहीं है। वह न ओश्वरवादी है और न अनीश्वरवादी है। अुसका संबंध मनुष्यके दुनियवी जीवनसे हैं। ओश्वर या धर्मके साथ अुसका झगड़ा यदि होता है तो तब होता है, जब ओश्वर और धर्म अुसके रास्तेमें आते हैं, यानी अुसके व्यावहारिक कार्यक्रममें बाधा अुपस्थित करते ह। वैसी हालतमें बोल्शेविज्म अुस सर्वशक्तिमान माने जानेवाले ओश्वरकी चुनौती स्वीकार करनेमें संकोच नहीं करता। तब वह अनीश्वरवादी बन जाता है और महात्माजीकी अनुकूलताको खोनेका खतरा अुठा लेता है। लेकिन अैसा करके वह न केवल जनताके भौतिक अधिकारोंके लिअे लड़ता है, बल्कि अपने हाथमें लोगोंका बौद्धिक और मानसिक अुद्धार करनेवाले ज्ञानकी मशाल भी अुठाता है, ताकि अज्ञान और अंधविश्वासका वह अंधेरा दूर हो जाय जिसमें प्रभुता-भोगी वर्गने जनताको युगों-युगों तक रखा है।

लेकिन बोल्शेविज्मका यह कार्यक्रम, जिसे महात्माजीको भी मानवता-सम्मत मानना पड़ेगा — वे जाहिरा तौर पर अूपरी वर्गके हितोंकी हिमायत शुरू कर दें तो दूसरी बात — व्यवहारमें अुतारना आसान नहीं है। अिसमें शक नहीं कि क्रांतिके बाद रूसमें अत्यंत विनाशकारी गृहयुद्ध चला और आतंकका राज्य रहा। लेकिन अुसका कारण यह था कि अिस कार्यक्रमका कार्यान्वित होना रोकनेके लिअे विरोधियोंने बड़ा प्रबल प्रतिरोध चलाया। यह प्रतिरोध न सिर्फ रूसके अभिजात और मध्यम वर्गके लोगोंने, जो अपनी खोयी बाजी फिरसे जीत लेना चाहते थे, चलाया; बल्कि अुन्हें सारी दुनियाके अुन वर्गोंकी प्रगट मदद भी मिली। क्योंकि अुन्होंने देख लिया कि रूसी क्रांति अुनके किलेकी प्राचीरमें गोया पहली दरार है। अुनके प्रतिरोधकी अिस सतत चलायी गयी मुहिमका अेक अंग यह था कि वे बोल्शेविज्मका चित्रण अत्यंत डरावने रंगोंमें करते थे। खेदकी बात है कि महात्माजी भी अेक हद तक अुनके अिस झूठे चित्रणसे प्रभावित हो गये हैं। प्रश्न यह है कि अुपस्थित परिस्थितिमें बोल्शेविक क्या कर सकते थे? अुनके सामने दो ही विकल्प थे: अेक तो यह कि वे रूसी मजदूरों और किसानोंसे कह देते कि वे ओश्वरकी और धर्मकी बात मानकर गुलामीकी अुन जंजीरोंको पुनः स्वीकार

कर लें, जिन्हें अुन्होंने अितनी वहादुरीसे तोड़ा था। और दूसरा यह कि अगर ओीश्वर और धर्म अुनके रास्तेमें आते हैं, तो अपनी जीती हुअी आजादीकी रक्षा और मजबूतीके लिअे ओीश्वर और धर्मके खिलाफ भी लड़ लें। परिस्थितियोंने वोलशेविज्मको दूसरा विकल्प चुननेके लिअे वाध्य किया। कारण, रूसी मजदूरों और किसानोंको पुनः जार वादशाहों और पूंजीपतियोंके अत्याचारी शासनके पाशमें फांसनेके लिअे न सिर्फ सारे भौतिक साधनोंको अिकट्ठा किया गया था और काममें लाया जा रहा था; वल्कि ओीश्वर और धर्म आदिके हथियारोंको भी अुनके खिलाफ अुसी अुद्देश्यसे अिकट्ठा किया गया था। वोलशेविज्म ओीश्वरकी भक्तिका अुपदेश नहीं करता और वोलशेविज्मके अनुयायी या प्रचारक ओीश्वरके दूत नहीं हैं। लेकिन वोलशे-विज्म असुरत्वका हामी भी नहीं है। महात्माजी "जनताको हृदयके रास्तेसे, अुनकी सत्-प्रकृतिके द्वारा छूना चाहते हैं"। अुनकी यह अिच्छा और कोशिश भली मालूम होती है और यदि अूपरी वर्गोंकी प्रभुता और साम्राज्यवादके अत्याचारसे जनताका अुद्धार करनेमें वह अुपयोगी सावित हुअी होती, तो वोलशेविज्मको अुसका विरोध करनेके लिअे कोअी कारण न रहता। अिसी तरह महात्माजीकी 'अनुशासन' की वात भी संशयास्पद है। वह लोगोंके आध्यात्मिक कल्याणके लिअे अच्छी हो सकती है, लेकिन वह आजादीके लिअे लड़नेकी अुनकी संकल्प-शक्तिको जरूर कमजोर करती है। 'हृदय', 'सत्-प्रकृति', 'अनुशासन' आदिकी ये वातें स्मरणातीत कालसे कही जाती रही हैं; और जो अुन्हें करते रहे हैं वे जानते रहे हों या नहीं, अुनसे निचले वर्गों पर अूपरी वर्गके सत्ताके वन्धन अधिक मजवूत ही हुअे हैं। वोलशेविक किसी भी कर्तव्यको, वह कितना ही अरुचिकर या कठिन क्यों न हो, टालता नहीं है। वह ओीश्वरके अस्तित्वको चुनौती देता है, और अिस मान्यतासे अुद्भूत धर्म और नीतिकी व्यवस्थाओंका खंडन करता है, क्योंकि आजादीकी लड़ाओीके दरमियान ये सव शासकोंकी निरंकुश सत्ता और अत्याचार और दमनके पक्षमें खड़े दिखाओी देते हैं।

यदि ओीश्वर और पृथ्वी पर अुसके प्रतिनिधि अैहिक सवालोंमें दखल देना छोड़ दें, तो वोलशेविज्म ओीश्वरको अुसकी जगह रहने देनेके लिअे तैयार है। लेकिन यदि वे अपनी अति-भौतिक (Supermaterial) स्थितिमें संतुष्ट रहनेके लिअे तैयार नहीं हैं और पृथ्वी पर गड़वड़ फैलाते हैं, तो वोलशेविज्म, धर्मने जनताको अज्ञानके जिस जालमें जकड़ रखा है, अुससे अुसका अुद्धार करनेके लिअे अनीश्वरवादका प्रचार करनेमें भी नहीं चूकेगा।

**अेम० अेन० राय**

यंग अिंडिया, १-१-'२५; पृ० ५-६

# ३३

# युवा साम्यवादियोंके साथ प्रश्नोत्तर

[श्री महादेव देसाअीकी 'लंदनकी चिट्ठी' से।]

श्रीमती नायडूमें कुछ हद तक प्राचीन रोमकी महिलाओं जैसा वाग्युद्धका प्रेम है, साथ ही अपने नौजवान बच्चोंके लिअे अुतना ही गर्व भी है। अुस दिन अुन्होंने गांधीजीसे युवा भारतीय साम्यवादियोंके अेक दलका परिचय कराया, जिसका नेता अुनका सबसे छोटा पुत्र बाबा था। जैसा स्वाभाविक था, गांधीजीने अिस रक्तहीन प्रतिस्पर्धाका अध्यक्ष श्रीमती नायडूको ही बनाया, क्योंकि अुन्होंने ही अिसकी व्यवस्था की थी।

ये सभी नौजवान अपनी मातृभूमिसे लगभग निर्वासित-से थे और अुसकी सेवाकी सच्ची लगन रखते थे। मेरा खयाल है कि अुन सबको गांधीजीसे बड़ा प्रेम था और यह अुनकी समझमें नहीं आता था कि जब गांधीजीको सामाजिक न्यायके लिअे अितनी आतुरता और गरीबोंकी अितनी चिन्ता है, तब अुनके सिद्धान्तोंसे सहमत हुअे बिना वे कैसे रह सकते हैं। बाबाने श्रीगणेश करते हुअे कहा, "हमें आपकी भाषा समझनेमें अकसर कठिनाअी अनुभव होती है, क्योंकि आप न केवल अेक राष्ट्रको बल्कि अंग्रेजी भाषाको भी नये सांचेमें ढाल रहे हैं और हमें कअी बार अैसा लगता है कि जब आपके कथनका अेक अर्थ होता है, तब लोग अुसका बिलकुल दूसरा ही अर्थ लगाते हैं। अिसलिअे हम यह देखने आये हैं कि हमारे प्रकट मत-भेदोंके पीछे कोअी समान पृष्ठभूमि खोजी जा सकती है या नहीं।" यह कहकर अुन्होंने अपनी काफी बड़ी प्रश्नमाला, जिसे वे थोड़े दिन पहले गांधीजीके पास छोड़ गये थे, शुरू की। अुनमें से कुछ प्रश्न और गांधीजीके अुत्तर नीचे दिये जाते हैं।

### विशेषाधिकार-प्राप्त वर्गोंकी स्थिति

पहला प्रश्न यह था:

"आपके खयालसे भारतीय राजा-महाराजा, जमींदार, मिल-मालिक, साहूकार और दूसरे मुनाफाखोर लोग धनवान कैसे बनते हैं?"

गांधीजीने अुत्तर दिया: "अभी तो आम जनताका शोषण करके ही बनते हैं।"

फिर अुन्होंने पूछा, "क्या ये वर्ग भारतके मजदूरों और किसानोंके शोषणके बिना धनवान बन सकते हैं?"

गांधीजीने जवाब दिया, "हां, अमुक हद तक।"

"क्या अिन वर्गोंके मामूली किसान और मजदूरसे, जो धन जुटानेका काम करता है, अधिक आरामसे रहनेमें कोअी सामाजिक न्याय है?"

गांधीजीने स्पष्ट रूपमें अुत्तर दिया, "बिलकुल नहीं।" फिर वे समझाने लगे, "समाजकी मेरी कल्पना यह है कि हम पैदा तो समान दरजे पर होते हैं, अर्थात् हम सबको समान अवसर पानेका हक है, परंतु हम सबकी क्षमता अेकसी नहीं है। प्रकृतिकी रचना ही अैसी है कि सबकी क्षमता अेकसी हो ही नहीं सकती। अुदाहरणके लिअे, सबकी अेकसी अूंचाअी, अेकसा रंग या बुद्धि आदिकी अेकसी मात्रा नहीं हो सकती। अिसलिअे कुदरतन् ही कुछ लोगोंकी कमानेकी योग्यता अधिक होगी और दूसरोंकी कम। बुद्धिशाली लोगोंकी योग्यता अधिक होगी और वे अपनी बुद्धिका अिस कामके लिअे अुपयोग करेंगे। यदि वे अुपकारकी भावना रखकर अपनी बुद्धिका अुपयोग करें तो राज्यका ही काम करेंगे। अैसे लोग तो ट्रस्टी या संरक्षक बनकर रहते हैं, और किसी तरह नहीं। मैं बुद्धिशाली आदमीको अधिक कमाने दूंगा, अुसकी बुद्धिको कुंठित नहीं करूंगा। परंतु अुसकी अधिकांश कमाअी राज्यकी भलाअीके लिअे वैसे ही काम आनी चाहिये, जैसे कि बापके तमाम कमाअू बेटोंकी आमदनी परिवारके कोषमें जमा होती है। वे अपनी कमाअीको संरक्षक बनकर ही रखेंगे। संभव है कि अिसमें मुझे बुरी तरह असफलता मिले, परंतु मैं अिसी दिशामें चल रहा हूं। और 'बुनियादी अधिकारोंकी घोषणा' में भी यही अर्थ निहित है।"

## वर्गयुद्ध

अिससे वर्गयुद्धकी चर्चा छिड़ गअी। प्रश्न यह था कि अुससे विशेष अधिकार भोगनेवाले वर्गोंका वांछित कायापलट किया जा सकता है या नहीं?

प्र० — क्या आपका यह खयाल नहीं है कि किसान और मजदूर आर्थिक और सामाजिक मुक्तिके लिअे वर्गयुद्ध चलाकर ठीक कर रहे हैं, ताकि वे समाजके मुफ्तखोर वर्गोंका भरण-पोषण करनेके भारसे सदाके लिअे मुक्त हो जायें?

अु० — नहीं। मैं स्वयं अुनके पक्षमें क्रांति कर रहा हूं, परंतु वह अहिंसक क्रान्ति है।

प्र० — युक्तप्रांतमें लगान कम करानेके आन्दोलनसे आप किसानोंकी स्थितिमें सुधार कर सकते हैं, परन्तु अुस प्रणालीकी जड़ नहीं काटते।

अु० — हां। परंतु अेक ही साथ सब कुछ नहीं किया जा सकता।

प्र० — तो फिर आप संरक्षकता (ट्रस्टीशिप) कैसे लायेंगे? समझा-बुझाकर ही न?

अु० — केवल जवानसे समझा-बुझाकर नहीं। मैं अपने अुपायों पर सारी शक्ति लगाअूंगा। कुछ लोगोंने मुझे अपने समयका सबसे बड़ा क्रांतिकारी बताया है। यह गलत हो सकता है, परंतु मैं अपने-आपको अेक क्रांतिकारी — अहिंसक क्रांतिकारी मानता हूं। मेरा अुपाय असहयोग होगा। कोअी व्यक्ति संबंधित लोगोंके, अिच्छा या अनिच्छासे किये गये, सहयोगके बिना धन अिकट्ठा नहीं कर सकता।

## विशेषाधिकार-प्राप्त वर्ग संरक्षकोंके रूपमें

परंतु अिससे प्रश्न पूछनेवालोंको पूरा संतोष नहीं हुआ। वे तो कुछ वर्गोंको प्राप्त आजके विशेष अधिकारोंके आधारको ही चुनौती दे रहे थे। अुन्होंने पूछा, "पूंजीपतियोंको संरक्षक (ट्रस्टी) किसने बनाया? अुन्हें कमीशन लेनेका हक क्यों है और वह आप कैसे तय करेंगे?" गांधीजीने समझाया, "अुन्हें कमीशन लेनेका हक अिसलिअे है कि रुपया अुनके कब्जेमें है। किसीने अुन्हें संरक्षक नहीं बनाया है। मैं अुनसे संरक्षक बन जानेका अनुरोध कर रहा हूं। जो लोग आज मालिक बने हुअे हैं, अुनसे मैं कहता हूं कि वे संरक्षक बनकर काम करें; अर्थात् अैसे संरक्षक बन जायं जो अपने अधिकारसे नहीं, परंतु जिनका अुन्होंने शोषण किया है अुनके दिये हुअे अधिकारसे मालिक रहें। मैं मनमाने तौर पर यह तय नहीं करूंगा कि वे क्या कमीशन लें, परंतु अुनसे कहूंगा कि जितना अुचित हो अुतना ही लें। अुदाहरणार्थ, जिस आदमीके पास १०० रुपये हैं अुससे मैं कहूंगा कि ५० रुपये तुम ले लो और बाकी ५० रुपये मजदूरोंको दे दो। परंतु जिसके पास अेक करोड़ रुपये हैं, अुसे शायद अपने लिअे अेक प्रतिशत ही रखनेको कहूंगा। अिस प्रकार आप देखते हैं कि मैं कमीशनकी कोअी निश्चित रकम मुकर्रर नहीं करूंगा, क्योंकि अुसका परिणाम भयंकर अन्याय होगा।"

## व्यक्ति बनाम प्रणाली

अिसके बादकी प्रश्नमालाका संबंध भारतीय पूंजीपतियों और जमींदारोंके विरुद्ध लड़े जानेवाले युद्धके प्रति गांधीजीके रवैयेसे था। अिसने गांधीजीको प्रणाली और मनुष्यके बीच भेद करनेकी आवश्यकता समझानेका अवसर दिया। अिससे वे अपना भूमि-संबंधी और आर्थिक कार्यक्रम भी ठोस रूपमें अुपस्थित कर सके। साम्यवादी युवकोंने कहा, "राजा-महाराजाओं और जमींदारोंने अंग्रेजोंका साथ दिया। परंतु आपको तो आम जनतासे समर्थन प्राप्त होता है। अुधर आम जनता अिन वर्गोंको अपना शत्रु समझती है। जब आम जनताके

अर्थमें अुसके आदर्शके अनुसार जीनेका भरसक प्रयत्न कर रहा हूं। यदि आप देशको अपने साथ ले चलना चाहते हों, तो आपमें देशको समझाकर अुस पर असर डालनेकी योग्यता होनी चाहिये। आप दबावसे अैसा नहीं कर सकते। आप देशको अपने विचारोंका बनानेके लिअे विनाशका पथ ग्रहण कर सकते हैं। परन्तु आप कितने लोगोंका विनाश करेंगे? करोड़ोंका तो कर नहीं सकते। अगर आपके साथ लाखों लोग हों, तो आप कुछ हजारको मार सकते हैं। परन्तु आज तो आप मुट्ठीभरसे अधिक नहीं हैं। मैं आपसे कहता हूं कि आप कांग्रेसका मत बदल सकते हों, तो बदलकर अुसे अपने हाथमें ले लीजिये। लेकिन शिष्टताके प्रारम्भिक नियमोंको तोड़नेसे क्या लाभ? और शिष्टताके अिन नियमोंको तोड़नेका कोअी कारण भी तो नहीं है। अपने विचारोंको पूरी तरह प्रगट करनेका आपको अधिकार है। भारतवर्षमें अितनी सहिष्णुता है कि कोअी भी अपनी बात सार्थक ढंगसे कह सके तो वह धीरजसे सुन लेगा।

अस्थायी संधिसे मजदूरोंका कोअी नुकसान नहीं हुआ है। मेरा दावा है कि मेरी किसी भी प्रवृत्तिसे मजदूरोंको कभी हानि नहीं हुअी, कभी हो ही नहीं सकती। यदि कांग्रेस परिषदमें अपने प्रतिनिधि भेजेगी, तो वे किसानों और मजदूरोंके स्वराज्यके सिवा और किसी स्वराज्यके लिअे अपना जोर नहीं लगायेंगे। साम्यवादी दलके अस्तित्वमें आनेसे बहुत पहले ही कांग्रेस निश्चय कर चुकी थी कि जो स्वराज्य श्रमिकों और कृषकोंके लिअे न हो अुसका कोअी अर्थ नहीं होगा। शायद यहांके मजदूरोंसे किसीको भी २० रुपये मासिकसे कम मजदूरी नहीं मिलती। परन्तु न मैं सिर्फ आपके लिअे, बल्कि अुन घोर परिश्रम करनेवाले और बेकार लाखों लोगोंके लिअे भी स्वराज्य-प्राप्तिकी कोशिश कर रहा हूं, जिनको अेक जून भी पूरा खानेको नहीं मिलता और जिन्हें बासी रोटीके टुकड़े और चुटकी भर नमकसे काम चला लेना पड़ता है। परन्तु मैं आपको धोखा नहीं देना चाहता। मुझे आपको अवश्य यह चेतावनी दे देनी चाहिये कि मैं पूंजीपतियोंका बुरा नहीं चाहता; मैं अुन्हें हानि पहुंचानेका विचार नहीं कर सकता। परन्तु मैं कष्ट-सहन करके अुनकी कर्तव्य-भावनाको जगाना चाहता हूं। मैं अुनके दिल पिघलाकर अपने कम भाग्यशाली भाअियोंके प्रति अुनसे न्याय कराना चाहता हूं। वे मनुष्य हैं और अुनसे की गअी मेरी अपील व्यर्थ नहीं जायेगी। जापानके अितिहासमें त्यागी पूंजीपतियोंके बहुतसे अुदाहरण मिलते हैं। पिछले सत्याग्रहके दिनोंमें पूंजीपतियोंने खासी संख्यामें बड़ा त्याग किया। वे जेलोंमें गये और अुन्होंने बड़े बड़े कष्ट अुठाये। क्या आप अुन्हें अपनेसे अलग करना चाहते हैं? क्या आप नहीं चाहते कि समान अुद्देश्यके लिअे वे आपके साथ काम करें?

आपने मुझसे यह जानना चाहा है कि मेरठके वन्दियोंकी मुक्तिके लिअे मैं क्या कर रहा हूं। मैं आपको वताना चाहता हूं कि यदि मेरे पास सत्ता होती, तो मैं हमारे जेलोंमें जितने भी वन्दी हैं अुन सवको मुक्त कर देता। लेकिन अुनकी मुक्तिको मैं समझौतेकी पूर्व-शर्त नहीं वना सकता था। वैसा करना न्यायोचित न होता। मैं आपको वताना चाहता हूं कि अुन्हें छुड़वानेके लिअे मैं अपनी पूरी कोशिश कर रहा हूं। यदि शान्त वातावरण पैदा करके आप लोग मेरे साथ सहयोग करनेका निर्णय करें, तो संभव है कि हम अुन सवको — यहां तक कि गढ़वाली कैदियोंको भी छुड़ा सकेंगे। आप लोग आजादीकी वात करते हैं। क्या मैं भी अुसे अुतना ही नहीं चाहता जितना आप? ('आजादीका सार' की आवाजें।) हां, ठीक है, मैं आजादीका सार चाहता हूं, अुसकी छाया नहीं। मैं कहना चाहता हूं कि आप थोड़ा धीरज रखें और देखें कि अुचित समय आने पर अपनी अल्पतम मांगके रूपमें कांग्रेस क्या मांगती है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि कराचीमें हम अपना लाहौरवाला प्रस्ताव फिर दुहरायेंगे और यदि हम लोग गोलमेज परिषदमें गये तो या तो हम जो चाहते हैं वही लेकर लौटेंगे या कुछ भी नहीं लेंगे।

आपने 'ग्यारह मुद्दों' के वारेमें भी पूछा है। मेरे खयालसे अिन ग्यारह मुद्दोंमें आजादीका सार आ जाता है। अुनमें किसानों और मजदूरोंको पूरी सुरक्षा प्रदान की गयी है। लेकिन समझौतेकी चर्चामें मैं अिन मुद्दोंका अुल्लेख नहीं कर सकता था, क्योंकि ये मुद्दे सविनय आज्ञाभंगके विकल्पके रूपमें पेश किये गये थे। अव स्थिति यह है कि सविनय आज्ञाभंगका आन्दोलन हम चला चुके हैं और यदि हमें निमंत्रण मिलता है तो हमें गोलमेज परिषदमें अपनी राष्ट्रीय मांग रखनेके लिअे जाना है। यदि हम वहां सफलता प्राप्त करते हैं, तो ग्यारह मुद्दोंकी पूर्ति हो ही जाती है। आप विश्वास रखिये कि जो स्वराज्य अिन ग्यारह मुद्दोंकी पूर्ति नहीं करेगा, वह मुझे मान्य नहीं होगा।

अीश्वरने आपको वुद्धि और योग्यता प्रदान की है; अुसका सदुपयोग कीजिये। मेरी आपसे विनती है कि अपनी वुद्धि पर ताला न लगाअिये। भगवान आपकी सहायता करे।

*यंग अिंडिया, २६–३–'३१; पृ० ५३*

३५

## साम्यवादियोंका मुकाबला कैसे करें ?

प्र० — साम्यवादी कांग्रेसका खुला विरोध कर रहे हैं। हम अुनकी प्रवृत्तियोंका प्रतिकार कैसे कर सकते हैं ?

अु० — मालूम होता है कि साम्यवादियोंने बखेड़े खड़े करना अपना पेशा बना लिया है। अुनमें मेरे मित्र भी हैं। कुछ तो मेरे लिअे पुत्र जैसे हैं। परन्तु अैसा दिखाअी देता है कि वे न्याय-अन्याय और सच-झूठमें कोअी फर्क नहीं करते। वे अिस अिलजामको स्वीकार नहीं करते, परन्तु अुनके कृत्योंके समाचारोंसे अिसकी पुष्टि होती मालूम होती है। अिसके अलावा मालूम होता है कि वे रूसके आदेशों पर काम करते हैं, क्योंकि वे भारतके बजाय रूसको अपना आध्यात्मिक घर मानते हैं। मैं किसी बाहरी शक्ति पर अिस तरह निर्भर रहना बरदाश्त नहीं कर सकता। मैंने तो यहां तक कह दिया है कि अपने मौजूदा खाद्य-संकटमें हमें रूसी गेहूं पर भी दारमदार नहीं रखना चाहिये। हममें अितना सामर्थ्य और साहस होना चाहिये कि विदेशी दानके बजाय अपनी भूमिसे जो कुछ मिल जाय अुसी पर हम गुजर कर सकें। नहीं तो हमें अेक स्वतंत्र देशके रूपमें जिंदा रहनेका हक नहीं होगा। यही बात विदेशी विचारधाराओं पर लागू होती है। मैं अुन्हें अुसी हद तक स्वीकार करूंगा कि जिस हद तक मैं अुन्हें पचा सकूंगा और भारतीय परिस्थितिके अनुकूल बना सकूंगा। मैं नये विचारोंको रोकना नहीं चाहता, पर मैं अुनका गुलाम भी नहीं बनना चाहता।

अिसलिअे साम्यवादियोंका मुकाबला करनेके लिअे मेरा नुसखा यह है कि मैं अुनके हाथसे मर जाअूंगा, मगर अुन पर हाथ नहीं अुठाअूंगा।

हरिजन, ६–१०–'४६; पृ० ३३८–३९

# ३६

# शरीर-श्रम क्या है?

प्र० — जिसे टॉल्स्टॉय 'रोटीके लिअे श्रम करना' कहते हैं, अुसके बारेमें आपका क्या अभिप्राय है? क्या आप शरीर-श्रम करके अपनी आजीविका प्राप्त करते हैं?

अु० — सच पूछा जाय तो 'रोटीके लिअे श्रम करना' ये शब्द टॉल्स्टॉयके हैं ही नहीं। अुन्होंने दूसरे अेक रूसी लेखक बोन्दरेव्हसे अुन्हें ग्रहण किया था और अुनका अर्थ यह है कि हरअेकको रोटी पानेके लिअे काफी शारीरिक मेहनत करनी चाहिये। अिसलिअे आजीविकाका विशाल अर्थ करने पर यह आवश्यक नहीं है कि शारीरिक मेहनत करके ही आजीविका प्राप्त की जाय। लेकिन हर आदमीको कुछ न कुछ अुपयोगी शरीर-श्रम अवश्य करना चाहिये। अभी तो मैं शरीर-श्रम सिर्फ कातनेमें ही करता हूं। यह तो शरीर-श्रमका अेक प्रतीक-मात्र है। मैं काफी शरीर-श्रम नहीं कर रहा हूं। और यह भी अेक कारण है कि मैं अपनेको मित्रोंके दान पर जीनेवाला कहता हूं। लेकिन मैं यह भी मानता हूं कि हरअेक राष्ट्रमें अैसे मनुष्योंकी आवश्यकता है, जो अपना शरीर, मन और आत्मा सब कुछ राष्ट्रको अर्पण कर देते हैं और जिन्हें अपनी आजीविकाके लिअे दूसरे मनुष्यों पर अर्थात् अीश्वर पर आधार रखना पड़ता है।

हिन्दी नवजीवन, ५–११–'२५; पृ० ९५

३७

# 'शरीर-श्रम' के कानूनकी खोज

शरीर-श्रम तमाम मनुष्योंके लिअे लाजिमी है, यह वात पहले-पहल टॉल्स्टॉयका अेक निवंध पढ़कर मेरे मनमें वैठ गयी। यह बात अितनी साफ़ जाननेके पहले अुस पर अमल तो मैं रस्किनका 'अन्टु दिस लास्ट' (सर्वोदय) पढ़कर तुरंत ही करने लग गया था। शरीर-श्रम अंग्रेजी शव्द 'ब्रेड-लेवर' का तरजुमा है। 'ब्रेड-लेवर' का शव्दके मुताविक अनुवाद है रोटी (के लिअे) मजदूरी। रोटीके लिअे हरअेक मनुष्यको मजदूरी करनी चाहिये, शरीरको झुकाना चाहिये, यह अीश्वरका कानून है। यह मूल खोज टॉल्स्टॉयकी नहीं है, लेकिन अुससे वहुत कम मशहूर रशियन लेखक वोन्दरेव्ह (T. M. Bondarev) की है। टॉल्स्टॉयने अुसे रोशन किया और अपनाया। अिसकी झांकी मेरी आंखें भगवद्गीताके तीसरे अध्यायमें करती हैं। यज्ञ किये विना जो खाता है वह चोरीका अन्न खाता है, अैसा कठिन शाप यज्ञ नहीं करनेवालेको दिया गया है। यहां यज्ञका अर्थ शरीर-श्रम या रोटी-मजदूरी ही शोभता है और मेरी रायमें यही मुमकिन है। जो भी हो, हमारे अिस व्रतका जन्म अिस तरह हुआ है।

वुद्धि भी अुस चीजकी ओर हमें ले जाती है। जो मजदूरी नहीं करता अुसे खानेका क्या हक है? वाअिवल कहती है: 'अपनी रोटी तू अपना पसीना वहाकर कमा और खा'। करोड़पति भी अगर अपने पलंग पर लोटता रहे और अुसके मुंहमें कोअी खाना डाले तव खाय, तो वह ज्यादा देर तक खा नहीं सकेगा। अिसमें अुसको मजा भी नहीं आयेगा। अिसलिअे वह कसरत वगैरा करके भूख पैदा करता है और खाता तो है अपने ही हाथ-मुंह हिलाकर। अगर यों किसी न किसी रूपमें अंगोंकी कसरत राय-रंक सवको करनी ही पड़ती है, तो रोटी पैदा करनेकी कसरत ही सव क्यों न करें? यह सवाल कुदरती तौर पर अुठता है। किसानको हवाखोरी या कसरत करनेके लिअे कोअी कहता नहीं है और दुनियाके ९० फीसदीसे भी ज्यादा लोगोंका निवाह खेती पर होता है। वाकीके दस फीसदी लोग अगर अिनकी नकल करें, तो जगतमें कितना सुख, कितनी शांति और कितनी तंदुरुस्ती फैल जाये? और अगर खेतीके साथ वुद्धि भी मिल जाय तो खेतीसे संवंध रखनेवाली वहुतसी मुसीवतें आसानीसे दूर हो जायेंगी। फिर, अगर अिस शरीर-श्रमके निरपवाद कानूनको सव मानें, तो अूंच-नीचका भेद मिट जाय। आज तो

जहां अूंच-नीचकी बू भी नहीं थी वहां यानी वर्ण-व्यवस्थामें भी वह घुस गअी है। मालिक-मजदूरका भेद आम और कायम हो गया है और गरीब धनवानसे जलता है। अगर सब रोटीके लिअे मजदूरी करें, तो अूंच-नीचका भेद न रहे; और फिर भी धनिक वर्ग रहेगा तो वह खुदको मालिक नहीं, बल्कि अुस धनका रखवाला या ट्रस्टी मानेगा और अुसका ज्यादातर अुपयोग सिर्फ लोगोंकी सेवाके लिअे करेगा। जिसे अहिंसाका पालन करना है, सत्यकी भक्ति करनी है, ब्रह्मचर्यको कुदरती बनाना है, अुसके लिअे तो शरीर-श्रम रामबाण-सा हो जाता है। यह श्रम सचमुच तो खेतीमें ही है। लेकिन सब खेती नहीं कर सकते, असी आज तो हालत है ही। अिसलिअे खेतीके आदर्शको खयालमें रखकर खेतीके अेवजमें आदमी भले दूसरी मजदूरी करे — जैसे कताअी, बुनाअी, बढ़अीगिरी, लुहारी वगैरा वगैरा।

सबको खुदका भंगी तो बनना ही चाहिये। जो खाता है वह टट्टी तो फिरेगा ही। जो टट्टी फिरता है वही अपनी टट्टीको जमीनमें गाड़ दे यह अुत्तम रिवाज है। अगर यह नहीं हो सके तो प्रत्येक कुटुंब अपना यह फर्ज अदा करे। जिस समाजमें भंगीका अलग पेशा माना गया है, वहां कोअी बड़ा दोष पैठ गया है, असा मुझे तो बरसोंसे लगता रहा है। अिस जरूरी और तंदुरुस्ती बढ़ानेवाले कामको सबसे नीचा काम पहले-पहल किसने माना, अिसका अितिहास हमारे पास नहीं है। पर जिसने असा माना अुसने हम पर अुपकार तो नहीं ही किया। हम सब भंगी हैं, यह भावना हमारे मनमें बचपनसे जम जानी चाहिये; और अुसका सबसे आसान तरीका यह है कि जो समझ गये हैं वे शरीर-श्रमका आरंभ पाखाना-सफाअीसे करें। जो समझ-बूझकर, ज्ञानपूर्वक यह करेगा, वह अुसी क्षणसे धर्मको निराले ढंगसे और सही तरीकेसे समझने लगेगा।

मंगल-प्रभात, प्र० ९; पृ० ४१–४४

## ३८

# 'सर्वोदय' की शिक्षायें

. . . मैं नेटालके लिअे रवाना हुआ। पोलाक[1] तो मेरी सब बातें जानने लगे ही थे। वे मुझे छोड़ने स्टेशन तक आये और यह कहकर कि यह पुस्तक रास्तेमें पढ़ने योग्य है; अिसे पढ़ जाअिये, आपको पसंद आयेगी, अुन्होंने रस्किनकी 'अन्टु दिस लास्ट' पुस्तक मेरे हाथमें रख दी।

अिस पुस्तकको हाथमें लेनेके बाद मैं अिसे छोड़ ही न सका। अिसने मुझे पकड़ लिया। जोहानिस्वर्गसे डरबनका रास्ता लगभग चौबीस घंटोंका था। मुझे सारी रात नींद नहीं आअी। मैंने पुस्तकमें सूचित विचारोंको अमलमें लानेका अिरादा किया।

अिससे पहले मैंने रस्किनकी अेक भी पुस्तक नहीं पढ़ी थी। विद्याध्ययनके समयमें पाठ्य-पुस्तकोंके बाहरकी मेरी पढ़ाअी लगभग नहींके बराबर मानी जायगी। कर्मभूमिमें प्रवेश करनेके बाद तो समय बहुत कम बचता था। आज तक भी यही कहा जा सकता है। मेरा पुस्तकीय ज्ञान बहुत ही कम है। मैं मानता हूं कि अिस अनायास अथवा बरबस पाले गये संयमसे मुझे कोअी हानि नहीं हुअी है। बल्कि जो थोड़ी पुस्तकें मैं पढ़ पाया हूं, कहा जा सकता है कि अुन्हें मैं ठीकसे हजम कर सका हूं। अिन पुस्तकोंमें से जिसने मेरे जीवनमें तत्काल महत्त्वके रचनात्मक परिवर्तन कराये, वह 'अन्टु दिस लास्ट' ही कही जा सकती है। बादमें मैंने अुसका गुजराती अनुवाद किया और वह 'सर्वोदय' के नामसे छपा।

मेरा यह विश्वास है कि जो चीज मेरे अन्दर गहराअीमें छिपी पड़ी थी, रस्किनके ग्रंथरत्नमें मैंने अुसका स्पष्ट प्रतिबिम्ब देखा। और, अिस कारण अुसने मुझ पर अपना साम्राज्य जमाया और मुझसे अुसमें दिये गये विचारों पर अमल कराया। जो मनुष्य हममें सोअी हुअी अुत्तम भावनाओंको जाग्रत करनेकी शक्ति रखता है वह कवि है। सब कवियोंका सब लोगों पर समान प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि सबके अंदर सारी सद्‌भावनायें समान मात्रामें नहीं होतीं।

मैं 'सर्वोदय' के सिद्धान्तोंको अिस प्रकार समझा हूं:

१. सबकी भलाअीमें हमारी भलाअी निहित है।

---

१. श्री अेच० अेस० अेल० पोलाक दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहमें गांधीजीके सहयोगी थे।

२. वकील और नाअी दोनोंके कामकी कीमत अेकसी होनी चाहिये, क्योंकि आजीविकाका अधिकार सबको अेक समान है।

३. सादा मेहनत-मजदूरीका यानी किसानका जीवन ही सच्चा जीवन है।

पहली चीजको मैं जानता था। दूसरीको मैं धुंधले रूपमें देखता था। तीसरीका मैंने कभी विचार ही नहीं किया था। 'सर्वोदय' ने मुझे दीयेकी तरह स्पष्ट दिखा दिया कि पहली चीजमें दूसरी दोनों चीजें समाअी हुअी हैं। सवेरा हुआ और मैं अिन सिद्धान्तोंका अमल करनेके प्रयत्नमें लगा।

आत्मकथा, पृ० २५९–६०; १९५७

## ३९

## शरीर-श्रमका सुनहला नियम

[श्री महादेव देसाअीके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

गांधीजी जो कितनी ही सादीसे सादी बातें कहते और लिखते हैं, वे भी कुछ लोगोंको पहेली-सी मालूम होती हैं और अुन्हें संशयके भंवरमें डाल देती हैं। सादीसे सादी बातका भी कुछ लोग तरह तरहका अर्थ लगाते हैं और अनेक पहेलियां खड़ी करते हैं। गांधीजीने शरीर-श्रम पर जो लेख लिखा था अुसका सीधा-सादा भावार्थ तो अितना ही है कि हरअेक आदमी खुद अपने पसीनेकी कमाअी खाने लगे, तो परावलम्बन और गरीबोंका शोषण बन्द हो जाय और किसीको किसी मनुष्यसे अुसकी शक्तिसे अधिक काम न लेना पड़े। पर कुछ लोग अिससे घबराहटमें पड़ गये हैं कि अधिकांश मनुष्य तो यह शरीर-श्रम करते ही नहीं, तब अुन्हें रोटी पानेका क्या हक है? वकीलोंको ही लीजिये। ये लोग हजारों रुपये कमाते हैं। अिनकी अेक अेक घंटेकी फीस रुपयोंकी नहीं, अशर्फियोंकी होती है। अिसी तरह डॉक्टर भी खासी चांदी बनाते हैं। पर ये लोग कुछ भी शरीर-श्रम नहीं करते। गांधीजीने अिस प्रश्नका जवाब दिया — "जो लोग शरीर-श्रम नहीं करते, अुनसे तुम ओर्ष्या क्यों करते हो? दुनियामें हरअेक आदमी अपने पसीनेकी ही कमाअी खायेगा, अैसी कल्पना तो मैंने कभी नहीं की। मैंने तो स्वर्ण-नियम भर बतला दिया है। अुस पर चलनेके लिअे तुम खुद तैयार हो या नहीं? यदि हां, तो जिस मनुष्यमें अिस नियम पर चलनेकी तैयारी या शक्ति नहीं है, अुसके प्रति तुम्हें द्वेष नहीं करना चाहिये। मैं जो दूध और फल खाता हूं अुन्हें अगर शरीर-श्रम करके प्राप्त नहीं करता, तो अिसका अर्थ यह हुआ कि मैं दयाका पात्र हूं; अिससे शरीर-श्रमके अुक्त नियमोंमें कोअी न्यूनता नहीं आती। ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन थोड़ेसे अिने-गिने

लोग ही करते होंगे, पर अिससे क्या अुन्हें ब्रह्मचर्यका पालन न कर सकने-वाले करोड़ों मनुष्योंके प्रति द्वेष करना चाहिये ? वे तो द्वेषके नहीं दयाके पात्र हैं।"

अैसी ही अुलझनका अेक दूसरा अुदाहरण है, पर अुसका कारण अिससे अुलटा है। अेक सज्जन पूछते हैं — "मुझे अिस नियमका पालन तो करना है, पर मेरा शरीर अितना कमजोर है कि अुसका पालन हो नहीं सकता। मुझे अिस बातका दुःख तो बहुत होता है, पर अब करूं क्या ?" गांधीजीने अुत्तर दिया — "मैंने तो जिस आदर्श तक हमें पहुंचना है वह आदर्श बतलाया है। हरअेक मनुष्य अुसका यथाशक्ति पालन करे। अगर आपसे किसी भी तरहका शारीरिक श्रम नहीं हो सकता तो अुसके लिअे आप दुःख न करें। आप दूसरा जो शुद्ध धंधा कर सकते हों वह करें, और अितना ध्यान रखें कि आपके लिअे जो लोग तन गलाते हैं अुनको आप चूसें नहीं। आप यह मानते हैं कि डॉक्टरों वगैराको शारीरिक श्रम करनेके लिअे फुरसत नहीं मिलती, तो अुसके लिअे आप चिंता न करें। वे लोग यदि शुद्ध सेवाभावसे समाजकी सेवा करेंगे, तो समाज अितना ध्यान तो रखेगा ही कि अुन्हें भूखों न मरना पड़े।"

हरिजनसेवक, ९–८–'३५; पृ० २०२

## ४०

## श्रमयज्ञ

गीतामें कहा गया है कि "आरम्भमें यज्ञके साथ-साथ प्रजाको अुत्पन्न करके ब्रह्माने अुससे कहा : 'अिस यज्ञके द्वारा तुम्हारी समृद्धि हो; यह यज्ञ तुम्हारी कामधेनु हो, अर्थात् यह तुम्हारे अिच्छित फलोंका देनेवाला हो।' जो यह यज्ञ किये बिना खाता है वह चोरीका अन्न खाता है।" "तू अपने पसीनेकी कमाअी खा," यह बाअिबलका वचन है। यज्ञ अनेक प्रकारके हो सकते हैं। अुनमें से अेक श्रमयज्ञ भी हो सकता है। यदि सब लोग अपने ही परिश्रमकी कमाअी खावें, तो दुनियामें अन्नकी कमी न रहे और सबको अवकाशका काफी समय भी मिले। तब न तो किसीको जनसंख्याकी वृद्धिकी शिकायत रहे, न कोअी बीमारी आवे और न मनुष्यको कोअी कष्ट या क्लेश ही सतावे। यह श्रमयज्ञ अुच्चसे अुच्च प्रकारका यज्ञ होगा। अिसमें सन्देह नहीं कि मनुष्य अपने शरीर या बुद्धिके द्वारा और भी अनेक काम करेंगे, पर अुनका वह सारा श्रम लोक-कल्याणके लिअे प्रेममूलक श्रम होगा।

अुस अवस्थामें न कोअी राव होगा न कोअी रंक, न कोअी अूंचा होगा न कोअी नीचा, न कोअी स्पृश्य होगा न कोअी अस्पृश्य।

भले ही यह अेक अलभ्य आदर्श हो, पर अिस कारणसे हमें अपना प्रयत्न बन्द कर देनेकी जरूरत नहीं है। यज्ञके संपूर्ण नियमको अर्थात् अपने 'जीवनके नियम' को पूरा किये बिना भी अगर हम अपने नित्यके निर्वाहके लिअे पर्याप्त शारीरिक श्रम करें, तो भी अुस आदर्शके बहुत कुछ निकट पहुंच ही जायेंगे।

यदि हम अैसा करेंगे तो हमारी आवश्यकतायें बहुत कम हो जायेंगी और हमारा भोजन भी सादा बन जायगा। तब हम जीनेके लिअे खायेंगे, न कि खानेके लिअे जियेंगे। अिस बातकी यथार्थतामें जिसे शंका हो वह अपने परिश्रमकी कमाअी खानेका प्रयत्न करे। अपने पसीनेकी कमाअी खानेमें अुसे कुछ और ही स्वाद मिलेगा, अुसका स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा और अुसे यह मालूम हो जायेगा कि जो बहुतसी विलासकी चीजें अुसने अपने अूपर लाद रखी थीं, वे सब बिलकुल फिजूल थीं।

क्या मनुष्य अपने बौद्धिक श्रमकी कमाअी न खाये? नहीं, यह ठीक नहीं है। शरीरकी आवश्यकताओंकी पूर्ति शारीरिक श्रमसे ही होनी चाहिये।

केवल मस्तिष्कका, अर्थात् बौद्धिक, श्रम तो आत्माके प्रीत्यर्थ है और वह स्वतः संतोषरूप है। अुसमें पारिश्रमिक मिलनेकी अिच्छा नहीं करनी चाहिये। अुस आदर्श अवस्थामें डॉक्टर, वकील आदि पूर्णतः समाजके हितके लिअे काम करेंगे, अपने लिअे नहीं। शारीरिक श्रमके नियम पर चलनेसे समाजमें अेक शांतिमय क्रांति पैदा होगी। जीवन-संग्रामके स्थान पर पारस्परिक सेवाकी प्रतिस्पर्धा स्थापित करनेमें मनुष्यकी विजय होगी। पाशविक नियमका स्थान मानवीय नियम ले लेगा।

ग्रामोंकी ओर लौटनेका अर्थ यह है कि निश्चित रीतिसे शरीर-श्रमके धर्मको, अुसके सारे अर्थोंके साथ, स्वेच्छापूर्वक स्वीकार कर लिया जाय। किन्तु आलोचक अिस पर यह कहते हैं कि "करोड़ों भारतवासी आज गांवोंमें ही तो रहते हैं, तो भी अुन बेचारोंको वहां पेटभर भोजन नसीब नहीं होता और वे भूखों मर रहे हैं।" बात तो बिलकुल सत्य है। सद्भाग्यसे हम यह जानते हैं कि वे स्वेच्छासे नियमका पालन नहीं कर रहे हैं। अगर अुनकी चलती तो अैसा शारीरिक श्रम वे कभी न करते; बल्कि वे किसी बिलकुल पासके शहरकी ओर बसनेके लिअे दौड़ते, अगर वहां अुनके लिअे जगह होती। मालिकका हुक्म जब जबरदस्तीसे बजाया जाता है, तब अुसे परवशता या दासताकी स्थिति कहते हैं। पिताकी आज्ञाका जब स्वेच्छासे पालन किया जाता

है तब वह आज्ञा-पालन पुत्रत्वका गौरव बन जाता है। अिसी तरह शरीर-श्रमके नियमका बलात्कार-पूर्वक पालन किया जायेगा, तो अुससे दरिद्रता, रोग और असंतोषकी सृष्टि होगी। जब स्वेच्छासे अुस नियमका पालन किया जायगा, तब अुससे अवश्य ही संतोष और आरोग्यका लाभ होगा। और आरोग्य ही तो सच्चा धन है। चांदी-सोनेके टुकड़े सच्ची संपत्ति नहीं हैं। ग्रामोद्योग संघ स्वेच्छापूर्ण शरीर-श्रमका अेक प्रयोग है।

हरिजनसेवक, ५–७–३५; पृ० १६०

## ४१

## शरीर-श्रमकी आवश्यकता

अेक जागरूक मित्र लिखते हैं:

जमशेदपुरकी सभाके आपके भाषणमें, जो २० अगस्तके 'यंग अिंडिया' में प्रकाशित हुआ है, पहले पैराग्राफमें बौद्धिक श्रमकी तुलनामें शारीरिक श्रमके महत्त्वका प्रतिपादन करनेके बाद, प्रकाशित रिपोर्टके अनुसार, आपने कहा है: "यही विचार हिन्दू धर्ममें सर्वत्र पाया जाता है। 'जो मनुष्य शारीरिक श्रम किये बिना खाता है, वह पापको खाता है, वह निश्चित रूपसे चोर है।'" यह भगवद्गीताके अेक श्लोकका शाब्दिक अनुवाद है। (तथाकथित) शारीरिक और (तथाकथित) बौद्धिक श्रमके बीच गीता अैसा कोअी फर्क करती है या नहीं, अिस सवालको मैं छोड़ देता हूं। पर यह मैं कह सकता हूं कि गीताके जिन शब्दोंका वह अर्थ किया जा सकता है, जिसे (रिपोर्टके अनुसार) आप गीताके किसी अेक श्लोकका शाब्दिक अनुवाद कहते हैं, वे शब्द तृतीय अध्यायके १२ वें और १३ वें श्लोकोंमें मिलते हैं। मतलब यह कि अेक तो श्रमके समर्थनमें आप गीताके जिस अुद्धरणका अुपयोग करते हैं वह अेक श्लोकसे नहीं, बल्कि अुसके दो श्लोकोंसे लिया गया है। दूसरे, अिन श्लोकोंमें श्रमकी — शारीरिक या किसी भी अन्य प्रकारके श्रमकी — कोअी चर्चा नहीं है। बेशक, पहले श्लोकमें यज्ञके कर्तव्यको समझाते हुअे यह अवश्य कहा गया है कि मनुष्यको चाहिये कि देवोंने अुसे जो कुछ दिया है अुसका अुपभोग वह देवोंके साथ या अुन्हें अर्पण करके करे। यदि वह अैसा नहीं करता है तो वह चोर है। और दूसरे श्लोकमें यह कहा गया है कि 'जो लोग केवल अपने ही लिअे भोजन पकाते हैं

वे पापको ही खाते हैं।' जाहिर है कि यह बात गीताके अेक श्लोकके अुस शाब्दिक अनुवादसे बहुत दूर है, जो आपके पत्रमें अेम० डी० (श्री महादेव देसाअी) के द्वारा दिया गया है। मैं आशा करता हूं कि आप अपनी सुविधाके अनुसार अिस भूलको स्वीकार करेंगे।

शाब्दिक दृष्टिसे पत्रलेखकका यह कहना ठीक है कि अेम० डी० ने जो अनुवाद दिया है वह अेक श्लोकका नहीं बल्कि दो श्लोकोंके अंशोंके योगका है। और अिस भूल-सुधारके लिअे मैं लेखकको धन्यवाद देता हूं। लेकिन अुनकी दलीलका मुख्य आशय मुझे यह मालूम होता है कि मेरे भाषणकी रिपोर्टमें गीताके प्रसिद्ध शब्द — यज्ञका जो अर्थ दिया गया है अुसका कोअी अुचित आधार नहीं है। लेकिन मैं अुस अनुवादको गलत माननेसे अिनकार करता हूं और यह सुझानेका साहस करता हूं कि गीताके तीसरे अध्यायके १२ वें और १३ वें श्लोकोंमें 'यज्ञ' शब्दका अेक ही अर्थ हो सकता है। १४ वां श्लोक अुसे बिलकुल स्पष्ट कर देता है:

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्याद् अन्न-संभवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म-समुद्भवः॥
गीता, अ० ३, श्लो० १४

अन्नसे सब प्राणी अुत्पन्न होते हैं। वर्षासे अन्न अुत्पन्न होता है। यज्ञसे वर्षा होती है। और यज्ञकी अुत्पत्ति कर्मसे होती है।

अतअेव मेरी रायमें यहां न केवल शरीर-श्रमके सिद्धान्तका प्रतिपादन किया गया है, बल्कि अिस बातकी स्थापना भी की गयी है कि जब श्रम केवल अपने लिअे न होकर सबके लिअे होता है तब वह यज्ञका रूप लेता है। वर्षा बड़े बड़े बौद्धिक कार्योंसे नहीं होती है, परन्तु केवल श्रमके जरिये ही होती है। यह सर्व-सम्मत वैज्ञानिक तथ्य है कि जहां जंगलोंके पेड़ काट दिये जाते हैं वहां वर्षा बन्द हो जाती है; और जहां पेड़ लगाये जाते हैं वहां वर्षा खिंच आती है और वनस्पतिकी वृद्धिके साथ ही वर्षाके पानीकी मात्रा भी बढ़ जाती है। कुदरतके कानूनोंकी खोज होना अभी बाकी है। हमने केवल अूपरी सतहको ही छुआ है। शरीर-श्रमके बन्द हो जानेसे जो नैतिक और शारीरिक बुरे परिणाम होते हैं, अुन सबको भला कौन जानता है? मुझे गलत न समझा जाये। मैं बौद्धिक श्रमकी कीमत कम नहीं करता, किन्तु बौद्धिक श्रम कितना भी किया जाय अुससे शारीरिक श्रमकी पूर्ति नहीं हो सकती। सबके कल्याणके लिअे शारीरिक श्रम तो हमें करना ही चाहिये। वह हमारा जन्मप्राप्त कर्तव्य है। बौद्धिक श्रम गुणवत्तामें शारीरिक श्रमसे अनेक गुना बढ़ा-चढ़ा हो सकता है और अकसर होता है,

लेकिन वह अुसकी जगह कभी नहीं ले सकता; जैसे कि बौद्धिक आहार अन्नाहारकी जगह नहीं ले सकता, यद्यपि अन्नाहारकी तुलनामें अुसका स्थान कहीं अूंचा है। सच तो यह है कि धरतीकी अुपजके अभावमें बुद्धिकी अुपज ही असंभव है।

यंग अिंडिया, १५–१०–'२५; पृ० ३५५

## ४२

## शरीर-श्रमका कर्तव्य

['गांधीजीकी पैदल यात्राकी डायरी' से।]

गांधीजीने प्रार्थनाके बादके भाषणमें अुनसे पूछे गये प्रश्नोंके अुत्तर देना शुरू किया।

प्र० — आप हमेशा खैरातके खिलाफ रहे हैं और अिस अुसूलको समझाते रहे हैं कि कोअी भी अिन्सान मेहनत करनेके फर्जसे बरी नहीं है। आपकी अुन लोगोंके लिअे क्या सलाह है, जो बैठे-बैठेका धन्धा करते हैं और पिछले दंगोंमें अपना सब कुछ खो बैठे हैं? क्या अुन्हें अपना वतन छोड़कर अैसी जगह चला जाना चाहिये जहां वे अपनी पुरानी आदतके मुताबिक जीवन बिता सकें? या अुन्हें आपके अुक्त अुसूलके अनुसार रोटी कमानेके लिअे शरीर-श्रम करना चाहिये? अुस हालतमें अुनकी खास खूबियां किस काम आयेंगी?

अु० — जैसा कि समझा जाता है, यह सच है कि मैं बरसोंसे खैरातके खिलाफ रहा हूं, और रोटीके लिअे शरीर-श्रम करनेकी सीख देता हूं। जिला मजिस्ट्रेट, जमान साहब और अेक पुलिस अफसर मुझसे मिलने आये थे। वे बेआसरा लोगोंको खैरात देनेके बारेमें मेरी राय जानना चाहते थे। अुन्होंने पहलेसे यह तय कर लिया था कि वे लोगोंके सामने पानीमें से 'हेयासिन्थ' निकालने, सड़कोंकी मरम्मत करने, गांवोंका सुधार करने और खुदके खेतोंकी हदें सुधारकर सीधमें लाने और अपनी जमीन पर मकान बनानेका काम रखेंगे। जो लोग अिनमें से कोअी भी काम करेंगे, अुन्हें राशन पानेका पूरा हक होगा। मैं अिस खयालको पसन्द करता हूं, लेकिन अपने अुसूलों पर अमल करनेवालेके नाते मैं बेआसरा लोगोंको अेकदम कोअी काम करनेके लिअे मजबूर नहीं करूंगा। कअी तरहके काम लोगोंके सामने रख देने चाहिये, और अेक महीनेका नोटिस देकर हाकिमोंको अुन्हें यह

कह देना चाहिये कि अगर आप सुझाये गये कामोंमें से कोअी काम नहीं चुनते और न कोअी मंजूर करने लायक दूसरा धंधा ही सुझाते, बल्कि हट्टे-कट्टे होने पर भी काम करनेसे अिनकार करते हैं, तो मोहलतके खतम होने पर हमें न चाहने पर भी आप लोगोंको खैरात देना बन्द करना पड़ेगा। बेआसरा लोगों और अुनके दोस्तोंको मेरी यह सलाह है कि सरकारकी अिस स्कीममें वे पूरी मदद करें। किसी भी शहरीके लिअे बगैर शरीर-श्रमके राशन पानेकी आशा रखना गलत होगा।

मैं लोगोंको वतन छोड़नेकी सलाह कभी नहीं दे सकता। मैं चाहूंगा कि अेक अकेला हिन्दू भी हर हालतमें अपनेको सही-सलामत समझे और मुसलमानोंसे अुम्मीद रखूंगा कि वे अपने बीच अुसे पूरी तरह सलामत रखें। मैं अिस बातका स्वागत करूंगा कि लोग अपने-अपने ढंगसे अीश्वरकी पूजा करें।

सट्टेसे कमाया हुआ रुपया मेरे खयालमें यकीनन जायज रुपया नहीं है। और न मैं यह मानता हूं कि किसी आदमीके लिअे अपनी बुरी आदतोंको छोड़ना कभी नामुमकिन है। अगर हरअेक आदमी अपने पसीनेकी कमाअी पर रहे, तो यह दुनिया स्वर्ग बन जाय। मनुष्यकी खास खूबियोंके अुपयोगके प्रश्न पर अलगसे विचार करनेकी बिलकुल जरूरत नहीं। अगर सब लोग रोटीके लिअे शरीर-श्रम करें, तो अुसका यह नतीजा होगा कि कवि, शायर, डॉक्टर, वकील वगैरा मनुष्यकी सेवाके लिअे अपनी अुन खूबियोंका मुफ्त अुपयोग करना अपना फर्ज समझेंगे। बिना किसी स्वार्थके अपना फर्ज अदा करनेके कारण अुनके कामका नतीजा और भी अच्छा होगा।

हरिजनसेवक, २-३-'४७; पृ० ३९

४३

## अमली शरीर-श्रम

अहिंसाके प्रयोगोंसे मैं यह सीखा हूं कि अमली अहिंसाका अर्थ सब लोगोंका शरीर-श्रम है। अेक रूसी दार्शनिक बोन्दरेव्हने अिसे रोटीके लिअे श्रम कहा है। अिसका परिणाम लोगोंमें आपसमें गहरेसे गहरा सहयोग होगा। दक्षिण अफ्रीकाके पहले सत्याग्रही सबकी भलाअी और सम्मिलित कोषके लिअे मेहनत करते थे और अुन्हें अुड़ते पंछियोंकी-सी बेफिक्री रहती थी। अुनमें हिन्दू, मुसलमान (शिया और सुन्नी), अीसाअी (प्रोटेस्टेंट और रोमन कैथलिक), पारसी और यहूदी सभी थे। अंग्रेज और जर्मन भी थे। धंधेके लिहाजसे अुनमें वकील, अिमारत और बिजलीकी विद्या जाननेवाले अिंजीनियर, छापनेवाले और व्यापारी थे। सत्य और अहिंसाके व्यवहारसे धार्मिक झगड़े मिट गये थे और हमने सब धर्मोंमें सत्यके दर्शन करना सीख लिया था। दक्षिण अफ्रीकामें मैंने जो आश्रम कायम किये अुनमें अेक भी मजहबी झगड़ा हुआ हो अैसा मुझे याद नहीं आता। सब लोग छपाअी, बढ़ओीगिरी, जूते बनाना, बागबानी, अिमारत वगैरा हाथके काम करते थे। यह मेहनत किसीको भाररूप नहीं लगती थी। अुसमें सबको आनन्द आता था। सत्याग्रही सेनाका अग्रणी दल अिन्हीं स्त्री-पुरुषों और लड़कोंका बना था। अिनसे ज्यादा वीर और सच्चे साथी मुझे नहीं मिल सकते थे। हिन्दुस्तानमें दक्षिण अफ्रीकाका-सा ही अनुभव रहा और मुझे भरोसा है कि अुसमें कुछ सुधार ही हुआ। सभी लोग मानते हैं कि अहमदाबादका मजदूर-संगठन भारतमें सबसे बढ़िया है। अुसका काम जिस ढंगसे शुरू हुआ था अुसी तरह चलता रहा, तो अन्तमें वहांकी मिलोंमें मौजूदा मालिकों और मजदूरोंकी संयुक्त मालिकी होकर रहेगी। यह स्वाभाविक परिणाम न निकला तो पता चल जायेगा कि संगठनकी अहिंसामें खामियां थीं। बारडोलीके किसानोंने वल्लभभाअीको सरदारकी पदवी दी और अपनी लड़ाअी फतह की। बोरसद और खेड़ाके किसानोंने भी वैसा ही किया। वे सब वर्षोंसे रचनात्मक कार्यक्रम पर अमल कर रहे हैं। मगर अिस अमलसे अुनके सत्याग्रही गुणोंका ह्रास नहीं हुआ है। मुझे पूरा यकीन है कि सविनय आज्ञाभंग हुआ, तो अहमदाबादके मजदूर और बारडोली तथा खेड़ाके किसान भारतके और किसी भी हिस्सेके किसानों और मजदूरोंसे जौहर दिखानेमें पीछे नहीं रहेंगे।

चौंतीस सालके सत्य और अहिंसाके लगातार प्रयोग और अनुभवसे मुझे दृढ़ विश्वास हो गया है कि यदि अहिंसाका ज्ञानपूर्ण शरीर-श्रमके साथ सम्बन्ध न होगा और हमारे पड़ोसियोंके साथ रोजमर्राके व्यवहारमें अुसका परिचय न मिलेगा तो अहिंसा टिक नहीं सकेगी। यह है रचनात्मक कार्यक्रमका रहस्य। यह साध्य नहीं है, साधन है, मगर है अितना अनिवार्य कि अुसे साध्य भी समझ लें तो बेजा नहीं होगा। अहिंसक विरोधकी शक्ति रचनात्मक कार्यक्रम पर अीमानदारीके साथ अमल करनेसे ही पैदा हो सकती है।

हरिजनसेवक, २७-१-'४०; पृ० ४०३

## ४४

# मेरा शरीर-श्रम

'यंग अिंडिया' के कुछ पाठक अैसे हैं, जो अकसर बेढब प्रश्न पूछा करते हैं। लेकिन क्योंकि अुससे अुन्हें आनन्द होता है, मुझे अितनी असुविधाको भी सहन कर लेना चाहिये और अुनके प्रश्नोंका अुत्तर देना चाहिये। . . .

प्र० — आप कहते हैं कि आप और आपके साथ काम करनेवाले दूसरे लोग अुन मित्रोंकी अुदारता पर अपनी आजीविकाका आधार रखते हैं, जो सत्याग्रह आश्रमका खर्च पूरा करते हैं। क्या अुस संस्थाको, जिसमें सशक्त शरीरके लोग हों, अपनी आजीविकाके लिअे मित्रोंकी अुदारता पर आधार रखना अुचित है?

अु० — पत्रलेखक महाशय 'अुदारता-दान' का केवल शब्दार्थ ही समझ रहे हैं। अिस संस्थाका हरअेक शख्स, स्त्री हो या पुरुष, अपने कार्यमें शरीर और बुद्धि दोनोंका पूरा अुपयोग करता है। लेकिन फिर भी यह तो कहा ही जायगा कि अिस संस्थाका आधार मित्रोंकी अुदारता पर ही है। क्योंकि वे जो कुछ भी अुसे दानमें देते हैं अुसके बदलेमें अुन्हें तो कुछ भी नहीं मिलता है। अुसके लोगोंकी मेहनतका फल तो राष्ट्रको मिलता है।

प्र० — जिसे टॉल्स्टॉय 'रोटीके लिअे श्रम' कहते हैं अुसके बारेमें आपका क्या अभिप्राय है? क्या आप शारीरिक श्रम करके अपनी आजीविका प्राप्त करते हैं?

अु० — सच पूछा जाय तो 'रोटीके लिअे श्रम' ये शब्द टॉल्स्टॉयके हैं ही नहीं। अुन्होंने अिन शब्दोंको दूसरे अेक रूसी लेखक बोन्दरेव्हसे ग्रहण किया था और अुनका अर्थ यह है कि हरअेकको रोटी पानेके लिअे काफी शारीरिक श्रम करना चाहिये। अिसलिअे आजीविकाका विशाल अर्थ करने

मुझ पर टॉल्स्टॉयका बहुत असर हुआ था और अुनकी बातों पर यथासंभव अमल करना तो मैंने दक्षिण अफ्रीकामें ही शुरू कर दिया था। आश्रम कायम हुआ तभीसे रोटी-श्रमको अुसमें मुख्य स्थान मिला।

गीताका अध्ययन करने पर मैं अिसी नियमको गीताके तीसरे अध्यायमें यज्ञके रूपमें देखता हूं। मैं यह नहीं कहना चाहता कि यज्ञका अर्थ वहां शरीर-श्रम ही है। परन्तु यज्ञसे पर्जन्य होता है, अिस भावमें मुझे शरीर-श्रमका धर्म दीखता है। यज्ञसे बचा हुआ अन्न वही है, जो मेहनत करनेके बाद मिलता है। आजीविकाके लिअे पर्याप्त श्रमको गीताने यज्ञ कहा है। पोषणके लिअे जितना चाहिये अुससे ज्यादा जो खाता है वह चोरी करता है; क्योंकि मनुष्य आजीविकाके लिअे आवश्यक श्रम भी मुश्किलसे ही करता है। मैं मानता हूं कि मनुष्यको आजीविकासे ज्यादा लेनेका अधिकार ही नहीं है। और जो मेहनत करते हैं अुन सबको अुतना लेनेका अधिकार है जितनेसे अुनका शरीर कायम रहे।

अिससे कोअी यह न कहे कि अिसमें श्रमके बंटवारेकी गुंजाअिश ही नहीं है। मनुष्यकी आवश्यकताओंके लिअे जो भी चीज तैयार होती है, अुसमें शरीर-श्रम तो लगता ही है। अिसलिअे श्रम चाहे जिस जरूरी क्षेत्रमें किया जाय वह रोटी-श्रम ही है। अितना श्रम भी सब नहीं करते, अिसलिअे तन्दुरुस्ती बनाये रखनेके लिअे व्यायामके नाम पर खास तौर पर शरीर-श्रम करना पड़ता है। जो प्रतिदिन खेतीमें श्रम करता है, अुसे लगभग व्यायामकी जरूरत नहीं रहती। किसान तन्दुरुस्तीके दूसरे नियम पाले तो वह बीमार ही न पड़े।

यह देखा जाता है कि अिस दुनियामें मनुष्यको रोज जितना चाहिये अुतना अीश्वर रोज पैदा करता है। अुसमें से अगर कोअी अपनी आवश्यकतासे अधिक काममें लेता है, तो अुसके पड़ोसीको भूखा रहना ही पड़ेगा।

बहुतसे लोग अपनी आवश्यकतासे अधिक लेते हैं, अिसीलिअे दुनियामें भूखों मरनेकी नौबत आती है। हम कुदरतकी देनको किसी भी तरह काममें लें, फिर भी कुदरत तो रोज दोनों पलड़े बराबर ही रखती है। कुदरतके बहीखातेमें न तो जमामें कुछ बाकी रहता है न नामेमें। वहां तो रोज आमद-खर्चका हिसाब बराबर होकर शून्य ही बाकी रहता है। अिस शून्यमें हमें शून्यके समान बनकर समा जाना चाहिये।

अूपरके नियममें यह बात बाधक नहीं है कि कअी रसायनों और यंत्रोंके जरिये मनुष्य जमीनसे ज्यादा फसल पैदा करता है; अपनी मेहनतसे दूसरी तरह भी अनेक वस्तुअें अुत्पन्न करता है। यह कुदरतकी शक्तियोंका रूपान्तर है। सबका आखिरी परिणाम तो शून्य ही होनेवाला है। मगर हमें रोज

जो कुछ अनुभव होता है अुसका पृथक्करण किया जाय, तो अुससे यही अनुमान होता है कि दोनों पलड़े बराबर रहते हैं।

कुदरत अैसा करती हो या नहीं करती हो, मेरी दूसरी दलीलोंमें सार हो या न हो, आश्रममें रोटी-श्रमके नियमका अधिकसे अधिक अच्छे ढंगसे पालन किया गया है। अिसमें आश्चर्यकी कोअी बात नहीं है। पालन करनेका साधारण आग्रह हो तो पालन आसान है। अगर अमुक दिनके अमुक घंटोंमें मेहनतके सिवा दूसरा काम न हो तो मेहनत जरूर होगी। भले ही अुसमें आलस्य हो, कार्य-दक्षता न हो, मन न हो, मगर कुछ घंटे पूरे तो होंगे ही। फिर, कुछ मेहनत तुरंत फल देनेवाली होती है, अिसलिअे अुसमें बहुत आलस्यकी गुंजाअिश भी नहीं रहती। श्रम-प्रधान संस्थाओंमें नौकर नहीं होते या थोड़े ही होते हैं। पानी भरना, लकड़ी फाड़ना, दियाबत्ती तैयार करना, पाखाने और रास्ते साफ करना, मकानोंकी सफाअी रखना, अपने अपने कपड़े धोना, रसोअी करना वगैरा अनेक काम अैसे हैं जो किये ही जाने चाहिये।

अिनके सिवा खेती, बुनाअी-काम, अुनसे संबंधित और दूसरी तरहसे जरूरी बढ़अी-काम, गोशाला, चमार-काम वगैरा काम आश्रमके साथ जुड़े हुअे हैं। अुनमें थोड़े-बहुत आश्रमवासियोंके लगे बिना काम नहीं चल सकता।

ये सब काम रोटी-श्रमके नियम-पालनके लिअे काफी माने जायंगे। मगर यज्ञका दूसरा अंग परमार्थ या सेवाकी वृत्ति है। अुसे अिन कामोंमें शामिल करते वक्त आश्रमकी कमजोरी जरूर मालूम होगी। आश्रमका आदर्श सेवाके लिअे ही जीना है। अिस ढंगसे चलनेवाली संस्थामें आलस्यका, कामकी चोरीका स्थान नहीं है। वहां सब काम तन-मनसे होने चाहिये। सभी लोग अैसा करते तो आश्रमकी सेवाकी योग्यता बहुत बढ़ गअी होती। लेकिन अैसी सुंदर स्थितिसे आश्रम अब भी दूर है। अिसलिअे यद्यपि आश्रमका हर काम यज्ञरूप है, फिर भी आदर्शका विचार करके दरिद्र-नारायणके लिअे कमसे कम अेक घंटेकी कताअीको आवश्यक स्थान दिया गया है।

यह आरोप समय समय पर सुना गया है और आज भी मैं सुना करता हूं कि श्रम-प्रधान संस्थामें बुद्धिके विकासकी गुंजाअिश नहीं रहती, अिसलिअे वह जड़ बन जाती है। मेरा अनुभव अिससे अुलटा है। आश्रममें जितने भी लोग आये हैं, सभीकी बुद्धि कुछ तेज हुअी है; किसीकी मन्द हुअी हो अैसा जाननेमें नहीं आया।

बहुत बार अैसा मान लिया जाता है कि जगतकी अनेक घटनाओंका बाहरी ज्ञान ही बुद्धि है। मुझे यह कबूल करना पड़ेगा कि अैसी बुद्धि आश्रममें कम विकसित होती है। लेकिन अगर बुद्धिका अर्थ समझ, विवेक वगैरा हो, तो वह आश्रममें काफी विकसित होती है। जहां मजदूरके रूपमें

मेहनत सिर्फ गुजारे लिअे होती है, वहां मनुष्यका जड़ बन जाना संभव है। अमुक चीज किसलिअे या किस तरह होती है, अिसका ज्ञान अुसे कोअी नहीं देता है। अुसे खुद अिस विषयमें जिज्ञासा नहीं होती, न अपने काममें दिलचस्पी होती। आश्रममें अिससे अुलटा होता है। हर काम — पाखाना-सफाअी तक — समझ कर करना पड़ता है। अुसमें दिलचस्पी ली जाती है। वह परमेश्वरको प्रसन्न करनेके लिअे होता है। अिसलिअे अुसे करते हुअे भी बुद्धिके विकासकी गुंजाअिश रहती है। सबको अपने अपने विषयका पूरा ज्ञान प्राप्त करनेका प्रोत्साहन दिया जाता है। जो यह ज्ञान लेनेकी कोशिश नहीं करते, अुनके लिअे वह दोष माना जाता है। आश्रममें या तो सभी मजदूर हैं या कोअी भी मजदूर नहीं है।

यह मानना कि किताबोंसे ही, मेज-कुर्सी पर बैठनेसे ही, ज्ञान मिलता है, बुद्धिका विकास होता है, हमारा घोर अज्ञान है, भारी वहम है। हमें तो अिसमें से निकल जाना चाहिये। जीवनमें वाचनके लिअे स्थान जरूर है, मगर वह अपनी जगह पर ही शोभा देता है। शरीर-श्रमको हानि पहुंचाकर अुसे बढ़ाया जाय, तो अुसके खिलाफ विद्रोह करना फर्ज हो जाता है। शरीर-श्रमके लिअे दिनका ज्यादा समय देना चाहिये और वाचन वगैराके लिअे थोड़ा। आजकल अिस देशमें, जहां अमीर लोग या अूंचे वर्गके माने जानेवाले लोग शरीर-श्रमका अनादर करते हैं, शरीर-श्रमको अूंचा दरजा देनेकी बड़ी जरूरत है। और बुद्धिशक्तिको सच्चा वेग देनेके लिअे भी शरीर-श्रमकी यानी किसी भी अुपयोगी शारीरिक धन्धेमें शरीरको लगानेकी जरूरत है।

अगर वाचनको आश्रम कुछ ज्यादा समय दे सके तो देने जैसा है। निरक्षर आश्रमवासियोंको शिक्षककी मदद मिल सके तो वह भी दी जानी चाहिये। फिर भी अैसा लगता रहा है कि जो जो कार्य आश्रममें हो रहे हैं अुनको नुकसान पहुंचाकर वाचन वगैरामें समय न लगाया जाय। शिक्षक वैतनिक तो रखे नहीं जाते। और जब तक वर्तमान शिक्षा देनेवाले ज्यादा शिक्षकोंको आश्रम अपनी तरफ खींच न सके, तब तक जितने हैं अुन्हींसे काम चलाया जाता है। स्कूलों और कॉलेजमें पढ़े हुअे जो लोग आश्रममें हैं, वे श्रमके साथ शिक्षाको मिला देनेकी कलामें पूरी तरह दक्ष नहीं हैं। हम सबके लिअे यह नया प्रयोग है। मगर अनुभवसे कामकी समझ बढ़ती जा रही है। और जैसे जैसे व्यवस्था-शक्ति बढ़ती जायगी वैसे वैसे जो साधारण शिक्षा पाये हुअे लोग यहां हैं, अुन्हें प्राप्त किया हुआ ज्ञान दूसरोंको देनेका अुपाय सूझता जायगा।

सत्याग्रह आश्रमका अितिहास, पृ० ४०, ४२–४४; १९५९

## ४६

# श्रम और बुद्धिके बीच अलगाव

श्रम और बुद्धिके बीच जो अलगाव हो गया है, अुसके कारण हम अपने गांवोंके प्रति अितने लापरवाह हो गये हैं कि वह अेक गुनाह ही माना जा सकता है। नतीजा यह हुआ है कि देशमें जगह-जगह सुहावने छोटे-छोटे गांवोंके बदले हमें घूरे जैसे गांव देखनेको मिलते हैं। बहुतसे या यों कहिये कि करीब-करीब सभी गांवोंमें घुसते समय जो अनुभव होता है अुससे दिलको खुशी नहीं होती। गांवके बाहर और आसपास अितनी गंदगी होती है और वहां अितनी बदबू आती है कि अकसर गांवमें जानेवालोंको आंख मूंदकर और नाक दबाकर ही जाना पड़ता है। ज्यादातर कांग्रेसी गांवके बाशिन्दे होने चाहियें; अगर अैसा हो तो अुनका फर्ज हो जाता है कि वे अपने गांवोंको सब तरहसे सफाअीके नमूने बनायें। लेकिन गांववालोंके हमेशाके यानी रोज-रोजके जीवनमें शरीक होने या अुनके साथ घुलने-मिलनेको अुन्होंने कभी अपना कर्तव्य माना ही नहीं। हमने राष्ट्रीय या सामाजिक सफाअीको न तो जरूरी गुण माना और न अुसका विकास ही किया। यों रिवाजके कारण हम अपने ढंगसे नहा-भर लेते हैं, मगर जिस नदी, तालाब या कुअेंके किनारे हम श्राद्ध या वैसी ही कोअी दूसरी धार्मिक क्रिया करते हैं और जिन जलाशयोंमें पवित्र होनेके विचारसे हम नहाते हैं, अुनके पानीको बिगाड़ने या गन्दा करनेमें हमें कोअी हिचक नहीं होती। हमारी अिस कमजोरीको मैं अेक बड़ा दुर्गुण मानता हूं। अिस दुर्गुणका ही यह नतीजा है कि हमारे गांवोंकी और हमारी पवित्र नदियोंके पवित्र तटोंकी लज्जाजनक दुर्दशा और गन्दगीसे पैदा होनेवाली बीमारियां हमें भोगनी पड़ती हैं।

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० २७–२८; १९५९

# बुद्धि-विकास या बुद्धि-विलास ?

त्रावणकोर और मद्रासके भ्रमणमें विद्यार्थियों तथा विद्वानोंके सहवासमें मुझे अैसा लगा कि मैं जो नमूने अुनमें देख रहा था वे बुद्धि-विकासके नहीं किन्तु बुद्धि-विलासके थे। आधुनिक शिक्षा भी हमें बुद्धि-विलास सिखाती है और बुद्धिको अुलटे रास्ते ले जाकर अुसके विकासको रोकती है। सेगांवमें पड़ा पड़ा मैं जो अनुभव ले रहा हूं, वह मेरी अिस बातकी पुष्टि करता दिखाअी देता है। मेरा अवलोकन तो वहां अभी चल ही रहा है। अिसलिअे अिस लेखमें आये हुअे विचार अुन अनुभवोंके अूपर आधार नहीं रखते। मेरे ये विचार तो जब मैंने फिनिक्स संस्थाकी स्थापना की तभीसे हैं — यानी १९०४ से।

बुद्धिका सच्चा विकास हाथ-पैर, कान आदि अवयवोंके सदुपयोगसे ही हो सकता है अर्थात् शरीरका ज्ञानपूर्वक अुपयोग करते हुअे बुद्धिका विकास सबसे अच्छी तरह और जल्दीसे जल्दी होता है। अिसमें भी यदि पारमार्थिक वृत्तिका मेल न हो, तो बुद्धिका विकास अेकतरफा होता है। पारमार्थिक वृत्ति हृदय यानी आत्माका क्षेत्र है। अतः यह कहा जा सकता है कि बुद्धिके शुद्ध विकासके लिअे आत्मा और शरीरका विकास साथ-साथ तथा अेकसी गतिसे होना चाहिये। अिससे कोअी अगर यह कहे कि ये विकास अेकके बाद अेक हो सकते हैं, तो यह अूपरकी विचारसरणीके अनुसार ठीक नहीं होगा।

हृदय, बुद्धि और शरीरके बीच मेल न होनेसे जो दुःसह परिणाम आया है वह प्रगट है, तो भी अुलटे सहवासके कारण हम अुसे देख नहीं सकते। गांवके लोगोंका पालन-पोषण पशुओंमें होनेके कारण वे मात्र शरीरका अुपयोग यंत्रकी भांति किया करते हैं; बुद्धिका अुपयोग वे करते ही नहीं, और अुन्हें करना भी नहीं पड़ता। हृदयकी शिक्षा नहींके बराबर है, अिसलिअे अुनका जीवन यों ही गुजर रहा है, जो न अिस कामका रहा है, न अुस कामका। और दूसरी ओर, आधुनिक कॉलेजों तककी शिक्षा पर जब नजर डालते हैं, तो वहां बुद्धिके विकासके नाम पर बुद्धिके विलासकी तालीम दी जाती है। हम समझते हैं कि बुद्धिके विकासके साथ शरीरका कोअी मेल नहीं। पर शरीरको कसरत तो चाहिये ही, अिसलिअे अुपयोग-रहित कसरतोंसे अुसे निभानेका मिथ्या प्रयोग होता है। पर चारों ओरसे मुझे अिस तरहके

प्रमाण मिलते ही रहते हैं कि स्कूल-कॉलेजोंसे पास होकर जो विद्यार्थी निकलते हैं, वे मेहनत-मशक्कतके काममें मजदूरोंकी बराबरी नहीं कर सकते। जरासी मेहनत की तो माथा दुखने लगता है और धूपमें घूमना पड़े तो चक्कर आने लगते हैं। यह स्थिति स्वाभाविक मानी जाती है। बिना जुते खेतमें जैसे घास अुग आती है, अुसी तरह हृदयकी वृत्तियां आप ही अुगती और कुम्हलाती रहती हैं और यह स्थिति दयनीय माने जानेके बदले प्रशंसनीय मानी जाती है!

अिसके विपरीत अगर बचपनसे बालकोंके हृदयकी वृत्तियोंको ठीक तरहसे मोड़ा जाय, अुन्हें खेती, चरखा आदि अुपयोगी कामोंमें लगाया जाय, और जिस अुद्योग द्वारा अुनका शरीर खूब कसा जा सके अुस अुद्योगकी अुपयोगिता और अुसमें काम आनेवाले औजारों वगैराकी बनावट आदिका ज्ञान अुन्हें दिया जाय, तो अुनकी बुद्धिका विकास सहज ही हो जाय और नित्य अुसकी परीक्षा भी होती जाय। अैसा करते हुअे जिस गणित आदिके ज्ञानकी आवश्यकता हो वह अुन्हें दिया जाय और विनोदके लिअे साहित्यादिका ज्ञान भी देते जायं, तो तीनों वस्तुअें समतोल हो जायं और कोअी अंग अुनका अविकसित न रहे। मनुष्य न केवल बुद्धि है, न केवल शरीर, न केवल हृदय या आत्मा। तीनोंके अेक समान विकासमें ही मनुष्यका मनुष्यत्व सिद्ध होगा। अिसमें शिक्षाका सच्चा अर्थशास्त्र है। अिसके अनुसार यदि तीनों विकास अेकसाथ हों, तो हमारी अुलझी हुअी समस्याअें अनायास सुलझ जायें। यह विचार या अिस पर अमल तो देशको स्वतंत्रता मिलनेके बाद होगा, अैसी मान्यता भ्रमपूर्ण हो सकती है। करोड़ों मनुष्योंको अैसे-अैसे कामोंमें लगानेसे ही स्वतंत्रताका दिन हम नजदीक ला सकते हैं।

हरिजनसेवक, १७–४–'३७; पृ० ७०–७१

# बुद्धिपूर्वक किया हुआ शरीर-श्रम — समाज-सेवाका अुच्चतम प्रकार

“कुछ साथियोंकी सहायतासे मैं अेक आश्रम चला रहा हूं। अुसका अुद्देश्य हमें अपनेको आदर्श किसान बनानेकी शिक्षा देना है, जिससे कि हम गांवके लोगों और गांवके समाजके साथ अेकरूप हो जायं, और अिस प्रकार अुनकी थोड़ी-बहुत सेवा कर सकें। अिस अुद्देश्यको सामने रखकर खेतीको यहां आजीविकाका मुख्य साधन बनाया गया है और कताअी तथा बुनाअी अुसमें पूरक अुद्योगका काम देती हैं।

गत जनवरी मासमें धानकी मुख्य फसल काट लेनेके बाद आश्रमने अिधर औख, अुड़द और साग-भाजी जैसी गौण फसलोंकी खेती शुरू की है। गये सालके जूनसे, यानी आश्रमके आरंभ-कालसे आज तक आश्रमवासियोंने औसतन् १० नम्बरका करीब २ लाख ६० हजार गज सूत काता है, और मार्चके महीनेसे अेक करघे पर बुनाअीका काम भी शुरू कर दिया गया है। बुनाअीका काम भी आश्रममें होता है। अिस तरह आश्रमने अपनी मर्यादित आवश्यकताओंके लिअे काफी सूत कात लिया है और आशा है कि अब यह सारा सूत हमारे आश्रममें ही बुन जायगा।

अिस तरह हमारे आश्रमको अपने अिस प्रथम वर्षमें अेक अैसे स्वावलंबी कृषक-परिवारके आदर्श तक पहुंचनेके प्रयत्नमें सफलता प्राप्त हुअी है, जो अपनी प्रायः सभी आवश्यकताओंकी पूर्ति अपने ही परिश्रमसे कर लेता है और शहरकी तमाम लूट-खसोटसे बच जाता है।

आश्रमने आज तक कभी अपना आटा दूसरी जगह नहीं पिसवाया और न शक्करका ही कभी अुसने अुपयोग किया है। पिछले तीन महीनेसे हम आश्रमवासी अपने आश्रमके धानका ही बिना पालिशका चावल काममें ला रहे हैं।

आश्रमका आरंभ करते समय अैसा सोचा गया था कि स्वावलंबी किसानकी जिंदगी बसर करनेका आदर्श साधनेके साथ-साथ हम लोग हरिजन-सेवा और चरखा वगैराके द्वारा गांवकी भी कुछ सेवा कर सकेंगे। मगर हमें अिस अुद्देश्यमें पूरी निराशा ही हुअी है, क्योंकि हमें अभी तक आश्रमके लिअे कोअी अनुकूल स्थान नहीं मिल सका है। आजकल जिस जगह आश्रम है वहां अेक-अेक दो-दो घरकी ही

वस्ती है और ये छोटे-छोटे झोंपड़े अेक-दूसरेसे आध आध मील या अेक अेक मीलके फासले पर हैं।

फिर अेक चीजसे आश्रमके कामको भारी धक्का पहुंचा है। आहारके विषयमें मैंने कअी भारी भूलें कीं और अुनका पता मुझे अव चला है। मुझे अव अैसा मालूम होता है कि गरीवीके आदर्शको लेकर जरूरतसे ज्यादा अुत्साहके कारण हमने अपने आहारका मान वहुत नीचा रखा था। अुदाहरणके लिअे, साग-भाजीको ले लीजिये। सब्जी आश्रममें तो पैदा होती नहीं थी, अिसलिअे नियमित रूपसे नहीं किन्तु कभी कभी हम साग-तरकारी खाते थे। अेक दो महीनेके वाद हमने अिस भूलको तो सुधार लिया, मगर घी-दूध न लेनेकी भूल तो रही ही। घी-दूधको हम भोग-विलासकी चीज समझते थे और यह मान बैठे थे कि गरीवोंके भोजनमें तो घी-दूध आ ही नहीं सकता। अिसलिअे घी-दूधका हमने विलकुल परित्याग कर दिया था। लेकिन अव हमने अेक गाय खरीद ली है और दूध वगैरा अव लेने लगे हैं। गाय खरीदे हमें आठेक दिन हुअे हैं। तव तक तो हम घीकी जगह नारियलका तेल खाकर ही संतोष मान रहे थे। फिर अिस प्रदेशमें मुख्य आहार चावलका है। अिन सव कारणोंसे आश्रमवासियोंके स्वास्थ्यको वहुत क्षति पहुंची है। आरम्भमें हम वारह आश्रमवासी थे, पर आजकल हम केवल पांच ही आदमी रहते हैं। मलेरियासे भी आश्रमवासियोंकी तवीयत कमजोर रहती है। यह जंगली तालुका है अिसलिअे मलेरिया तो यहां वारहों माह डेरा डाले रहता है।

आश्रम अव तक शारीरिक श्रमसे ही आजीविका प्राप्त करनेके आदर्शको पकड़े हुअे है। यह सही है कि अिस आदर्श पर अगर वुद्धिपूर्वक अमल किया जाय, तो हमारा नीतिवल वढ़े और सिद्धान्तोंके अनुसार जीवन वितानेमें हम दृढ़ भी वनें। पर अिसके कारण हमारे कुछ साथी हमसे अलग भी रहते हैं। प्रश्न यह है कि 'व्रेड लेवर' (शरीर-श्रमके द्वारा आजीविका प्राप्त करना) का आदर्श अक्षुण्ण रखते हुअे भी अैसे कार्यकर्ता किस तरह आश्रमकी ओर आकर्षित हो सकते हैं।

मित्र तथा सहानुभूति दिखानेवाले सज्जन और आलोचक टॉल्स्टॉयके अिस 'व्रेड लेवर' के सिद्धान्तके विरुद्ध समाज-सेवाका आदर्श रखते हैं, और कहते हैं कि तुम्हारा आश्रम समाजकी जो सेवा कर सकता है, वह अिस सिद्धान्तके कारण रुक गअी है। 'समाज-सेवा' करनेके लिअे मनुष्य यदि 'व्रेड लेवर' के सिद्धान्तके साथ कुछ समझौता कर ले, तो

यह कहां तक ठीक समझा जा सकता है? 'होना' और 'करना' अिन दोनोंके बीच यह जो भेद दिखाअी देता है वह अक्सर क्या आभासमात्र नहीं होता? और असलमें तो 'होना' ही क्या 'करना' नहीं होता? 'ब्रेड लेबर' का सिद्धान्त अतिशयताको पहुंचा हुआ कब कहा जा सकता है? या यह कब समझा जायगा कि अुसके 'अक्षरों' का पालन करके अुसके अर्थका घात कर दिया गया है?

औसतन् हम सात आदमियों पर आठ महीनेमें नीचे लिखे अनुसार खर्च हुआ है:

| | |
|---|---|
| भोजन | १७१।।)।।। |
| कपड़े | १६।।-)।।। |
| रोशनी | ८।।=) |
| डाकखर्च | ३।=)।।। |
| फुटकर | ६≡)५ |
| बरतन | ३।।)।।। |
| दवाअियां | ७।।।)। |
| अखबार ('हरिजन') | ३।।।=) |
| सफर-खर्च | १०=)। |
| कुल | २३१।।≡)११ |

अिससे यह प्रगट होता है कि प्रति मास प्रति व्यक्ति भोजन-खर्च ३) और वस्त्रादिका खर्च १) आया है।"

श्री किशोरलाल मशरूवालाके नाम अेक सुशिक्षित निस्स्वार्थ कार्यकर्ताने जो पत्र लिखा है, अुसीमें से यह अुद्धरण दिया गया है। अेक विशुद्ध-हृदय सेवकके प्रयत्नोंका यह हूबहू चित्र है, और जो व्यक्ति सेवामय जीवन बितानेका प्रयत्न कर रहे हों अुन सबको संभव है अिससे कुछ सहायता मिल सके।

प्रयत्न सराहनीय है। यह अच्छा है कि लेखक तथा अुसके साथियोंको जब कोअी भूल दिखाअी देती है, तब वे अुसे स्वीकारने और सुधारनेमें हिचकिचाते नहीं।

यह मैं नहीं जानता कि लेखकने अिस पत्रमें जो प्रश्न पूछे हैं, अुनका श्री किशोरलालने क्या जवाब दिया है। पर अिस पत्रलेखकको जिस प्रकारके प्रश्नोंने परेशान कर रखा है, अुनमें दिलचस्पी लेनेवाले साधारण पाठकोंके सहायतार्थ अुनके अुत्तर देनेका प्रयत्न मैं अवश्य करूंगा।

अैसा मालूम होता है कि 'ब्रेड लेबर' (रोटीके लिअे परिश्रम, शरीर-श्रम) के सिद्धान्तके विषयमें कुछ गलतफहमी हो गअी है। यह सिद्धान्त

समाज-सेवाका विरोधी तो है ही नहीं। बुद्धिपूर्वक किया हुआ श्रम अुच्चसे अुच्च प्रकारकी समाज-सेवा है। कारण यह है कि यदि कोअी मनुष्य अपने शारीरिक श्रमसे देशकी अुपयोगी संपत्तिमें वृद्धि करता है, तो अिससे अुत्तम और हो ही क्या सकता है? 'होना' निश्चय ही 'करना' है।

श्रमके साथ जो 'बुद्धिपूर्वक किया हुआ' विशेषण लगाया गया है, वह यह बतलानेके लिअे लगाया गया है कि समाज-सेवामें श्रम तभी खप सकता है, जब अुसके पीछे सेवाका कोअी निश्चित हेतु हो; नहीं तो यह कहा जा सकता है कि हरअेक मजदूर समाजकी सेवा करता है। अेक प्रकारसे तो वह समाजकी सेवा करता ही है, पर जिस सेवाकी यहां बात हो रही है वह बहुत अूंचे प्रकारकी सेवा है। जो मनुष्य सबके हितके लिअे सेवा करता है वह समाजकी सेवा करता है, और जितनेसे अुसका पेट भर जाय अुतनी मजदूरी पानेका अुसे हक है। अिसलिअे अिस प्रकारका 'ब्रेड लेबर' (शरीर-श्रम) समाज-सेवासे भिन्न नहीं है। अधिकांश मनुष्य जो काम अपने शरीरके पोषणके लिअे या बहुत हुआ तो अपने कुटुम्बके लिअे करते हैं, अुसे समाज-सेवक सबके हितके लिअे करता है।

अिन सात आश्रमवासियोंको आज यह मालूम हो रहा है कि अुन्हें अपने अन्न-वस्त्रके लिअे मेहनत करनेके पश्चात् दूसरी सेवा करनेका समय शायद ही रहता है। ये सेवक अगर अपने काममें कुशल होते, तो अैसी बात कभी न होती। असलमें वे कार्यकुशल नहीं हैं। खेती-बाड़ीके मजदूरोंके रूपमें अुन्हें हम देखते हैं, तो वे साधारण मजदूरोंकी बराबरी कर ही नहीं सकते। कारीगरोंकी कोटिमें भी वे नौसिखिये ही कहे जा सकते हैं। अीश्वरकी कृपासे प्रत्येक कार्यकर्ता अब यह जानता है कि सूत कातनेवाला अपने औजारोंको अगर बुद्धिके साथ काममें लावे, तो अमुक समयमें वह सूतकी मात्रा सहजमें दूनी कर सकता है, अर्थात् अुसकी चरखेकी आमदनी दूनी हो सकती है। यह बात अधिकांश वस्तुओंके संबंधमें सत्य है। खेतीमें अुनके अिन्हीं औजारोंमें तरक्की करनेका क्षेत्र अितना विशाल है कि यदि प्रकृति बीचमें न पड़े, तो किसान अपनी बुद्धिका अुपयोग करके नित्य अुतने ही घंटे काम करते हुअे अपनी आमदनी सहज ही चौगुनी कर सकते हैं। अिसका मतलब यह हुआ कि आज-जितनी आमदनीके लिअे वह जितनी मेहनत करता है, अुतनी करनेकी अुसे जरूरत न रहेगी। अिसलिअे ये सेवक जब कुशलता प्राप्त कर लेंगे, तब आजकी अपेक्षा बहुत कम समयमें वे अपने अन्न-वस्त्रके लायक कमा लेंगे और हरिजन-सेवा अथवा दूसरे किसी काममें वे अपनी शक्तिको बिना किसी बाधाके लगा सकेंगे। अनेक प्रकारके खर्चोंमें फंसे हुअे साधारण गृहस्थोंके लिअे यह समस्या जटिल हो सकती है, पर जिस त्यागी सेवकको महीनेमें

केवल चार ही रुपयेकी जरूरत है अुसका तो चार रुपये कमानेकी मेहनत-मजदूरी कर लेनेके बाद बहुतसा समय बच सकता है।

लेकिन प्रति मनुष्य यह तीन रुपयेका मासिक खर्च देखते हुअे मनुष्यका पेट क्या सचमुच भर सकता है? डॉ० तिलकने बम्बअीके लिअे जो ५ रु० का हिसाब बांधा है वह अगर सही है, तो गांवके रहन-सहनके लिअे यह तीन रुपया ठीक ही है। और डॉ० तिलकने भोजनकी जो सूची दी है अुसमें मैं अपना निजी अनुभव जोड़ दूं तब तो कोअी कठिनाअी रहती ही नहीं। डॉ० तिलकने गांवकी खुराकमें से दूधके चूर्णको अलग कर दिया है। पर जैसा कि वे स्वीकार करते हैं बिना दूधके काम चल ही नहीं सकता। अिन आश्रमवासियोंने दूधका जो त्याग कर दिया था वह अुनकी भूल थी। यह सही है कि करोड़ों मनुष्योंको दूधकी अेक बूंद भी नसीब नहीं होती। पर अैसी तो अनेक चीजें हैं जो अुन्हें नहीं मिलतीं। अगर हमें सेवा करनेके लिअे जीवित रहना है, तो अुन्हें छोड़नेका हमें साहस नहीं करना चाहिये। अिसलिअे जिनके बिना हमारा काम चल ही नहीं सकता अैसी चीजें हम न छोड़ें और गांववालोंको अिसमें मदद दें कि वे अपने लिअे भी अुन चीजोंको पैदा कर लें। गेहूं, चावल, बाजरा, जुआर जैसे पूर्ण अनाज और हरी भाजियां, जो कच्ची ही खाअी जा सकती हैं, और दूध तथा गांवोंमें पैदा होनेवाले आम, अमरूद, जामुन, बेर आदि मौसमी फल निरोगी जीवनके लिअे जरूरी हैं। नीमकी पत्तीको तो शायद हरी भाजियोंकी रानी कहा जा सकता है। नीमकी पत्तियां भारतमें सर्वत्र मिल सकती हैं। और मनुष्यके खाने लायक अनेक प्रकारका अैसा घास भी है जिसका हमें पता नहीं। अिमली सब जगह मिलती है। यह भी फेंक देनेकी चीज नहीं है। पर अिमलीके विरुद्ध अेक तरहका जो पूर्वग्रह है अुसे समझना कठिन है। कीमती नीबुओंकी जगह मैं अब अिमली काममें लाने लगा हूं। और अिससे मुझे बहुत ही लाभ हुआ है। आहारमें क्या क्या सुधार हो सकते हैं अिस सबकी शोधके लिअे हमारे सामने असीम क्षेत्र पड़ा हुआ है। अिस शोधके अैसे बड़े-बड़े परिणाम निकल सकते हैं, जो संसारके लिअे और खासकर भारतके भूखों मरनेवाले करोड़ों मनुष्योंके लिअे काफी महत्त्वका स्थान रखते हैं। अिसका यह अर्थ हुआ कि स्वास्थ्य और संपत्ति दोनोंकी ही अुनसे प्राप्ति हो सकती है। रस्किनके कथनानुसार तो ये दोनों चीजें अेक ही हैं। अिस छोटेसे आश्रमके सदस्योंकी यह धारणा बिलकुल सही है कि वे सदा सन्मार्ग पर चलकर बड़ीसे बड़ी समाज-सेवा करेंगे। अुनकी सेवाकी सुगन्ध वहां आसपास फैलेगी और वह संक्रामक सिद्ध होगी। कालांतरमें यह सेवा-भावना समस्त भारतमें और फिर अखिल विश्वमें व्याप्त हो जायगी। अिस सेवामें अेकका कल्याण सबका कल्याण है।

हरिजनसेवक, १४–६–'३५; पृ० १३६–३८

## ४९

## बौद्धिक और शारीरिक काम

प्र० — हम किसी रवीन्द्रनाथ या रमणके लिअे शरीर-श्रम करके ही रोटी कमाने पर जोर क्यों दें? क्या यह अुनकी दिमागी ताकतकी निरी बरबादी न होगी? दिमागी काम करनेवालोंको अंग-मेहनत करनेवालोंके बराबर ही क्यों न समझा जाय; क्योंकि दोनों ही समाजको फायदा पहुंचानेवाला काम करते हैं?

अु० — दिमागी काम भी अपना महत्त्व रखता है और जीवनमें अुसका निश्चित स्थान है। लेकिन मैं तो शरीर-श्रमकी जरूरत पर जोर देता हूं। मेरा यह दावा है कि अुस फर्जसे किसी भी मनुष्यको छुटकारा नहीं मिलना चाहिये। अिससे मनुष्यके दिमागी कामकी अुन्नति ही होगी। मैं तो यहां तक कहनेकी हिम्मत करता हूं कि पुराने जमानेमें हिन्दुस्तानके ब्राह्मण बौद्धिक और शारीरिक दोनों काम करते थे। वे चाहे न भी करते हों, लेकिन आज तो शारीरिक कामकी जरूरत सिद्ध हो चुकी है। अिस सिलसिलेमें मैं आपको टॉल्स्टॉयके जीवनका हवाला देते हुअे यह बताना चाहूंगा कि अुन्होंने रूसी किसान बोन्दरेव्हके शारीरिक कामके सिद्धान्तको किस प्रकार मशहूर किया।

हरिजनसेवक, २३–२–'४७; पृ० २८

## ५०

## बौद्धिक विषय बनाम अुद्योग

श्री नरहरि परीख लिखते हैं:

"खादी और नअी तालीमके विद्यालयोंमें 'बौद्धिक विषय' शब्दका प्रयोग बहुत ही गलत तरीकेसे किया जाता है। अक्षरज्ञान अथवा पुस्तकका अध्ययन बौद्धिक विषय कहा जाता है। अमुक समय अुद्योगके लिअे है और अमुक समय बौद्धिक विषयके लिअे — अैसा भी कहा जाता है। कुछ विद्यालयोंमें तो यह भी कहते हैं कि अुन्हें दो घंटे अुद्योगमें लगाने होते हैं और तीन पढ़नेमें। किताबोंके शुरू होनेसे ही यह माना जाता है कि पढ़ाअी आरम्भ हुअी। अिस विषय पर आप लिख तो चुके हैं, लेकिन फिर भी लिखनेकी जरूरत है। अुद्योगमें बुद्धिका विकास तो होता ही है। अिसलिअे यह नहीं

कहा जा सकता कि अुद्योग बुद्धिका विषय नहीं है। यह आवश्यक है कि आप अिसके सम्बन्धमें भी स्पष्ट रूपसे लिखें।"

लेखककी शिकायत बिलकुल सच है। अक्षरज्ञान बुद्धिका विषय नहीं, वह तो स्मरण-शक्तिका विषय है। जिस तरह किसी पदार्थका चित्र देखकर सीखना बुद्धिका विषय नहीं, अुसी तरह अक्षरके चित्रके बारेमें है। लेकिन अक्षरज्ञानमें अुसके अर्थका भी समावेश तो है ही। अनेक विषयोंकी किताबें पढ़ना और समझना भी अक्षरज्ञानमें शामिल है। यही बात अुद्योगको भी लागू होती है। औद्योगिक ज्ञानका मतलब केवल कोअी धन्धा सीखना ही नहीं, बल्कि अुससे सम्बन्धित शास्त्रको भी जानना है। जिस तरहके औद्योगिक ज्ञानसे बुद्धिका सिर्फ विकास ही नहीं होता, बल्कि अक्षरज्ञानके मुकाबले बहुत अधिक विकास होता है। अक्षरज्ञानमें तो बुद्धिके विकासके बदले स्मरण-शक्तिका ही विकास होता है। यह बात हम हाअीस्कूल और कालेजोंसे निकले हुअे सैकड़ों विद्यार्थियोंके बारेमें कह सकते हैं। अुद्योगके शास्त्रज्ञानके विषयमें अैसा दुष्परिणाम होनेकी संभावना नहीं दीखती। अैसी सूरतमें अमुक समय अुद्योगके लिअे और अमुक समय अक्षरज्ञानके लिअे यह भेद, अुद्योगके दर्जेको कम करनेकी यह प्रथा, दूर हो जानी चाहिये। क्योंकि यह भेद निकम्मा है और प्रायः अिससे नुकसान भी होता है। विद्यार्थियोंके मनमें यह भेद समा जाता है और अिससे अुद्योगके प्रति अुदासीनता और पढ़नेके लिअे मोह पैदा होता है। अिस तरह दोनों चीजें बिगड़ जाती हैं। किताबका कीड़ा बननेसे ही बुद्धिका विकास नहीं हो जाता। अुससे तो आंख और विचार-शक्ति दोनों ही खराब होती हैं। अुद्योगके प्रति अुदासीनता होनेसे अुसका ज्ञान अूपरी रहता है। प्रत्येक वस्तु अपने स्थान पर ही शोभा देती है। अुद्योगके पूर्ण ज्ञानके लिअे पुस्तकोंके अध्ययनकी आवश्यकता रहती ही है। और अुसके सिलसिलेमें जो कुछ पढ़ना पड़ता है, सो तो समझकर ही पढ़ा जा सकता है। अिस तरह अुसमें हानिके लिअे अवकाश ही नहीं रहता। जिनको मैं समझा सकूंगा अुनका पूर्ण विकास तो अुद्योगके द्वारा ही करूंगा। अिसीका नाम नअी तालीम या सच्ची तालीम है। यह तो अपने समयानुसार आवेगी ही। फिर भी अुस समय तक अुद्योग और अक्षरज्ञानका भेद तो मिट ही जाना चाहिये। जिस तरह गणित, साहित्य अित्यादिका वर्ग होता है अुसी तरह अुद्योगका भी होना चाहिये। सबको शिक्षाका अंग ही समझना चाहिये। यह भ्रम तो निकल ही जाना चाहिये कि अुद्योग शिक्षा-क्षेत्रके बाहरका विषय है। जब तक यह भ्रम न टलेगा, विद्यार्थियोंके विकासमें रुकावट होती रहेगी।

हरिजनसेवक, १२–४–'४२; पृ० ११२

# ५१

# अहिंसक अुद्योग

[ लेखक : **महादेव देसाअी** ]

अखिल भारत चरखा-संघ और गांधी-सेवा-संघकी मिलीजुली बैठकमें, जो पिछले जूनमें हुअी थी, खादीके अर्थशास्त्रकी व्यापक समझसे संबंधित कअी प्रश्नों पर चर्चा हुअी। अेक बैठकमें गांधीजी हाथ-अुद्योगकी अुन्नतिके अहिंसक पहलू पर लंबे समय तक बोले। अुन्होंने कहा :

"अहिंसा-परायण मनुष्यके सारे कामकाज और सारी प्रवृत्तियां अहिंसासे रंगी हुअी होंगी, अिसलिअे अुसका धंधा, अुसका व्यवसाय निश्चित रूपसे अहिंसक होगा। वैसे तो सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जाय तो बिना थोड़ी-बहुत हिंसाके कोअी भी काम या अुद्योग-धन्धा संभव नहीं है। कुछ न कुछ हिंसा किये बिना जीना भी शक्य नहीं है। हमारा काम तो यही सोचना है कि अैसी हिंसाकी मात्रा घटाकर कमसे कम कैसे की जाय। अहिंसा शब्द भी नकारात्मक है, यानी वह जीवनमें अनिवार्य हिंसा छोड़नेके प्रयत्नका सूचक है। अिसलिअे जिसकी अहिंसामें श्रद्धा है वह अैसे ही अुद्योग-धंधेमें लगेगा, जिसमें कमसे कम हिंसा होगी। अुदाहरणके लिअे, हम यह कल्पना नहीं कर सकते कि अहिंसामें विश्वास रखनेवाला मनुष्य कसाअीका धंधा पसन्द करेगा। अिसका यह अर्थ नहीं कि मांस खानेवाला अहिंसक नहीं हो सकता। मांस खानेवालोंमें अैसे बहुतसे लोग मिलेंगे, जो मांस न खानेवालोंसे ज्यादा अहिंसक होंगे। जैसे कि दीनबन्धु अेन्ड्रूज। लेकिन मांस खानेवालोंमें भी जो अहिंसामें श्रद्धा रखते हैं, वे शिकारीका धंधा नहीं करेंगे और लड़ाअीमें या लड़ाअीकी तैयारीमें शामिल नहीं होंगे।

"अिस तरह कितने ही काम और धन्धे अैसे हैं, जिनमें निश्चित रूपसे हिंसा रहती है। अुन्हें अहिंसक मनुष्यको छोड़ना होगा। लेकिन खेतीका धन्धा नहीं छोड़ा जा सकता, यद्यपि अमुक मात्रामें अुसमें हिंसा अनिवार्य है। अिसलिअे अैसे मामलोंमें कसौटी यह है: जो धन्धा हम स्वीकार करना चाहते हैं, अुसका आधार क्या अहिंसा पर है? वैसे तो हर काममें, हर क्रियामें थोड़ी-बहुत हिंसा रहती ही है। हमारा काम अितना ही है कि अुसे यथासंभव कम करनेका प्रयत्न करें। यह काम अहिंसा पर हार्दिक श्रद्धाके बिना नहीं हो सकता। मान लीजिये कि कोअी आदमी प्रत्यक्ष हिंसा बिलकुल नहीं करता, मेहनत करके खाता है; लेकिन पराया धन या खुशहाली देखकर

हमेशा अीर्ष्यासे जल अुठता है। अैसा आदमी अहिंसक हरगिज नहीं माना जा सकता। अर्थात् अहिंसक धन्धा वही है, जो जड़से हिंसा-रहित है और जिसमें दूसरेकी अीर्ष्या या शोषण नहीं है।

"मेरे पास अिस बातका अैतिहासिक प्रमाण तो नहीं है, परन्तु मैंने हमेशा यह माना है कि भारतवर्षमें अेक समय गांवोंका अर्थतंत्र अैसे निर्दोष अहिंसक अुद्योग-धन्धों पर रचा गया था। वह मनुष्यके अधिकारों पर नहीं, बल्कि मनुष्यके धर्मों और फर्जों पर खड़ा था। अैसे धन्धोंमें लगे हुअे लोग अपनी जीविका तो कमाते ही थे, लेकिन अुनके परिश्रमसे सारे समाजका हित और कल्याण होता था। अुदाहरणके लिअे, गांवका सुनार गांवके किसानोंकी जरूरतें पूरी करता था। अुसे नगद पैसा नहीं मिलता था, लेकिन गांवके लोग अुसे अपनी मेहनतसे पैदा की हुअी अनाज वगैरा चीजें मेहनतानेके रूपमें देते थे। मेरा कहनेका यह मतलब नहीं कि अिस प्रथामें भी अन्याय नहीं हो सकता था; लेकिन अैसे अन्यायकी संभावना अिसमें कमसे कम रहती थी। मैं साठ बरससे पहलेके काठियावाड़के लोक-जीवनकी बात आपको बता रहा हूं, जिसका मुझे निजी अनुभव है। आज हम लोगोंकी आंखोंमें जितना तेज और अुनके हाथ-पांवोंमें जितनी शक्तिमें देखते हैं अुससे अुस जमानेके लोगोंकी आंखोंमें ज्यादा तेज और अुनके हाथ-पांवोंमें ज्यादा शक्ति और स्फूर्ति दिखाअी देती थी।

"अिन अुद्योग-धन्धोंमें शरीर-श्रम मुख्य चीज थी। विशाल यंत्रोद्योग अुस समय नहीं थे। क्योंकि जब मनुष्य हाथसे जोत सके अुतनी ही जमीनसे संतोष मानता हो, तब वह दूसरेका शोषण नहीं कर सकता। हाथ-अुद्योगोंमें गुलामी और शोषणकी गुंजाअिश ही नहीं है। विशाल यंत्रोद्योग अेक मनुष्यके हाथमें धनके ढेर अिकट्ठे करते हैं, जिसके बल पर वह अनेक लोगोंसे अपने लिअे कड़ी मेहनत कराता है। अपने मजदूरोंके लिअे आदर्श स्थिति पैदा करनेकी भी शायद वह कोशिश करता होगा, फिर भी अुसमें अन्याय और शोषण तो रहता ही है और अुसका अर्थ अमुक रूपमें हिंसा ही है।

"जब मैं यह बात कहता हूं कि अुस जमानेमें समाज दूसरोंके शोषण पर नहीं किन्तु न्याय पर रचा गया था, तब मैं अितना ही बताना चाहता हूं कि सत्य और अहिंसा अैसे गुण नहीं हैं, जिन्हें केवल व्यक्ति ही सिद्ध कर सकता है, बल्कि सारी जातियां और मानव-समाज भी अुन पर अमल कर सकते हैं। जो गुण केवल मठ या कुटियामें ही खिल सकता है या व्यक्ति ही जिसका विकास कर सकते हैं, अुसे मैं गुण ही नहीं मानता। मेरी नजरमें अैसे गुणकी कोअी कीमत नहीं है।"

हरिजन १-९-'४०; पृ० २७१

## ५२

# यज्ञ

### १

हम वहुधा यज्ञ शव्दको काममें लाते हैं। हमने कताओीको दैनिक महायज्ञकी श्रेणी तक चढ़ाया है। अिसलिअे यज्ञ शव्दके विभिन्न फलितार्थों पर विचार करना जरूरी है।

यज्ञका अर्थ है लौकिक अथवा पारलौकिक किसी भी प्रकारके फलकी आकांक्षा रखे विना दूसरोंके हितके लिअे किया गया कर्म। 'कर्म' शव्दका यहां व्यापकसे व्यापक अर्थ करना चाहिये; अुसमें कायिक, मानसिक और वाचिक — प्रत्येक प्रकारके कर्मका समावेश माना जाना चाहिये। 'दूसरों' से केवल मनुष्य-वर्गका नहीं वल्कि जीवमात्रका आशय है। अिसलिअे और अहिंसाकी दृष्टिसे भी, मनुष्य-जातिकी सेवाके लिअे ही क्यों न हो, दूसरे जीवोंकी वलि देना या अुनका नाश करना यज्ञ नहीं कहा जा सकता। वेदादिमें पशु-वलिका जो विधान किया गया वताया जाता है, वह हमारे अुपरोक्त अर्थकी दृष्टिसे अनुचित है। कारण, पशुवलि सत्य और अहिंसाकी वुनियादी कसौटी पर खरी नहीं अुतरती। मैं वेदका अर्थ करनेकी अपनी अयोग्यता निःसंकोच स्वीकार करता हूं। लेकिन जहां तक अिस विषयका सम्वन्ध है, अपनी अिस अयोग्यता पर मुझे कोअी खेद नहीं होता। क्योंकि वैदिक समाजमें पशुवलिके रिवाजका प्रचलित होना सिद्ध कर दिया जाय, तो भी अहिंसाका अुपासक अुसे अनुकरणीय नहीं मान सकता।

यज्ञकी अुपरोक्त व्याख्याके अनुसार जिस कर्मसे ज्यादासे ज्यादा जीवोंका अधिकसे अधिक विशाल क्षेत्रमें कल्याण हो और जिसे ज्यादासे ज्यादा स्त्री-पुरुष वहुत आसानीसे कर सकें, अुस कर्मको अुत्तम यज्ञ कहा जायेगा। अिसलिअे तथाकथित अुच्चतर ध्येयके लिअे भी किसी दूसरेका अकल्याण सोचना या करना महायज्ञ होना तो दूर, यज्ञ भी नहीं है। और गीता सिखाती है तथा हमारा अनुभव वतलाता है कि यज्ञरूप कर्मके सिवा दूसरे कर्म मनुष्यको वंधनमें वांधते हैं।

अैसे यज्ञके अभावमें जगत अेक क्षणके लिअे भी टिक नहीं सकता और अिसीलिअे गीता दूसरे अध्यायमें ज्ञानका विवेचन करनेके वाद तीसरे अध्यायमें अुसकी प्राप्तिके अुपायोंका वर्णन करती है और स्पष्ट शव्दोंमें कहती है कि यज्ञके साथ ही प्रजाकी सृष्टि हुअी है। अिसलिअे यह शरीर हमें सारी

सृष्टिकी सेवाके लिअे ही दिया गया है। और यही कारण है कि गीता कहती है: 'जो यज्ञ किये बिना खाता है वह चोरीका अन्न खाता है।' शुद्ध जीवन जीनेकी अिच्छा रखनेवाले व्यक्तिका हरअेक कर्म यज्ञरूप होना चाहिये।

हमारा जन्म यज्ञके साथ हुआ है, अिसलिअे हमारी स्थिति जीवन-भर ऋणीकी रहती है और अिसलिअे हम हमेशा जगतकी सेवा करनेके लिअे बंधे हुअे हैं। और जिस तरह कोअी गुलाम अपने स्वामीसे — जिसकी वह सेवा करता है — अन्न-वस्त्रादि पाता है, अुसी तरह हमें भी जगतका स्वामी जो कुछ दे अुसे आभारपूर्वक स्वीकार कर लेना चाहिये। अुससे हमें जो कुछ मिले वह अुसका हमें दिया हुआ दान है; क्योंकि ऋणीकी तरह अपने कर्तव्यका पालन करनेके लिअे हम अुसके अेवजमें कुछ भी पानेके अधिकारी नहीं हैं। अिसलिअे यदि हमें वह न मिले, तो हम अपने स्वामीको दोष नहीं दे सकते। हमारा शरीर अुसका है; अुसे वह अपनी अिच्छाके अनुसार चाहे रखे, चाहे न रखे।

यह स्थिति अैसी नहीं है कि अुसकी शिकायत की जाय या अुस पर खेद किया जाय। अुलटे, यदि विधाताके विधानमें हमारा अपना स्थान हम समझ लें, तो हमें यह स्थिति स्वाभाविक, सुखद और अिष्ट मालूम होगी। अिस परम सुखका अनुभव करनेके लिअे अविचल श्रद्धाकी आवश्यकता है। 'अपने विषयमें कोअी चिंता मत करो, सब चिंतायें परमेश्वरको सौंप दो' — यह आदेश सब धर्मोंमें दिया गया दीखता है।

अिससे किसीको डरनेका कोअी कारण नहीं है। जो स्वच्छ मनसे सेवाकार्यमें लग जाता है अुसे अुसकी आवश्यकता दिन-प्रतिदिन स्पष्ट होती जाती है और अुसकी श्रद्धा भी अुसी प्रमाणमें बढ़ती जाती है। जो स्वार्थ छोड़नेके लिअे और मनुष्य-जन्मके साथ मिले हुअे अिस कर्तव्यका पालन करनेके लिअे तैयार नहीं है, वह सेवामार्ग पर नहीं चल सकता। जाने-अनजाने हम सब कुछ-न-कुछ निःस्वार्थ सेवा करते ही हैं। यही सेवा हम विचार-पूर्वक करने लगें, तो हमारी पारमार्थिक सेवाकी वृत्ति अुत्तरोत्तर बढ़ती जाय; और न केवल हमें सच्चे सुखकी प्राप्ति हो, परन्तु जगतका भी कल्याण हो।

२

यज्ञके बारेमें मैंने पिछले सप्ताह लिखा था, लेकिन अिसके विषयमें और ज्यादा लिखना चाहता हूं। अिस सिद्धांत पर, जो मानव-जातिके साथ

चला आ रहा है, और विचार करना, मैं मानता हूं, लाभप्रद ही होगा। दिनके चौवीसों घंटे कर्तव्य-पालन करना या सेवा करना यज्ञ है। अिसलिअे 'परोपकाराय सतां विभूतयः'—जैसी सूक्ति, यदि 'अुपकार' शब्दमें दूसरों पर कृपा करनेका भाव हो, सदोष कही जायगी।

निष्काम सेवा करना दूसरों पर नहीं वल्कि स्वयं अपने पर कृपा करना है, ठीक जैसे कि हम ऋणका भुगतान करते हैं तो हम अपनी ही सेवा करते हैं, अपने वोझको हलका करते हैं और अपने कर्तव्यको पूरा करते हैं। अिसके सिवा, न केवल भले लोग वल्कि हम सव अपनी साधन-सामग्रीको मानव-जातिकी सेवामें लगानेके कर्तव्यसे वंधे हुअे हैं। और यदि अैसा कानून है—जैसा कि वह स्पष्ट रूपमें है ही—तो जीवनमें फिर भोगका कोअी स्थान नहीं रहता और अुसका स्थान त्याग ले लेता है। त्यागका कर्तव्य ही मानव-जातिकी विशेषता है, पशुसे अुसके भेदका सूचक है।

लेकिन त्यागका अर्थ यहां संसारको छोड़कर अरण्यमें वास करना नहीं है। अुसका अर्थ यह है कि जीवनकी तमाम प्रवृत्तियोंमें त्यागकी भावना होनी चाहिये। कोअी गृहस्थ जीवनको भोगरूप न मानकर कर्तव्य-रूप माने, तो अिससे अुसका गृहस्थपन मिट नहीं जाता। यज्ञार्थ व्यापार करनेवाला व्यापारी करोड़ोंका व्यापार करते हुअे भी लोकसेवाका ही विचार करेगा। वह किसीको धोखा नहीं देगा, सट्टा नहीं करेगा, सादगीसे रहेगा, किसी जीवको कष्ट नहीं देगा और किसीका नुकसान करनेके वजाय खुद करोड़ोंका नुकसान सह लेगा। कोअी यह कहकर अिस वातकी हंसी न अुड़ाये कि अैसा व्यापारी केवल मेरी कल्पनामें ही है। दुनियाका सौभाग्य है कि अैसे व्यापारी पूर्वमें भी हैं और पश्चिममें भी हैं। यह सच है कि अैसे व्यापारी अुंगलियों पर गिने जा सकते हैं, लेकिन यदि अुक्त आदर्शको प्रगट करनेवाला अेक भी जीवित नमूना हो, तो फिर अुसे काल्पनिक नहीं कह सकते। और यदि हम अिस प्रश्नकी गहराअीमें जायं, तो जीवनके हर क्षेत्रमें हमें अैसे मनुष्य मिलेंगे जो समर्पणका जीवन विताते हैं। अिसमें संदेह नहीं कि अैसे याज्ञिक अपना धंधा करते हुअे अपनी आजीविका भी कमाते हैं। लेकिन वे धंधा आजीविकाके लिअे नहीं करते, आजीविका अुनके धंधेका गौण फल है।

यज्ञमय जीवन कलाकी पराकाष्ठा है; अुसीमें सच्चा रस और सच्चा आनन्द है। जो यज्ञ वोझरूप मालूम हो वह यज्ञ नहीं है। जिस त्यागसे कष्ट मालूम हो वह त्याग नहीं है। भोग नाशकी ओर ले जाता है और त्याग अमरताकी ओर। रस कोअी स्वतंत्र वस्तु नहीं है। वह तो जीवनके प्रति हमारे रुख पर निर्भर करता है। किसीको नाटकके परदों पर चित्रित दृश्योंमें रस मिलता है, तो दूसरेको आकाशमें प्रगट होनेवाले नित्य-नये दृश्योंमें।

अिसलिअे रस वैयक्तिक और राष्ट्रीय तालीमका विषय है। हमें बचपनमें जिन चीजोंमें रस लेना सिखाया गया हो अुनमें ही हमें रस मिलता है। और किसी अेक राष्ट्रकी प्रजाको जो वस्तु रसमय मालूम होती है, वह किसी दूसरे राष्ट्रकी प्रजाको रसहीन मालूम होती है। अिस बातके अुदाहरण तो आसानीसे दिये जा सकते हैं।

फिर, यज्ञ करनेवाले कअी सेवक अैसा मानते हैं कि हम निष्काम-भावसे सेवा करते हैं, अिसलिअे हमें लोगोंसे जरूरी और बहुतसी गैर-जरूरी चीजें भी लेनेकी छूट है। यह विचार सेवकके मनमें ज्यों ही आता है त्यों ही वह सेवक नहीं रह जाता; तब वह अत्याचारी शासक बन जाता है।

जो सेवा करना चाहता हो अुसे अपनी सुविधाओंका विचार नहीं करना चाहिये। अपनी सुविधाओंका विचार तो वह अपने स्वामीको —अीश्वरको— सौंप देता है। अीश्वरकी अिच्छा होगी तो वह देगा, न होगी तो नहीं देगा। अिसलिअे सेवक जो कुछ अुसे मिले सो सब अपने अुपयोगके लिअे नहीं रख लेगा; अपने लिअे वह अुसमें से अुतना ही लेगा जितनेकी अुसे सचमुच जरूरत है। बाकीका वह त्याग करेगा। अुसे अनु-विधायें अुठानी पड़ें तो भी वह शांत रहेगा, क्रोध नहीं करेगा और अपना चित्त स्वस्थ रखेगा। सद्गुणोंकी तरह, अुसकी सेवाका पुरस्कार, सेवा करनेका सुख ही है और अुसीमें वह संतोष मानेगा।

अिसके सिवा, सेवाकार्यमें किसी तरहकी लापरवाही या देर नहीं चल सकती। जो आदमी यह समझता है कि सावधानी और परिश्रमकी आवश्यकता तो सिर्फ अपना व्यक्तिगत कार्य करनेमें है, निःशुल्क किया जानेवाला सार्वजनिक कार्य अपनी सुविधाके अनुसार जब करना हो तब और जिस तरह करना हो अुस तरह किया जा सकता है, कहना चाहिये कि वह यज्ञका क-ख-ग भी नहीं जानता। दूसरोंकी स्वेच्छापूर्वक की जाने-वाली सेवा अपनी पूरी शक्ति लगाकर की जानी चाहिये; यह सेवा पहले और अपना निजी कार्य बादमें — यही सेवाका सूत्र होना चाहिये। सारांश यह कि शुद्ध यज्ञ करनेवालेका अपना कुछ बाकी नहीं रहता; वह सब कृष्णार्पण कर देता है।

फ्रॉम यरवडा मन्दिर, पृ० ५३–६०; १९५७

## ५३
# श्रमका गौरव

"विश्वविद्यालयके नवयुवक स्नातकोंको अपनी पदवियोंकी फेरी करते हुअे हम रोज ही देखते हैं। वे अैसे आदमियोंसे अपनी सिफारिश कराते रहते हैं जिन्हें शिक्षा तो कुछ नहीं मिली है, किन्तु जो धनी बहुत हैं; और १०० में से ९० मामलोंमें तो विश्वविद्यालयोंकी पदवियोंसे कहीं अधिक अिज्जत अफसरोंकी निगाहमें धनीकी सिफारिशकी ही ठहरती है। अिससे आखिर क्या साबित होता है? यही न कि दिमागी तालीमसे कहीं अधिक कीमत धनकी लगाअी जाती है। दिमागकी पूछ आजकल बहुत कम है। यह क्यों? क्योंकि दिमागको धन पैदा करनेमें सफलता नहीं मिल सकी है। अिस असफलताका कारण है अैसे कामोंकी कमी जिनमें बुद्धिकी जरूरत पड़े। मनुष्य-समाजमें सबसे अधिक कीमती और ताकतवर चीज दिमाग ही है। आज अुसकी मांग न होनेके कारण वह बेकार वस्तु बन गया है।

"किसानका धन अुसके हाथ हैं। जमींदारकी ताकत अुसकी जमीनमें है। जमीनका काम खेती है। हाथकी तालीमका नाम अुद्योग है। मैं जानता हूं कि खेतीको भी कुछ लोग अुद्योगमें ही गिनते हैं, परन्तु यदि हम अिनके विशिष्ट तत्त्वको देखें, तो समझमें आयेगा कि कृषि और अुद्योग अलग अलग वस्तुअें हैं।

"शारीरिक श्रमके अुस विभागको अुद्योग कहना मुनासिब होगा, जिसमें हाथोंकी तालीमके लिअे बराबर मौका मिलता जाय और जिसमें हमारी आमदनीके क्रमशः बढ़ते जानेकी संभावना हो। खेतीमें काम करनेवालोंके बारेमें यह नहीं कहा जा सकता। हल चलानेवाले, बीज बोनेवाले या खेत निरानेवालेको अपने हाथोंकी शिक्षाके कारण कुछ अधिक मजदूरी नहीं मिल सकेगी। खेतीके काममें अधिक आमदनी करनेकी निपुणता सीखनेकी गुंजाअिश नहीं है। अब किसी बढ़अीको ले लीजिये। वह छोटे-छोटे मामूली बक्स बनानेसे शुरू करता है। अभ्यासके जरिये वही आदमी शराबकी बोतलें रखनेका बक्स भी बनाना सीख सकता है। अब यह देखिये कि हाथसे काम करनेकी निपुणतामें अुन्नति होनेके साथ ही साथ अुसकी मजदूरी कितनी बढ़ गअी। आप विश्वास करें कि जिस आदमीने दो सांपोंवाला बक्स

बनाया है, जिनके फैले हुअे फणोंसे बोतलकी रक्षा होती है, अुसे हमने मामूली बक्स बनानेके लिअे ही नौकर रखा था। शुरूमें अुनकी मजदूरी छह आने रोज थी और दो वर्षोंमें वही क्रमशः बढ़कर रुपया रोज हो गअी और अुसके बनाये हुअे सामानकी बाजारकी कीमतसे अुसके मालिकको चार आने रोजका नफा भी हो जाता है। अिनसे दो सालके भीतर १३३) से ३६५) की वृद्धि देखनेमें आती है। . . . लेकिन हमारी जनसंख्याके ९८ फीसदी लोग खेतीका काम करते हैं। जमीनके रकबेकी बढ़ती होती नहीं। जनसंख्याकी वृद्धिके साथ साथ मजदूरोंकी बढ़ती होती जाती है। जिस जमीनसे ३० साल पहले ५ आदमियोंकी परवरिश होती थी, अुसी पर अब १२ से १५ आदमियोंकी बसर होती है। कुछ हालतोंमें अिस अूपरी बोझको देशान्तर जाकर कम किया जा सकता है, किन्तु अधिकतर मामलोंमें लाचार होकर प्राणशक्तिके कम प्रमाणसे ही काम चला लेना पड़ता है।"

अुपरोक्त लेख श्रीयुत मधुसूदन दासके 'बिहार यंग मेन्स अिन्स्टिटयूट' के सामने १९२४ में दिये गये भाषणका अेक अंश है। अिस भाषणको मैं अपने पास अितने दिनोंसे अिसलिअे रखे रहा कि जब समुचित अवसर मिलेगा तब अिसके आवश्यक अंगोंका मैं अुपयोग करूंगा। व्याख्यानदाताने जो कुछ कहा है अुसमें कोअी नयी बात नहीं है। परन्तु अिन बातोंकी असल कीमत अिसमें है कि मशहूर वकील होते हुअे भी अपने हाथों काम करनेको वे न केवल नफरतकी निगाहसे नहीं देखते हैं, बल्कि स्वयं बड़ी अुमरमें हाथकी कारीगरी अुन्होंने सीखी है और वह भी बतौर शौकके नहीं, बल्कि नौजवानोंको मेहनत-मशक्कतकी कीमत समझाने और यह बतलानेके लिअे कि अगर वे देशके व्यवसायोंकी ओर नजर नहीं फेरेंगे, तो अिस देशका भविष्य कुछ बहुत अच्छा नहीं होगा। श्रीयुत दासने कटकमें अेक चर्मशाला खुलवाअी है। यह कारखाना कितने ही युवकोंके लिअे, जो अुसके पहले महज अनजान मजदूर थे, शिक्षाकेन्द्र बना हुआ है। मगर सबसे बड़ा अुद्योग, जिसमें करोड़ोंकी मेहनतकी जरूरत है, सूत-कताअी ही है। जरूरत अिस बातकी है कि अिस देशके किसानोंकी अत्यन्त बड़ी संख्याको बुद्धिसे किया जानेवाला अेक और काम दिया जाय, जिससे अुनके हाथ और दिमाग दोनोंको तालीम मिले। अुनके लिअे जो सबसे अच्छी और सस्ती शिक्षा ढूंढ़ी जा सकती है वह यही है। सबसे सस्ती अिसलिअे कि जिससे तुरंत ही आमदनी भी होने लगती है। और यदि हमें भारतवर्षमें सार्वजनिक शिक्षाका प्रचार करना है, तो प्राथमिक शिक्षा लिखाअी, पढ़ाअी और हिसाबकी न होकर सूत कातने और अुससे संबंधित अन्य ज्ञानकी होगी। और जब अिसके जरिये

हाथों और आंखोंको पूरी तालीम मिल जाती है, तव कहीं वालक अिन तीनोंको सीखनेके लिअे तैयार होता है। मैं जानता हूं कि यह कुछ लोगोंको तो असंभव और कुछको विलकुल अव्यावहारिक मालूम होगा। मगर जो अैसा सोचते हैं वे हमारे करोड़ों भाअी-वहनोंकी हालत नहीं जानते। वे यह भी नहीं जानते कि हिन्दुस्तानके किसानोंके करोड़ों बच्चोंको शिक्षा देनेका क्या अर्थ है। और यह शिक्षा तव तक नहीं दी जा सकती जव तक शिक्षित भारतवासी, जिन्होंने अिस देशमें राजनीतिक जागृति पैदा की है, परिश्रमके गौरवको समझ नहीं लेते और जव तक हरअेक नौजवान चरखा चलानेकी कलाको सीखना और गांवोंमें फिरसे अुसे दाखिल करना अपना परम कर्तव्य नहीं मानता।

हिन्दी नवजीवन, ९–९–'२६; पृ० २९

## ५४

## श्रमकी प्रतिष्ठाको पहचानें

[ १६ फरवरी, १९१६ को मद्रासमें वाअि० अेम० सी० अे० के सभा-गृहमें दिये गये अेक भाषणसे।]

आप पूछ सकते हैं: "हमें अपने हाथोंका अुपयोग क्यों करना चाहिये?" और कह सकते हैं: "शारीरिक कार्य तो जो अपढ़ हैं अुनसे करवाया जाना चाहिये। मैं तो अपने समयका अुपयोग केवल साहित्य और राजनीतिक लेखोंके पठनमें ही कर सकता हूं।" मेरा खयाल है कि हमें श्रमकी प्रतिष्ठाको पहचानना है। अगर अेक नाअी या चमार कॉलेजमें जाता है, तो अुसे नाअी या चमारका धन्धा छोड़ नहीं देना चाहिये। मैं मानता हूं कि नाअीका धन्धा अुतना ही अच्छा और अुपयोगी है जितना कि डॉक्टरका धन्धा है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, पृ० ३८९; १९३३

## ५५

# कर्मयोगका सिद्धान्त

[श्री महादेव देसाईके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

अेक मुलाकातीने गांधीजीसे पूछा कि कर्मयोग पर आपका अनुचित आग्रह भले न हो, पर क्या आप अुस पर जरूरतसे ज्यादा जोर नहीं दे रहे हैं? गांधीजीने अिसका यह जवाब दिया:

"नहीं, यह बात बिल्कुल नहीं है; मैंने जो भी कहा है अुसका हमेशा वही अर्थ लिया है। अिसमें कोअी अत्युक्ति नहीं है। कर्मयोग पर जरूरतसे ज्यादा जोर देनेकी बात तो कभी हो ही नहीं सकती। मैं तो गीताके सिखाये हुअे सन्देशको ही दोहरा रहा हूं, जिसमें भगवान कृष्णने कहा है:

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥

अर्थात् मैं सतत जाग्रत रहकर कर्म न करूं, तो सारे मनुष्य मेरा अनुकरण करने लग जायंगे। क्या मैंने व्यवसायी लोगोंसे यह प्रार्थना नहीं की कि वे खुद चरखा चलाकर हमारे तमाम देशवासियोंके सामने अेक सुन्दर अुदाहरण रखें?"

"भगवान बुद्धकी तरह आपको कोअी मनुष्य मिले, तो क्या अुनसे भी आप यही बात कहेंगे?"

"अवश्य, अिसमें मुझे जरा भी हिचकिचाहट नहीं होगी।"

"तो फिर तुकाराम और ज्ञानदेव जैसे महान संतोंके विषयमें आप क्या कहेंगे?"

"अुनके संबंधमें विवेचन करनेवाला मैं होता कौन हूं?"

"पर बुद्धके संबंधमें आप अैसा करेंगे?"

"अैसा मैंने कभी नहीं कहा। मैंने तो सिर्फ यह कहा है कि अगर बुद्धकी कोटिके किसी मनुष्यसे प्रत्यक्ष मिलनेका मुझे सद्भाग्य प्राप्त हो, तो मैं अुससे यह कहनेमें जरा भी संकोच न करूंगा कि वह ध्यानयोगके स्थान पर कर्मयोगकी पुष्टि करे। अिन महान संतोंसे यदि मेरा मिलना हो, तो अिनसे भी मैं यही बात कहूंगा।"

हरिजनसेवक, २-११-'३५; पृ० २९८-९९

## ५६

# मेहनत नहीं तो खाना भी नहीं

कुछ दिन पहले मुझे कलकत्तेके अेक शानदार महलमें ले जाया गया था। अुसे 'मारवल पैलेस' कहते हैं। अुसमें वहुत कीमती और बहुत सुन्दर चित्रोंसे वढ़िया सजावट की गअी है। मालिक महलके सामने आंगनमें जो भी भिक्षुक वहां आयें अुन सबको खाना खिलाते हैं। मुझे कहा गया कि अुनकी संख्या कअी हजार होती है। वेशक, यह राजाओंका-सा दान है। अिससे दाताओंकी परोपकारकी वृत्ति प्रगट होती है जो प्रशंसनीय है। परन्तु दाताओंको जरा भी खयाल नहीं होता कि अेक तरफ अिस वेहाल मानवताको खिलाना और दूसरी तरफ अुस शानदार महलका मानो अुसकी दुर्दशाकी हंसी अुड़ाना कितना वेमेल है। अैसा ही अेक और दुःखद दृश्य मैं जब मसूरी गया था तव मैंने देखा था। वहां स्वागत-समितिने जिलेके भिखारियोंको भोजन करानेकी व्यवस्था की थी। 'मारवल पैलेस' में जिस भीड़ने मुझे घेर लिया था, वह जमीन पर बिछाअी हुअी मैली पत्तलों पर खा रहे भिखारियोंकी पंक्तिको पार करके आअी थी। कुछ लोगोंने अुन पत्तलोंको लगभग कुचल दिया था। मसूरीमें जरा अधिक सभ्य व्यवस्था थी, क्योंकि भीड़को भिखारियोंकी पंक्ति पार करके नहीं आना था। परन्तु जो मोटर गाड़ी मुझे वहां ले गअी थी, अुसे खाना खाते हुअे भिखारियोंकी पंक्तिके वीचसे धीरे धीरे ले जाया गया था। मुझे अिस विचारसे अधिक अपमान महसूस हुआ कि वह सब मेरे सम्मानमें किया गया था; क्योंकि जैसा वहांके अेक मित्रने कहा, 'मैं गरीबोंका हितैषी हूं।' अवश्य ही मेरी यह मित्रता या हितैषिता बड़ी भद्दी चीज है, यदि मैं मानव-समाजके बड़े भागके भिखारी बने रहनेमें सन्तोष मानूं। मेरे मित्रोंको यह पता नहीं है कि भारतके कंगालोंकी हितैषिताने मुझे अितना कठोर-हृदय बना दिया है कि अुनके बिलकुल भिखमंगे बन जानेकी अपेक्षा मैं अुनका सर्वथा भूखों मर जाना खुशीसे पसंद करूंगा। मेरी अहिंसा किसी अैसे तन्दुरुस्त आदमीको मुफ्त खाना देनेका विचार बरदाश्त नहीं करेगी, जिसने अुसके लिअे अीमानदारीसे कुछ न कुछ काम न किया हो; और मेरा वश चले तो जिन सदाव्रतोंमें मुफ्त भोजन मिलता है, वे सब सदाव्रत मैं बन्द कर दूं। अिससे राष्ट्रका पतन हुआ है और सुस्ती, वेकारी, दंभ और अपराधोंको भी प्रोत्साहन मिला है। अिस प्रकारका अनुचित दान देशकी भौतिक या आध्यात्मिक सम्पत्तिकी कुछ भी वृद्धि नहीं करता और दाताके मनमें पुण्यात्मा होनेका झूठा भाव पैदा करता है। क्या ही

अच्छी और बुद्धिमानीकी बात हो, यदि दानी लोग अैसी संस्थायें खोलें जहां अुनके लिअे काम करनेवाले स्त्री-पुरुषोंको स्वास्थ्यप्रद और स्वच्छ हालतमें भोजन दिया जाय। मेरा खुदका तो यह विचार है कि चरखा या कताअीसे सम्बन्धित क्रियाओंमें से कोअी भी क्रिया आदर्श धन्धा होगी। परन्तु अुन्हें स्वीकार न हो तो वे कोअी भी दूसरा काम चुन सकते हैं। जो भी हो, नियम यह होना चाहिये कि 'मेहनत नहीं तो खाना भी नहीं।' प्रत्येक शहरके लिअे भिखमंगोंकी अपनी अपनी अलग कठिन समस्या है, जिसके लिअे धनवान जिम्मेदार हैं। मैं जानता हूं कि आलसियोंको मुफ्त भोजन करा देना बहुत आसान है, परन्तु अैसी किसी संस्थाको संगठित करना बहुत कठिन है जहां किसीको खाना देनेसे पहले अुससे अीमानदारीसे काम कराना जरूरी हो। आर्थिक दृष्टिसे, कमसे कम शुरूमें, लोगोंसे काम लेनेके बाद अुन्हें खाना खिलानेका खर्च मौजूदा मुफ्तके भोजनालयोंके खर्चसे ज्यादा होगा। लेकिन मुझे पक्का विश्वास है कि यदि हम तेजीसे देशमें बढ़नेवाले आवारागर्द लोगोंकी संख्यामें वृद्धि नहीं करना चाहते, तो अन्तमें यह व्यवस्था अधिक सस्ती पड़ेगी।

यंग अिंडिया, १३-८-'२५; पृ० २८२

## ५७

## शर्मनाक

अभी कलकी ही बात है, लगभग पचीस वर्षका अेक हट्टा-कट्टा नौजवान मेरे पास आया। अुसने मुझसे पूछा, क्या दो-तीन दिन मैं आपके पास ठहर सकता हूं? वह बहराअिचका रहनेवाला था। घर पर अुसके यहां कुछ अेकड़ जमीन भी है। बम्बअी कांग्रेसमें गया था तभीसे बराबर भ्रमण कर रहा है और अपरिचित लोगोंके सहारे अुसका निर्वाह होता है। रामानुजियोंमें वह हिलता-मिलता है। जैसा अुसने मुझे बताया, वे अुसे खाना और थोड़ा-बहुत रेलभाड़ा देते हैं। जब मैंने अुससे कहा कि अिस तरह दूसरोंके दान पर रहना ठीक नहीं है, तो अुसने जवाब दिया — 'मुझे तो अपने खाने खर्चके लिअे भीख मांगनेमें कोअी बुराअी नहीं मालूम पड़ती, क्योंकि मैं लोगोंकी सेवा करनेकी आशा रखता हूं।' मतलब यह कि गुजारा तो पहले ही मांग लें, फिर किसी समय अुसके बदलेमें ब्याज-सहित सेवा कर दें। अिसमें अुसे अनौचित्य कुछ भी नहीं मालूम पड़ा। चूंकि वह खानेके वक्त आया था, अिसलिअे सबके साथ अुसे भी खाना दिया गया। लेकिन अुसके बाद मैंने अुससे कह दिया कि वह हमारे साथ तभी रह सकता है जब कि हमारे

साथ सारे दिन जो काम अुसे दिया जाय अुसे करनेको वह तैयार हो। तबसे अभी तक हममें से किसीको भी वह दिखाअी नहीं दिया है।

मैं चाहता हूं कि अैसा मामला फिरसे मेरे सामने न आये तो अच्छा। नौजवान स्त्री-पुरुषोंको अपने लिअे भीख मांगनेमें शर्म आनी चाहिये। शारीरिक श्रमके लिअे शर्मका जो झूठा भाव हममें आ गया है, अगर अुससे हम मुक्त हो जायें तो जिनमें थोड़ी-बहुत भी बुद्धि है, अैसे नौजवान स्त्री-पुरुषोंके लिअे कामकी कोअी कमी नहीं है। काफी काम अुनके लिअे पड़ा हुआ है।

हरिजनसेवक, ८–३–'३५; पृ० २१–२२

## ५८

## पूर्ण प्रायश्चित्त

कुछ समय हुआ मैंने अिस पत्रमें सार्वजनिक दान पर निर्वाह करनेवाले बहराअिचके अेक नवयुवकके विषयमें लिखा था। बादको वह युवक पूरा पश्चात्ताप करके मेरे पास लौट आया, यह बात भी अिस पत्रमें लिखी जा चुकी है। अब भी वह मगनवाड़ीमें रहता है और हमारे साथ काम करता है। शारीरिक श्रममें वह अपना पूरा हिस्सा देता है। कुछ ही दिनोंमें वह बहराअिच जाने लायक किरायेका पैसा कमा लेगा। पर किरायेका पैसा कमाकर मगनवाड़ीसे तुरन्त ही चले जानेकी अुसकी अिच्छा नहीं है। अुसका विचार यहां रहकर कुछ सीखनेका और कुछ अधिक लाभ अुठानेका है। अुसके सम्बन्धमें जो आलोचना हुअी अुससे अुसके बहराअिचके मित्रोंका दिल दुखा है। अिस युवकका नाम अवधेश है। अवधेश मेरी की हुअी आलोचनाका औचित्य तो स्वीकार करता है, पर अपने बचावमें यह कहता है कि वह दान ले-लेकर यात्रा करने या खाने-पीनेमें कोअी पाप जैसी चीज नहीं मानता था, क्योंकि अुसके कथनानुसार रामानुज संप्रदायमें अैसी प्रथा है। किन्तु अब चूंकि अुसने अपनी गलती मान ली है, अिसलिअे फिरसे अुस भूलको न करनेका अुसने मुझे वचन दिया है। अिस प्रकार अुसने अपनी भूलसे लाभ अुठाया है और जो कुछ भी कलंक अुसे लगा हुआ था, अुसे अुसने मेरी आलोचनासे धो डाला है। हम चाहते हैं कि दूसरे बहुतसे लोग, जो अवधेशकी तरह दान पर गुजर करते हैं, अिस दृष्टान्तसे लाभ अुठायें और अिसी तरह अपने जीवनमें नया अध्याय आरम्भ करें। मनुष्यसे भूल होना स्वाभाविक है। पर गौरव मनुष्यका अिसीमें है कि अपनी भूलका पता चल जाय, तो वह अुसे सुधारने और अुसे करनेका दृढ़ संकल्प कर ले।

वक, १९–४–'३५; पृ० ७४–७५

## ५९
## रोटीकी समस्या

अेक सज्जन लिखते हैं कि बहुतसे बंगाली जिसलिअे राष्ट्रीय काममें नहीं लग सकते और अपनी गुलामीकी बेड़ियां नहीं तोड़ सकते कि अुनके सामने रोटीका सवाल है। हम पढ़े-लिखे लोगोंने पेटके लिअे अुद्योग करनेकी कलासे हाथ धो लिया है। जुलाहों, धुनियों और सूतकारोंकी मजदूरीके बढ़ने हुअे सचमुच रोटीका सवाल बाकी रही नहीं जाता। आठ घंटे बुनाअी करनेवाला, शुरुआतमें ही, कमसे कम १) रोज पैदा कर सकता है। होशियार जुलाहे आज २) रोज पैदा करते हैं। हमें केवल 'कलम' के बल पर ही रोजी कमानेका ध्यान नहीं करते रहना चाहिये।

हिन्दी नवजीवन, २–९–'२१; पृ० १८

## ६०
## शरीर-श्रम ही अेकमात्र हल

मुझसे मिलनेके लिअे आये हुअे कअी भाअियोंके साथ चर्चा करके निर्मल-बाबूने जो सवाल तैयार किया है, अुसका जवाब मैं अब देता हूं। सवाल जिस तरह है: "रोटीके लिअे मजदूरी करनेके सिद्धान्तसे आपका क्या मतलब है और मौजूदा परिस्थितिमें जिस सिद्धान्तको किस तरह लागू किया जा सकता है?" रोटीके लिअे मजदूरी करनेके सिद्धान्तका अर्थशास्त्र जिन्दगीका चेतना-भरा रास्ता है। जिसका मतलब यह है कि हरअेक अिन्सानको अपने खाने और अपने कपड़ोंके लिअे खुद शरीर-श्रम करना चाहिये। जिस रोटीके लिअे मजदूरीके सिद्धान्तकी कीमत और अुसकी जरूरतको मैं अगर लोगोंके गले अुतार सकूं, तो कहीं भी खाने या कपड़ेकी तंगी न रहे। श्रद्धाके साथ अितना कहनेमें मुझे जरा भी हिचकिचाहट नहीं होती कि अगर लोग खेतोंमें जाकर मजदूरी न करें और खुद न कातें या न बुनें, तो अुनके भूखों मरने या नंगे घूमनेमें जरा भी बुराअी नहीं है। हम अखबारोंमें पढ़ते हैं कि आज सारा हिन्दु-स्तान कपड़ेके बिना नंगे रहने और खुराकके बिना भूखों मरनेके किनारे खड़ा है। अगर लोग मेरी योजनाको मंजूर कर लें तो वे जल्दी ही देखेंगे कि हिन्दुस्तानमें काफी खुराक और आम जनता द्वारा खुद तैयार की हुअी काफी खादी आसानीसे मिल सकती है। बेशक जिस काममें आम जनताको यह सीखनेमें मदद देनेकी जरूरत है कि वह किस तरह अच्छेसे अच्छे तरीकेसे होशियारीके साथ जमीनका अुपयोग करे। साथ ही अुसे कातना और बुनना सिखानेवाले शिक्षक

और ये दोनों काम करनेके साधन मिलने चाहिये। बंगालमें पानी पुरानेके काममें गहरा रस लेनेवाले यहांके भूतपूर्व गवर्नर मि० केसीसे अपने अिस तरीकेके बारेमें चर्चा करते हुअे मुझे संकोच नहीं हुआ था। मि० केसीकी योजना बहुत बड़ी है और अुस पर अमल करनेमें बरसों और लाखों रुपयेकी जरूरत है। अिससे अुलटे मेरा कार्यक्रम पूरी तरह कामका होते हुअे भी लम्बा-चौड़ा या खर्चीला नहीं है।

हरिजनसेवक, २१-९-'४७; पृ० २७५

## ६१

## काम ही गरीबीका अेकमात्र अिलाज है

[श्री महादेव देसाअीके 'साप्ताहिक पत्र'से।]

ग्रामसेवक-विद्यालयके विद्यार्थियोंसे बातचीत करते हुअे अेक दिन गांधीजीने बताया कि हिन्दुस्तानकी बेकारीमें तथा पश्चिमके देशोंमें फैली हुअी बेकारीमें क्या भेद है। अुन्होंने कहा, "अेक तरहसे हमारा बेकारीका सवाल अुतना नाजुक नहीं है जितना कि पश्चिमी देशोंमें है। क्योंकि रहन-सहन भी तो अेक महत्त्वपूर्ण बात है। पश्चिममें बेकार होने पर भी आदमीको और लोगोंकी भांति गरम कपड़े, बूट, मोजे वगैरा तो जरूरी होते ही हैं। फिर सर्द आबोहवावाले मुल्कोंमें गरम मकान वगैरा बहुतसी चीजें होनी चाहिये। तो अुनकी भी अुसे जरूरत रहती ही है। हमें अिन सबकी जरूरत नहीं होती।

"हमारे देशकी भयंकर गरीबी और बेकारी देखकर सचमुच कअी बार मुझे रुलाअी तक आ गअी है। मगर साथ ही मुझे यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि हमारा अज्ञान और लापरवाही अिसके लिअे बहुत हद तक जिम्मेवार है। हम असलमें यह जानते ही नहीं कि मेहनत करना कितने गौरवकी चीज है। मिसालके तौर पर, अेक चमार सिवा जूते बनानेके और कोअी काम करना पसन्द नहीं करेगा; वह समझता है कि और सब काम नीचे हैं। यह गलत खयाल दूर हो जाना चाहिये। जो अीमानदारीके साथ अपने हाथ-पैरोंसे काम लेना चाहते हैं, अुनके लिअे हिन्दुस्तानमें काफी काम पड़ा हुआ है। परमात्माने हरअेक आदमीको अैसी शक्ति और बुद्धि दे रखी है जिसकी मददसे वह अितना पैदा कर सकता है कि अुसके खाते-खाते भी बच जाय। और जो भी अपने अिन गुणोंसे काम लेना चाहेगा अुसे काम तो मिल ही जायगा। अीमानदारीके साथ अपनी रोजी कमानेकी अिच्छा रखनेवालेके लिअे कोअी भी काम नीच नहीं है। सवाल यह है कि आदमी खुद अीश्वरके दिये हुअे हाथ-पैर हिलानेको तैयार है या नहीं?"

हरिजनसेवक, १९-१२-'३६; पृ० ३४५-४६

६२

# ‘अेक महान समता-स्थापक’

[श्री चन्द्रशेखर शुक्लके ‘साप्ताहिक पत्र’ से।]

मजदूर अपने ध्येयके प्रति सक्रिय सहानुभूति दिखलानेमें पीछे नहीं है। बिलासपुरमें बी० अेन० रेलवे मजदूर-संघने गांधीजीको भाषण देनेके लिअे निमंत्रित किया और हरिजन-सेवाके लिअे पांच सौ रुपयोंकी थैली भेंट की। गांधीजी यह देखकर बहुत खुश हुअे कि मजदूरोंने ध्येयके प्रति अपनी सहानुभूतिके चिह्नस्वरूप अपनी गाढ़ी कमाअीके अेक हिस्सेका त्याग किया। अिस अवसर पर दिये अुनके पूरे भाषणको मैं नीचे देता हूं :

अगर आप जानते न हों तो अब जान लें कि जबसे मैं दक्षिण अफ्रीका गया तभीसे मेरा मजदूरोंसे गहरा संबंध रहा है। भारतमें या संसारके किसी भी भागमें अुन्होंने मुझे अपना अेक मजदूर भाअी मान लिया है और अपना ही समझकर मेरा स्वागत किया है। आपको शायद यह जानकर अचंभा होगा कि लंकाशायरमें भी मजदूरोंने स्वयंप्रेरणासे मुझे अपनेमें से अेक मान लिया और सैकड़ों-हजारोंकी संख्यामें मुझे घेर लिया था। हमारे बीच अेकमात्र अंतर यह है कि मैं अपनी पसन्दसे मजदूर बना हूं, जब कि आप परिस्थितिवश मजदूर बने हैं और अगर संभव हो तो शायद आप मालिक बनना चाहेंगे। मैंने मालिक बननेकी महत्त्वाकांक्षा शुरूमें ही छोड़ दी थी, क्योंकि अुस हालतमें मैं अेक छोटे वर्गका आदमी होता और कंगालों, अनाथों, अधभूखों, नंगों तथा सबसे छोटोंके साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर सकता था, जैसा कि आज मैं अपनी योग्यताके अनुसार करता हूं। मैं चाहता हूं कि मजदूर अपनी स्थिति पर दुःख न मानें, अुससे घृणा तो हरगिज न करें और श्रमका गौरव समझें।

यह सर्वथा अुचित है कि आप हरिजनोंके प्रति अपनी सहानुभूतिके चिह्न-स्वरूप अपनी थैली भेंट कर रहे हैं। अुनके बराबर किसने कष्ट भोगे हैं? अुनका स्तर हमारे समाजमें सबसे नीचा है। जिन भयंकर मुसीबतों और अभावोंमें होकर अुन्हें गुजरना पड़ता है, अुनकी कल्पना अैसे लोगोंको कभी नहीं हो सकती, जो अुनके शिकार नहीं बने हैं? दूसरे मजदूर दौलत जमा करके किसी दिन मालिक बननेकी और अिस प्रकार अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ानेकी आकांक्षा रख सकते हैं। परन्तु हरिजन अैसी महत्त्वाकांक्षा कभी नहीं रख सकते। अुन पर तो अछूतपनका कलंक मांके पेटसे ही लग जाता है। वे जन्मसे ही बहिष्कृत होते हैं और मृत्युपर्यन्त बहिष्कृत रहते हैं। अुन्हें समाजसे बिलकुल अलग गन्दे स्थानोंमें रहना पड़ता है और जीवनकी जो सुख-सुविधाअें औरोंको प्राप्त होती हैं अुनसे वे वंचित रखे जाते हैं। अीश्वरकी मुफ्त देन पानी तक अुन्हें नहीं मिलता।

मैं मजदूर-संघसे कहता हूं कि वह हरिजनों और आपके बीचके तमाम भेदभाव मिटा दे। मैं यह अपील विचारपूर्वक कर रहा हूं, क्योंकि अहमदाबादके मिल-मजदूरोंके सीधे संपर्कमें आनेके कारण मैं जानता हूं कि मजदूर हरिजनों और गैर-हरिजनोंके बीच भेदभाव जरूर रखते हैं। मैं और सबकी अपेक्षा मजदूरोंसे ये भेदभाव मिटा देनेकी अधिक आशा रखता हूं। मेरी यह गहरी श्रद्धा रही है कि हम किसी दिन मजदूरोंके द्वारा साम्प्रदायिक अेकता जरूर प्राप्त करेंगे। मैं श्रमको अेकता पैदा करनेका जबरदस्त साधन मानता हूं। वह महान समता-स्थापक है। मजदूरोंमें साम्प्रदायिक फूट होना शर्मकी बात है, क्योंकि वे सब अपने पसीनेकी कमाअी खाते हैं और अिसलिअे वे सब अेक विशाल भ्रातृ-समाजके अंग हैं। अिसलिअे वे अस्पृश्यताको संपूर्णत: मिटाकर अिसका आरंभ करें। यह साम्प्रदायिक अेकताकी दिशामें अेक बड़ा कदम होगा। अेक बार हरिजनोंके सिरसे अस्पृश्यताका कलंक मिट जायगा तो हिन्दुओं, मुसलमानों और देशकी अन्य जातियोंके बीच व्यापक अेकताका रास्ता खुल जायगा।

हरिजन, ८-१२-'३३; पृ० ५-६

## ६३

## स्वावलम्बन और परावलम्बन

स्वाश्रयके मानी है किसीकी भी मददके बिना अपने पांवों पर खड़े रहनेकी शक्ति। अिसका मतलब यह नहीं कि दूसरोंकी सहायताके संबंधमें मनुष्य लापरवाह हो जाय अथवा अुसका त्याग करे अथवा दूसरोंकी मदद न चाहे या न मांगे। परन्तु दूसरोंकी मदद चाहने पर भी, मांगने पर भी यदि वह न मिल सके तो भी जो मनुष्य स्वस्थ रह सकता है, स्वमानकी रक्षा कर सकता है वह स्वाश्रयी है। जो किसान दूसरोंकी मदद मिल सकती हो तो भी स्वयं ही हल जोते, अनाज बोये, फसल काटे, खेतीके औजार तैयार करे, अपने कपड़े आप ही काते, बुने या सीये, अपने लिअे अनाज भी स्वयं तैयार करे और घर भी स्वयं तैयार करे, वह या तो बेवकूफ होगा, अभिमानी होगा अथवा जंगली होगा। स्वाश्रयमें शरीर-श्रम तो आ ही जाता है। अर्थात् प्रत्येक मनुष्यको अपनी आजीविकाके लिअे आवश्यक शरीर-श्रम करना ही चाहिये। अिसलिअे जो मनुष्य आठ घंटे खेतीका काम करता है अुसे जुलाहा, बढ़अी, लुहार आदि कारीगरोंकी मदद लेनेका अधिकार है, अुनसे मदद लेनेका अुसका धर्म है और अुसे वह मदद सहज ही में मिल सकती है। और बढ़अी, लुहार आदि कारीगर वर्ग किसानकी मेहनत लेकर अुससे अन्नादि प्राप्त कर सकते हैं। जो आंख

हाथकी सहायताके बिना ही काम चला लेनेका अिरादा रखता है वह स्वाश्रयी नहीं है बल्कि अभिमानी है। और जिस प्रकार हमारे शरीरमें हमारे अवयव अपने अपने कार्यमें स्वाश्रयी हैं, फिर भी अेक-दूसरेकी मदद लेनेके कारण परावलम्बी हैं, वैसे ही हिन्दुस्तान रूपी शरीरके हम लोग तीस कोटि अवयव हैं। सबको अपने अपने क्षेत्रमें स्वाश्रयी बननेका धर्म पालन करना चाहिये और अपनेको राष्ट्रका अंग सिद्ध करनेके लिअे अेक-दूसरेके साथ मददका विनिमय भी करना चाहिये। यह होगा तभी तो राष्ट्रका विकास हुआ गिना जा सकेगा और तभी हम राष्ट्रवादी गिने जा सकेंगे।

हिन्दी नवजीवन, ८–४–'२६; पृ० २६९

## ६४

## नौकरों पर अवलम्बन

घरेलू नौकरोंकी संस्था पुरानी है। परन्तु मालिकका नौकरोंके प्रति रवैया समय-समय पर बदलता रहा है। कुछ लोग नौकरोंको परिवारके आदमी समझते हैं और कुछ अुन्हें गुलाम या जंगम संपत्ति मानते हैं। संक्षेपमें सामान्यतः नौकरोंके प्रति समाजका जो रवैया होता है, वह अिन दो आत्यंतिक विचारोंके बीचमें आ जाता है। आजकल सब जगह नौकरोंकी बड़ी मांग है। अुन्हें अपने महत्त्वका पता लग गया है और अिसलिअे कुदरती तौर पर वे वेतन और नौकरीके बारेमें अपनी ही शर्तें रखते हैं। यदि अिसके साथ ही हमेशा अुन्हें अपने कर्तव्यका ज्ञान हो और वे अुसका पालन भी करें तो ठीक हो। अुस हालतमें वे नौकर नहीं रहेंगे और अपने लिअे परिवारके सदस्योंका दरजा प्राप्त कर लेंगे। परन्तु आजकल तो सबका हिंसामें विश्वास हो गया है। तब फिर नौकर अुचित ढंगसे अपने मालिकोंके परिवारके सदस्योंका दरजा कैसे प्राप्त कर सकते हैं? यह प्रश्न अैसा है जो पूछा जा सकता है।

मेरी रायमें जो आदमी दूसरोंका सहयोग चाहता है और अुन्हें सहयोग देना चाहता है, अुसे नौकरों पर निर्भर नहीं रहना चाहिये। यदि नौकरोंकी तंगीके वक्त किसीको नौकर रखना पड़ता है, तो अुसे मुंहमांगा वेतन देना पड़ता है और दूसरी सब शर्तें माननी पड़ती हैं। नतीजा यह होता है कि वह मालिक होनेके बजाय अपने नौकरका नौकर हो जाता है। यह न मालिकके लिअे अच्छा है, न नौकरके लिअे। परन्तु अगर किसी व्यक्तिको दूसरे मानव-बन्धुसे गुलामी नहीं बल्कि सहयोग चाहिये, तो वह न केवल अपनी ही सेवा करेगा बल्कि अुसकी भी करेगा जिसके सहयोगकी अुसे

जरूरत है। अिस सिद्धान्तका विस्तार करनेसे मनुष्यका परिवार अुतना ही विशाल हो जायेगा जितना यह संसार है, और अपने मानव-बन्धुओंके प्रति अुसके रवैयेमें वैसा ही परिवर्तन हो जायगा। वांछित अुद्देश्यकी प्राप्तिका दूसरा कोअी मार्ग नहीं है।

जो अिस सिद्धान्त पर अमल करना चाहता है, वह छोटे-छोटे प्रारम्भ करके सन्तोष मान लेगा। मनुष्यमें हजारोंका सहयोग ले सकनेकी योग्यता होते हुअे भी अुसमें अितना संयम और स्वाभिमान होना ही चाहिये कि वह अकेला खड़ा रह सके। अैसा व्यक्ति कभी सपनेमें भी किसी आदमीको अपना दास नहीं समझेगा और न अुसे अपने नीचे दवा कर रखनेकी कोशिश करेगा। सच तो यह है कि वह बिलकुल भूल जायगा कि वह अपने नौकरोंका मालिक है और अुन्हें अपने स्तर पर लानेकी पूरी कोशिश करेगा। दूसरे शब्दोंमें, जो चीज दूसरोंको नहीं मिल सके अुसके बिना काम चलाकर अुसे सन्तोष कर लेना चाहिये।

हरिजन, १०-३-'४६; पृ० ४०

## ६५

# काम और फुरसतका दर्शन

[श्री महादेव देसाअीके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

आजकल गांधीजीसे मिलनेके लिअे जो लोग आते हैं, वे ज्यादातर शारीरिक श्रमकी नीरसता अथवा शारीरिक श्रमके गौरव आदिकी ही बातें करते हैं। सादीसे सादी चीजें भी गांधीजीके हाथमें ले लेनेके कारण अब लोगोंको रहस्यमय मालूम पड़ने लगी हैं। वे सोचमें पड़ जाते हैं और पूछते हैं: 'अिसका मतलब क्या होगा?' लेकिन सच बात तो यह है कि ग्रामोद्योग-संघके अुद्देश्य और कार्यको हरअेक व्यक्ति अपनी निजी संकुचित दृष्टिसे ही देखता है, और गांधीजीके अिस नये कार्यक्रमके कारण मुझे अपने जीवनमें क्या क्या फेरफार करने पड़ेंगे, हरअेक अिसी बातका विचार करता है।...

अेक मित्रने गांधीजीसे पूछा: "लोगोंको फुरसतका समय मिलना चाहिये या नहीं, अिसका तो आप खयाल ही नहीं करते। गरीब लोग बहुत ज्यादा मेहनत-मशक्कत करते रहेंगे, तो अुन्हें मानसिक विचार द्वारा बुद्धिको बढ़ाने और मनोरंजन द्वारा आनन्द प्राप्त करनेके लिअे समय ही नहीं मिलेगा। पर आप तो अुन्हें और ज्यादा काम करनेकी ही शिक्षा दे रहे हैं।"

"सचमुच? मैं जिन लोगोंके बारेमें सोच रहा हूं, अुनके पास तो अितनी फुरसत है कि अुन बेचारोंकी समझमें ही नहीं आता कि अुसका

क्या अुपयोग करें। अिस फुरसतके ही कारण अुनमें अैसी सुस्ती आ गअी है, जिसने अुन्हें निर्जीव पत्थरके समान जड़ बना दिया है। अुनमें अितनी जड़ता आ गअी है कि कितने ही लोग तो जरा-सा हिलना-डुलना भी नहीं चाहते।"

"जहां जरूरत हो वहां आप लोगोंको जरूर काम पर लगािअये। पर आप तो अुनसे अपने हाथों अपने चावल और अनाजकी कुटाअी-पिसाअी करनेके लिअे भी कहते हैं। क्या यह अुनसे सूखा, नीरस काम करानेकी बात नहीं है?"

"अुन्हें आलस्यमें अपना समय बिताना जितना नीरस मालूम होता है अुससे ज्यादा नीरस यह काम नहीं है। और जब वे यह समझ जायेंगे कि अिससे हमें न सिर्फ कुछ पैसोंकी कमाअी ही हो जाती है, बल्कि अिससे हमारी और हमारे देशवासियोंकी तन्दुरुस्ती भी ठीक रहती है, तो अुन्हें यह काम नीरस नहीं लगेगा। आधुनिक कल-कारखानोंमें काम करनेसे ज्यादा नीरस तो निश्चय ही यह काम नहीं है। कोअी काम कितना ही नीरस क्यों न हो, अगर मनुष्यको अुसमें यह समझनेका आनन्द मिल सकता हो कि मैंने कुछ निर्माण किया है, तो अुसे वह नीरस नहीं लगेगा। आप किसी जूतोंके कारखानेमें जािअये। वहां कुछ आदमी जूतोंके तल्ले बना रहे होंगे, कुछ अूपरी हिस्से और कुछ अन्य काम कर रहे होंगे। वह काम नीरस मालूम देगा, क्योंकि वे लोग बुद्धि लगाकर काम नहीं करते। लेकिन जो मोची या चमार स्वयं पूरा जूता बनाता है अुसे अपना काम जरा भी नीरस नहीं मालूम पड़ेगा। क्योंकि अुसके काम पर अुसकी कुशलताकी छाप होगी और अुसे अिस बातका आनन्द होगा कि अपने हाथों मैंने कोअी चीज बनाअी है। कौन काम किस भावनासे किया जाता है, अिसका बहुत असर पड़ता है। अपने व्यवहारके लिअे पानी भरने और लकड़ी चीरनेमें मुझे कोअी आपत्ति न होगी, बशर्ते कि किसीकी जोर-जबरदस्तीसे नहीं बल्कि अपनी बुद्धिसे सोच-समझकर मैं अैसा करूं। कोअी भी श्रम क्यों न हो, अगर वह बुद्धिपूर्वक और किसी अूंचे अुद्देश्यको सामने रखकर किया जाय, तो वह अुत्पादक बन जाता है और अुससे आनन्द भी प्राप्त होता है।"

"लेकिन जब आप सारे दिन मनुष्यके शारीरिक श्रम करते रहने पर ही जोर देते हैं, तब क्या अुसकी बुद्धिको जड़ बनानेका जोखिम आप अपने अूपर नहीं ले रहे हैं? आप दिनभरमें कितने घंटेका शारीरिक श्रम आवश्यक समझते हैं?"

"मुझे खुदको तो आठ घंटे काम करनेमें कोअी आपत्ति नहीं होगी।"

"मैं आपकी बात नहीं करता। आप तो आठ घंटे चरखा कातकर भी आनन्द प्राप्त कर सकते हैं, यह मैं जानता हूं। पर आपकी बात तो अपवादरूप है। क्योंकि आपमें तो अितनी बुद्धि और अुत्पादक शक्ति है कि बाकीके समयमें भी आप अुनका बहुत कुछ अुपयोग कर सकते हैं।"

"नहीं, मैं तो चाहता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति आठ घंटे मेहनत करके आनन्द प्राप्त करे। सब कुछ काम करनेकी भावना पर निर्भर है। आठ घंटे लगनके साथ शुद्ध शारीरिक श्रम करनेके बाद भी बौद्धिक कामोंके लिअे काफी समय बच रहता है। मेरा अुद्देश्य तो जड़ता और आलस्यको दूर करना है। जब मैं संसारको यह कह सकूंगा कि भारतका हरअेक ग्रामवासी अपने पसीनेसे २० रुपया महीना कमा रहा है, तब मुझे परम संतोष प्राप्त होगा।"

हरिजनसेवक, २२-३-'३५; पृ० ३३-३४

## ६६
# फुरसतका मोह

[श्री महादेव देसाअीके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

कुछ समय पहले मैंने श्री अेल० पी० जैक्सकी 'फुरसतके समय' की यह परिभाषा अुद्धृत की थी: "मनुष्यके जीवनका वह भाग जिसमें अुसकी आत्मा पर अधिकार जमानेके लिअे घोर देवासुर-संग्राम होता है," और अुनके दिये हुअे आंकड़ों परसे यह दिखानेका प्रयत्न किया था कि फुरसतके समयकी विज्ञान और कला कितनी कठिन है। श्री बर्ट्रैण्ड रसेल, जो प्रत्येक नागरिकके लिअे काफी फुरसतका समय निश्चित करा देनेके लिअे बहुत चिंतित हैं, सिर्फ चार घंटेका शरीर-श्रम रखना चाहते हैं। लेकिन अुस दिन गांधीजीसे बात करते हुअे अेक आदरणीय मित्रने आश्चर्यचकित होकर कहा: "क्या फुरसतके समयका प्रश्न सचमुच अितना मुश्किल है? आठ घंटे रोजके शारीरिक श्रम पर आप क्यों जोर देते हैं? अेक सुव्यवस्थित समाजमें क्या यह संभव नहीं कि केवल दो घंटे रोज शरीर-श्रम कराया जाय और बौद्धिक तथा कलात्मक प्रवृत्तियोंके लिअे काफी फुरसतका समय छोड़ दिया जाय?"

"हम यह जानते हैं कि श्रमजीवी और मानसिक श्रम करनेवाले दोनों ही वर्गोंके लोग, जिन्हें यह सब फुरसतका समय मिलता है, अुसका अच्छेसे अच्छा अुपयोग नहीं करते। सच पूछो तो हमने भी अकसर 'खाली दिमाग शैतानका घर' की कहावत ही चरितार्थ होते देखी है।"

"नहीं, फुरसतका समय हम बेकार नहीं जाने देंगे। मान लीजिये, हम दिनमें दो घंटे तो शारीरिक श्रम करें और छह घंटे मानसिक श्रम, तो क्या यह राष्ट्रके लिये हितकर न होगा?"

"मैं नहीं जानता कि आपकी अिस योजना पर कहां तक अमल हो सकेगा। मैंने अिसका हिसाब लगाकर तो नहीं देखा, पर अगर कोअी मनुष्य मानसिक श्रम राष्ट्रके लिये नहीं बल्कि केवल अपने लाभके लिये करेगा, तो मुझे अिसमें संदेह नहीं कि यह योजना विफल ही होगी। हां, सरकार अुसके दो घंटेके शरीर-श्रमके लिये अुसे काफी मजदूरी दे दे और फिर अुसे बगैर कुछ दिये दूसरा काम करनेके लिये मजबूर करे, तो अलबत्ता वह अेक अच्छी चीज हो सकती है। पर वह तो सरकारकी अैसी जोर-जबरदस्तीकी आज्ञासे ही हो सकता है, जो सब पर अेकसी लागू हो।"

"अुदाहरणके लिये, आप अपनेको ही ले लीजिये। आप आठ घंटेका शारीरिक श्रम तो रोज कर नहीं सकते। आठ घंटे या अिससे भी ज्यादा आपको मानसिक श्रम करना पड़ता है। आप अपने फुरसतके समयका दुरुपयोग तो नहीं करते?"

"यह तो अनिवार्य रूपसे करना पड़ता है। फुरसत अिसमें कहां है? अिस फुरसतमें मैं टेनिस वगैरा खेलने तो नहीं जाता। लेकिन अपने अुदाहरणको लेकर मैं आपसे यह कहूंगा कि अगर हम अपने हाथसे आठ घंटे रोज मेहनत करते होते, तो हमारी मानसिक शक्तियोंका अितना अच्छा विकास होता कि जिसकी कोअी हद नहीं। हमारे मनमें अेक भी निरर्थक विचार न अुठता। यह बात नहीं कि मेरा मन निरर्थक विचारोंसे अेकदम मुक्त हो गया है। आज भी मेरी जो कुछ प्रगति है, वह अिस कारण है कि अपने जीवनमें बहुत पहले मैंने श्रमका महत्त्व जान लिया था।"

"पर अगर शरीर-श्रमकी स्वभावतः अैसी महिमा है, तो हमारे यहांके लोग तो आठ घंटेसे भी ज्यादा मेहनत करते हैं। पर अिसका अुनकी मानसिक पवित्रता या दृढ़ता पर अैसा कोअी अुल्लेखनीय असर तो पड़ा नहीं है?"

"केवल शारीरिक या मानसिक श्रम अपने आपमें कोअी शिक्षा नहीं है। हमारे देशके लोग बिना समझे-बूझे जड़ यंत्रकी तरह सख्तसे सख्त मेहनत किये जाते हैं और अिससे अुनकी सूक्ष्म सहज बुद्धि निष्प्राण हो जाती है। यही मेरी सवर्ण हिन्दुओंसे जबरदस्त शिकायत है। श्रमजीवी वर्गके लोगोंको अुन्होंने जो काम दिया है वह सख्त और जलील मेहनतका है, जिसमें न तो अुन्हें कोअी आनन्द मिलता है और न कोअी दिलचस्पी ही होती है। अगर समाजमें वे सवर्ण हिन्दुओंकी बराबरीके समझे जाते, तो जीवनमें अुनका स्थान आज सबसे अधिक गौरवका होता। यह युग तो

'कलियुग' समझा जाता है। सत्ययुगमें — यह मैं कह सकता हूं — हमारे समाजकी व्यवस्था वर्तमान युगसे कहीं अच्छी थी। हमारे प्राचीनतम देशमें कितनी ही सभ्यतायें आअीं और चली गअीं। अिसीलिअे यह ठीक-ठीक कहना कठिन है कि किसी खास युगमें हमारी कैसी स्थिति थी। लेकिन अिसमें तो जरा भी शक नहीं कि हमारी यह हालत शूद्रोंके प्रति कअी सदियोंसे अुपेक्षाका भाव रखनेसे भी हुअी है। आज गांवोंकी संस्कृति — अगर अुसे संस्कृति कहा जा सके — अेक भयंकर संस्कृति है। गांवके लोग आज जानवरोंसे भी बदतर हालतमें रहते हैं। प्रकृति जानवरोंको काममें लगने और स्वाभाविक रीतिसे रहनेके लिअे मजबूर करती है। पर हमने अपने श्रमजीवी वर्गोंको ठुकराकर अितना नीचे गिरा दिया है कि वे प्राकृतिक रीतिसे न तो काम कर सकते हैं और न रह ही सकते हैं। अगर वे लोग बुद्धिका अुपयोग करके रसपूर्वक काम करते, तो हमारी हालत आज कुछ दूसरी ही होती।"

"तो श्रम और संस्कृतिको क्या हम अलग नहीं कर सकते?"

"नहीं, प्राचीन रोमवासियोंने अैसा करनेका प्रयत्न किया था, पर वे बुरी तरह असफल हुअे। बिना श्रमकी संस्कृति या वह संस्कृति जो श्रमका फल नहीं है, अेक रोमन कैथलिक लेखकके अनुसार, नाशकारक ही है। रोम-निवासी भोग-विलासमें पड़ कर नष्ट हो गये, अुनकी संस्कृतिका नाम-निशान भी नहीं रहा। सिर्फ लिखकर और पढ़कर या सारे दिन व्याख्यान देकर मनुष्य अपनी मानसिक शक्तियोंको विकसित नहीं कर सकता। मैंने जितना कुछ पढ़ा है वह जेलमें मिली हुअी फुरसतके वक्तमें पढ़ा है। अुस पढ़ाअीसे मुझे अिसीलिअे लाभ हुआ है कि मैंने यों ही अूटपटांग तरीकेसे नहीं, बल्कि किसी प्रयोजनसे ही पढ़ा था। हालांकि मैंने लगातर आठ-आठ घण्टे महीनों शारीरिक श्रम किया है, तो भी मैं समझता हूं कि मेरी मानसिक शक्ति अुससे कुछ कम नहीं हुअी है। मैं अकसर दिनमें चालीस चालीस मील चला हूं, तब भी मुझे कोअी शिथिलता मालूम नहीं हुअी।"

"लेकिन आपकी तो मानसिक शक्ति ही अिस प्रकारकी है।"

"नहीं, यह बात नहीं है। आपको मालूम नहीं कि मैं स्कूलमें और अिंग्लैंडमें भी अेक औसत दरजेका विद्यार्थी था। किसी सभा-सोसायटी या निरामिषाहारियोंकी जमात तकमें बोलनेका मेरा साहस नहीं होता था। आप यह कल्पना न कर बैठें कि अीश्वरने मुझे कोअी असाधारण शक्ति दी है। मेरा खयाल है कि अीश्वरने अुस समय मुझे बहुत बोलनेकी शक्ति न देकर अच्छा ही किया। आपको जानना चाहिये कि हम लोगोंमें सबसे कम अगर किसीने पढ़ा है तो वह मैं हूं।"

हरिजनसेवक, १-८-'३६; पृ० १९१-९२

६७

# फुरसतकी कीमत

[श्री महादेव देसाओके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

"मेरी कठिनाओ तो यह है कि हमारे गांवोंमें हालांकि लोग सुबहसे लेकर रात तक गधोंकी तरह मशक्कत कर रहे हैं और अुन्हें अेक घंटेकी भी छुट्टी नहीं मिलती, तो भी अुन्हें पेटभर रोटी नसीब नहीं होती। और आप अुनसे और भी ज्यादा मेहनत लेना चाहते हैं!" कार्यकर्ताने कहा।

"आप जो कहते हैं यह तो मेरे लिअे नयी बात है। मैं तो अुन गांवोंको जानता हूं, जिनमें लोगोंका काफी समय यों ही नष्ट हो रहा है। लेकिन अगर जैसा आप कहते हैं कि अैसे भी लोग हैं जो अपनी ताकतसे ज्यादा काम करते हैं, तो मैं अुनसे यह कहूंगा कि ठीक आठ घंटेके कामकी पेट भरने लायक जितनी मजदूरी होती है अुससे वे अेक पाअी भी कम न लें।"

"लेकिन यंत्रोंको क्यों न अपना लें? अुनमें जो अच्छी अच्छी बातें हों अुन सबको ले लें। और अुनकी बुरी बातोंको अलग कर दें।"

"मुझे यह नहीं पुसा सकता कि हमारे मानव-यंत्र बेकार पड़े रहें। हमारे यहां अितनी अधिक मानव-शक्ति बेकार पड़ी हुअी है कि किसी दूसरी 'पॉवर' से चलनेवाली मशीनोंके लिअे हमारे यहां गुंजाअिश ही नहीं।"

"आप पॉवरसे चलनेवाली मशीनोंको दाखिल कीजिये और अुन्हें अुतने ही समय तक चलाअिये कि जितना हमारे मतलब भरके लिअे आवश्यक हो।"

"आपका आशय क्या है? मान लिया कि हमारी आवश्यकता भरका तमाम कपड़ा खासकर अुसी मतलबसे खड़ी की गअी मिलोंमें बन जाता है और अुनमें करीब ३० लाख आदमियोंको काम मिल जाता है, फिर? अिन ३० लाख आदमियोंके पास अुतना रुपया पहुंच जायगा जितना कि सौ बरस पहले ३० करोड़ आदमियोंमें बंट जाया करता था।"

"जी, नहीं," अुन सज्जनने दलील देते हुअे कहा, "मेरी यह तजवीज है कि हमारी आवश्यकताओंके लिअे जितने कामकी जरूरत हो अुनसे अधिक काम हमारे आदमियोंको नहीं करना चाहिये। कुछ काम वास्तवमें हम सबके लिअे जरूरी हैं। पर हम रोज दो घंटेसे ज्यादा काम क्यों करें और अपने बचे हुअे समयको अन्य आल्हादक कामोंमें क्यों न लगायें?"

"अिससे अगर हमारे आदमियोंको रोज अेक ही घंटा काम करना हो, तो आप संतुष्ट हो जायेंगे ?"

"यह करके देखना चाहिये। लेकिन मुझे तो अवश्य संतुष्ट हो जाना चाहिये।"

"यह मुश्किल है। मैं तो जब तक तमाम आदमियोंके पास काफी अुत्पादक काम, यानी रोज आठ घंटेका काम, न हो तब तक संतुष्ट होनेका नहीं।"

"लेकिन मुझे आश्चर्य होता है कि आप अिस कमसे कम आठ घंटेके काम पर क्यों अितना आग्रह कर रहे हैं ?"

"क्योंकि मैं यह जानता हूं कि करोड़ों आदमी कामके खातिर ही काममें नहीं लगेंगे। अगर अुन्हें अपने पेटके लिअे काम करनेकी जरूरत न हो, तो अुन्हें प्रेरणा ही न मिले। मान लीजिये कि चंद करोड़पति अमेरिकासे आवें और हमारे पास तमाम खाने-पीनेकी चीजें भेज देनेके लिअे कहें और हमसे प्रार्थना करें कि आप लोग कोअी काम न करें, किन्तु हमें परोपकार-वृत्तिसे अपने यहां सदाव्रत खोल लेने दें, तो मैं अुनकी यह बात स्वीकार करनेसे साफ अिनकार कर दूं।"

"क्या अिसलिअे कि अुससे आपके आत्म-सम्मानको चोट पहुंचेगी ?"

"नहीं, सिर्फ अिसी कारणसे नहीं बल्कि खासकर अिसलिअे कि अुससे हमारे जीवनके अिस मौलिक नियमका मूलोच्छेद होता है कि हमें अपने पेटके लिअे श्रम करना ही चाहिये, हमें अपने पसीनेकी कमाअीकी ही रोटी खानी चाहिये।"

"पर यह तो आपका व्यक्तिगत विचार है। क्या आप समाजकी व्यवस्थाको खुद समाज पर ही छोड़ देंगे या चंद अच्छे मार्गदर्शकोंके अूपर ?"

"थोड़ेसे अच्छे मार्गदर्शकोंके अूपर मुझे समाजकी व्यवस्था छोड़ देनी चाहिये।"

"अिसका अर्थ यह हुआ कि आप 'डिक्टेटरशिप' के पक्षमें हैं ?"

"नहीं, महज अिस कारण कि मेरा मौलिक सिद्धान्त अहिंसा है और मुझे किसी व्यक्ति या समाज पर बलात्कार नहीं करना चाहिये। मार्गदर्शनका अर्थ 'डिक्टेटरशिप' नहीं है।"

यह बहस न जाने कब तक होती रहती, पर गांधीजीके पास और अधिक समय नहीं था, अिसलिअे अुन सज्जनको अुस दिन अितनेसे ही संतोष करना पड़ा।

हरिजनसेवक, ७-१२-'३५; पृ० ३४१

## ६८

# आर्थिक समानताका अर्थ

गांधीजी मद्रासका दौरा कर रहे थे, अुन दिनों रचनात्मक कार्यकर्ता-सम्मेलनमें अुनसे पूछा गया, "आर्थिक समानतासे आपका ठीक-ठीक अर्थ क्या है?"

अुनका जवाब यह था, "मेरी कल्पनाकी आर्थिक समानताका अर्थ यह नहीं है कि हरअेकको अक्षरशः अुसी मात्रामें कोअी चीज मिले। अुसका मतलब अितना ही है कि हरअेकको अपनी आवश्यकताके लिअे काफी मिल जाना चाहिये। मिसालके लिअे, ठंडके मौसममें ठंडसे बचनेके लिअे मुझे दो शाल लगते हैं, लेकिन मेरे साथ रहनेवाले मेरे पौत्र कनुको गरम कपड़ोंकी कोअी जरूरत नहीं होती। मुझे बकरीका दूध, संतरे और दूसरे फल लगते हैं। लेकिन कनुका काम सामान्य आहारसे चल जाता है। मुझे कनुसे अीर्षा होती है, लेकिन अुसका कुछ मतलब नहीं। कनु नौजवान है और मैं तो ७६ सालका बूढ़ा हूं। भोजनका मेरा मासिक खर्च कनुसे बहुत ज्यादा है, लेकिन अिसका यह अर्थ नहीं कि हममें कोअी आर्थिक असमानता है। चींटीसे हाथीको हजार गुनी ज्यादा खुराक चाहिये, परंतु यह असमानताका चिह्न नहीं है। अिस प्रकार आर्थिक समानताका सच्चा अर्थ यह है: 'सबको अपनी अपनी जरूरतके अनुसार मिले।' मार्क्सकी व्याख्या भी यही है। यदि अकेला आदमी भी अुतना ही मांगे जितना स्त्री और चार बच्चोंवाला व्यक्ति मांगे, तो यह आर्थिक समानताके सिद्धान्तका भंग होगा।

"किसीको यह कहकर अूंचे वर्गों और जन-साधारणके, राजा और रंकके बीचके बड़े भारी अंतरको अुचित बतानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिये कि पहलेकी आवश्यकतायें दूसरेसे अधिक हैं। यह व्यर्थकी दलील होगी और मेरे तर्कका मजाक अुड़ाना होगा। अमीर-गरीबके मौजूदा फर्कसे दिलको बड़ी चोट पहुंचती है। विदेशी हुकूमत और हमारे अपने देशवासी — नगर-निवासी — दोनों ही गरीब ग्रामीणोंका शोषण करते हैं। वे अन्न पैदा करते हैं और भूखे रहते हैं। वे दूध अुत्पन्न करते हैं और अुनके बच्चे दूधके बिना

रहते हैं। यह लज्जाजनक बात है। प्रत्येकको संतुलित भोजन, रहनेको अच्छा मकान, बच्चोंकी शिक्षाकी सुविधायें और दवा-दारूकी काफी मदद मिलनी चाहिये। यह है मेरा आर्थिक समानताका चित्र। मैं प्रारम्भिक आवश्यकताओंसे अधिक हर चीजका निषेध नहीं करता, मगर अुसका नम्बर तभी आता है जब पहले गरीबोंकी मुख्य आवश्यकतायें पूरी हो जायं। पहले करने लायक काम पहले ही होने चाहिये।"

हरिजन, ३१-३-'४६; पृ० ६३

# ६९

# आर्थिक समानताके लिअे प्रयत्न

रचनात्मक कामका यह अंग अहिंसापूर्ण स्वराज्यकी मुख्य चावी है। आर्थिक समानताके लिअे काम करनेका मतलब है, पूंजी और मजदूरीके बीचके झगड़ोंको हमेशाके लिअे मिटा देना। अिसका अर्थ यह होता है कि अेक ओरसे जिन मुट्ठीभर पैसेवाले लोगोंके हाथमें राष्ट्रकी संपत्तिका बड़ा भाग अिकट्ठा हो गया है अुनकी संपत्तिको कम करना और दूसरी ओरसे जो करोड़ों लोग अधपेट खाते हैं और नंगे रहते हैं अुनकी संपत्तिमें वृद्धि करना। जब तक मुट्ठीभर धनवानों और करोड़ों भूखे रहनेवालोंके बीच बेअिन्तहा अन्तर बना रहेगा, तब तक अहिंसाकी बुनियाद पर चलनेवाली राज-व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। आजाद हिन्दुस्तानमें देशके बड़ेसे बड़े धनिकोंके हाथमें हुकूमतका जितना हिस्सा रहेगा अुतना ही गरीबोंके हाथमें भी होगा; और तब नअी दिल्लीके महलों और अुनकी बगलमें बसी हुअी गरीब मजदूर बस्तियोंके टूटे-फूटे झोंपड़ोंके बीच जो दर्दनाक फर्क आज नजर आता है, वह अेक दिनको भी नहीं टिकेगा। अगर धनवान लोग अपने धनको और अुसके कारण मिलनेवाली सत्ताको खुद राजी-खुशीसे छोड़कर और सबके कल्याणके लिअे सबके साथ मिलकर बरतनेको तैयार न होंगे, तो यह तय समझिये कि हमारे देशमें हिंसक और खूंख्वार क्रांति हुअे बिना न रहेगी।

ट्रस्टीशिप या सरपरस्तीके मेरे सिद्धान्तका बहुत मजाक अुड़ाया गया है, फिर भी मैं अुस पर कायम हूं। यह सच है कि अुस तक पहुंचने यानी अुसका पूरा-पूरा अमल करनेका काम कठिन है। क्या अहिंसाकी भी यही हालत नहीं? फिर भी १९२० में हमने यह सीधी चढ़ाअी चढ़नेका निश्चय किया था। अब तक हमने अुसके लिअे जो पुरुषार्थ किया है वह कर लेने जैसा था, अिसे अब हम समझ चुके हैं। अिस पुरुषार्थकी खास बात यह

है कि रोज-रोजकी खोज और कोशिशमें हमें अधिकाधिक यह जान लेना है कि अहिंसाका तत्त्व किस तरह काम करता है। कांग्रेसवालोंसे यह अुम्मीद की जाती है कि वे सब संजीदगी और लगनके साथ, सचेत रहकर, अिस बातका पता लगायें कि अहिंसा क्या चीज है, क्यों अुसका व्यवहार करना है और वह किस तरह अपना काम करती है। सबको अिस सवाल पर भी सोचना है कि आजकी सामाजिक व्यवस्थामें मनुष्य-मनुष्यके बीच जो तरह-तरहकी असमानतायें मौजूद हैं, वे हिंसासे दूर होंगी या अहिंसासे। मेरे खयालमें हिंसाका रास्ता कैसा है, यह हम जानते हैं। अुस रास्ते समानताके मामलेमें कहीं सफलता मिली हमने जानी नहीं।

अहिंसाके जरिये समाजमें हेरफेर करनेके प्रयोग अभी चल रहे हैं और अुनकी तफसील तैयार हो रही है। अिन प्रयोगोंमें प्रत्यक्ष दिखाने जैसा तो कोअी खास या बड़ा काम हमने नहीं किया है। मगर यह तय है कि चाल चाहे कितनी ही धीमी क्यों न हो, फिर भी अिस तरीके पर समानताकी दिशामें काम तो शुरू हो चुका है। और चूंकि अहिंसाका रास्ता हृदय-परिवर्तनका रास्ता है, अिसलिअे अुनमें जो भी हेरफेर होते हैं वे कायमी होते हैं। जिस समाज या राष्ट्रकी रचना अहिंसाकी नींव पर हुअी है, वह अपनी अिमारत पर होनेवाले तमाम बाहरी या अन्दरूनी हमलोंका सामना करनेकी ताकत रखता है। राष्ट्रीय कांग्रेसमें धनवान कांग्रेसी भी हैं। अिस मामलेमें पहल करके अुन्हें औरोंको रास्ता दिखाना है। स्वराज्यकी हमारी यह लड़ाअी हरअेक कांग्रेसीको अिस बातका मौका देती है कि वह अपने दिलकी पूरी गहराअीमें अुतरकर अपने-आपको जांचे-परखे। अपनी लड़ाअीके अंतमें हमें जिस हिन्दुस्तानकी रचना करनी है, अुसमें यदि समानताको सिद्ध करना हो, तो अुसकी बुनियाद अभीसे पड़नी चाहिये। जो लोग यह समझ कर चलते हैं कि बड़े-बड़े सुधार तो स्वराज्य कायम होने पर ही होंगे या किये जायंगे, वे सब जड़से ही अिस बातको समझनेमें गलती करते हैं कि अहिंसक स्वराज्यका काम किस तरह होता है। यह अहिंसक स्वराज्य किसी अच्छे मुहूर्तमें अचानक आसमानसे नहीं टपक पड़ेगा। बल्कि जब हम सब मिलकर अेकसाथ अपनी मेहनतसे अेक-अेक अींट चुनते चलेंगे, तभी स्वराज्यकी अिमारत खड़ी हो सकेगी। अिस दिशामें हमने काफी लम्बी और अच्छी मंजिल तय की है। लेकिन स्वराज्यकी संपूर्ण शोभा और भव्यताका दर्शन करनेसे पहले हमको अभी अिससे भी ज्यादा लम्बा और थकानेवाला रास्ता तय करना है। अिसलिअे हरअेक कांग्रेसीको अपने-आपसे यह सवाल पूछना है कि अिस आर्थिक समानताकी स्थापनाके लिअे अुसने क्या किया है?

रचनात्मक कार्यक्रम, पृ० ४०–४२; १९५९

७०

# आर्थिक समानता प्राप्त करनेकी पद्धतियां — गांधीजीकी और साम्यवादियोंकी

[श्री प्यारेलालके 'गांधीजीका साम्यवाद' नामक लेखसे।]

प्र० — आर्थिक समानताके ध्येयको हासिल करनेके लिअे आपके तरीके और साम्यवादी या समाजवादी तरीकेमें क्या फर्क है?

अु० — साम्यवादियों और समाजवादियोंका कहना है कि आज वे आर्थिक समानताको जन्म देनेके लिअे कुछ नहीं कर सकते। वे अुसके लिअे प्रचार भर कर सकते हैं। अिसके लिअे लोगोंमें द्वेष या वैर पैदा करने और अुसे बढ़ानेमें अुनका विश्वास है। अुनका कहना है कि राजसत्ता पाने पर वे लोगोंसे समानताके सिद्धान्त पर अमल करवायेंगे। मेरी योजनाके अनुसार राज्य प्रजाकी अिच्छाको पूरी करेगा, न कि लोगोंको आज्ञा देगा या अपनी आज्ञा जबरन् अुन पर लादेगा। मैं घृणासे नहीं, प्रेमकी शक्तिसे लोगोंको अपनी बात समझाअूंगा और अहिंसाके द्वारा आर्थिक समानता पैदा करूंगा। मैं सारे समाजको अपने मतका बनाने तक रुकूंगा नहीं — बल्कि अपने घर ही यह प्रयोग शुरू कर दूंगा। अिसमें जरा भी शक नहीं कि अगर मैं ५० मोटरोंका तो क्या १० बीघा जमीनका भी मालिक होअूं, तो मैं अपनी कल्पनाकी आर्थिक समानताको जन्म नहीं दे सकता। अुसके लिअे मुझे गरीब बन जाना होगा। यही मैं पिछले ५० सालोंसे या अुससे भी ज्यादा समयसे करता आया हूं। अिसीलिअे मैं पक्का कम्युनिस्ट होनेका दावा करता हूं। अगरचे मैं धनवानों द्वारा दी गअी मोटरों या दूसरे सुभीतोंसे फायदा अुठाता हूं, मगर मैं अुनके वशमें नहीं हूं। अगर आम जनताके हितोंका वैसा तकाजा हुआ, तो बातकी बातमें मैं अुनको अपनेसे दूर हटा सकता हूं।

हरिजनसेवक, ३१–३–'४६; पृ० ६३–६४

## ७१

# आर्थिक समानताकी प्राप्ति

प्र० — रचनात्मक कार्य करते हुअे कोअी कांग्रेसी आर्थिक समानताका प्रचार कर सकता है? सविनय आज्ञाभंगके कार्यक्रम पर अमल करके आर्थिक समानताकी स्थापना कैसे की जा सकती है?

// अु० — आप अिसका प्रचार अवश्य कर सकते हैं, यदि आपकी भाषा सर्वथा अहिंसक हो और आपका तरीका अैसा न हो जैसा मुझे मालूम है कि कुछ लोगोंने जमींदारों और पूंजीपतियोंकी संपत्ति जबरन् छीन लेनेका प्रचार करके अख्तियार किया है। परन्तु मैंने प्रचार करनेसे ज्यादा अच्छा ढंग बता दिया है। रचनात्मक कार्यक्रम देशको अिस ध्येयकी ओर काफी दूर तक ले जाता है। अुसके लिअे यह सबसे अनुकूल समय है। चरखा और अुसके साथके अुद्योग पूरे सफल हो जायं, तो अुनसे सामाजिक और आर्थिक दोनों तरहकी तमाम असमानतायें लगभग नष्ट हो जायंगी। अहिंसासे लोगोंको जो बल मिलता है, अुसके दिनोंदिन बढ़ते हुअे परिणामोंसे और बुद्धिपूर्वक अपनी दासतामें सहयोग देनेसे अिनकार करनेसे आर्थिक समानता अवश्य स्थापित हो जायगी।//

हरिजन, २५–१–'४२; पृ० १६

## ७२

# समान वितरण

रचनात्मक कार्यक्रम* पर अपने पिछले सप्ताहके लेखमें मैंने तेरह अंगोंमें से अेक अंग धनका समान वितरण बताया था।

---

* हरिजनसेवक, १७–८–'४०, पृ० २२४–२५ : 'रचनात्मक कार्यक्रम किसलिअे'।

रचनात्मक कार्यक्रमके १३ अंगोंके महत्त्वका वर्णन करनेके बाद गांधीजीने लेखके अुपसंहारात्मक परिच्छेदमें कहा :

/ "अगर अिस सबके साथ-साथ आर्थिक समानताका प्रचार न किया गया, तो यह सब निकम्मा समझना चाहिये। आर्थिक समानताका यह अर्थ हरगिज नहीं कि हरअेकके पास अेक समान धन होगा। मगर यह अर्थ जरूर है कि हरअेकके पास अैसा घरबार, वस्त्र और खाने-पीनेका सामान होगा कि जिससे वह सुखसे रह सके। और जो घातक असमानता आज मौजूद है, वह केवल अहिंसक अुपायोंसे ही नष्ट होगी। मगर अिस विषयके लिअे अलग लेखकी आवश्यकता है।"/

समान वितरणका सच्चा अर्थ यह है कि प्रत्येक मनुष्यको अपनी सारी कुदरती जरूरतें पूरी करनेके साधन मिल जायं, अुससे ज्यादा नहीं। अुदाहरणार्थ, यदि किसी आदमीका हाजमा कमजोर है और अुसे रोटीके लिअे पावभर आटेकी ही जरूरत है और दूसरेको आधा सेरकी जरूरत है, तो दोनोंको अपनी-अपनी आवश्यकताअें पूरी करनेका मौका मिलना चाहिये। अिस आदर्शकी स्थापनाके लिअे सारी समाज-व्यवस्थाकी फिरसे रचना करनी पड़ेगी। अहिंसाके आधार पर बने हुअे समाजका और कोअी आदर्श नहीं हो सकता। शायद हम अिस ध्येयको प्राप्त न भी कर सकें, परन्तु हमें अुसे ध्यानमें रखना चाहिये और अुसके निकट पहुंचनेके लिअे सतत काम करते रहना चाहिये। जिस हद तक हम अपने ध्येयकी दिशामें प्रगति करेंगे, अुसी हद तक हमें सुख और संतोष प्राप्त होगा और अुतनी ही हद तक हम अहिंसक समाजकी स्थापना करनेमें मदद पहुंचायेंगे।

व्यक्तिके लिअे दूसरोंके अैसा करनेकी प्रतीक्षा किये बिना अिस प्रकारका जीवन अपना लेना पूरी तरह संभव है। और यदि आचरणके किसी खास नियमका पालन अेक व्यक्ति कर सकता है, तो अिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यक्तियोंका समूह भी वैसा कर सकता है। मेरे लिअे अिस हकीकत पर जोर देना जरूरी है कि कोअी सही रास्ता अख्तियार करनेके लिअे किसीको दूसरोंकी प्रतीक्षा करनेकी आवश्यकता नहीं है। लोगोंको जब अैसा लगता है कि अुद्देश्यकी सम्पूर्णतः पूर्ति नहीं हो सकती, तो वे आम तौर पर अुस दिशामें प्रारंभ करनेमें संकोच करते हैं। अिस प्रकारकी मनोवृत्तिसे सचमुच प्रगतिमें बाधा पड़ती है।

अब हम यह विचार करें कि अहिंसाके जरिये समान वितरण कैसे किया जा सकता है। अिसके लिअे पहली सीढ़ी यह है कि जिसने अिस आदर्शको अपने जीवनका अंग बना लिया है, वह अपने निजी जीवनमें आवश्यक परिवर्तन कर ले। भारतकी दरिद्रताको ध्यानमें रखते हुअे वह अपनी जरूरतें कमसे कम कर लेगा। अुसकी कमाअी बेअीमानीसे मुक्त होगी। वह सट्टेकी अिच्छा छोड़ देगा। अुसका निवासस्थान नअी जीवन-पद्धतिके अनुरूप होगा। जीवनके हर क्षेत्रमें वह संयमसे काम लेगा। जब वह स्वयं अपने जीवनमें यथासंभव सब कुछ कर लेगा, तभी अुसकी अैसी स्थिति होगी कि वह अपने साथियों और पड़ोसियोंमें अिस आदर्शका प्रचार कर सके।

वास्तवमें समान वितरणके अिस सिद्धान्तकी जड़में धनवानोंके अनावश्यक धनकी संरक्षकता या ट्रस्टीशिपका सिद्धान्त होना चाहिये, क्योंकि अिस सिद्धान्तके अनुसार वे अपने पड़ोसियोंसे अेक रुपया भी अधिक नहीं रख सकते। यह कैसे किया जाय? अहिंसाके द्वारा? या धनवानोंसे अुनकी संपत्ति छीन कर? अैसा

करनेके लिअे हमें स्वभावतः हिंसाका आसरा लेना पड़ेगा। अिन हिंसक कार्रवाअीसे समाजका लाभ नहीं हो सकता। समाज अुलटा घाटेमें रहेगा, क्योंकि अिससे समाज अेक अैसे आदमीके गुणोंसे वंचित रहेगा, जो दौलत जमा करना जानता है। अिसलिअे अहिंसक मार्ग प्रत्यक्ष रूपमें श्रेष्ठ है। धनवानके पास अुसका धन रहेगा, परन्तु अुसका अुतना ही भाग वह अपने काममें लेगा जितना वह अपनी निजी आवश्यकताओंके लिअे अुचित रूपमें जरूरी समझता है और बाकीको समाजके अुपयोगके लिअे धरोहर समझेगा। अिस तर्कमें यह मान लिया गया है कि संरक्षक प्रामाणिक होगा।

ज्यों ही मनुष्य अपनेको समाजका सेवक समझने लगता है, अुसके खातिर कमाने लगता है और अुसके फायदेके लिअे खर्च करने लगता है, त्यों ही अुसकी कमाअीमें शुद्धता आ जाती है और अुसके साहसमें अहिंसाका प्रवेश हो जाता है। अिसके अतिरिक्त, यदि मनुष्योंके मन जीवनकी अिस प्रणालीकी ओर मुड़ जायं, तो समाजमें अेक शांतिपूर्ण क्रान्ति हो जायगी और वह भी बिना किसी कटुताके।

यह पूछा जा सकता है कि क्या अितिहासमें किसी भी समय मानव-स्वभावमें अैसा परिवर्तन हुआ पाया जाता है। निस्संदेह अैसे परिवर्तन व्यक्तियोंमें तो हुअे ही हैं। शायद सारे समाजमें अैसे परिवर्तन होनेका अुदाहरण न दिया जा सके। परंतु अिसका अर्थ अितना ही है कि अब तक बड़े पैमाने पर अहिंसाका कभी प्रयोग नहीं हुआ है। किसी न किसी प्रकार हम लोग अिस गलत विश्वासमें फंस गये हैं कि अहिंसा मुख्यतः व्यक्तियोंका हथियार है और अिसलिअे अुसका प्रयोग व्यक्ति तक ही सीमित रहना चाहिये। असलमें यह बात नहीं है। अहिंसा निश्चित रूपमें समाजका गुण है। अिस सचाअीका लोगोंको पक्का विश्वास करानेके लिअे मेरा प्रयत्न और प्रयोग दोनों चल रहे हैं। आश्चर्योंके अिस युगमें कोअी यह नहीं कहेगा कि नअी होनेके कारण ही कोअी वस्तु या कल्पना निकम्मी है। यह कहना भी कि कठिन होनेके कारण वह असंभव है, अिस युगकी भावनाके अनुसार नहीं है। जिन चीजोंका सपनेमें भी खयाल नहीं था वे रोज देखी जा रही हैं, असंभव सदा संभव बनता जा रहा है। हिंसाके क्षेत्रमें अिन दिनों होनेवाले विस्मयकारी आविष्कार हमें सतत आश्चर्यचकित कर रहे हैं। परंतु मैं मानता हूं कि अहिंसाके क्षेत्रमें अिनसे कहीं ज्यादा अकल्पित और असंभव दिखाअी देनेवाले आविष्कार होंगे। धर्मका अितिहास अैसे अुदाहरणोंसे भरा पड़ा है। समाजसे धर्ममात्रकी जड़ अुखाड़नेका प्रयत्न सर्वथा असंभव है। और यदि अैसा प्रयत्न सफल भी हो जाय, तो अिसका अर्थ समाजका विनाश होगा। युग-युगमें अंधविश्वास, कुरीतियां और दूसरी त्रुटियां धर्ममें घुसकर

कुछ समयके लिअे अुसे बिगाड़ देती हैं। वे आती हैं और चली जाती हैं। परंतु धर्म स्वयं बना रहता है, क्योंकि विस्तृत अर्थमें संसारका अस्तित्व धर्म पर ही कायम है। धर्मकी अंतिम व्याख्या अीश्वरी कानूनका पालन कही जा सकती है। अीश्वर और अुसका कानून पर्यायवाची शब्द हैं। अीश्वर अर्थात् अपरिवर्तनशील, जीता-जागता कानून। वास्तवमें आज तक किसीने अुसे नहीं पाया है। परंतु अवतारों और पैगम्बरोंने अपनी तपस्याके बलसे मनुष्य-जातिको अुस शाश्वत धर्मकी हलकी-सी झांकी दिखाअी है।

परन्तु यदि अत्यंत प्रयत्न करने पर भी धनवान लोग सच्चे अर्थमें गरीबोंके संरक्षक न बनें और गरीब दिन-दिन अधिक कुचले जायं और भूखसे मरें, तब क्या किया जाय?

अिस पहेलीका हल ढूंढ़नेके प्रयत्नमें मुझे अहिंसक असहयोग और सविनय अवज्ञाका सही और अचूक साधन सूझा है। अमीर लोग समाजके गरीबोंके सहयोगके बिना धन-संग्रह नहीं कर सकते। मनुष्यका प्रारंभसे ही हिंसासे परिचय रहा है, क्योंकि अुसे यह बल अपने पशु-स्वभावसे अुत्तराधिकारमें मिला है। अहिंसाकी शक्तिका ज्ञान तो अुसकी आत्माको तभी हुआ जब वह चौपायेकी स्थितिसे अूंचा अुठकर दोपाये (मनुष्य) की हालतमें पहुंचा। अिस ज्ञानका विकास अुसके भीतर धीरे-धीरे, किन्तु निश्चित रूपमें हुआ है। यदि यह ज्ञान गरीबोंके भीतर प्रवेश करके फैल जाय, तो वे बलवान हो जायेंगे और अहिंसाके द्वारा अपनेको कुचल डालनेवाली अुन असमानताओंसे मुक्त करना सीख लेंगे, जिनके कारण वे भुखमरीके किनारे पहुंच गये हैं।

हरिजन, २५-८-'४०; पृ० २६०

## ७३

## मजदूरीकी समानता

['गांधीजीकी पैदल यात्राकी डायरी' से।]

प्र० — जिन लोगोंका सारा व्यापार चौपट हो गया है, अुनके लिअे आपकी यह सलाह है कि अुन्हें खुद होकर मजदूर बन जाना चाहिये। तब शिक्षा, व्यापार और अिसी तरहकी दूसरी बातों पर कौन ध्यान देगा? अगर आप अिस तरह मेहनतके बंटवारेको खतम कर देंगे, तो अिससे तहजीब और सभ्यताको नुकसान नहीं पहुंचेगा?

अु० — सवाल पूछनेवालेने मेरे मतलबको नहीं समझा है। अगर कोअी आदमी अपना पहला व्यापार-धन्धा नहीं चला सकता, तो अुसे लाजिमी तौर

पर पाखाने साफ करने या पत्थर फोड़ने जैसा कोअी न कोअी शारीरिक काम करना ही चाहिये। अिसमें अुसकी पसन्द या नापसन्दका कोअी सवाल नहीं। मेहनत या कामके बंटवारेमें मेरा विश्वास है। लेकिन मैं अिस बात पर जोर देता हूं कि सबकी मजदूरी बराबर हो। अेक वकील, डॉक्टर या मास्टरको भंगीसे ज्यादा मजदूरी पानेका कोअी हक नहीं। अैसा होगा तभी कामका बंटवारा राष्ट्र या दुनियाको अूपर अुठायेगा। सच्ची तहजीब या सच्चे सुखका अिससे बेहतरीन कोअी रास्ता नहीं। अुमूलकी 'स्पिरिट' अिन्सानको जीवन देती है। लेकिन अुसके शब्द अुसे खतम कर देते हैं। हाथीका सिर कटा हुआ 'गणपति' राक्षसकी तरह है, लेकिन 'ओम्'के प्रतिनिधिके नाते वह अूंचा अुठानेवाला प्रतीक है। दस सिरवाला रावण कहानी-किस्सेका बेवकूफ था, लेकिन अगर अुसका मतलब अैसे आदमीसे हो जो बेअक्ल और जोशमें आकर कुछ भी कर बैठता था, तो वह सचमुच कअी सिरवाला राक्षस था।

हरिजनसेवक, २३-३-'४७; पृ० ६९

## ७४

# समान वेतन

['गांधीजीकी पैदल यात्राकी डायरी'से।]

प्र० — आपने १९४१ में धनकी बराबरीके बारेमें लिखा था। क्या आपका यह खयाल है कि सब लोगोंको, जो समाजमें अुपयोगी और जरूरी काम करते हैं — चाहे वे किसान हों या भंगी, अिंजीनियर हों या हिसाबनवीस, डॉक्टर हों या शिक्षक — समान वेतन पानेका नैतिक अधिकार है? बेशक, प्रश्नकी तहमें यह बात मान ली गअी है कि शिक्षाके या दूसरे खर्च सरकार बरदाश्त करेगी। हमारा सवाल यह है कि क्या सब लोगोंको अपनी निजी आवश्यकताओंके लिअे समान वेतन नहीं मिलना चाहिये? क्या आप नहीं मानते कि अगर हम अिस बराबरीकी कोशिश करें, तो वह छुआछूतको दूसरे सब तरीकोंसे जल्दी अुखाड़ फेंकेगी?

अु० — मुझे कोअी शक नहीं कि अगर हिन्दुस्तानको आजादीकी अैसी आदर्श जिन्दगी बितानी है, जो दुनियाके लिअे अीर्ष्याकी चीज हो, तो सब भंगियों, डॉक्टरों, वकीलों, अुस्तादों, व्यापारियों और दूसरोंको अीमानदारीसे दिनभर काम करनेके बदलेमें बराबर मेहनताना मिलना चाहिये। भले ही हिन्दुस्तानी समाज अुस मंजिल तक कभी न पहुंचे। अगर हिन्दुस्तानको अेक

सुखी देश बनना है, तो हर हिन्दुस्तानीका फर्ज है कि वह किसी दूसरेकी ओर नहीं, बल्कि अुसी मंजिलकी ओर अपने कदम बढ़ाये।

हरिजनसेवक, १६–३–'४७; पृ० ५६

# ७५

# मंत्रियोंके वेतन

## १

प्र० — अिस बार कांग्रेसके बहुमतवाले प्रान्तोंमें मंत्रियोंकी वेतन-वृद्धि किन सिद्धान्तों पर की जा रही है? क्या कराचीवाला कांग्रेस-प्रस्ताव आजकी परिस्थितिमें लागू नहीं होता? यदि महंगाअीके कारण अैसा किया है, तो क्या प्रान्तोंके बजटमें अैसी गुंजाअिश संभव है कि प्रत्येक सरकारी नौकरका वेतन तिगुना किया जा सके? यदि नहीं तो यह क्या अुचित है कि मंत्री अपने वेतन ५००) से १५००) कर लें और अेक अध्यापक और चपरासीको यह अुपदेश दिया जाये कि वह अपनी गुजर १२) और १५) माहवारमें करे और शासन-प्रबंधमें कोअी अस्थिरता अुत्पन्न न करे, क्योंकि कांग्रेस शासन चला रही है?

अु० — बात बिलकुल ठीक है कि मंत्रियोंको १५००) क्यों और चपरासी या शिक्षकोंको १५) क्यों? लेकिन सवाल अुठानेसे ही वह हल नहीं हो जाता। अैसे अंतरका सिलसिला सनातन-सा है। हाथीको मन क्यों और चींटीको कण क्यों? अिस सवालमें ही जवाब भरा है। जितनी जिसकी जरूरत है, अीश्वर अुसे अुतना दे देता है। मनुष्यकी जरूरत हाथी और चींटीकी-सी स्पष्ट हो सके तो कोअी शंका ही न अुठे। अनुभव तो हमें यही बताता है कि सब मनुष्योंकी जरूरत अेकसी नहीं हो सकती, जैसे सब चींटियोंकी या सब हाथियोंकी होती है। भिन्न-भिन्न लोगों और भिन्न-भिन्न कौमोंकी जरूरतें अलग-अलग रहती हैं। अिसलिअे आज जो अंतर है, अुसे कमसे कम करनेका शांतिसे आंदोलन करें, लोकमत बनायें और अेक आदर्श सामने रखकर अुसकी ओर कूच करें। जबरदस्तीसे या सत्याग्रहके नामसे दुराग्रह करके परिवर्तन नहीं कर सकेंगे। मंत्रिगण लोगोंमें से हैं। मंत्री बननेसे पहले भी अुनकी जरूरतें चपरासियों जैसी नहीं थीं। मैं चाहूंगा कि चपरासी मंत्रीपदके लायक बनें और तब भी अपनी जरूरतें चपरासी जितनी रखें। अितना समझ लें कि कोअी मंत्री बंधी हुअी मर्यादा तक तनख्वाह लेनेके लिअे बंधा नहीं है।

प्रश्नकारकी अेक बात सोचने लायक अवश्य है। क्या चपरासी १५) में बिना रिश्वत लिये अपना और कुटुम्बका गुजारा कर सकता है? यदि नहीं तो अुसको काफी मिलना ही चाहिये। अिलाज यह है कि यथासंभव हम अपने-अपने चपरासी बनें और अितने पर भी जो आवश्यक हों अुनको अुनकी जरूरतके मुताबिक तनख्वाह दें और अिस तरह मंत्री और चपरासीके जीवनमें जो बड़ा अंतर है अुसे मिटावें।

मंत्रियोंकी तनख्वाह ५००) से १५००) क्यों हुअी यह भिन्न प्रश्न है, लेकिन मूल प्रश्नके मुकाबलेमें छोटा है। मूल प्रश्न हल हो सके तो छोटा अपने-आप हल होता है।

हरिजनसेवक, २१–४–'४६; पृ० ९६

२

थोड़े दिन हुअे मैंने 'हरिजन' में दबी कलमसे अेक पैरा मंत्रियोंकी तनख्वाह बढ़ानेके बारेमें लिखा था। अुसकी मुझे काफी कीमत अदा करनी पड़ी है। बहुत लम्बे-लम्बे खत पढ़ने पड़ते हैं, जिनमें मेरी सावधानी पर दुःख प्रगट किया जाता है, और मुझे समझाया जाता है कि मैं अपनी राय बदल दूं। मंत्रियोंकी तनख्वाहें पहले ही बहुत ज्यादा हैं। अिनको और भी बढ़ा देना कहां तक ठीक है, जब कि गरीब चपरासियों और क्लर्कोंको जो तरक्की मिली है अुसमें अुनका गुजारा भी नहीं हो पाता। मैंने अपने नोटको फिरसे पढ़ा है और मेरा दावा है कि जो कुछ लेखक चाहते हैं, वह सब अुस छोटेसे नोटमें है। पर कोअी गलतफहमी न हो, अिसलिअे मैं अपना अर्थ स्पष्ट करता हूं।

मुझे ताना मिला है कि मैंने कराचीवाले प्रस्तावका सोचा ही नहीं। मंत्रियोंको जो थोड़ी तनख्वाहें लेनी चाहिये, सो सिर्फ अिसलिअे नहीं कि कांग्रेसने अेक प्रस्ताव करके हुक्म दिया है, बल्कि अुसके लिअे अिससे बहुत अूंचे दरजेके कारण हैं। खैर कुछ भी हो, जहां तक मैं जानता हूं, कांग्रेसने अुस प्रस्तावको कभी बदला नहीं और वह आज भी अुतना ही लागू होता है, जितना कि पास होनेके वक्त होता था।

मैं यह नहीं कहता कि जो तनख्वाहें बढ़ाअी गअी हैं वह ठीक हुआ है। लेकिन मैं मंत्रियोंकी बात सुने बगैर अिसको बुरा-भला नहीं कह सकता। टीका करनेवालोंको यह समझ लेना चाहिये कि मेरा अुन पर या अपने सिवा किसी और पर भी कोअी काबू नहीं है। न मैं कार्यकारिणी-समितिके सारे जलसोंमें होता हूं। जब सभापति चाहते हैं तभी जाता हूं। मैं तो सिर्फ अपनी राय दे सकता हूं, अगर अुसकी कुछ भी कीमत हो। और अुसकी

कीमत तभी हो सकती है जब वह सोच-विचार कर हकीकतके आधार पर दी जाये।

अमीर और गरीबमें, अूंची नौकरियों और छोटी नौकरियोंमें भयानक फर्कका सवाल अेक अलग विषय है। अिसमें बहुत सोच-विचारकी जरूरत है और तब्दीली जड़में करनी पड़ेगी। थोड़े मंत्रियों और अुनके सेक्रेटरियोंकी तनख्वाहोंके सिलसिलेमें लगे हाथ अिसका निपटारा नहीं हो सकता। दोनों चीजोंका अपने अपने महत्त्वके अनुसार निर्णय होना चाहिये। मंत्रियोंकी तनख्वाहोंका सवाल तो मंत्री आप ही हल कर सकते हैं। दूसरा प्रश्न तो अिससे बहुत लम्बा-चौड़ा है, और अुसमें बहुत बारीकीसे जांच-पड़ताल करनेकी जरूरत होगी। मैं तो यह माननेको हमेशा तैयार हूं कि मंत्रियोंको फौरन ही अपने अपने प्रान्तमें अिस कामको अपने हाथमें लेना चाहिये और सबसे पहले नीची नौकरीवालोंकी तनख्वाहों पर सोच-विचार करके, जहां जरूरी हो, तनख्वाहें बढ़ा दी जानी चाहिये।

हरिजनसेवक, ९–६–'४६; पृ० १७६

## चौथा विभाग : संरक्षकता

### ७६

# संरक्षकताका सिद्धान्त

[ श्री महादेव देसाअीके 'गांधी-सेवा-संघ-सम्मेलन—३' लेखसे । ]

"संरक्षकताका सिद्धान्त तो मेरी समझमें नहीं आता। क्या अ
संक्षेपमें अिसे समझा सकेंगे ?" अेक सदस्यने कहा।

गांधीजी : "भला कुछ मिनटोंमें मैं अुसे कैसे समझा सकता हूं ? अ
जब कुछ मिनटोंमें मैं अुसे नहीं समझा सकता तो कुछ घंटोंमें भी मैं अुसे सम
सकूंगा या नहीं, यह मैं नहीं जानता। फर्ज कीजिये कि विरासतके या अुद्यो
व्यवसायके द्वारा मुझे प्रचुर सम्पत्ति मिल गअी, तब मुझे यह जानना चाहिये
वह सब सम्पत्ति मेरी नहीं है, बल्कि मेरा तो अुस पर अितना ही अधिकार
कि जिस तरह दूसरे लाखों आदमी गुजर करते हैं अुसी तरह मैं भी अिज्जतके स
अपनी गुजर भर करूं। मेरी शेष सम्पत्ति पर राष्ट्रका हक है और अुर
हितार्थ अुसका अुपयोग होना आवश्यक है। अिस सिद्धान्तका प्रतिपादन मैंने
किया था जब कि जमींदारों और राजाओंकी सम्पत्तिके सम्बन्धमें समाजव
सिद्धान्त देशके सामने आया था। समाजवादी अिन सुविधाप्राप्त वर्गोंको खत
कर देना चाहते हैं, जब कि मैं यह चाहता हूं कि वे (जमींदार और राज
अपने लोभ और सम्पत्तिके स्वामित्वकी भावनाको छोड़ दें और अपनी सम्पत्ति
बावजूद अुन लोगोंके समकक्ष बन जायें जो मेहनत करके रोटी कमाते
मजदूरोंको भी यह महसूस करना होगा कि मजदूरका काम करनेकी शक्ति
जितना अधिकार है, मालदार आदमीका अपनी सम्पत्ति पर अुससे भी कम

"यह दूसरी बात है कि अिस तरहके सच्चे ट्रस्टी कितने हो स
हैं। अगर सिद्धान्त ठीक हैं तो यह बात गौण है कि अुनका पालन अ
लोग कर सकते हैं या केवल अेक आदमी ही कर सकता है। यह प्र
आत्म-विश्वासका है। अगर आप अहिंसाके सिद्धान्तको स्वीकार करें, तो आप
अुसके अनुसार आचरण करनेकी कोशिश करनी चाहिये। चाहे अुसमें आप
सफलता मिले या असफलता। आप यह तो कह सकते हैं कि अिस
अमल करना मुश्किल है, लेकिन अिस सिद्धान्तमें अैसी कोअी बात नहीं
जिसके लिअे यह कहा जा सके कि वह बुद्धिग्राह्य नहीं है।"

हरिजनसेवक, ३-६-'३९; पृ० १२३

## ७७

# ट्रस्ट क्या है?

[ 'गांधीजीकी पैदल यात्राकी डायरी' से।]

"आपने धनवानोंको संरक्षक (ट्रस्टी) बन जानेको कहा है। क्या अिसका अर्थ यह है कि अुन्हें अपनी संपत्तिका निजी स्वामित्व छोड़ देना चाहिये और अुसका अैसा ट्रस्ट बना देना चाहिये, जो कानूनकी नजरमें जायज हो और जिसका प्रबंध लोकशाहीके ढंगसे हो? वर्तमान अधिकारीके मरने पर अुसका वारिस कैसे तय किया जायेगा?"

अिस प्रश्नके अुत्तरमें गांधीजीने कहा, धन-संपत्तिके विषयमें मेरे विचार आज भी वही हैं जो वर्षों पहले थे; यानी प्रत्येक वस्तु ओश्वरकी है और ओश्वरने ही अुसे बनाया है। अिसलिअे वह अुसकी सारी मनुष्य-सृष्टिके लिअे है, न कि किसी व्यक्ति-विशेषके लिअे। यदि किसी व्यक्तिके पास जितना अुसे मिलना चाहिये अुससे अधिक हो, तो वह अुसका संरक्षक है, यानी अुसका अुपयोग लोगोंके हितमें होना चाहिये।

ओश्वर सर्वशक्तिमान है, अिसलिअे अुसे जमा करके रखनेकी जरूरत नहीं होती। वह नित्य पैदा करता है; अिसी प्रकार सिद्धान्तके रूपमें मनुष्यको भी रोजका काम रोज चलाना चाहिये और चीजें अिकट्ठी करके नहीं रखना चाहिये। यदि लोग आम तौर पर अिस सत्यको अंगीकार कर लें, तो अुसे कानूनी रूप मिल जाय और संरक्षकता कानून-सम्मत संस्था बन जाय। मैं चाहता हूं कि यह संसारके लिअे भारतकी देन बन जाय। फिर कोओी शोषण नहीं रहेगा और न आस्ट्रेलिया तथा दूसरे देशोंकी तरह गोरों और अुनकी संतानोंके लिअे स्थान सुरक्षित रखना पड़ेगा। अिन भेद-भावोंमें अैसे युद्धके बीज विद्यमान हैं, जो पिछले दोनों युद्धोंसे भी अधिक प्रचंड होगा। रही बात अुत्तराधिकारीकी, सो अधिकारारूढ़ ट्रस्टीको अपना अुत्तराधिकारी नामजद करनेका हक होगा, बशर्ते कि कानून अुसे मंजूर कर ले।

हरिजन, २३-२-'४७; पृ० ३७, ३९

## ७८

# संरक्षकताके बारेमें कुछ प्रश्न

प्र० — क्या जो चीज केवल हिंसासे ही प्राप्त की जा सकती है, अुसकी रक्षा अहिंसा द्वारा की जा सकती है?

अु० — जो वस्तु हिंसासे हासिल की जाती है अुसकी अहिंसासे रक्षा नहीं की जा सकती। अितना ही नहीं, अहिंसाकी शर्त यह है कि अुस पापकी कमाअीको छोड़ दिया जाय।

प्र० — क्या खुली या छिपी हुअी हिंसाके सिवा और किसी तरह पूंजी अेकत्र करना संभव है?

अु० — खानगी व्यक्तियों द्वारा अिस प्रकारका धन-संचय हिंसक अुपायोंके सिवा और किसी तरह असंभव है; परंतु अहिंसक समाजमें राज्य द्वारा अैसा संचय संभव ही नहीं है, वांछनीय और अनिवार्य भी है।

प्र० — मनुष्य भौतिक संपत्ति अिकट्ठी करे या नैतिक, परंतु वह करता है समाजके दूसरे सदस्योंकी सहायता या सहयोगसे ही। तो क्या अुसका कुछ भी भाग मुख्यतः व्यक्तिगत लाभके लिअे काममें लेनेका अुसे कोअी नैतिक हक है?

अु० — नहीं, कोअी नैतिक हक नहीं है।

प्र० — किसी संरक्षक (ट्रस्टी) का अुत्तराधिकारी कैसे तय किया जायगा? क्या अुसे किसीके नामका सिर्फ प्रस्ताव करनेका ही अधिकार होगा और अन्तिम निर्णय राज्यके हाथमें रहेगा?

अु० — चुनावका अधिकार प्रथम संरक्षक बननेवाले मूल मालिकको होना चाहिये, परंतु अिस चुनावको अन्तिम रूप राज्य दे। अैसी व्यवस्थासे राज्य और व्यक्ति दोनों पर अंकुश रहता है।

प्र० — संरक्षकताके सिद्धान्त पर अमल होनेसे जब अिस प्रकार व्यक्तिगत संपत्तिकी जगह सार्वजनिक संपत्ति आ जायगी, तब क्या स्वामित्व राज्यका होगा जो हिंसाका साधन है; या राज्यके कानूनोंसे अधिकार पानेवाली परन्तु राजी-खुशी और सहकारके आधार पर बनी हुअी पंचायतों और म्युनिसिपालिटियों आदि संस्थाओंका होगा?

अु० — अिस प्रश्नमें विचारकी कुछ गड़बड़ है। बदली हुअी सामाजिक स्थितिमें कानूनी स्वामित्व संरक्षकका रहेगा, राज्यका नहीं। राज्य मिल्कियतको

जब्त न करे और समाजकी सेवाके लिअे पूंजी या मिल्कियतके साथ मालिककी योग्यता भी समाजके काममें आवे, अिसलिअे संरक्षकताका सिद्धान्त अमलमें लाया जाता है। यह भी जरूरी नहीं कि राज्यका आधार सदा हिंसा पर ही हो। सिद्धान्तके रूपमें अैसा हो सकता है, परंतु अिस सिद्धान्तको कार्यान्वित करनेके लिअे काफी हद तक अहिंसाके आधार पर चलनेवाले राज्यकी जरूरत होगी।

हरिजन, १६–२–'४७; पृ० २५

## ७९

## मैं क्यों संरक्षकताके सिद्धान्तको तरजीह देता हूं?

[९ और १० नवम्बर, १९३४ को श्री निर्मलकुमार बोसने गांधीजीके साथ अिस विषयकी चर्चा की थी, जिसका गांधीजी द्वारा संशोधित विवरण 'दि मॉडर्न रिव्यू' के अक्तूबर, १९३५ के अंकमें प्रकाशित हुआ था। अुस विवरणमें से कुछ प्रश्नोत्तर नीचे दिये जाते हैं।]

प्र० — क्या प्रेम या अहिंसा परिग्रह या शोषणसे किसी भी रूपमें संगत हैं? यदि परिग्रह और अहिंसा साथ-साथ नहीं रह सकते हैं, तो क्या आप जमीन और कारखानोंकी वैयक्तिक मालिकीका अनिवार्य बुराअीके रूपमें अुस समय तक समर्थन करेंगे, जब तक लोग अितने अधिक परिपक्व या शिक्षित नहीं हो जाते कि अिसके बिना अपना काम चला सकें? अगर अैसा खयाल हो तो फिर क्या यह अधिक अच्छा नहीं होगा कि सारी जमीन राज्यके अधिकारमें हो और राज्य जनताके नियंत्रणमें रहे?

अु० — प्रेम और वर्जनशील परिग्रह अेकसाथ कभी नहीं रह सकते। सिद्धान्तके तौर पर, जब प्रेम परिपूर्ण होता है तब अपरिग्रह भी परिपूर्ण होना चाहिये। यह शरीर हमारा अन्तिम परिग्रह है। अिसलिअे कोअी मनुष्य केवल तभी संपूर्ण प्रेमको व्यवहारमें ला सकता है और पूर्णतया अपरिग्रही हो सकता है, जब कि वह मानव-जातिकी सेवाके खातिर मृत्युका आलिंगन करने तथा देहका त्याग करनेके लिअे भी तैयार रहता है। लेकिन यह सिद्धान्तमें ही सत्य है। यथार्थ जीवनमें हम मुश्किलसे ही सम्पूर्ण प्रेमका व्यवहार कर सकते हैं, क्योंकि यह शरीर परिग्रहके रूपमें हमेशा हमारे साथ रहनेवाला है। मनुष्य सदैव अपूर्ण रहेगा और फिर भी वह सदैव पूर्ण बननेकी कोशिश करेगा। अतअेव जब तक हम जीवित रहेंगे तब तक

पूर्ण प्रेम या पूर्ण अपरिग्रह अलभ्य आदर्शके रूपमें ही रहेंगे। परन्तु अुस आदर्शकी ओर बढ़नेकी हमें निरंतर कोशिश करते रहना चाहिये।

जिनके पास अभी संपत्ति है, अुनसे कहा जाता है कि वे अपनी संपत्तिके ट्रस्टी बन जायं और गरीबोंके खातिर अुसकी रक्षा और सार-संभाल करें। आप कह सकते हैं कि ट्रस्टीशिप या संरक्षकता तो कानूनकी अेक कल्पनामात्र है; व्यवहारमें अुसका कहीं कोअी अस्तित्व नहीं दिखाअी पड़ता। लेकिन यदि लोग अुस पर सतत विचार करें और अुसे आचरणमें अुतारनेकी कोशिश भी करते रहें, तो मानव-जातिके जीवनकी नियामक शक्तिके रूपमें प्रेमकी आज जितनी सत्ता दिखाअी देती है अुससे कहीं अधिक दिखाअी देगी। बेशक, पूर्ण संरक्षकता तो युक्लिडकी बिन्दुकी व्याख्याकी तरह अेक कल्पना ही है और अुतनी ही अप्राप्य भी है। लेकिन यदि हम अुसके लिअे कोशिश करें तो दुनियामें समानताकी सिद्धिकी दिशामें हम दूसरे किसी अुपायसे जितने आगे जा सकेंगे अुसके बजाय अिस अुपायसे ज्यादा आगे बढ़ सकेंगे।

प्र० — अगर आप कहते हैं कि वैयक्तिक परिग्रहका अहिंसाके साथ कोअी मेल नहीं बैठ सकता, तो फिर आप अुसे क्यों बरदाश्त करते हैं?

अु० — यह छूट हमें अुन लोगोंके लिअे रखनी होती है, जो धन तो कमाते हैं लेकिन अपनी कमाअीका अुपयोग स्वेच्छासे मानव-जातिकी भलाअीमें नहीं करना चाहते।

प्र० — तब वैयक्तिक संपत्तिके स्थान पर राज्यके स्वामित्वकी स्थापना करके हिंसाको कमसे कम क्यों न किया जाय?

अु० — यह वैयक्तिक मालिकीसे अधिक अच्छा है। लेकिन हिंसाकी मददसे अैसा किया जाय तो यह भी आपत्तिजनक है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि राज्यने पूंजीवादको हिंसाके द्वारा दबानेकी कोशिश की, तो वह खुद ही हिंसाके जालमें फंस जायेगा और कभी भी अहिंसाका विकास नहीं कर सकेगा। राज्य हिंसाका अेक केन्द्रित और संगठित रूप ही है। व्यक्तिमें आत्मा होती है, परन्तु चूंकि राज्य अेक जड़ यंत्रमात्र है, अिसलिअे अुसे हिंसासे कभी अलग नहीं किया जा सकता। क्योंकि हिंसा पर ही अुसका अस्तित्व निर्भर करता है। अिसलिअे मैं संरक्षकताके सिद्धान्तको तरजीह देता हूं।

प्र० — हम अेक विशिष्ट अुदाहरण पर आयें। कल्पना कीजिये कि अेक कलाकार कुछ चित्र अपने पुत्रके पास छोड़ जाता है; वह पुत्र राष्ट्रके लिअे अुनका कोअी मूल्य नहीं समझता है, अिसलिअे वह अुन्हें बेच देता या बरबाद कर देता है। अिससे राष्ट्र अेक व्यक्तिकी मूर्खताके कारण कुछ बहुमूल्य चित्रोंसे वंचित रहता है। अगर आपको यह विश्वास करा दिया

जाय कि वह पुत्र अुस अर्थमें संरक्षक कभी नहीं बन सकेगा जिस अर्थमें आप अुसे बनाना पसंद करते हैं और अैसी स्थितिमें राज्य कमसे कम हिंसाका प्रयोग करके वे चित्र अुससे छीन ले, तो क्या राज्यके अिस कदमको आप अुचित नहीं मानेंगे?

अु० — हां, राज्य सचमुच अुन चित्रोंको छीन लेगा और मैं मानता हूं कि राज्य यदि अिस काममें कमसे कम हिंसाका अुपयोग करे तो वह न्यायसंगत होगा। लेकिन यह डर हमेशा बना रहता है कि कहीं राज्य अुन लोगोंके खिलाफ, जो अुससे मतभेद रखते हैं, बहुत ज्यादा हिंसाका अुपयोग न करे। सम्बन्धित लोग यदि स्वेच्छासे संरक्षकोंकी तरह व्यवहार करने लगें, तो मुझे सचमुच बड़ी खुशी होगी। लेकिन यदि वे अैसा न करें तो मैं मानता हूं कि हमें राज्यके द्वारा भरसक कम हिंसाका प्रयोग करके अुनकी संपत्ति ले लेनी पड़ेगी। अिसी कारणसे मैंने गोलमेज परिषदमें यह कहा था कि सभी निहित हितवालोंकी सम्पत्तिकी जांच होनी चाहिये और जहां आवश्यक मालूम हो वहां अुनकी सम्पत्ति राज्यको — स्थितिके अनुसार मुआवजा देकर या मुआवजा दिये बिना — अपने हाथमें कर लेनी चाहिये।

व्यक्तिगत तौर पर मैं अिसे ज्यादा पसंद करूंगा कि राज्यके हाथमें सत्ता केन्द्रित होनेके बजाय संरक्षकताकी भावना समाजमें व्यापक बने। क्योंकि मेरी रायमें राज्यकी हिंसाकी तुलनामें वैयक्तिक मालिकीकी हिंसा कम हानिकर है। लेकिन यदि राज्यकी मालिकी अनिवार्य ही हो, तो मैं राज्यकी कमसे कम मालिकीका समर्थन करूंगा।

प्र० — तब क्या हम यह समझें कि आपमें और समाजवादियोंमें मौलिक अन्तर यह है कि आपका विश्वास है कि मनुष्य अपने जीवनकी व्यवस्थामें आदतकी अपेक्षा आत्म-निर्देशन या संकल्प-शक्तिसे अधिक प्रेरित होते हैं; और अुनका विश्वास है कि मनुष्य संकल्प-शक्तिकी अपेक्षा आदतसे अधिक प्रेरित होते हैं? क्या अिसी कारणसे आप आत्म-सुधारके लिअे प्रयत्न करते हैं, जब कि वे अैसी पद्धतिकी रचनाका प्रयत्न करते हैं जिसमें लोगोंके लिअे दूसरोंका शोषण करनेकी अपनी अिच्छाको कार्यान्वित करना असंभव हो जायेगा?

अु० — यह स्वीकार करते हुअे भी कि मनुष्य वास्तवमें आदतोंके बल पर जीवित रहता है, मेरा विचार है कि अुसका अपनी संकल्प-शक्तिको आचरणमें अुतारकर जीना अधिक अच्छा है। मैं यह भी विश्वास रखता हूं कि मनुष्यमें अपनी संकल्प-शक्तिको अिस हद तक विकसित करनेकी क्षमता है, जो शोषणको घटाकर कमसे कम कर दे। मैं राज्यकी सत्ताकी वृद्धिको बड़ेसे बड़े भयकी दृष्टिसे देखता हूं। क्योंकि जाहिरा तौर पर तो

वह शोषणको कमसे कम करके समाजको लाभ पहुंचाती है; परन्तु मनुष्यके व्यक्तित्वको — जो सब प्रकारकी अुन्नतिकी जड़ है — नष्ट करके वह मानव-जातिको बड़ीसे बड़ी हानि पहुंचाती है। हम अैसे कितने ही अुदाहरण जानते हैं जिनमें लोगोंने संरक्षकताको अपनाया है; लेकिन अैसा अेक भी अुदाहरण नहीं है जहां राज्यका अस्तित्व सचमुच गरीबोंके लिअे हो।

प्र० — लेकिन संरक्षकताके अुदाहरणोंके रूपमें आप जिन लोगोंके नाम कभी कभी पेश करते हैं, अुनकी अिस विशेषताका कारण क्या आपका व्यक्तिगत प्रभाव ही नहीं है? आपकी कोटिके शिक्षक कभी कभी ही आते हैं। अतअेव यह क्या अधिक अच्छा न होगा कि आप जैसे मनुष्योंके प्रासंगिक आगमन पर निर्भर रहनेके बजाय मनुष्यमें अिन आवश्यक परिवर्तनोंको सिद्ध करनेका काम किसी संगठनको सौंप दिया जाय?

अु० — मेरी बात छोड़ दीजिये। आप तो यह याद रखिये कि मानव-जातिके सभी महान शिक्षकोंका प्रभाव अुनके जीवनके बाद भी कायम रहा है। मुहम्मद, बुद्ध या अीसाके समान हरअेक पैगम्बरकी शिक्षाओंमें कुछ स्थायी अंश होता है और कुछ अैसा जो तत्कालीन जरूरतोंकी दृष्टिसे दिया गया होता है और अिसलिअे जिसकी अुपयोगिता अुसी कालके लिअे होती है। हम अुनकी शिक्षाके स्थायी पहलूके साथ साथ अस्थायी पहलूको भी पालनेकी कोशिश करते हैं, अिसीलिअे धार्मिक आचारोंमें अितनी विकृतियां पैदा हो जाती हैं। लेकिन यह तो आप देख सकते हैं कि अुनकी मृत्युके बाद भी अुनका प्रभाव निरंतर बना रहा है।

अिसके सिवा, मुझे जो बात नापसंद है वह है बल पर आधारित संगठन। राज्य अैसा ही संगठन है। स्वेच्छापूर्वक किया जानेवाला संगठन जरूर होना चाहिये।

## ८०

# खाओीको पाटनेके लिअे पुल

[श्री महादेव देसाओीके 'साप्ताहिक पत्र' से मैसूर नगरपालिकाके मानपत्र पर गांधीजी द्वारा दिये गये अुत्तरका अेक अंश।]

मैं राजाके महलसे और लखपतिकी शानदार हवेलीसे ओीर्पा नहीं करता हूं। लेकिन मेरा अुनसे सानुरोध निवेदन है कि अुन्हें अुस खाओीको पाटनेके लिअे कुछ करना चाहिये जो अुन्हें किसानोंसे अलग करती है। वे अैसे पुलका निर्माण करें जो अुन्हें गरीब किसानोंके नजदीक लाये। वे अपना जीवन अैसा बनायें कि अुनके जीवनमें और अुनके आसपासके गरीबोंकी जिन्दगीमें कहीं कुछ मेल तो हो। मैं अपनी बुद्धिके अनुसार अिस पुलको बनानेकी कोशिश कर रहा हूं और मैं अत्यन्त नम्रतापूर्वक कहना चाहता हूं कि आप यह पुल आपकी सोनेकी खदानों और भद्रावती जैसे कारखानोंसे नहीं बना सकते हैं।

यंग अिंडिया, ४-८-'२७; पृ० २४२-४३

## ८१

# कानूनी ट्रस्टीशिप

[श्री प्यारेलालके 'गांधीजीका साम्यवाद' नामक लेखसे।]

आजके धनवानोंको वर्ग-संघर्ष और स्वेच्छासे धनके ट्रस्टी बन जानेके दो रास्तोंमें से अेक रास्ता चुन लेना होगा। अुन्हें अपनी जायदादकी रक्षाका हक होगा। अुन्हें यह भी हक होगा कि अपने स्वार्थके लिअे नहीं बल्कि देशके भलेके लिअे और अिसलिअे दूसरोंका शोषण किये बिना वे धनको बढ़ानेमें अपनी बुद्धिका अुपयोग करें। अुनकी सेवा और अुसके द्वारा होनेवाले समाजके कल्याणको ध्यानमें रखकर राज्य अुन्हें निश्चित कमीशन भी देगा। अुनके बच्चे योग्य हुअे तो ही वे अुस जायदादके संरक्षक बन सकेंगे।

खयाल कीजिये कि कल हिन्दुस्तान आजाद हो जाता है, तो अुस हालतमें सारे पूंजीपतियोंको अपने धनके कानूनी ट्रस्टी होनेका मौका दिया जायगा। मगर अैसा कोओी कानून अुन पर अूपरसे लादा नहीं जायगा। वह नीचेसे आयेगा। जब लोग ट्रस्टीशिपके मानी समझ लेंगे और अिसके लिअे देशमें

वातावरण पैदा हो जायगा, तो लोग खुद ग्राम-पंचायतोंसे शुरू करके अैसा कानून बनायेंगे और अुस पर अमल करेंगे। अिस तरहकी बात जब नीचेसे पैदा होगी, तो सब अुसे खुशी-खुशी मंजूर कर लेंगे। अूपरसे लादने पर वह जड़ चीजके समान बोझिल मालूम होगी।

हरिजनसेवक, ३१-३-'४६; पृ० ६३

# ८२

# संरक्षकताका व्यावहारिक फार्मूला

[श्री प्यारेलालके 'गांधीजीका संरक्षकताका सिद्धान्त' नामक लेखसे।]

जेलसे छूटने पर हम लोगोंने अिस प्रश्नको आगाखां महलकी नजरबन्द छावनीमें जहां छोड़ा था वहांसे फिर हाथमें लिया। किशोरलालभाअी और नरहरिभाअी भी संरक्षकताका अेक सीधा-सादा और व्यावहारिक फार्मूला तैयार करनेमें शरीक हो गये। वह बापूके सामने रखा गया। अुन्होंने अुसमें थोड़ेसे फेरबदल किये। अन्तिम मसौदा अिस प्रकार है:

१. संरक्षकता (ट्रस्टीशिप) अैसा साधन प्रदान करती है, जिससे समाजकी मौजूदा पूंजीवादी व्यवस्था समतावादी व्यवस्थामें बदल जाती है। अिसमें पूंजीवादकी तो गुंजाअिश नहीं है, मगर यह वर्तमान पूंजीपति-वर्गको अपना सुधार करनेका मौका देती है। अिसका आधार यह श्रद्धा है कि मानव-स्वभाव अैसा नहीं है, जिसका कभी अुद्धार न हो सके।

२. वह संपत्तिके व्यक्तिगत स्वामित्वका कोअी हक मंजूर नहीं करती; हां, अुसमें समाज स्वयं अपनी भलाअीके लिअे किसी हद तक अिसकी अिजाजत दे सकता है।

३. अिसमें धनके स्वामित्व और अुपयोगके कानूनी नियमनकी मनाही नहीं है।

४. अिस प्रकार राज्य द्वारा नियंत्रित संरक्षकतामें कोअी व्यक्ति अपनी स्वार्थ-सिद्धिके लिअे या समाजके हितके विरुद्ध संपत्ति पर अधिकार रखने या अुसका अुपयोग करनेके लिअे स्वतन्त्र नहीं होगा।

५. जैसे अुचित न्यूनतम जीवन-वेतन स्थिर करनेकी बात कही गअी है, ठीक अुसी तरह यह भी तय कर दिया जाना चाहिये कि समाजमें किसी भी व्यक्तिकी ज्यादासे ज्यादा कितनी आमदनी हो।

न्यूनतम और अधिकतम आमदनियोंके बीचका फर्क अुचित, न्यायपूर्ण और समय समय पर अिस प्रकार बदलता रहनेवाला होना चाहिये कि अुसका झुकाव अुस फर्कको मिटानेकी तरफ हो।

६. गांधीवादी अर्थ-व्यवस्थामें अुत्पादनका स्वरूप समाजकी जरूरतसे निश्चित होगा, न कि व्यक्तिकी सनक या लालचसे।

हरिजन, २५-१०-'५२; पृ० ३०१

## ८३

# अहिंसक समाजमें संरक्षकका स्थान

प्र० — आपके लेखोंसे यह खयाल होता है कि आपका 'संरक्षक' अेक बहुत सद्भावनाशील परोपकारी और दानदातासे अधिक कुछ नहीं है — वैसा ही जैसे कि प्रथम पारसी बैरोनेट ताता, वाड़िया, बिड़ला और श्री बजाज आदि हैं। क्या यह ठीक है? क्या आप कृपा करके समझा-येंगे कि किसी धनवानकी संपत्तिसे लाभ अुठानेका सबसे पहला हक आप किसका समझते हैं? आय और पूंजीके हिस्से या रकमकी वह मर्यादा आप बता सकते हैं जहां तक वह अपने पर, अपने रिश्तेदारों पर और सार्व-जनिक कामों पर खर्च कर सकता है? जो अिस सीमाका अुल्लंघन करे अुसे अैसा करनेसे रोका जा सकता है? यदि वह संरक्षकके नाते अपनी जिम्मे-दारी पूरी करनेके लिअे अयोग्य हो या अन्यथा असफल सिद्ध हो, तो क्या वह अुस संपत्तिके लाभके अधिकारी व्यक्ति द्वारा या राज्य द्वारा हटाया जा सकता है और हिसाब देनेको मजबूर किया जा सकता है? क्या राजाओं और जमीदारों पर भी यही सिद्धान्त लागू होते हैं या अुनकी संरक्षकता भिन्न प्रकारकी है?

अु० — यदि संरक्षकताका विचार जोर पकड़ जायगा, तो परोपकारको जिस रूपमें हम जानते हैं वैसा वह नहीं रहेगा। जिन जिनके नाम आपने गिनाये हैं अुनमें से जमनालालजी ही अिसके निकट पहुंचे थे, परंतु सिर्फ निकट ही। संरक्षकका जनताके सिवा कोअी अुत्तराधिकारी नहीं होता। अहिंसा पर आधारित राज्यमें संरक्षकोंका कमीशन नियंत्रित होगा। राजाओं और जमी-दारोंका दर्जा दूसरे धनवानोंका-सा ही होगा।

हरिजन, १२-४-'४२; पृ० ११६

## ८४

# अपने धनका संरक्षक

[श्री महादेवभाओी देसाओीके 'अेक रसिक संवाद – २ : अेक बहनके प्रश्न' नामक लेखसे ।]

प्र० — अहिंसाके सिद्धान्तको माननेवाला क्या धन-दौलत रख सकता है? अगर हां, तो अहिंसा द्वारा वह अुसकी रक्षा कैसे करेगा?

अु० — अहिंसावादी अपनी दौलतका मालिक नहीं हो सकता। भले अुसके पास लाखों रुपये हों, मगर वह अपनेको अुस धनका संरक्षक ही समझेगा। अगर चोर या डाकुओंमें जाकर अुसे रहना है, तो कमसे कम सामान अुसे अपने पास रखना होगा। शायद अेक लंगोटसे ही अुसे संतोष मानना पड़े। अगर वह अैसा करेगा तो वह चोर-डाकूका हृदय जरूर पलट सकेगा।

मगर अितने पर हम कोओी व्यापक सिद्धान्त नहीं बना सकते। अहिंसक राज्यमें तो बहुत कम चोर-डाकू होंगे अैसा मान लेना चाहिये। व्यक्तिके लिअे यही सहज नियम समझा जाये कि अुसे पूरा अपरिग्रही बनकर रहना है। फर्ज कीजिये कि मैंने 'जरायम पेशा' कहलाती कौमके बीचमें जाकर रहनेका निश्चय किया है, तो मुझे चाहिये कि मैं अपने पास कुछ भी न रखूं। खानेका भी अुनसे मांग लूं और अगर वे कुछ न दें तो भूखा रहूं। जब वे देखेंगे कि मैं अुन लोगोंके बीचमें शुद्ध सेवाभावसे ही रहता हूं, तो वे मेरे मित्र बन जायेंगे। अिस मनोवृत्तिमें ही सच्ची अहिंसा है।

हरिजनसेवक, १४–९–'४०; पृ० २६१

# अस्तेय और अपरिग्रह

अिन व्रतों पर ज्यादा लिखनेकी जरूरत नहीं। पांच बड़े व्रतोंमें से ये हैं। जो आत्म-दर्शन करना चाहते हैं, अुनके लिअे ये व्रत जरूरी हैं। अिसलिअे अिन्हें आश्रमके व्रतोंमें स्थान दिया गया है।

## अस्तेय

अिस व्रतके पालनके लिअे सिर्फ अितना ही काफी नहीं है कि दूसरेकी चीज अुसकी अिजाजतके विना न ली जाय। जो चीज हमें जिस कामके लिअे मिली हो अुससे ज्यादा समय तक अुसे काममें लेना यह भी चोरी ही है। अिस व्रतकी वुनियादमें यह सूक्ष्म सत्य है कि परमात्मा प्राणियोंके लिअे हमेशाकी जरूरतकी चीजें ही हमेशा पैदा करता है और अुन्हें देता है। अुससे ज्यादा वह पैदा ही नहीं करता। अिसका अर्थ यह हुआ कि अपनी कमसे कम जरूरतसे ज्यादा मनुष्य जितना लेता है वह चोरीका लेता है।

## अपरिग्रह या गरीवी

अपरिग्रह अस्तेयके भीतर ही समाया हुआ है। अनावश्यक चीजें जैसे ली नहीं जानी चाहिये, वैसे ही अुनका संग्रह भी नहीं होना चाहिये। यानी जिस खुराक या साज-सामानकी हमें जरूरत न हो, अुसका संग्रह करना अिस व्रतका भंग करना है। जिसका कुर्सीके विना काम चल सकता है अुसे कुर्सी रखनी ही न चाहिये। अपरिग्रही मनुष्य अपना जीवन हमेशा सादेसे सादा वनाता जाय।

अपरिग्रह और अस्तेय मनकी स्थितियां ही हैं। शरीरके लिअे अुनका पूरा अमल असंभव है। शरीर खुद ही अेक परिग्रह है। और जव तक वह है तव तक दूसरे परिग्रहोंकी आशा रखता ही है। कुछ परिग्रह अनिवार्य हैं। 'कुछ' की तादाद भी हर मानसिक स्थितिके अनुसार होगी। जैसे जैसे वह अिन व्रतोंकी तरफ मुड़ती जायगी, वैसे वैसे मनुष्य शरीरका मोह छोड़ता जायगा और अपनी जरूरतें घटाता जायगा। सवके लिअे अेक ही माप निश्चित नहीं किया जा सकता। चींटीका परिग्रह दूसरा ही होगा। कणसे ज्यादा जमा करनेवाली चींटी परिग्रही है। हजारों कण समा जायं अितनी घास जिस हाथीके सामने पड़ी हो, अुसे परिग्रही नहीं माना जा सकता।

अैसी परेशानियोंसे संन्यासकी प्रचलित कल्पना पैदा हुअी मालूम होती है। अैसे संन्यासका पालन करना आश्रमका ध्येय नहीं। किसीके लिअे अैसा

संन्यास जरूरी भले ही हो। भले किसीमें दिगम्बर बनकर, समाधि लगाकर, गुफामें बैठकर विचारमात्रसे जगतका कल्याण करनेकी शक्ति हो। पर सभी गुफामें बैठ जायं तो नतीजा खराब ही होगा। साधारण स्त्री-पुरुषोंके लिअे मानसिक संन्यास ही संभव है। दुनियामें रहते हुअे भी सेवाभावसे और सेवाके लिअे ही जो जीता है वह संन्यासी है।

अैसा संन्यास सिद्ध करनेकी आश्रमको आशा है। वह अुसी दिशामें जा रहा है। अिस मानसिक संन्यासमें जरूरी चीजोंका संग्रह रहता है, फिर भी परिग्रहमात्रके (शरीर तकके) त्यागकी तैयारी होनी चाहिये। यानी अेक भी वस्तुके जानेसे चोट न लगनी चाहिये। और जब तक शरीर है तब तक सेवाका जो काम आये वह किया जाय। खाने-पहननेको मिले तो ठीक, न मिले तो भी ठीक। अैसी परीक्षाका समय आये तब कोअी आश्रमवासी हारे नहीं।

सत्याग्रह आश्रमका अितिहास, पृ० ३८–४०; १९५९

## ८६

# अस्तेय-व्रत

[ता० १६–२–'१६ को मद्रासमें वाय० अेम० सी० अे० के सभागृहमें दिये गये भाषणसे।]

मैं कहना चाहता हूं कि अेक दृष्टिसे हम सब चोर हैं। जिस चीजका मेरे लिअे तुरंत अुपयोग न हो अैसी चीज अगर मैं लेता हूं और अुसे अपने पास रख छोड़ता हूं, तो मैं अुस चीजकी चोरी करता हूं। मैं यह कहना चाहता हूं कि बिना किसी अपवादके सृष्टिका यह नियम है कि वह हमारी जरूरतकी चीजें रोज पैदा करती है। और अगर हर आदमी अपनी जरूरत जितना ही ले, अुससे अधिक न ले, तो अिस दुनियामें गरीबी न रहे और न कोअी मनुष्य भुखमरीका ही शिकार हो। हमारे बीच यह असमानता मौजूद है अिसका अर्थ ही है कि हम सब चोरी करते हैं। मैं समाजवादी नहीं हूं। और जिनके पास संपत्ति है अुनसे मैं अुसे छीनना भी नहीं चाहता। लेकिन मैं अितना जरूर कहना चाहता हूं कि हममें से जो व्यक्ति अंधकारमें से प्रकाशमें जाना चाहते हैं अुन्हें जरूर यह अस्तेय-व्रत पालना चाहिये। मैं किसीसे अुसकी संपत्तिका अपहरण नहीं करना चाहता। अगर मैं अैसा करता हूं तो अहिंसा-धर्मसे विमुख होता हूं। भले मेरी अपेक्षा किसी दूसरेके

पास अधिक सम्पत्ति हो। लेकिन मुझे कहना चाहिये कि कमसे कम अपना जीवन व्यवस्थित करनेके लिअे तो मुझे जिस चीजकी जरूरत नहीं है वह मैं अपने पास नहीं रख सकता। हिन्दुस्तानमें अैसे तीस लाख मनुष्य हैं जिन्हें अेक जून खाकर ही संतोष मानना पड़ता है। और वह भी केवल सूखी रोटी और चुटकीभर नमकसे ही। जब तक अिन तीस लाख मनुष्योंको पूरे वस्त्र और भोजन नहीं मिल जाता, तब तक आपको और मुझे हमारे पास जो कुछ है अुसे रखनेका अधिकार नहीं। मुझे और आपको, जिन्हें अधिक ज्ञान है, अपनी जरूरतें नियमित करनी चाहिये और स्वेच्छापूर्वक भूखे भी रहना चाहिये, ताकि अिन लोगोंकी सेवा-शुश्रूषा, भोजन और वस्त्रकी व्यवस्था हो सके। अिसमें से अपने-आप ही अपरिग्रह-व्रतका अुद्‌भव होता है।

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, चतुर्थ संस्करण; पृ० ३७७, ३८४

## ८७

# अैच्छिक गरीबी

[ता० २३–९–'३१ को लन्दनके गिल्ड-हाअुसमें दिये गये भाषणसे।]

जब मैंने अपने-आपको राजनीतिक जीवनकी भंवरोंमें खिचा हुआ पाया, तब मैंने अपने-आपसे पूछा कि मुझे अनैतिकतासे, असत्यसे और जिसे राजनीतिक लाभ कहा जाता है अुससे अछूता रहनेके लिअे क्या करना जरूरी है। . . . मैं आपको अपने अुस प्रयत्नकी तफसीलमें नहीं ले जाना चाहता, यद्यपि अुसके सम्बन्धमें मैंने जो कुछ किया वह दिलचस्प है और मेरे लिअे पवित्र भी है — मैं आपसे सिर्फ यह कह सकता हूं कि आरम्भमें मुझे काफी कठिन संघर्षसे गुजरना पड़ा और अपनी पत्नीके साथ तथा, जैसा कि मैं खूब स्पष्टतापूर्वक याद कर सकता हूं, अपने बच्चोंके साथ भी बहुत झगड़ना पड़ा। लेकिन जो हुआ अुसे जाने दीजिये; मतलबकी बात यह है कि मैं अिस दृढ़ निश्चय पर पहुंचा कि यदि मुझे अुन लोगोंकी सेवा करना है, जिनके बीच मेरा जीवन आ पड़ा है और जिनकी कठिनाअियोंको मैं दिन-प्रतिदिन देखता हूं, तो मुझे समूची संपत्ति तथा सारे परिग्रहका त्याग कर देना चाहिये।

मैं आपसे यह नहीं कह सकता कि ज्यों ही मैं अिस निश्चय पर पहुंचा, त्यों ही मैंने अेकदम प्रत्येक चीजका परित्याग कर दिया। मुझे आपके सामने

स्वीकार करना चाहिये कि पहले-पहल प्रगति धीमी रही। और अब जब मैं संघर्षके अुन दिनोंको याद करता हूं, तो मैं देखता हूं कि आरम्भमें यह दुःखद भी था। लेकिन ज्यों ज्यों दिन बीतते गये, मैंने महसूस किया कि कअी अन्य चीजोंका भी, जिन्हें मैं तब तक अपनी मानता था, त्याग करना चाहिये और अेक समय आया जब अुन वस्तुओंका त्याग मेरे लिअे निश्चित रूपसे हर्षका विषय हो गया। और, तब अेकके बाद अेक ये सारी वस्तुअें बहुत तेजीसे मुझसे छूटती गअीं। और आपको अपने ये अनुभव सुनाते हुअे, मैं कह सकता हूं कि मेरे कन्धोंसे अेक भारी बोझ अुतर गया। मुझे महसूस हुआ कि अब मैं राहतके साथ चल सकता हूं तथा अपने बन्धुओंकी सेवाके अपने कार्यको भी अधिक निश्चितता और अधिक प्रसन्नताके साथ कर सकता हूं। फिर तो किसी भी चीजका परिग्रह मेरे लिअे कष्टदायक और भाररूप बन गया।

अुस हर्षके कारणकी खोज करते हुअे मैंने पाया कि यदि मैं किसी भी चीजको अपनी मानकर अपने पास रखता हूं, तो मुझे अुसकी सारी दुनियासे रक्षा भी करना पड़ती है। मैंने यह भी देखा कि कअी लोग हैं जिनके पास यह चीज नहीं है, यद्यपि वे अुसे चाहते तो हैं, और यदि वे भूखे, अकाल-पीड़ित लोग मुझे अेकान्त स्थानमें पायें, तो वे केवल मेरे पासकी अुस चीजका बंटवारा करके ही सन्तुष्ट नहीं होंगे, बल्कि अुसे मुझसे छीन भी लेंगे और अैसी हालतमें मुझे पुलिसकी सहायता भी प्राप्त करनी होगी। मैंने अपने-आपसे कहा: यदि वे अिसे चाहते हैं और लेते हैं तो अैसा वे किसी अीर्षापूर्ण हेतुसे नहीं करते हैं, लेकिन वे अैसा अिसलिअे करते हैं कि अुनकी आवश्यकता मेरी आवश्यकतासे कहीं अधिक है।

और तब मैंने अपने-आपसे कहा: परिग्रह अपराध है। मैं तब ही अमुक चीजोंका संग्रह कर सकता हूं, जब मुझे ज्ञात हो कि दूसरे भी जो अुन चीजोंका संग्रह करना चाहते हैं अैसा कर सकते हैं। लेकिन हम जानते हैं — हममें से हरअेक यह अनुभवसे कह सकता है कि अैसा होना असंभव है। अतअेव अेक ही चीज अैसी है जो सबके द्वारा संग्रह की जा सकती है, और वह है अ-परिग्रह। दूसरे शब्दोंमें स्वेच्छापूर्ण त्याग।

तब आप मुझे कह सकते हैं: लेकिन जब आप स्वेच्छा-स्वीकृत गरीबी तथा अपरिग्रहके बारेमें बोल रहे हैं अुसी समय हम देखते हैं कि आप अपने शरीर पर बहुतसी चीजें धारण किये हुअे हैं! और, यदि आप जिस चीजके बारेमें मैं अभी कह रहा हूं, अुसके अर्थको अूपरी तौर पर ही समझे हैं तो आपका यह कटाक्ष ठीक भी होगा। किन्तु आप अुसके अूपरी अर्थको नहीं आन्तरिक अर्थको समझिये। जब तक आपके पास शरीर है

तब तक आपको शरीरको कुछ-न-कुछ पहनाना भी पड़ेगा लेकिन। तब आप अपने शरीरके लिअे वह सब नहीं लेंगे जो आपको मिल सकता है, लेकिन यथासंभव कम लेंगे; जितनेसे आपका काम चल जाय अुतना ही लेंगे। आप अपने मकानकी आवश्यकताकी पूर्तिके लिअे अनेक हवेलियां नहीं चाहेंगे, बल्कि मामूली झोंपड़ीसे ही संतोष कर लेंगे। आपके भोजन आदिके सम्बन्धमें भी यही नियम लागू होगा।

अब आप देख सकते हैं कि आप और हम जिस चीजको सभ्यता समझते हैं और जिस आनन्दपूर्ण तथा अभीष्ट अवस्थाका मैं आपके सामने चित्रण कर रहा हूं, अुन दोनोंके बीच संघर्ष है — अैसा संघर्ष जो रोज-रोज चल रहा है। दूसरी ओर सभ्यताका आधार आवश्यकताओंकी वृद्धि समझा जाता है। यदि आपके पास अेक कमरा है, तो आप दो तीन कमरोंकी अिच्छा करते हैं और जितने अधिक कमरे होते हैं अुतने ही खुश होते हैं और अिसी तरह आप आपके मकानमें जितना आ सकता हो अुतना ही ज्यादा साज-सामान रखनेकी अिच्छा रखते हैं। अिस तरह आप अपनी आवश्यकतायें बढ़ाते रहते हैं और आपकी अिस अिच्छाका कोअी अन्त नहीं होता। और जितना अधिक आप संग्रह करते हैं, माना जाता है कि आप अुतनी ही अुत्तम संस्कृतिका प्रतिनिधित्व करते हैं। शायद मैं अिसे अुतनी अच्छी तरहसे आपके सामने नहीं रख पा रहा हूं जितना कि अुसे अिस सभ्यताके हिमायती रखेंगे। परन्तु जैसा मैं अिसे समझता हूं, अुसी ढंगसे आपके सामने पेश कर रहा हूं।

दूसरी तरफ आप पाते हैं कि जितना कम आप रखते हैं, जितना कम चाहते हैं अुतने ही आप अधिक अच्छे बनते हैं। अच्छे किसके लिअे? अिस जीवनके सुखभोगके लिअे नहीं, लेकिन अपने सहजीवियोंकी अुस व्यक्तिगत सेवाके सुखका स्वाद लेनेके लिअे, जिसके लिअे कि आप अपनी देह, बुद्धि और आत्माका अर्पण करते हैं। . . . यह शरीर भी आपका नहीं है। वह आपको अस्थायी परिग्रहके तौर पर दिया गया है। और जिसने दिया है वह अुसे आपसे ले भी सकता है।

अिसलिअे अपनेमें वह अडिग विश्वास रखकर मुझे हमेशा अैसी अिच्छा करना चाहिये कि अीश्वरकी अिच्छाके अनुसार अिस शरीरका भी समर्पण हो और जब तक वह मेरे पास है, अिसका अुपयोग विलासमें न हो, न अैश-आराममें हो, लेकिन सेवाके लिअे ही हो और हमेशा — अपनी जागृतिके हर क्षणमें — सेवाके लिअे ही हो। और यदि यह नियम देहके लिअे सही है, तो फिर वस्त्रादि वस्तुओंके सम्बन्धमें तो कितना ज्यादा सही है? . . .

## ८८

# ‘आशीर्वादरूप गरीबी’

मेरे अेक मित्र अच्छे पढ़े-लिखे हैं और पैसे-टकेसे भी काफी सुखी हैं। संसारी भोगोंका भी अुन्होंने खासा अनुभव किया है। अिधर कुछ वर्षोंसे अुन्होंने सभी प्रकारकी सवारियोंका त्याग कर दिया है। वर्षामें, जाड़ेमें, धूपमें, तन्दुरुस्तीमें, बीमारीमें आग्रहपूर्वक अुन्होंने सवारीके त्यागका प्रण निवाहा है। मुझे अुनके अिस प्रण-पालनमें कअी जगह अति जान पड़ी है। पर अुनके आचरणका निर्णय करनेवाला मैं कौन होता हूं? मुझे वे बराबर चिट्ठी-पत्री लिखते रहते हैं। अुनका अेक पत्र मुझे हरिजन-यात्रामें मिला था। अुसे मैंने ‘हरिजनबन्धु’के पाठकोंके लिअे रख छोड़ा था। अुस पत्रमें से अुन सज्जनके कुछ अनुभव मैं नीचे देता हूं:

> “यों तो मैंने अनेक व्रत ग्रहण किये, पर यह पैदल चलनेका व्रत तो मुझे बड़ा ही आनन्ददायक लगा। अिसमें मुझे अनेक अनुभव प्राप्त हुअे और होते जा रहे हैं। अीश्वर पर मेरी श्रद्धा बहुत बढ़ गअी है। अहमदाबादसे दो बरस पहले जब मैं भ्रमणके लिअे निकला था, तबसे आज मेरी वह श्रद्धा शायद तिगुनी बढ़ गअी है।
>
> “अिस पैदल यात्रामें मैंने गरीबी भी देखी और अमीरी भी। अमीरीमें अधिकतर मैंने मगरूरी ही पायी और अनेक जगह धन-वानोंका अमर्यादित या अुच्छृंखल जीवन दिखाअी दिया। अधिकारियोंमें प्रायः हुकूमतका मद देखा। और गरीबीमें स्वभावतः अीश्वर-परायणता, सेवाभाव और संकट झेलनेकी शक्ति देखनेमें आअी। ‘गरीबी प्रभुको प्यारी है, अमीरी क्या बिचारी है?’ अिसका मुझे डग डग पर अनुभव मिला। अीश्वर मुझे हमेशा गरीबी या फकीरीकी ही हालतमें रखे, गरीबीमें ही मैं सदा गुजरान करता रहूं। किसी भी चीजको जेबमें रखनेका मुझे मोह न हो। कलके लिअे रोटीका अेक टुकड़ा रख छोड़ूं अैसी परिग्रह-वृत्तिसे भी अीश्वर मुझे दूर रखे। मैं तो अपने रामकी दी हुअी फकीरीमें ही हरदम मगन रहूं।
>
> “और क्या देखा, संसारी लोगोंमें पापी मनुष्योंके प्रति तिरस्कार। अरे, हममें से कौन अिस दोषसे मुक्त हो सकता है? पापके प्रति घृणाभाव रखो, पापीके प्रति नहीं, यह महासूत्र भी मेरी समझमें आ गया।”

अिन सज्जनने गुजरातसे लेकर ठेठ अुत्तर तक — देहरादूनसे भी आगे — पैदल यात्रा की है। सैकड़ों गांवोंसे ये गुजरे और गांववालोंके संपर्कमें आये

और जिन्होंने अिस स्वेच्छा-स्वीकृत गरीबीके व्रतका सचमुच यथासंभव सम्पूर्णताकी सीमा तक पालन किया है (सम्पूर्णता तक पहुंचना असंभव है, लेकिन मनुष्य जिस सीमा तक जा सकता है अुस सीमा तक), जो अिस आदर्श दशा तक पहुंचे हैं, वे गवाही देते हैं कि जब आप अपने संग्रहकी हरअेक चीजका त्याग कर देते हैं, तब दुनियाकी सारी धन-सम्पत्ति आपकी हो जाती है। दूसरे शब्दोंमें, आपको वे सब वस्तुअें अनायास मिल जाती हैं जो आपके लिअे सचमुच जरूरी हैं। यदि आपको भोजनकी आवश्यकता है, तो आपको भोजन मिल जाता है।

आपमें से कअी स्त्री-पुरुष प्रार्थना करनेवाले हैं और मैंने बहुतसे अैसा-अियोंसे सुना है कि अुनकी अन्न-वस्त्रकी आवश्यकताओंकी पूर्ति प्रार्थनाके फलस्वरूप होती है। मेरा अुनकी अिस बातमें विश्वास है। लेकिन मैं चाहता हूं कि आप मेरे साथ अेक कदम और आगे आयें और मेरे साथ विश्वास करें कि जो पृथ्वीकी हरअेक चीजको स्वेच्छापूर्वक त्याग देते हैं— यहां तक कि अपने शरीरको भी अर्थात् जो हरअेक चीजको छोड़नेके लिअे तैयार हैं (और अुन्हें अपनी अिस तैयारीकी जांच बारीकीसे और सख्तीसे करनी चाहिये व अपने विरुद्ध हमेशा प्रतिकूल निर्णय देना चाहिये)—जो अिस व्रतका पूरा-पूरा पालन करेंगे, वे सचमुच कभी भी किसी अभावका अनुभव नहीं करेंगे। . . .

अभावका शाब्दिक अर्थ नहीं लिया जाना चाहिये। पृथ्वीतल पर मैंने अीश्वर जैसा कठोर मालिक नहीं देखा। वह आपकी पूरी पूरी परीक्षा लेता है। और जब आपको अैसा लगता है कि आपकी श्रद्धा या आपका शरीर आपका साथ नहीं दे रहा है और आपकी नैया डूब रही है, तब वह आपकी मददको किसी न किसी तरह पहुंच जाता है और आपको विश्वास करा देता है कि आपको श्रद्धा नहीं छोड़नी चाहिये; और यह कि वह आपका संकेत पाते ही आनेको तैयार है, परन्तु आपकी शर्त पर नहीं, अपनी ही शर्त पर। मैंने यही पाया है। मुझे अेक भी मौका अैसा याद नहीं आता जब अैन वक्त पर अुसने मेरा साथ छोड़ दिया हो। . . .

स्पीचेज़ अेण्ड राअिटिंग्ज़ ऑफ महात्मा गांधी, चतुर्थ संस्करण; पृ० १०६६

हैं। अिसलिअे अुनका यात्रानुभव आदरणीय है। सभी देशों और सभी युगोंके पुरुषोंको पग-पर्यटन तथा अपरिग्रहके चमत्कारका अैसा ही अनुभव हुआ है। थोरोंकी पदयात्राकी स्तुति-पुस्तक 'वाल्डेन' को कौन नहीं जानता? संसारके जिन महान सुधारकोंने समय समय पर धर्ममें संशोधन किये हैं, अुन्होंने शायद ही सवारीका अुपयोग किया हो। अुन्होंने तो हजारों कोस पैदल चलकर ही अपने धर्मचक्रका प्रवर्तन किया था। आज हवाओ जहाजमें बैठकर अेक जगहसे दूसरी जगह अुड़नेवाले मनुष्योंसे जो नहीं हो सकता, अुस कामको हमारे पूर्वजोंने निश्चय ही किया था। 'अुतावला सो बावला, धीर सो गंभीर'—ठीक अैसी ही अेक कहावत* अंग्रेजीमें भी है। ये लोकोक्तियां जिस तरह पूर्वकालमें सच्ची थीं अुसी तरह आज भी हैं।

हरिजनसेवक, ५-१०-'३४; पृ० ३२४-२५

## ८९

# धनिकोंका प्रश्न

[श्री महादेव देसाओके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

पीअर सेरेसोल[1] और जो विल्किन्सन[2] को २३ जूनको यूरोप जाना था, अिसलिअे वर्धासे बम्बओ तक वे हमारे साथ ही आये। वर्धामें सेरेसोलने अेक अैसी पुस्तक पढ़ी थी, जिसमें कम्युनिस्ट लेखकने अहिंसा-सिद्धान्तकी आलोचना की थी। सेरेसोलने कहा, "मुझे अिस आलोचनाकी परवाह नहीं। लेखककी कुछ दलीलोंके साथ तो मैं भी सहमत हूं। पर यह बात किसी तरह मेरी समझमें नहीं आ रही है कि ये साम्यवादी लोग बिलकुल ही असत्य और सत्यके विकृत रूपको पेश करके अपनी स्थितिके समर्थनका प्रयत्न आखिर किसलिअे कर रहे हैं। मुझे यह कहते हुअे दुःख होता है कि अिस पुस्तकमें निरा असत्य ही असत्य भरा हुआ है। गांधीके सिद्धान्तके फलस्वरूप पूंजीवादके साथ अेक बुरी तरहका समझौता करना पड़ता है—यह कहकर संतोष माननेके बजाय यह आदमी कहता क्या है कि गांधी गरीब लोगोंके साथ प्रेमभाव दिखानेका ढोंग रचता है और

* Not mad rush, but unperturbed calmness brings wisdom.

१. आन्तर-राष्ट्रीय सेवासेनाके संस्थापक अध्यक्ष।

२. दीनबन्धु अेण्ड्रूज़के कहनेसे ये भाओ बिहार भूकंप-पीड़ित लोगोंकी सहायताके लिअे सेरेसोलके साथ आये थे।

धनिकोंके प्रति अुसका जो सच्चा प्रेम है अुसे वह अिस ढोंगके ढक्कनसे ढांके रहता है और अिस तरह पूंजीवादको टिकाये हुअे है। पूंजीवाद और पूंजीपतियोंके साथ हमारा क्या सम्बन्ध है, अिस विषयकी शंकायें तो मेरे मनमें भी भरी हुअी हैं। मगर यह असत्य तो मेरी समझमें आ ही नहीं सकता।" रेलमें सेरेसोलने अपनी अिस विषयकी कुछ शंकाओंको गांधीजीके आगे खूब सोच-विचार कर रखा।

"धनिकोंके लिअे अुनके रहन-सहनका कोअी नियम क्या हम निश्चित कर सकते हैं? अर्थात् क्या यह निश्चित किया जा सकता है कि धनिकोंका अधिकार कितने धन पर हो और कितने पर नहीं?"

गांधीजीने मुस्कराते हुअे कहा, "हां, यह निश्चित किया जा सकता है। धनी मनुष्य अपने खर्चके लिअे अपनी सम्पत्तिका पांच प्रतिशत या दस प्रतिशत अथवा पन्द्रह प्रतिशत भाग ले सकता है।"

"पर ८५ प्रतिशत तो नहीं?"

"मैं तो २५ प्रतिशत तक जानेका विचार कर रहा था। पर ८५ प्रतिशत लेनेका विचार तो अेक लुटेरेको भी नहीं करना चाहिये!"

पीअर सेरेसोलकी असल कठिनाअी यह थी कि धनिकके गले यह बात अुतारनेके लिअे हमें कब तक राह देखनी चाहिये।

गांधीजीने कहा, "यहीं साम्यवादियोंके साथ मेरा मतभेद है। मेरी अंतिम कसौटी अहिंसा है। हमें यह हमेशा याद रखना चाहिये कि अेक दिन हम लोग भी धनिकों जैसी ही स्थितिमें थे। हमें अपनी संपत्तिका त्याग करना आसान नहीं मालूम हुआ था। हमने जिस तरह स्वयं अपने प्रति धीरज रखा, अुसी तरह हमें दूसरोंके प्रति भी रखना चाहिये। अिसके अतिरिक्त, मुझे यह मान लेनेका कोअी हक नहीं कि मैं सच्चा हूं और वह धनी झूठा है। जब तक मैं अुसके गले अपनी बात नहीं अुतार सकता, तब तक मुझे राह देखनी ही चाहिये। अिस बीचमें अगर वह कहे कि 'मैं २५ प्रतिशत अपने लिअे रखकर बाकीका ७५ प्रतिशत परोपकारके कामोंमें लगानेको तैयार हूं', तो मैं अुसकी बात मान लूंगा। क्योंकि मैं जानता हूं कि संगीनके भयसे दिये हुअे १०० प्रतिशत धनसे स्वेच्छापूर्वक दिया हुआ ७५ प्रतिशतका यह दान कहीं अच्छा है। अहिंसाका अंचल तो हम दोनोंको ही पकड़े रखना चाहिये।

"अिस पर शायद आप यह कहें कि जो मनुष्य आज बलात्कारसे अपना धन सुपुर्द कर देता है, वह कल अपनी अिच्छासे अिस स्थितिको कबूल कर लेगा। यह संभावना मुझे बहुत दूरकी मालूम होती है और अिस पर मैं अधिक निर्भर नहीं करता। अितनी बात पक्की है कि यदि

मैं आज हिंसाका अुपयोग करता हूं, तो कल निश्चय ही मुझे अधिक भारी हिंसाका सामना करना पड़ेगा। अहिंसाको अगर हम जीवनका नियम बना लेते हैं, तो अिसमें संदेह नहीं कि जीवनमें हमें अनेक समझौते करने पड़ेंगे। किन्तु अनन्त अखण्ड कलहकी अपेक्षा यह स्थिति अधिक अच्छी है।"

"धनी मनुष्यकी न्याय्य स्थितिका वर्णन अेक शब्दमें आप किस प्रकार करेंगे?"

"वह ट्रस्टी है। मैं अैसे कितने ही मित्रोंको जानता हूं जो गरीबोंके लिअे पैसा कमाते हैं और खर्च करते हैं और खुदको अपनी संपत्तिका स्वामी नहीं किन्तु ट्रस्टी मानते हैं।"

"मेरे भी कुछ अमीर और गरीब मित्र हैं। मैं खुद अपने पास कोअी संपत्ति नहीं रखता, पर मेरे धनी मित्र जो धन मुझे देते हैं अुसे मैं स्वीकार कर लेता हूं। अिस बातको मैं किस तरह अुचित मान सकता हूं?"

"आप खुद अपने लिअे कुछ भी स्वीकार न करें। सैर-सपाटेकी गरजसे स्विटजरलैंड जानेके लिअे आप कोअी चेक स्वीकार न करें, पर हरिजनोंके लिअे कुअें, स्कूल अथवा औषधालय बनवानेके लिअे आप लाख रुपये भी स्वीकार कर लें। स्वार्थकी भावना अुड़ा देनेसे यह प्रश्न सहज ही हल हो जाता है।"

"पर मेरा निजी खर्च कैसे चलेगा?"

"आपको अिस सिद्धान्तके अनुसार चलना होगा कि हरअेक मजदूरको अुसकी मजदूरी मिलनी चाहिये। आपको अपनी कमसे कम मजदूरी लेनेमें कोअी संकोच नहीं होना चाहिये। हम सब यही तो करते हैं। भणसालीकी मजदूरी केवल गेहूंका आटा और नीमकी पत्तियां हैं। हम सब भणसाली तो नहीं हो सकते। लेकिन वे जैसी जिन्दगी बसर कर रहे हैं अुसके नजदीक पहुंचनेका प्रयत्न तो हम कर ही सकते हैं। मैं अपनी आजीविका प्राप्त करके संतोष मान लूंगा, पर मैं किसी धनी आदमीसे यह सिफारिश नहीं कर सकता कि वह मेरे लड़केको अपने यहां किसी अच्छी जगह पर रख ले। मुझे तो अितनी ही चिन्ता रखनेकी जरूरत है कि जब तक मैं समाज-सेवा करता रहूं, तब तक मेरा यह शरीर टिका रहे।"

"किन्तु जब तक मैं किसी धनवानसे अपने निर्वाहका खर्च लेता हूं, तब तक निरंतर अुससे यह कहते रहना क्या मेरा कर्तव्य नहीं है कि तुम्हारी स्थिति किसीके लिअे अीर्षाकी चीज नहीं है; और तुम्हारी आजीविका पर जितना खर्च होता है अुसके सिवा बाकीकी सम्पत्ति परसे तुम्हें अपना स्वामित्व हटा लेना चाहिये?"

"हां अवश्य अैसा कहना आपका कर्तव्य है।"

"पर ये धनी मनुष्य भी सब अेक समान थोड़े ही होते हैं? अुनमें से कुछ तो शरावके व्यापारसे मालामाल वन जाते हैं।"

"हां, भेद आप अवश्य करें। आप खुद कलवारका पैसा न लें, पर आपने अगर किसी सेवाकार्यके लिअे धनकी अपील निकाली हो तो आप क्या करेंगे? क्या आप लोगोंसे यह कहते फिरेंगे कि जिन्होंने न्यायके पथ पर चलकर पैसा कमाया हो वे ही अिस फण्डमें पैसा दें? अिस शर्त पर अेक पाअीकी भी आशा रखनेके वजाय मैं अपीलको ही वापस ले लेना पसन्द करूंगा। यह निर्णय करनेवाला कौन है कि अमुक मनुष्य धर्मवान है और अमुक अधर्मी। और धर्म भी तो अेक सापेक्ष वस्तु है। हम अपने ही दिलसे पूछें तो पता चलेगा कि हम आजीवन धर्म या न्यायका अनुसरण करके नहीं चले। गीतामें कहा है कि सवका अेक ही लेखा है; अिसलिअे दूसरोंके गुण-दोष देखते फिरनेके वजाय दुनियामें अलिप्त वनकर रहो। अहंभावका नाश ही सच्चा जीवन-रहस्य है।"

सेरेसोलने कहा, "ठीक, अिसे मैं समझता हूं।" और थोड़ी देर वे शांत रहे। फिर आह भरकर अुन्होंने कहा, "पर कभी कभी स्थिति अत्यन्त क्लेश-कर मालूम होती है। विहारमें मैं कुछ अैसे आदमियोंसे मिला हूं, जो दो आनेसे भी कम और कभी कभी तो अेक आनेसे भी कमकी मजदूरीके लिअे सवेरेसे शाम तक जी-तोड़ परिश्रम करते हैं। अुन लोगोंने मुझे अकसर यह कहा है कि अमीर आदमी आज अन्यायका पैसा जोड़ जोड़कर खूव मौज अुड़ा रहे हैं; क्या ही अच्छा हो कि अुनसे यह पैसा छीन लिया जाय। मैं यह सुनकर अवाक् हो जाता था और आपकी याद दिलाकर अुनका मुंह वन्द कर दिया करता था।"

सेरेसोलकी सभी शंकाओंका समाधान तो नहीं हुआ। तमाम दिन काम करनेके वाद गांधीजीको मारे थकानके नींद आ रही थी, नहीं तो सेरेसोलकी वातोंका सिलसिला जारी ही रहता। पर अुन्होंने अपनी मनोदशाको जिस वेदनाके साथ आगे रखा और अिस प्रश्नकी चर्चा करते हुअे अुनके चेहरे पर जो विषादकी रेखा दिखाअी देती थी, अुसे देखकर अैसा लगता था कि यह हो नहीं सकता कि अन्यायकी अैसी अैसी वातें सुनकर किसीके अंतरको चोट न पहुंचे। अुन्हें अितना तो प्रकट ही हो गया कि यह प्रश्न अंतमें अहिंसाका वन जाता है और तव यह सवाल हमारे सामने आ जाता है कि अहिंसाके पालनमें हम कहां तक आगे वढ़नेको तैयार हैं।

हरिजनसेवक, ७–६–'३५; पृ० १२६–२७

# ९०

# धनी संरक्षक हैं

अेक मित्र लिखते हैं :

"आपको यह जानकर खुशी होगी कि धनियोंकी संरक्षकता (ट्रस्टीशिप) के बारेमें आपके जो विचार हैं, अुनकी कल्पना १,३०० वर्ष पूर्व भी की गअी थी। पवित्र ग्रंथ हदीसमें अिस आशयका पद्य है — 'लोगोंके पास जो कुछ धन-दौलत है वह मेरी सम्पत्ति है, क्योंकि गरीब मेरे बच्चे हैं और धनी अुनके पास जो धन-दौलत है अुसके संरक्षक। अिसलिअे जो धनी मेरे गरीब बच्चोंकी ओरसे खर्च नहीं करेंगे अुन्हें मैं दोजख (नरक) में भेज दूंगा, जहां अुनकी कोअी सार-सम्हाल नहीं होगी।'"

यह पत्र गुजरातीमें है और अुसमें किसी अखबारसे लिया हुआ, जिसका नाम नहीं दिया गया है, वह सारा पद्य गुजराती लिपिमें अुसके गुजराती अनुवादके साथ दिया हुआ है। देवनागरी लिपिमें अुसका अविकल रूप अिस प्रकार है :

"अल मालु माली वल फ़क़राओ अयाली वल अग्नियाओ वक्लाअी फमन वखलाव माली अला अयाली अुदखलुहुन्नार वला अुवाली।"

पाठकोंको यह जानकर आश्चर्य होगा कि गुजराती पाठक पच्चीस प्रतिशत शब्दोंको आसानीसे समझ लेते हैं यानी अुनकी भाषामें ये प्रचलित हैं।

हरिजनसेवक, ३०–९–'३९; पृ० २६३

# ९१

# अैच्छिक गरीबी बनाम धनवानोंकी संरक्षकता

प्र० — धर्ममय अुपायोंसे लाखों रुपये कैसे कमाये जा सकते हैं? स्व० श्री जमनालालजी, जो अुत्तम व्यवसायी थे, कहा करते थे कि धन कमानेमें पाप तो होता ही है। धनिक कितना ही सज्जन क्यों न हो, वह अपने कमाये हुअे धनमें से अपनी सच्ची जरूरतसे कुछ अधिक तो खर्च कर ही डालता है। यह भी पाप है। अिसलिअे ट्रस्टी बननेकी बात छोड़कर धनवान न बनने पर ही जोर क्यों न दिया जाय?

अु० — प्रश्न अच्छा है। अिससे पहले भी यह मुझसे पूछा जा चुका है। जमनालालजीने जो यह कहा कि धन कमानेमें पाप तो है ही, वह ठीक वैसा ही है जैसा गीतामें कहा गया है कि आरम्भमात्र दोषपूर्ण है। मेरा यह विश्वास

है कि जान-बूझकर पाप न करते हुअे भी धन कमाया जा सकता है। अुदाहरणके लिअे, अगर मुझे अपनी अेक अेकड़ जमीनमें सोनेकी कोअी खान मिल जाय, तो मैं धनवान बन जाअूंगा। पर धनवान न बननें पर तो मेरा जोर है ही। मैंने जो धन कमाना छोड़ दिया, अुसका मतलब ही यह है कि धनी लोग अपने धनका अुपयोग सेवाके लिअे करें। यह भी ठीक है कि धनवान भरसक कोशिश करने पर भी अकसर अपने गरीब साथियोंके मुकाबले कुछ ज्यादा ही खर्च कर डालेगा। लेकिन यह कोअी नियम नहीं है। आम तौर पर स्व० जमनालालजी मध्यम श्रेणीके अनेक लोगोंकी और अपने साथियोंकी तुलनामें कम ही खर्च करते थे। मैंने अैसे सैकड़ों धनवानोंको देखा है, जो अपने लिअे बड़े कंजूस होते हैं। वे जैसे तैसे अपना गुजारा करते हैं। यह भी नहीं कि अिसमें वे किसी तरहका गौरव अनुभव करते हैं; अपने अूपर कम खर्च करनेका अुनका अेक स्वभाव ही बन जाता है।

धनवानोंके लड़कोंके बारेमें भी मुझे यही कहना है। मेरा आदर्श तो यह है कि धनवान लोग अपनी सन्तानके लिअे धनके रूपमें कुछ न छोड़ें। हां, अुनको अच्छी शिक्षा दें, रोजगार-धन्धेके लिअे तैयार करें और स्वावलम्बी बना दें। परन्तु दुःख तो यह है कि वे अैसा नहीं करते। अुनके बालक पढ़ते हैं, गरीबीकी महिमा भी गाते हैं, लेकिन अपने लिअे वे अधिकसे अधिक धन चाहते हैं। अैसी हालतमें मैं अपनी व्यावहारिक बुद्धिका अुपयोग करके अुन्हें वही सलाह देता हूं जो अुनके बसकी होती है। हम लोगोंको, जो गरीबीको पसन्द करते हैं, अुसे अपना धर्म मानते हैं और अधिक समानताके हामी हैं, धनवानोंसे द्वेष न करना चाहिये। यदि वे अपने धनका सदुपयोग करते हैं, तो अुससे हमें संतोष होना चाहिये। साथ ही हमें यह श्रद्धा रखनी चाहिये कि अगर हम अपनी गरीबीमें सुखी और आनन्दित रहेंगे, तो धनवान लोग भी हमारी नकल करेंगे। सच तो यह है कि गरीबीमें धर्मका दर्शन करनेवाले और मिलने पर भी धनका त्याग करनेवाले लोग दुनियामें अिनेगिने ही पाये जाते हैं। अिसलिअे हमें अपने जीवनके द्वारा यह सिद्ध कर दिखाना होगा कि असलमें धर्मके रूपमें स्वीकार की गअी गरीबी ही सच्ची सम्पत्ति है।

हरिजनसेवक, १–३–'४२; पृ० ६२

# ९२

# गरीवोंके संरक्षक और सेवक वनें

[ ७ मार्च, १९३१ को दिल्लीमें भारतीय व्यापारी-संघके समक्ष दिये गये गांधीजीके भाषणसे। ]

आपके अध्यक्ष महोदयने कांग्रेसकी वहुत तारीफ की है और साथ ही अुन्होंने यह भी सुझाया है कि आर्थिक मामलोंमें कोअी भी निर्णय करनेसे पहले कांग्रेसको व्यापार-विशेषज्ञोंका अभिप्राय ले लेना चाहिये। मैं अिस सुझावका स्वागत करता हूं। कांग्रेस हमेशा आपकी सलाह और सहायता पानेको अुत्सुक रहेगी। लेकिन मुझे आपसे कहना चाहिये कि कांग्रेस किसी अेक खास वर्गकी संस्था नहीं है। वह तो सभी वर्गोकी है। मगर चूंकि हिन्दुस्तानकी आवादी ज्यादासे ज्यादा किसानोंकी है अिसलिअे वह किसानोंकी प्रतिनिधि वनना चाहती है। कांग्रेसको दरअसल हिन्दुस्तानके गरीवोंका ही प्रतिनिधित्व करना चाहिये। लेकिन अिसका यह अर्थ नहीं कि और सव वर्गो — मध्यम-वर्ग, व्यापारी वर्ग या जमींदारों — का नाश करके गरीवोंका हित साधना है। अिसका अर्थ मात्र अितना ही है कि दूसरे सव वर्गोको गरीवोंके हितके अनुकूल होकर रहना है। कांग्रेस हिन्दुस्तानमें व्यापार-अुद्योगकी अुन्नति चाहती है। अिसके लिअे वह सतत प्रयत्नशील है। धीरे धीरे व्यापारी वर्ग कांग्रेसकी ओर आकृष्ट होता चला आ रहा है। पिछले वर्ष व्यापारियोंने आन्दोलनमें जो मदद दी है वह स्तुत्य है। मुझे भी आपने निमंत्रण देकर जो आज यहां वुलाया है वह मेरे नामके कारण नहीं वल्कि अिसलिअे कि मैं कांग्रेसका नम्र सेवक हूं और दरिद्र-नारायणका प्रतिनिधि हूं। व्यापारी वर्गकी ओरसे की गअी सेवाओंको मैं भूल नहीं सकता। लेकिन मैं चाहता हूं कि आप अेक कदम और आगे वढ़ें। आप कांग्रेसको अपनाअिये, अुसे अपनी वना लीजिये, तो हम खुशी खुशी आपके हाथोंमें अुसकी लगाम सौंप देंगे। यह काम आपके हाथों ज्यादा अच्छी तरह होगा। लेकिन कांग्रेसकी लगाम आप अपने हाथमें अिसी शर्त पर ले सकेंगे कि आप अपनेको गरीवोंके संरक्षक और सेवक समझें या पंडित मालवीयजीके शब्दोंमें कहूं तो आपको 'शुद्ध कौड़ी' पाकर संतोष मानना चाहिये। आप कहेंगे कि यह असम्भव है। लेकिन अैसी वात नहीं। शुद्ध नीतिसे व्यापार करनेवाले अनेक मित्रोंको मैं जानता हूं। अव यह खुली वात है कि आप चाहें तो आसानीसे कांग्रेसकी वागडोर अपने हाथमें ले सकते हैं। आप जानते हैं कि कांग्रेसके विधानके जैसा कोअी लोकशाही विधान

नहीं है। वह पिछले दस वर्षसे बिना किसी रुकावटके काम करता रहा है। वह वस्तुतः बालिग मताधिकारके आधार पर ही रचा गया है।

*यंग अिंडिया, १६–४–'३१; पृ० ७८, ७९*

## ९३

## अपनी दौलतका त्याग करके तू अुसे भोग

[खेड़ा जिलेके अेक गांवमें हुअी अेक सशस्त्र डकैतीके सिलसिलेमें गांधीजी द्वारा लिखित 'अेक दुःखद घटना' शीर्षक लेखसे।]

"धनवानोंको अपना धर्म सोच लेना है। अगर अपनी जायदादकी रक्षाके लिअे अुन्होंने सिपाही वगैरा रखे, तो मुमकिन है कि लूट-मारके हंगाममें ये रक्षक ही अुनके भक्षक बन जायेंगे। अिसलिअे धनवानोंको या तो हथियार चलाना सीख लेना चाहिये या अहिंसाकी दीक्षा ले लेनी चाहिये। अिस दीक्षाको लेने और देनेका सबसे अुत्तम मंत्र है: 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः'— अपनी संपत्तिका त्याग करके तू अुसे भोग। अिसको जरा विस्तारसे समझाकर कहूं तो यह कहूंगा: "तू करोड़ों खुशीसे कमा। लेकिन समझ ले कि तेरा धन सिर्फ तेरा नहीं, सारी दुनियाका है; अिसलिअे जितनी तेरी सच्ची जरूरतें हों अुतनी पूरी करनेके बाद जो बचे अुसका अुपयोग तू समाजके लिअे कर।" शान्तिकी साधारण अवस्थामें तो अिस नसीहत पर अमल नहीं हुआ। लेकिन संकटके अिस समयमें भी अगर धनिकोंने अिसे नहीं अपनाया, तो दुनियामें वे अपने धन और भोगके गुलाम बनकर ही रह सकेंगे और अन्तमें शरीर-बलवालोंकी गुलामीमें बंध जायेंगे।

"मैं अुस दिनको आता देख रहा हूं जब धनकी सत्ताका अन्त होनेवाला है और गरीबोंका सिक्का चलनेवाला है, फिर चाहे वह शरीर-बलसे चले या आत्मबलसे। शरीर-बलसे प्राप्त की हुअी सत्ता मानव-देहकी तरह क्षणभंगुर होगी, जब कि आत्मबलसे प्राप्त की हुअी सत्ता आत्माकी तरह अजर-अमर रहेगी।"

हरिजनसेवक, १–२–'४२; पृ० २०

[गांधीजीके अुपरोक्त नोटके सिलसिलेमें श्री शंकरराव देवने जो प्रश्न पूछा था अुसका जवाब देते हुअे गांधीजी द्वारा 'हरिजनसेवक' के १ मार्च, १९४२ के अंकमें पृ० ६३ पर लिखित 'अशुद्ध ही नहीं' शीर्षक लेख।]

श्री शंकरराव देव लिखते हैं:

"पिछले 'हरिजनसेवक' के 'अेक दुःखद घटना' शीर्षक अपने लेखमें आप धनवानोंसे कहते हैं कि वे करोड़ों खुशीसे कमायें, लेकिन यह समझ लें कि अुनका वह धन सिर्फ अुन्हींका नहीं सारी दुनियाका है; अिसलिअे अपनी सच्ची जरूरतोंको पूरा करनेके बाद जितना धन बचे अुसका अुपयोग अुन्हें समाजके लिअे करना चाहिये। जब मैंने अिसे पढ़ा तो पहला सवाल मनमें यह अुठा कि अैसा क्यों होना चाहिये? पहले करोड़ों कमाना और फिर समाजके हितके लिअे अुन्हें खर्च करना? आजकी अिस समाज-रचनामें करोड़ों कमानेके साधन अशुद्ध ही हो सकते हैं; और जो आदमी अशुद्ध साधनोंसे करोड़ों कमाता है, अुससे 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' मंत्रके अनुसार चलनेकी आशा नहीं रखी जा सकती; क्योंकि अशुद्ध साधनों द्वारा करोड़ों कमानेकी क्रियामें कमानेवालेका चरित्र दूषित या भ्रष्ट हुअे बिना रह ही नहीं सकता। अिसके सिवा, आप तो हमेशासे शुद्ध भावना पर जोर देते रहे हैं। मुझे डर है कि अिस मामलेमें कहीं लोग गलतीसे यह न समझ लें कि आप साधनोंकी अपेक्षा साध्य पर ज्यादा जोर दे रहे हैं।

"अतअेव मेरा निवेदन है कि आप कमाअीके साधनोंकी शुद्धता पर भी अधिक नहीं तो अुतना जोर अवश्य दीजिये, जितना कमाये हुअे धनको लोकहितके कामोंमें खर्च करने पर देते हैं। मेरे विचारमें यदि साधनोंकी शुद्धिका दृढ़तासे पालन किया जाय, तो कोअी आदमी करोड़ों कभी कमा ही नहीं सकेगा और अुस दशामें समाजके हितके लिअे अुसे खर्च करनेकी कठिनाअी बहुत गौण रूप ले लेगी।"

मैं अिससे सहमत नहीं हूं। मैं निश्चित रूपसे यह मानता हूं कि आदमी बिलकुल शुद्ध साधनोंसे करोड़ों रुपये कमा सकता है। अिसमें यह मान लिया गया है कि अुसे कानूनन सम्पत्ति रखनेका अधिकार है। दलीलके तौर पर मैंने यह माना है कि निजी संपत्ति अपने आपमें अशुद्ध नहीं समझी गअी है। अगर मेरे पास किसी अेक खानका पट्टा है और मुझे अुसमें से अचानक कोअी अनमोल हीरा मिल जाता है, तो मैं अेकाअेक करोड़पति बन सकता हूं और कोअी मुझ पर अशुद्ध साधनोंका अुपयोग करनेका दोष नहीं लगा सकता। ठीक यही बात अुस समय हुअी थी, जब कोहिनूरसे कहीं अधिक मूल्यवान क्यूलीनन नामक हीरा मिला था। अैसे और कअी अुदाहरण आसानीसे गिनाये जा सकते हैं। निःसंदेह करोड़ों कमानेकी बात मैंने अैसे ही लोगोंके लिअे कही थी।

मैं अिस रायके साथ निःसंकोच अपनी सम्मति जाहिर करता हूं कि आम तौर पर धनवान — केवल धनवान ही क्यों, बल्कि ज्यादातर लोग — अिस बातका विशेष विचार नहीं करते कि वे पैसा किस तरहसे कमाते हैं। अहिंसक अुपायका प्रयोग करते हुअे हमें यह विश्वास तो होना ही चाहिये कि कोअी आदमी कितना ही पतित क्यों न हो, यदि अुसका अिलाज कुशलतासे और सहानुभूतिके साथ किया जाय तो अुसे सुधारा जा सकता है। हमें मनुष्योंमें रहनेवाले दैवी अंशको जगानेका प्रयत्न करना चाहिये। और आशा रखनी चाहिये कि अुसका अनुकूल परिणाम निकलेगा। यदि समाजका हरअेक सदस्य अपनी शक्तियोंका अुपयोग वैयक्तिक स्वार्थ-साधनके लिअे नहीं बल्कि सबके कल्याणके लिअे करे, तो क्या अिससे समाजकी सुख-समृद्धिमें वृद्धि नहीं होगी? हम अैसी जड़ समानताका निर्माण नहीं करना चाहते, जिसमें कोअी आदमी अपनी योग्यताओंका पूरा पूरा अुपयोग कर ही न सके। अैसा समाज अन्तमें नष्ट हुअे बिना नहीं रह सकता। अिसलिअे मेरी यह सलाह बिलकुल ठीक है कि धनवान लोग चाहे करोड़ों रुपये कमायें (बेशक, केवल अीमानदारीसे), लेकिन अुनका अुद्देश्य वह सारा पैसा सबके कल्याणमें समर्पित कर देनेका होना चाहिये। 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' मंत्रमें असाधारण ज्ञान भरा पड़ा है। मौजूदा जीवन-पद्धतिकी जगह, जिसमें हरअेक आदमी पड़ोसीकी परवाह किये बिना केवल अपने ही लिअे जीता है, सबका कल्याण करनेवाली नयी जीवन-पद्धतिका विकास करना हो, तो अुसका सबसे निश्चित मार्ग यही है।

## ९४

# ‘कलकी चिन्ता न करें’

[‘सार्वजनिक खर्च’ शीर्षक लेखसे नीचेका भाग दिया गया है।]

जब हम अैसी निश्चिन्तता हासिल कर लेंगे कि ‘खानेको मिल जाये तो ठीक, न मिले तो हरि-अिच्छा’ तब हम अनेक झंझटोंसे मुक्ति पा जायेंगे और स्वतन्त्रता हमारे आंगनमें आकर नाचने लगेगी। कोअी यह न माने कि निश्चिन्त लोगोंको अन्तमें भूखका ही शिकार होना पड़ता है। कीड़ीको कन और हाथीको मन भर देनेवाला भगवान मनुष्यके लिअे भी अुसकी रोजकी खुराक जुटा ही देता है। सृष्टिके जीव कलकी चिंता न करके दूसरे दिनकी प्रतीक्षा भर करते हैं। पर मनुष्यने घमंडमें आकर यह मान लिया कि मैं ही सृष्टिके निर्माण और नाशका स्वामी हूं। अुसका यह घमंड अीश्वर रोज अुतारता है, मगर मनुष्य अुसे छोड़ना नहीं चाहता। सत्याग्रह यह घमंड दूर करनेके लिअे ही आयोजित वस्तु है।

यंग अिंडिया, २१–५–’३१; पृ० ११८

## ९५

# अपरिग्रहकी ओर

क्या जरूरत है कि हम सब लोग जायदाद रखें? हम अुसे कुछ अर्से तक रखनेके बाद छोड़ क्यों न दें? धर्माधर्मका जिन्हें खयाल नहीं अैसे व्यापारी बेअीमानीसे भरे मतलबोंके लिअे अैसा करते हैं, तो फिर हम अेक बड़े और नीतियुक्त मतलबको हासिल करनेके लिअे अैसा क्यों करें? हिन्दुओंके लिअे अेक खास अुम्र हो जाने पर यह मामूली बात थी। प्रत्येक हिन्दूसे यह आशा रखी जाती थी कि अेक अर्से तक गृहस्थाश्रममें रहनेके बाद वह वैसा ही जीवन अख्तियार करे, जिसमें जायदाद पास नहीं रखी जाती। यह पुरानी अुम्दा रूढ़ि हम फिरसे ताजी क्यों न करें? आखिर अिसका अर्थ यही होता है कि हम अपने निर्वाहके लिअे अुनकी दया पर निर्भर रहते हैं, जिन्हें हमने अपनी जायदाद सौंप दी है। यह विचार मेरे दिलको बड़ा आकर्षक मालूम होता है। अैसे विश्वासके लाखों अुदाहरणोंमें अेक भी दृष्टांत अैसा नहीं मिलेगा, जिसमें विश्वासका दुरुपयोग हुआ हो।

अवश्य अिसमें से कितने ही नैतिक सवाल पैदा होते हैं। अेक पिता-पुत्रका दृष्टांत लीजिये। यदि पुत्र पिताके जैसा ही असहयोगी है तो फिर पिता अपनी जायदादकी मालिकीके हकका बोझ अुस पर लादकर अुसे क्यों लल-चाये? अैसे सवाल तो हमेशा ही पैदा होंगे। मनुष्यकी नैतिक कीमत कितनी है अिसकी जांच सदाचारके अैसे गूढ़ प्रश्न वारीकीसे तौलनेकी अुसकी शक्ति कितनी है अिस पर निर्भर है। बेअीमान शख्सोंको अिसका दुरुपयोग करनेका मौका न देकर यह रूढ़ि किस तरह व्यवहारमें लाअी जा सकती है, अिसका निर्णय तो अेक बड़े अर्सेके अनुभवके बाद ही हो सकता है। फिर भी अिस खयालसे कि अुसका दुरुपयोग होगा, किसीको अिसका प्रयोग करनेके प्रयत्नसे रुकना न चाहिये। गीताके दिव्य रचयिता 'दिव्य गीता' का संदेश देनेसे न रुके, यद्यपि वे शायद जानते थे कि सब प्रकारकी बुराअियां, यहां तक कि खूनको भी न्यायसंगत ठहरानेके लिअे अुसको खूब तोड़ा-मरोड़ा जायगा।

हिन्दी नवजीवन, ६–७–'२४; पृ० ३८२

## ९६

## पूंजीपतियोंका कर्तव्य

श्री घनश्यामदास बिड़लाने अुस दिन महाराष्ट्र व्यापारी सम्मेलन (शोलापुर) की अध्यक्षता करते हुअे अेक भाषण दिया, जिसमें अुन्होंने अपने विचार श्रोताओंके सामने बहुत निःसंकोच भावसे प्रगट किये।

पूंजीपतियोंके कर्तव्य पर बोलते हुअे अुन्होंने अेक अैसा आदर्श पेश किया, जिसमें कोअी सुधार या संशोधन करना अेक श्रमिकके लिअे भी कठिन होगा। व्यापारी-वर्गके बीच अेकताकी वकालत करते हुअे अुन्होंने कहा:

> "लेकिन मुझे स्पष्ट करने दीजिये कि मैं व्यापारियोंके लिअे जिस अेकताकी सूचना कर रहा हूं अुस अेकताका अुद्देश्य सेवा होना चाहिये, शोषण नहीं। आधुनिक पूंजीपतियोंकी अिधर कुछ समयसे काफी निंदा की जाती रही है। लोगोंकी अैसी धारणा हो गयी है कि अुनका अेक पृथक् वर्ग है। लेकिन प्राचीन कालमें परिस्थिति बिलकुल भिन्न थी। अगर हम प्राचीन कालके वैश्यके कार्योंका विश्लेषण करें, तो हम पायेंगे कि अुन्हें व्यक्तिगत लाभके बजाय सामाजिक भलाअीके लिअे अुत्पादन और वितरणका कर्तव्य सौंपा गया था। अपनी सारी सम्पत्ति वह राष्ट्रके हितके लिअे अेक संरक्षकके रूपमें रखता था।

पूंजीपति यदि अपना वास्तविक कार्य पूरा करना चाहते हैं, तो उन्हें शोषकोंके रूपमें न रहकर समाजके सेवकोंके रूपमें रहना चाहिये। अगर हम अपना कर्तव्य समझें और अुसका पालन करें, तो साम्यवाद या बोलशेविज़्म नहीं पनप सकता। मैं तो यहां तक कहूंगा कि अपने कर्तव्यकी अुपेक्षा करके हम खुद ही साम्यवाद और बोलशेविज़्मको बढ़नेके लिअे अुपजाअू जमीन प्रदान करते हैं। अगर हम अपने कर्तव्यको समझें और अुसका श्रद्धापूर्वक पालन करें, तो मुझे पूरा भरोसा है कि हम समाजको कअी बुराअियोंसे बचा सकते हैं। मैं बता चुका हूं कि हमारा सच्चा कार्य अुत्पादन और वितरण करना है। . . . आअिये, हम समाजकी सेवाके लिअे अुत्पादन और वितरण करें। हम जीयें और यदि सबके हितके लिअे हमें अपना बलिदान भी करना पड़े तो अुसके लिअे तैयार रहें।"

यंग अिंडिया, १३-१२-'२९; पृ० ४१३

## ९७

## विशेष प्रतिनिधित्व

[लन्दनकी दूसरी गोलमेज परिषदकी फेडरल स्ट्रक्चर कमेटीमें दिये हुअे गांधीजीके 'अेक विनम्र शिकायत' नामसे छपे दूसरे भाषणसे।]

अब मैं अुपधारा पांच — विशेष वर्गोंके विशेष मतदार मंडलोंके प्रतिनिधित्व पर आता हूं। बालिग मताधिकारमें मजदूरों और अुनके जैसे वर्गोंके खास प्रतिनिधित्वकी कोअी जरूरत नहीं है; अिसका कारण मैं आपको समझाअूंगा। कांग्रेसकी या मूक गरीबोंकी यह अिच्छा बिलकुल नहीं है कि जमींदारोंसे अुनकी मिल्कियत छीन ली जाय। वे तो केवल यह चाहते हैं कि जमींदार मजदूरोंके संरक्षक बन जायं। मेरे खयालसे जमींदारोंको अिस बातका गौरव महसूस करना चाहिये कि अुनकी रैयत, ये लाखों ग्रामवासी, बाहरसे आनेवाले लोगों या अपनेमें से किसीके बजाय जमींदारोंको ही अपने प्रतिनिधि चुनना पसंद करती है।

अिसलिअे जमींदार अपनी रैयतका साथ दें अिससे भला और सुन्दर क्या हो सकता है? लेकिन अगर जमींदारोंने यह आग्रह रखा कि दो सभाअें हों तो दोमें से अेकमें अथवा अेक सभा हो तो अुसमें अुनके खास प्रतिनिधि लिये जायें, तो वे सचमुच झगड़ेका बीज बोयेंगे। और मैं आशा

करता हूं कि जमींदारों या अैसे किसी वर्गकी तरफसे अैसी मांग नहीं की जायगी।

यंग अिंडिया, ८–१०–'३१; पृ० २९६, २९८

## ९८

## वैध परिग्रह

अपरिग्रह अस्तेयके साथ जुड़ा हुआ है। कोअी चीज मूलमें चुराअी हुअी न हो तो भी अुसे चोरीका माल ही कहा जायगा, यदि हम अुसे बिना जरूरतके अपने पास रखते हैं। परिग्रहका अर्थ है भविष्यके लिअे व्यवस्था करना। कोअी सत्य-शोधक, प्रेमपन्थका पथिक, कलके लिअे कोअी वस्तु नहीं रख सकता। अीश्वर कलके लिअे कुछ भी जमा नहीं रखता। वह वर्तमानके लिअे जितना आवश्यक हो अुतना ही पैदा करता है, अुससे अधिक कभी पैदा नहीं करता। अिसलिअे यदि हमें अुसकी शक्ति और व्यवस्थामें विश्वास है, तो हमें अिस बारेमें निश्चित रहना चाहिये कि वह हमें अपनी नित्यकी रोटी दे देगा, अर्थात् वह हमारी हर जरूरत पूरी कर देगा। सन्तों और भक्तोंने, जिनका जीवन अिस प्रकार श्रद्धामय रहा है, अपने अनुभवसे अिस श्रद्धाको सही पाया है। अीश्वरीय कानून मनुष्यको अुसकी दैनिक आजीविका देता है, अुससे अधिक नहीं देता। अिस कानूनके हमारे अज्ञान या अवहेलनाके कारण असमानताअें पैदा हो गअी हैं और अुनसे तरह तरहकी मुसीबतें हमें अुठानी पड़ती हैं। अमीरोंके पास अनावश्यक चीजोंके भंडार भरे रहते हैं, जिनकी अुन्हें जरूरत नहीं होती और अिसलिअे जिनकी अवहेलना और बरबादी होती है। अुधर करोड़ों लोग जीविकाके अभावमें भूखों मरते हैं। यदि हरअेक अुतनी ही चीजें अपने पास रखे जितनीकी अुसे जरूरत हो, तो किसीको भी तंगी न रहे और सब संतोषसे रहें। आज तो अमीरोंको गरीबोंसे कम असन्तोष नहीं है। गरीब आदमी लखपति बनना चाहता है और लखपति करोड़पति बनना चाहता है। सन्तोषकी वृत्तिको सर्वत्र फैलानेकी गरजसे धनवानोंको अपरिग्रहकी दिशामें पहल करनी चाहिये। यदि वे अपनी संपत्तिको ही साधारण मर्यादाके भीतर रखें, तो भी भूखोंको आसानीसे खाना दिया जा सकता है और वे भी अमीरोंके साथ साथ सन्तोषका पाठ सीख लेंगे। अपरिग्रहके आदर्शकी सम्पूर्ण सिद्धिकी शर्त यह है कि पक्षियोंकी तरह मनुष्यके पास कोअी आसरा न हो, कोअी वस्त्र न हो और कलके लिअे भोजन-सामग्री न हो। बेशक अुसे अपनी रोजकी रोटीकी जरूरत होगी, मगर अुसे

जुटाना अीश्वरका काम होगा, अुसका नहीं। अिस आदर्श तक विरले ही लोग पहुंच सकते हैं। अूपरसे असंभव दिखाअी देनेवाले अिस आदर्शसे हम साधारण जिज्ञासुओंको दूर नहीं भागना चाहिये। हमें अिस आदर्शको सदा दृष्टिमें रखना चाहिये और अुसके प्रकाशमें अपने परिग्रहकी जांच करते रहना चाहिये तथा अुसे कम करनेका प्रयत्न करना चाहिये। सच्ची सभ्यता आवश्यकताओंकी वृद्धिमें नहीं है, परन्तु जान-बूझकर और स्वेच्छापूर्वक अुनके घटानेमें है। अिसीसे सच्चे सुख और सन्तोषकी वृद्धि तथा सेवाशक्तिकी वृद्धि होती है। अिस कसौटी पर कसकर देखनेसे हमें मालूम होता है कि हम आश्रमवासियोंके पास अैसी बहुतसी चीजें हैं, जिनकी जरूरत हम साबित नहीं कर सकते और अिस प्रकार हम अपने पड़ोसियोंको चोरी करनेका प्रलोभन देते हैं।

शुद्ध सत्यकी दृष्टिसे शरीर भी अेक परिग्रह ही है। यह सच कहा है कि भोगकी अिच्छाके कारण आत्माके लिअे शरीरोंकी सृष्टि होती है। जब यह अिच्छा मिट जाती है तब फिर शरीरकी आवश्यकता नहीं रह जाती और मनुष्य जन्म-मरणके कुचक्रसे मुक्त हो जाता है। आत्मा सर्व-व्यापक है; अुसे पिंजड़े जैसे शरीरमें बन्द रहने या अुस पिंजड़ेके खातिर बुराअी करने या किसीके प्राण लेनेकी भी चिन्ता क्यों करनी चाहिये? अिस प्रकार हम संपूर्ण त्यागके आदर्श तक पहुंच जाते हैं और जब तक शरीर रहता है तब तक सेवाके काममें अुसका अुपयोग करना सीखते हैं, यहां तक कि सेवा, न कि रोटी, हमारे जीवनका आधार बन जाती है। हम केवल सेवाके लिअे खाते, पीते, सोते और जागते हैं। अैसी मनोवृत्तिसे समय पाकर हमें सच्चा सुख और आनन्ददायक दृष्टि प्राप्त होती है। हम सबको अिस दृष्टिकोणसे आत्म-निरीक्षण करना चाहिये।

हमें याद रखना चाहिये कि अपरिग्रहका सिद्धान्त वस्तुओंकी भांति विचारों पर भी लागू होता है। जो मनुष्य अपने मस्तिष्कको व्यर्थ ज्ञानसे भर लेता है, वह अुस अमूल्य सिद्धान्तका भंग करता है। जो विचार हमें अीश्वरसे विमुख करते हैं, या अुसकी ओर नहीं ले जाते, वे हमारे मार्गमें बाधक होते हैं। अिस सम्बन्धमें हम गीताके १३ वें अध्यायमें दी हुअी ज्ञानकी व्याख्याका विचार कर सकते हैं। वहां हमें यह बताया गया है कि अमानित्व (नम्रता) आदि ज्ञान है, अन्य सब कुछ अज्ञान है। यदि यह सच सच है — और अिसके सच होनेमें कोअी शंका नहीं है — तो आज हम ज्ञान समझकर जिसे गले लगाते हैं वह सब निरा अज्ञान है और अिसलिअे अुससे कोअी लाभ होनेके बजाय केवल हानि ही होती है। अिससे दिमाग भटकता है और अन्तमें खाली हो जाता है। असन्तोष फैलता

और अनर्थ बढ़ते हैं। कहना न होगा कि यह जड़ताकी वकालत नहीं है। हमारे जीवनका अेक अेक क्षण मानसिक या शारीरिक प्रवृत्तिसे भरा होना चाहिये। परन्तु वह प्रवृत्ति सात्त्विक, सत्योन्मुख होनी चाहिये। जिसने अपना जीवन सेवाके लिअे अर्पण कर दिया है, वह अेक क्षण भी बेकार नहीं रह सकता। परन्तु हमें सत्प्रवृत्ति और दुष्प्रवृत्तिमें भेद करना सीखना होगा। सेवापरायण मनुष्यको यह विवेक सहज ही प्राप्त होता है।

फ्रॉम यरवडा मंदिर; प्रक० ६

## ९९

# वैध परिग्रहका बचाव

प्र० — जब तक धन-दौलत है, हर हालतमें, अुसकी हिफाजत भी होनी चाहिये। फिर क्या वजह है कि आप अिस चीजको समझ नहीं पाते? प्रत्येक स्थितिमें हिंसासे बचे रहनेका आपका आग्रह बिलकुल अव्यावहारिक और असंगत है। मेरे विचारमें अहिंसा कुछ चुने हुअे लोगोंके ही कामकी चीज हो सकती है।

अु० — अिस सवालका जवाब अिन पृष्ठोंमें और 'यंग अिंडिया' में भी कअी बार किसी न किसी रूपमें दिया जा चुका है। लेकिन यह अेक सनातन सवाल है। अिसलिअे मेरा काम है कि जितनी बार यह पूछा जाय, मैं अिसका जवाब दूं। और, जब प्रश्नकर्ताके समान सच्चे जिज्ञासु पूछते हैं, तब तो जवाब देना ही चाहिये। मेरा दावा यह है कि आज भी, जब हमारे समाजकी रचनाका आधार सोच-समझकर अपनाअी हुअी अहिंसा नहीं है, सारे संसारमें मनुष्य-जाति अेक-दूसरेकी भलमनसाहत पर ही जी रही है और अपनी दौलतको बचाये हुअे है। अगर अैसा न होता तो दुनियामें बहुत ही थोड़े और बहुत ही क्रूर आदमी बचे होते। लेकिन हकीकत यह नहीं है। परिवारमें लोग परस्पर स्नेहके बन्धनमें बंधे रहते हैं। और परिवारोंकी तरह ही सभ्य माने जानेवाले मानव-समाजमें राष्ट्रोंके अलग अलग दल भी परस्परके अिन बन्धनोंसे बंधे हुअे हैं। फर्क अितना ही है कि वे जीवनमें अहिंसाके नियमको सर्वोपरि नहीं मानते। अिसका मतलब यह हुआ कि अभी अुन्होंने अिसकी असीम शक्तियोंकी थाह नहीं लगाअी है। मैं यह कहूंगा कि अब तक सिर्फ अपनी जड़ताके कारण ही हम यह मानते रहे हैं कि अहिंसाका संपूर्ण पालन अपरिग्रह आदि संयम-सूचक व्रतोंको धारण करनेवाले कुछ अिनेगिने लोग ही कर सकते हैं। बात यह है कि अगर हमें अहिंसाके

क्षेत्रमें नित-नअी शोध करनी हो और मानव-जाति पर शासन करनेवाले अिस सनातन और महान नियमकी नयी नयी शक्तियोंका समय समय पर संसारको परिचय कराना हो, तो अिसके लिअे यम-नियमोंका पालन आवश्यक है। अगर संसारका यही सर्वश्रेष्ठ नियम है, तो यह सबके लिअे कल्याण-कारक होना चाहिये। जो अनेक असफलतायें हमारे देखनेमें आती हैं, वे अिस नियमकी नहीं, अिसका पालन करनेवालोंकी हैं। क्योंकि अुनमें से कअियोंको यह पता तक नहीं रहता कि वे जाने-अनजाने अिस नियमके अधीन बरत रहे हैं। जब मां अपने बच्चेके लिअे खुद मरनेको तैयार हो जाती है, तो वह अनजाने ही अिस नियमका पालन करती है। मैं पिछले पचास बरससे लोगोंको यह समझाता रहा हूं कि वे अिस नियमको समझ-बूझकर अपनायें और असफल होने पर भी अिसके पालनमें दत्तचित्त बने रहें। पचास वर्षके अिस प्रयोगका परिणाम आश्चर्यजनक हुआ है और अहिंसामें मेरी श्रद्धा अुत्तरोत्तर बढ़ती गअी है। मैं दावेके साथ कहता हूं कि लगातार प्रयत्न करते रहनेसे अेक समय वह आयेगा, जब लोग सर्वत्र अीमानदारीसे कमाये हुअे धनका स्वेच्छासे आदर करेंगे और अुसकी रक्षामें सहायक होंगे। अिसमें शक नहीं कि यह धन पापका धन न होगा और अिसमें असमानताओंका वह अुद्धत प्रदर्शन भी न होगा जिसमें आज हम घिरे हुअे हैं। अहिंसाके व्रतधारीको अन्याय और अनीतिसे कमाये जानेवाले धनसे आतंकित न होना चाहिये, क्योंकि अुसके पास हिंसाका सफल प्रतिकार करनेके लिअे सत्याग्रह और असहयोगका अहिंसक शस्त्र मौजूद है। जहां कहीं अिस शस्त्रका सचाअीके साथ पर्याप्त अुपयोग किया गया है, वहां हिंसक शस्त्रोंकी कोअी आवश्यकता ही नहीं रह गअी है। अहिंसाके संपूर्ण शास्त्रको जनताके सामने रखनेका दावा तो मैंने कभी नहीं किया। अुसके लिअे अैसा दावा कभी किया भी नहीं जा सकता। जहां तक मैं जानता हूं, किसी भी भौतिक शास्त्रके लिअे, यहां तक कि गणित जैसे निश्चित शास्त्रके लिअे भी, अिस तरहका दावा नहीं किया जा सकता। मैं तो अेक सत्य-शोधक मात्र हूं और प्रश्नकर्ताकी तरह सत्यकी अिस शोधमें मेरा अनुसरण करनेवाले मेरे कुछ साथी भी हैं। अपने अिन साथियोंको मैं आमंत्रण देता हूं कि सत्यकी अिस अत्यन्त कठिन किन्तु अतिशय रसपूर्ण शोधमें वे मेरा साथ दें।

हरिजनसेवक, १५–२–'४२; पृ० ४३–४४

## १००

# अन्यायपूर्वक कमाये हुअे धनका त्याग

[श्री महादेव देसाअीके 'साप्ताहिक पत्र' से।]

ग्रामसेवक विद्यालयके विद्यार्थियोंकी ओरसे अेक प्रश्न यह पूछा गया था : "लोगोंके अन्यायपूर्वक कमाये हुअे धनको कैसे छीना जाय? समाजवादी यही करना चाहते हैं।"

गांधीजीने जवाब दिया : "अिस बातका निर्णय कौन करेगा कि यह न्यायपूर्वक कमाया हुआ है और वह अन्यायपूर्वक? अिसका निर्णय तो केवल अन्तर्यामी अीश्वर ही कर सकता है या फिर धनिकों और निर्धनोंके द्वारा नियत किये गये योग्य विशेषज्ञ अिसका निर्णय कर सकते हैं। पर अगर तुम यह कहते हो कि सभी तरहकी मिल्कियत और धन-दौलतका रखना चोरी है, तो फिर सभीको अपनी अपनी संपत्तिका त्याग कर देना चाहिये। क्या हमने यह त्याग किया है? यह आशा रखकर कि दूसरे हमारा अनुसरण करेंगे हम खुद संपत्ति-परित्यागका आरम्भ कर दें। अुन लोगोंके लिअे, जिनका यह विश्वास है कि अुनकी खुदकी संपत्ति अन्याय-अर्जित है, अिसके सिवा दूसरा कोअी मार्ग ही नहीं।"

हरिजन, १-८-'३६; पृ० १९३, १९५

## १०१

# अगर धनवान संरक्षक न बनें तो

प्र० — आप कहते हैं कि राजा, जमींदार या पूंजीपति संरक्षक (ट्रस्टी) बनकर रहें। आपके खयालसे क्या अैसे राजा, जमींदार या पूंजीपति अभी मौजूद हैं? या वर्तमान राजा वगैरामें से किन्हींके अिस प्रकार बदल जानेकी अुम्मीद है?

अु० — मेरे खयालसे अैसे कुछ राजा, जमींदार और पूंजीपति आज भी हैं। अिसका मतलब यह नहीं कि वे पूरे पूरे संरक्षक बन चुके हैं। लेकिन अुनकी गति अुस ओर है। यह पूछा जा सकता है कि क्या वर्तमान राजाओं और दूसरे लोगोंसे गरीबोंके संरक्षक बननेकी आशा रखी जा सकती है। यदि वे अपने आप ट्रस्टी नहीं बन जाते हैं, तो परिस्थितिका जोर जबर-दस्ती अुनसे यह सुधार करा लेगा। हां, वे संपूर्ण विनाशको आमंत्रित करें तो दूसरी बात है। जब पंचायत-राज स्थापित हो जायेगा, तो लोकमत वह काम

करेगा जो हिंसा कभी नहीं कर सकती। जमींदारों, पूंजीपतियों और राजाओंकी वर्तमान सत्ता तभी तक कायम रह सकती है, जब तक साधारण लोग अपनी खुदकी ताकतको अच्छी तरह पहचान नहीं लेते। यदि लोग जमींदारी या पूंजीवादकी बुराओके साथ असहयोग कर दें, तो वह निष्प्राण होकर मर जायगी। पंचायत-राजमें पंचायतकी ही बात मानी जायेगी और पंचायत अपने बनाये हुओ कानूनके जरिये ही काम कर सकती है।

हरिजनसेवक, १–६–'४७; पृ० १४८

## १०२
## विपत्तिसे बचें

हालके अुत्तर प्रदेशके दौरेमें मुझे जितना हर्ष अिस बातको देखकर हुआ अुतना और किसी बातसे नहीं हुआ कि कओ युवक जमींदारों और तालुकेदारोंने अपने जीवनको काफी सादा बना लिया है और देशभक्तिपूर्ण अुत्साहसे प्रज्वलित होकर वे किसानोंका भार कम कर रहे हैं। मैंने बहुतसे जमींदारोंके कथित अत्याचारोंके भयंकर वर्णन सुने थे और यह भी सुना था कि वे तरह तरहके मौकों पर किस तरह जायज और नाजायज कर वसूल करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप किसानोंकी स्थिति बिलकुल गुलामकी-सी हो गओ है। अिसलिअे अिस तरहके कओ नौजवान तालुकेदार जब मेरे देखनेमें आये, तो मुझे सानंद आश्चर्य हुआ।

परन्तु अिस सुधारके और आगे बढ़ने और संपूर्ण होनेकी जरूरत है। अुनमें से अच्छेसे अच्छोंके और किसानोंके बीच अभी भी अेक बड़ी खाओ है। जो थोड़ासा काम किया गया है अुसके लिअे अुनके मनमें अहंकार-मूलक कृपाकी और आत्म-संतोषकी भावना भी है, जो नहीं होनी चाहिये। असल बात यह है कि कुछ भी किया जाय, वह किसानोंको अुनका हक देरसे लौटा देनेके सिवा और कुछ नहीं है। यह वर्णाश्रम धर्मकी भयंकर विकृतिका परिणाम है कि तथाकथित क्षत्रिय अपनेको श्रेष्ठ मानता है और गरीब किसान परम्परागत निकृष्टताका दर्जा चुपचाप यह मानकर स्वीकार कर लेता है कि अुसके भाग्यमें वही लिखा है। यदि भारतीय समाजको शान्तिपूर्ण मार्ग पर सच्ची प्रगति करनी है, तो धनिक वर्गको निश्चित रूपसे यह स्वीकार कर लेना होगा कि किसानके भी वैसी ही आत्मा है जैसी अुनके है और अपनी दौलतके कारण वे गरीबसे श्रेष्ठ नहीं हैं। जैसा जापानके अुमरावोंने किया, अुसी तरह अुन्हें भी अपने आपको संरक्षक मानना चाहिये। अुनके पास जो धन है अुसे यह समझकर अुन्हें रखना चाहिये कि अुसका अुपयोग अुन्हें अपने

संरक्षित किसानोंकी भलाओीके लिअे करना है। अुस हालतमें वे अपने परिश्रमके कमीशनके रूपमें वाजिव रकमसे ज्यादा नहीं लेंगे। अिस समय धनिक वर्गके सर्वथा अनावश्यक ठाठवाट और फिजूलखर्चीमें तथा जिन किसानोंके बीचमें वे रहते हैं अुनके गंदगी भरे वातावरण और कुचल डालनेवाले दारिद्र्यमें कोअी अनुपात नहीं है। अिसलिअे अेक आदर्श जमींदार किसानका बहुत कुछ बोझा, जो वह अभी अुठा रहा है, अेकदम घटा देगा। वह किसानोंके गहरे संपर्कमें आयेगा और अुनकी आवश्यकताओंको जानकर अुस निराशाके स्थान पर, जो अुनके प्राणोंको सुखाये डाल रही है, अुनमें आशाका संचार करेगा। वह किसानोंके सफाअी और तन्दुरुस्तीके नियमोंके अज्ञानको दर्शककी तरह देखता नहीं रहेगा, वल्कि अिस अज्ञानको दूर करेगा। किसानोंके जीवनकी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके लिअे वह स्वयं अपनेको दरिद्र बना लेगा। वह अपने किसानोंकी आर्थिक स्थितिका अध्ययन करेगा और अैसे स्कूल खोलेगा, जिनमें किसानोंके बच्चोंके साथ साथ वह अपने खुदके बच्चोंको भी पढ़ायेगा। वह गांवके कुअें और तालावको साफ करायेगा। वह किसानोंको अपनी सड़कें और अपने पाखाने खुद आवश्यक परिश्रम करके साफ करना सिखायेगा। वह किसानोंके बेरोकटोक अिस्तेमालके लिअे अपने खुदके वाग निःसंकोच भावसे खोल देगा। जो गैर-जरूरी अिमारतें वह अपनी मौजके लिअे रखता है, अुनका अुपयोग अस्पताल, स्कूल या अैसे ही दूसरे कामोंके लिअे करेगा। यदि पूंजीपति वर्ग कालका संकेत समझकर सम्पत्तिके बारेमें अपने अिस विचारको बदल डाले कि अुस पर अुसका अीश्वर-प्रदत्त अधिकार है, तो जो सात लाख घूरे आज गांव कहलाते हैं अुन्हें आनन-फाननमें शान्ति, स्वास्थ्य और सुखके धाम बनाया जा सकता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि पूंजीपति जापानके अुमरावोंका अनुसरण करे, तो वह सचमुच कुछ खोयेगा नहीं और सब कुछ पायेगा। केवल दो मार्ग हैं जिनमें से पूंजीपतियोंको अपना चुनाव कर लेना है। अेक तो यह कि पूंजीपति अपना अतिरिक्त संग्रह स्वेच्छासे छोड़ दें और अुसके परिणामस्वरूप सबको वास्तविक सुख प्राप्त हो जाय। दूसरा यह कि अगर पूंजीपति समय रहते न चेतें, तो करोड़ों जाग्रत किन्तु अज्ञान और भूखे लोग देशमें अैसी गड़बड़ मचा दें जिसे अेक बलशाली हुकूमतकी फौजी ताकत भी नहीं मिटा सकती। मैंने यह आशा रखी है कि भारतवर्ष अिस विपत्तिसे बचनेमें सफल रहेगा। अुत्तर प्रदेशके कुछ नौजवान तालुकेदारोंसे मेरा जो घनिष्ठ संपर्क हुआ है, अुससे मेरी यह आशा बलवती बनी है।

यंग अिंडिया, ५-१२-'२९; पृ० ३९६

# सूची